

श्री भगवत्-पुष्पदन्त-भूतबलि-प्रणीतः

षट्खंडागमः

श्रीवीरसेनाचार्य-विरचित-धवला-टीका-समन्वितः ।

तस्य

प्रथम-खंडे जीवस्थाने

हिन्दीभाषानुवाद तुलनात्मकटिप्पण-प्रस्तावनानेकपरिशिष्टे सम्पादिता

अन्तर-भावालपबहुत्वानुगमाः ५

सम्पादक

अमरावतीस्व-किंग-एडवर्ड-कॉलेज-संस्कृताध्यापक, एम् ए, एल् एल् बी, इत्युपाधिगारी

हीरालालो जैनः

सहसम्पादक

प. हीरालालः सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थः

सशोधने सहायकौ

व्या वा, सा सु, पं, देवकीनन्दनः

सिद्धान्तशास्त्री

*

डा. नेमिनाथ-तनय आदिनाथः

उपाध्याय, एम् ए, डी लिट्

प्रकाशक

श्रीमन्त सेठ शिताबगय लक्ष्मीचन्द्र

जेन-साहित्योद्धारक-फंड-कार्यालय

अमरावती (मार)

वि स १९९९]

वीर-निर्माण-सत्र २४६८

[ई स १९४२

मूल्यं रूप्यक-दशकम्

प्रकाशक—

श्रीमन्त सेठ शिवावराय लक्ष्मीचन्द्र,
जैन-साहित्योद्धारक-सङ्घ कार्यालय,
अमरावती (बरार)



मुद्रक—

टी. एम्. पाटील,
मैनेजर
सरस्वती प्रिंटिंग प्रेस, अमरावती (बरार)

THE ṢAṬKHAṆḌĀGAMA

OF
PUSPADANTA AND BHŪTABALI
WITH
THE COMMENTARY DHAVALĀ OF VĪRASENA

VOL V ANTARA-BHĀVĀLPABAHUTWĀNUGAMA

Edited
with introduction, translation, notes and indexes
BY
HIRALAL JAIN, M A, LL B,
C P Educational Service, King Edward College, Amraoti.

ASSISTED BY
Pandit Hiralal Siddhānta Shāstri, Nyāyatīrtha

With the cooperation of

Pandit Devakinandana
Siddhānta Shāstri



Dr A. N Upadhye,
M A, D Litt.

Published by
Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Sāhitya Uddhāraka Fund Kāryālaya
AMRAOTI [Berar].

1942

Price rupees ten only

Published by—
Shrimanta Seth Shitabrai Laxmichandra,
Jaina Śāhitya Uddhāraka Fond Kāryālaya
AMRAOTI [Berar]



Printed by—
T N Patil, Manager,
Saraswati Printing Press
AMRAOTI [Berar]

विषय सूची

	पृष्ठ		पृष्ठ
प्राकृत्यन	१-३		
१			
प्रस्तावना		२	
Introduction	1-11		
१ धरतः गणितशास्त्र	१-२८	मूल, अनुवाद और टिप्पण	१-३५०
२ कनड प्रशस्ति	२९-३०	अन्तरानुगम	१-१७९
३ शास्त्र-समाधान	३०-३६	मानानुगम	१८१-२३८
४ नियम परिचय	३६-४३	अल्पगुह्यानुगम	२३९-३५०
५ विषय सूची	४४-५९		
६ शुद्धिपत्र	६०-६३		

३

परिशिष्ट

१-३८

१ अन्तरप्ररूपणा-सूत्रपाठ	१
मानप्ररूपणा-सूत्रपाठ	१७
अल्पगुह्य-सूत्रपाठ	२१
२ अग्ररण-गाथा-सूची	३३
३ न्यायोक्तिया	३४
४ प्रणोदिस	३४
५ पारिभाषिक शब्दसूची	३५-३८



मार्क कथन

पद्लङ्गागमका चौथा भाग इसी वर्ष जनवरामें प्रकाशित हुआ था । उसके छह माह पश्चात् हा यह पाचवां भाग प्रकाशित हो रहा है । सिद्धांत प्रयोगोंके प्रकाशनके निरुद्ध जो आन्दोलन उठाया गया था वह, हर्ष है, अधिकांश जैनपत्र सम्पादकों, अन्य जैन विद्वानों तथा पूर्व भागकी प्रस्तावनामें प्रकाशित हमारे निवेदनके प्रमाणसे बिल्कुल ठंडा हो गया और उसकी अब कोई चर्चा नहीं चल रही है ।

प्राचीन प्रयोगोंके सम्पादन, प्रकाशन व प्रचारकी चार मजिले हैं— (१) मूल पाठका संशोधन (२) मूल पाठका शब्दशः अनुवाद (३) प्रयोगोंके अर्थको सुस्पष्ट करनेवाला सुविस्तृत व स्वतंत्र अनुवाद (४) प्रयोगोंके विषयको लेकर उसपर स्वतंत्र लेख व पुस्तकें आदि रचनायें । प्रस्तुत सम्पादन-प्रकाशनमें हमने इनमेंसे केवल प्रथम दो मजिलें तय करनेका निश्चय किया है । तदनुसार ही हम यथाशक्ति मूल पाठके निर्णयका पूरा प्रयत्न करते हैं और फिर उसका हिन्दी अनुवाद यथाशक्त्य मूल पाठके रूप, शैली व शब्दावलीके अनुसार ही रखते हैं । विषयको मूल पाठसे अधिक स्वतंत्रतापूर्वक खोलनेका हम साहस नहीं करते । जहां इसकी कोई विशेष ही आवश्यकता प्रतीत हुई वहां मूलानुगामी अनुवादमें विस्तार न करके अलग एक छोटा मोटा विशेषार्थ लिख दिया जाता है । किंतु इस स्वतंत्रतामें भी हम उत्तरोत्तर कमी करते जाते हैं, क्योंकि, वह यथार्थ हमारी पूर्वोक्त सामाजिक बाहरकी बात है । हम अनुवादको मूल पाठके इतने समीप रखनेका प्रयत्न करते हैं कि जिससे वह कुछ अंशमें सत्यतः छायाके अमानकी भी पूर्ति करता जाय, जैसा कि हम पहले ही प्रकट कर चुके हैं । जिन शब्दोंकी मूलमें अनुवृत्ति चली आती है वे यदि समीपवर्ती होनेसे सुज्ञेय हुए तो उन्हें भी बार बार दुहराना हमने ठीक नहीं समझा ।

हमारी इस सुस्पष्ट नीति और सीमाओं न समझ कर कुछ समालोचक अनुवादमें दोष दिखानेका प्रयत्न करते हैं कि अमुक वाक्य ऐसा नहीं, ऐसा लिखा जाना चाहिये था, या अमुक विषय स्पष्ट नहीं हो पाया, उसे और भी खोलना चाहिये था, इत्यादि । हमें इस बातका हर्ष है कि विद्वान् पाठकोंकी इन प्रयोगोंमें इतनी तीव्र रुचि प्रकट हो रही है । पर यदि वह रुचि सच्ची और स्थायी है तो उसके बलपर उपर्युक्त चार मजिलोंमेंसे दोष दो मजिलोंकी भी पूर्तिमें अग्रगण्य प्रयत्न होना चाहिये । प्रस्तुत प्रकाशनके सीमाके बाहरकी बात लेकर सम्पादनदिमें दोष दिखानेका प्रयत्न करना अनुचित और अन्याय है । जो समालोचनादि प्रकट हुए हैं उनसे हमें अपने कार्यमें आशातीत सफलता मिली हुई प्रतीत होती

है, क्योंकि, उनमें मूल पाठके निर्णयकी त्रुटियाँ तो नहीं के बराबर मिलती हैं, और अनुवादके भी मूलानुगामित्वमें कोई दोष नहीं दिखाये जा सके। हाँ, जहाँ शब्दोंकी अनुवृत्ति आदि जोड़ी गई है वहाँ कहीं कुछ प्रमाद हुआ पाया जाता है। पर एक ओर हम जब अपने अल्प ज्ञान, अल्प साधन सामग्री और अल्प समयका, तथा दूसरी ओर इन महान् ग्रन्थोंके अतिगहन विषय-विशेषचक्रा विचार करते हैं तब हमें आश्चर्य इस बातका त्रिलुल नहीं होता कि हमसे ऐसी कुछ भूलें हुई हैं, वरिन्, आश्चर्य इस बातका होता है कि वे भूलें उक्त परिस्थितियों में इतनी अल्प हैं। इस प्रकार उक्त छिद्रान्वेषी समालोचकोंके लेखोंसे हमें अपने कार्यमें अधिक दृढता और विश्वास ही उत्पन्न हुआ है और इसके लिये हम उनके हृदयसे कृतज्ञ हैं। जो अल्प भी त्रुटि या स्वलन जब भी हमारे दृष्टिगोचर होता है, तभी हम आगामी भागके शुद्धिपत्र व शका समाधानमें उसका समावेश कर देते हैं। ऐसे स्वलनादिकी सूचना करनेवाले सज्जनोंके हम सदैव आभारी हैं। जो समालोचक अत्यन्त छोटी मोटी त्रुटियोंसे भी बचनेके लिये बड़ी बड़ी योजनायें सुझाते हैं, उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिये, कि इस प्रकाशनके लिये उपलब्ध पत्र बहुत ही परिमित है और इससे भी अधिक कठिनाई जो हम अनुभव करते हैं, वह है समयकी। दिनों दिन काल बढ़ा जाता जाता है और इस प्रकारके साहित्यके लिये रुचि उत्तरोत्तर हीन होती जाती है। ऐसी अवस्थामें हमारा तो अब मत यह है कि जितने शीघ्र हो सके इस प्राचीन साहित्यको प्रकाशित कर उसकी प्रतिष्ठा सत्र ओर फैला दी जाय, ताकि उसकी रक्षा ता हो। छोटी मोटी त्रुटियोंके सुधारके लिये यदि इस प्रकाशनको रोकना गया तो संभव है उसका फिर उद्धार ही न हो पावे और न जाने कैसा संकट आ उपस्थित हो। योजनाएँ सुझाना जितना सरल है, स्वार्थत्याग करके आजकल कुछ कर दिखाना उतना सरल नहीं है। हमारा समय, शक्ति, ज्ञान और साधन सब परिमित हैं। इस कार्यके लिये इससे अधिक साधन-सम्पन्न यदि कोई संस्था या व्यक्ति-विशेष इस कार्य-भारको अधिक योग्यताके साथ सम्हालनेको प्रस्तुत हो तो हम सहर्ष यह कार्य उन्हें सौंप सकते हैं। पर हमारी सीमाओंमें फिर हाल और अधिक विस्तारकी गुंजाइश नहीं है।

प्रस्तुत खंडाशमें जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे अन्तिम तीन प्ररूपणाएँ समाविष्ट हैं—अन्तर, मान और अल्पबहुत्व। इनमें क्रमशः ३९७, ९३ व ३८२ सूत्र पाये जाते हैं। इनकी टीकामें क्रमशः लगभग ४८, ६५ तथा ७६ शका-समाधान आये हैं। हिन्दी अनुवादमें अर्थको स्पष्ट करनेके लिये क्रमशः १, २ और ३ विशेषार्थ लिखे गये हैं। सुलनात्मक व पाठभेद सनधी टिप्पणियोंकी सख्या क्रमशः २९९, ९३ और १४४ है। इस प्रकार इस प्रथम-भागमें लगभग १८९ शका-समाधान, ६ विशेषार्थ और ५३६ टिप्पण पाये जावेंगे।

सम्पादन-व्यवस्था व पाठ-शोधनके लिये प्रतियोंका उपयोग पूर्ववत् चाल रहा।
 पं. हीरालालजी शास्त्री यह कार्य नियतरूपसे कर रहे हैं। इस भागके मुद्रित फार्म

माक कथन

पदखण्डागमका चौथा भाग इसी वर्ष जनवरीमें प्रकाशित हुआ था। उसके छह माह पश्चात् ही यह पाचवां भाग प्रकाशित हो रहा है। सिद्धांत ग्रंथोंके प्रकाशनके निरुद्ध जो आन्दोलन उठाया गया था वह, हर्ष है, अधिकांश जैनपर सम्पादकों, अथ जैन विद्वानों तथा पूर्व भागकी प्रस्तावनामें प्रकाशित हमारे विवेचनके प्रभावसे निडकुल टडा हो गया और उसकी धर कोई चर्चा नहीं चल रही है।

प्राचीन ग्रंथोंके सम्पादन, प्रकाशन व प्रचारकी चार मजिठे हैं— (१) मूल पाठकी सशोधन (२) मूल पाठका शब्दश अनुवाद (३) ग्रंथके अर्थको सुस्पष्ट करनेवाला सुविस्तृत व स्वतंत्र अनुवाद (४) ग्रंथके शिष्योंके लेकर उसपर स्वतंत्र लेख व पुस्तकें आदि रचनामें। प्रस्तुत सम्पादन-प्रकाशनमें हमने इनमेंसे केवल प्रथम दो मजिठें तय करनेका निश्चय किया है। तदनुसार ही हम यथाशक्ति मूल पाठके निर्णयका पूरा प्रयत्न करते हैं और फिर उसका हिन्दी अनुवाद यथाशक्य मूल पाठके रूप, शैली व शब्दावलीके अनुसार ही रखते हैं। विषयको मूल पाठसे अधिक स्वतंत्रतापूर्वक खोलनेका हम साहस नहीं करते। जहाँ इसकी कोई विशेष ही आवश्यकता प्रतीत हुई वहाँ मूलानुगामी अनुवादमें विस्तार न करके अलग एक छोटा मोटा विशेषार्थ लिख दिया जाता है। किन्तु इस स्वतंत्रतामें भी हम उत्तरोत्तर कमी करते जाते हैं, क्योंकि, यह यथार्थ हमारी पूर्वाक्त सीमाओंके बाहरकी बात है। हम अनुवादको मूल पाठके इतने समीप रखनेका प्रयत्न करते हैं कि जिससे वह कुछ अंशमें सस्वत छायाके अमानकी भी पूर्ति करता जाय, जैसा कि हम पहले ही प्रकट कर चुके हैं। जिन शब्दोंकी मूलमें अनुवृत्ति चली आती है वे यदि समीपवर्ती होनेसे सुझेय हुए तो उ हें भी धार धार दुहराना हमने ठीक नहीं समझा।

हमारी इस सुस्पष्ट नीति और सीमाओं न समझ कर कुछ समालोचक अनुवादमें दोष दिखानेका प्रयत्न करते हैं कि अमुक वाक्य ऐसा नहीं, ऐसा लिखा जान चाहिये था, या अमुक विषय स्पष्ट नहीं हो पाया, उसे और भी खोलना चाहिये था इत्यादि। हमें इस बातका हर्ष है कि विद्वान् पाठकोंकी इन प्रयोगों इतनी तीव्र रुचि प्रकट हो रही है। पर यदि वह रुचि सच्ची और स्थायी है तो उसके बलपर उपर्युक्त चार मजिठोंमें शेष दो मजिठोंकी भी पूर्तिक्रम अलगसे प्रयत्न होना चाहिये। प्रस्तुत प्रकाशनके सीमाके बाहर बात लेकर सम्पादनविधिमें दोष दिखानेका प्रयत्न करना अनुचित और अवायव है। समालोचनादि प्रकट हुए हैं उनसे हमें अपने कार्यमें आशावादी सफलता मिली हुई प्रतीत है।

है, क्योंकि, उनमें मूल पाठके निर्णयकी त्रुटियाँ तो नहीं के बराबर मिलती हैं, और अनुवादके भी मूलानुगामित्वमें कोई दोष नहीं दिखाये जा सके। हा, जहाँ शब्दोंकी अनुवृत्ति आदि जोड़ी गई है वहाँ कहीं कुछ प्रमाद हुआ पाया जाता है। पर एक ओर हम जब अपने अल्प ज्ञान, अल्प साधन सामग्री और अल्प समयका, तथा दूसरी ओर इन महान् ग्रन्थोंके अतिगहन विषय-मिथेचनका विचार करते हैं तब हमें आश्चर्य इस बातका बिल्कुल नहीं होता कि हमसे ऐसी कुछ भूलें हुई हैं, वरिक्त, आश्चर्य इस बातका होता है कि वे भूलें उक्त परिस्थितिमें भी इतनी अल्प हैं। इस प्रकार उक्त टिप्पणियों समालोचकोंके लेखोंसे हमें अपने कार्यमें अधिक दृढ़ता और विश्वास ही उत्पन्न हुआ है और इसके लिये हम उनके हृदयसे कृतज्ञ हैं। जो अल्प भी त्रुटि या स्खलन जन भी हमारे दृष्टिगोचर होता है, तभी हम आगामी भागके शुद्धिपत्र व शका समाधानमें उसका समावेश कर देते हैं। ऐसे स्खलनादिकी सूचना करनेवाले सज्जनोंके हम सदैव आभारी हैं। जो समालोचक अत्यन्त छोटी मोटी त्रुटियोंसे भी बचनेके लिये बड़ी बड़ी योजनायें सुझाते हैं, उन्हें इस बातका ध्यान रखना चाहिये, कि इस प्रकाशनके लिये उपलब्ध फंड बहुत ही परिमित है और इससे भी अधिक कठिनाई जो हम अनुभव करते हैं, वह है समयकी। दिनों दिन काल बढ़ा फराक होता जाता है और उस प्रकारके साहित्यके लिये रुचि उत्तरोत्तर हीन होती जाती है। ऐसी अनस्थायी हमारा तो अब मत यह है कि जितने शीघ्र हो सके इस प्राचीन साहित्यको प्रकाशित कर उसकी प्रतिष्ठा सत्र और फेला दी जाय, ताकि उसकी रक्षा ता हो। छोटी मोटी त्रुटियोंके मुधारके लिये यदि इस प्रकाशनको रोक़ा गया तो संभव है उसका फिर उद्धार ही न हो पावे और न जाने कैसा संकट आ उपस्थित हो। योजनाएँ सुझाना जितना सरल है, स्वार्थत्याग करके आजगल कुछ कर दिखाना उतना सरल नहीं है। हमारा समय, शक्ति, ज्ञान और साधन सब परिमित हैं। इस कार्यके लिये इससे अधिक साधन-सम्पन्न यदि कोई सत्या या व्यक्ति-विशेष इस कार्य-भारको अधिक योग्यताके साथ सम्हालनेको प्रस्तुत हो तो हम सहर्ष यह कार्य उन्हें सौंप सकते हैं। पर हमारी सीमाओंमें फिर हाथ और अधिक विस्तारकी गुंजाइश नहीं है।

प्रस्तुत खंडाशमें जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे अन्तिम तीन प्ररूपणाएँ समाविष्ट हैं—अन्तर, मान और अल्पबहुत्व। इनमें क्रमशः ३९७, ९३ व ३८२ सूत्र पाये जाते हैं। इनकी टीकाओंमें क्रमशः लगभग ४८, ६५ तथा ७६ शका-समाधान आये हैं। हिन्दी अनुवादमें अर्थको स्पष्ट करनेके लिये क्रमशः १, २ और ३ विशेषार्थ लिखे गये हैं। तुलनात्मक व पाठभेद सबधी टिप्पणियोंकी सख्या क्रमशः २९९, ९३ और १४४ है। इस प्रकार इस ग्रन्थ-भागमें लगभग १८९ शका-समाधान, ६ विशेषार्थ और ५३६ टिप्पण पाये जावेंगे।

सम्पादन-व्यवस्था व पाठ-शोधनके लिये प्रतियोगी उपयोग पूर्ववत् चालू रहा। पं. हीरालालजी शास्त्री यह कार्य नियतरूपसे कर रहे हैं। इस भागके मुद्रित फार्म

श्री प. देवकीनन्दनजी सिद्धातशास्त्रीने विशेषरूपसे मर्मीके विराम-काष्ठमें अथथेना का सशोभन भेजनेकी कृपा की है, जिनका उपयोग शुद्धिपरमें किया गया है। कानडप्रशासिता सशोधन पूर्ववत् डा. ए. एन्. उपाध्येनीने धरके भेजा है। प्रति मित्राणमें प. बालचन्द्रजी शास्त्रीका सहयोग रहा है। इस प्रकार सब सहयोगियोंका साहाय्य पूर्ववत् उपलब्ध है, जिसके लिये मैं उन सभका अनुगृहीत हूँ।

इस भागकी प्रस्तावनामें पूर्वप्रतिज्ञानुसार डा. अरधेशनारायणजीके गणितसम्बन्धी लेखका अखिर हिन्दी अनुवाद दिया जा रहा है। इसका अनुवाद मेरे पुत्र चिरन्वी प्रफुल्ल कुमार भी ए. ने किया था। उसे मैंने अपने सहयोगी प्रोफेसर काशीदत्तजी पाठेके साथ मिलाया और फिर डा. अरधेशनारायणजीके पास भेजकर सशोधन करा लिया है। इसके लिये इन सज्जनोंका सुश्रम आभार है। चौथे भागके गणितपर भी एक लेख डा. अरधेशनारायणजी लिख रहे हैं। छेद है कि अनेक कौटुम्बिक विषयों और चिन्ताओंके कारण वे उस लेखको इस भागमें देनेके लिये तैयार नहीं कर पाये। अतः उसका लिये पाठकोंको अगले भागकी प्रतीक्षा करना चाहिये।

आजकल कागज, जिल्द आदि का सामान व मुद्रणादि सामग्रीके मिलनेमें असाधारण कठिनाईका अनुभव हो रहा है। वाममें बेश्द बड़ी हुई है। तथापि हमारे निरंतर सहायक और अद्वितीय साहित्यसेवी प. नाथूरामजी प्रेमीके प्रयत्नसे हमें कोई कठिनाईका अनुभव नहीं हुआ। इस वष उनके ऊपर पुनरियोगका जो कठोर वक्रपात हुआ है उससे हम और हमारी सत्पाके समस्त दरद्री व कार्यकर्तागण अत्यन्त दुखी हैं। ऐसी अपूर्व कठिनाईयोंके होते हुए भी ॥॥ अपनी व्यग्रता और कार्यप्रगति पूर्ववत् कायम रखनेमें सफल हुए हैं, यह हम इस कार्यके पुष्पका फल ही समझते हैं। आगे जन जैसा हो, क्या नहीं जा सकता।

लिंग एडवर्ड कॉलेज

अमरावती

१०-७-४२

हीरामाल जैन

प्रस्तावना

INTRODUCTION

This volume contains the last three *prarūpanās*, namely *Antara*, *Bhāva* and *Alpa-bahutva*, out of the eight *prarūpanās* of which the first five have been dealt with in the previous volumes. The *Antara prarūpanā* contains 397 *Sūtras* and deals with the minimum and maximum periods of time for which the continuity of a single soul (*eka jīva*) or souls in the aggregate (*nānā jīva*) in any particular spiritual stage (*Guṇa-sthāna*) or soul-quest (*Mārgaṇa-sthāna*) might be interrupted. It is, thus, a necessary counterpart of *Kāla prarūpanā* which, as we have already seen, devotes itself to the study of similar periods of time for which continuity in any particular state could uninterruptedly be maintained. The standard periods of time are, therefore, the same as in the previous *prarūpanā*. The first *Guṇasthāna* is never interrupted from the point of view of souls in the aggregate: there is no time when there might be no souls in this *Guṇasthāna*—some souls will always be at this spiritual stage. But a single soul might deviate from this stage for a minimum period of less than 48 minutes (*Antara-muhūrta*) or for a maximum period of slightly less than 182 *Sāgaropamas*. The second *Guṇasthāna* may claim no souls for a minimum period of one instant (*eka samaya*) or for a maximum period of an innumerable fraction of a *palyopama*, while a single soul might deviate from it in the minimum for an innumerable fraction of a *palyopama* and at the maximum for slightly less than an *Ardha-pudgala-parivartana*. And so on with regard to all the rest of the *Guṇasthānas* and the *Mārgaṇasthānas*. The commentator has explained at length how these periods are obtained by changes of attitude and transformations of life of the souls.

The *Bhāva prarūpanā*, in 93 *Sūtras*, deals with the mental dispositions which characterize each *Guṇasthāna* and *Mārgaṇasthāna*. There are five such dispositions of which four arise from the *Karmas* heading for fruition (*udaya*) or pacification (*upaśama*) or destruction (*kṣaya*) or partly destruction and partly pacification (*kṣayopāśama*),

while the fifth arises out of the natural potentialities inherent in each soul (*parāmāṇika*) Thus, the first *Gūṇasthāna* is *audāyika*, the second *pūrīṇāmika*, the third, fifth, sixth and seventh *kshūyopā'amika*, the fourth *aupā'amika*, *kshāyika* or *kshūyopā'amika*, eighth, ninth and tenth *aupā'amika* or *kshāyika*, eleventh *Aupā'amika* and the twelfth, thirteenth and fourteenth *kshāyika* The commentary explains these at great length

The eighth and last *prarupāṇa* is *Alpa-bahutva* which, as its very name signifies, shows, in 382 *Sūtras*, the comparative numerical strength of the *Gūṇasthānas* and the *Margauṇsthānas* It is here shown that the number of souls in the 8th, 9th and 10th *Aupā'amika* *Gūṇasthānas* as well as in the 11th is the least of all and mutually equal In the same three *Kshapaka* *Gūṇasthānas* and in the 12th, 13th and 14th, they are several times larger and mutually equal This is the numerical order from the point of view of entries (*praveśa*) into the *Gūṇasthānas* From the point of view of the aggregates (*samcaya*) the souls at the 13th stage are several times larger than the last class, and similarly larger at each successive stage are those at the 7th and the 6th stage respectively Innumerable larger than the last at each successive stage are those at the 5th and the 2nd stage, and the last is exceeded several times by those at the 3rd stage At the 4th stage they are innumerable larger and at the 1st infinitely larger successively The whole discussion shows how the exact sciences like mathematics have been harnessed into the service of the most speculative philosophy

The results of these *prarupāṇas* we have tabulated in charts, as before, and added them to the Hindi introduction



धवलाका गणितशास्त्र

(पुस्तक ४ में प्रकाशित डा. अवधेश नारायण सिंह,
लखनऊ यूनीवर्सिटी, के लेखका अनुवाद)

यह विदित हो चुका है कि भारतवर्षमें गणित- अकगणित, बीजगणित, क्षेत्रमिति आदिका अध्ययन अति प्राचीन कालमें किया जाता था । इस बातका भी अच्छी तरह पता चल गया है कि प्राचीन भारतवर्षीय गणितज्ञोंने गणितशास्त्रमें ठोस और सारगर्भित उन्नति की थी । यथार्थतः अर्वाचीन अकगणित और बीजगणितके जन्मदाता वे ही थे । हमें यह सोचनेका अभ्यास होगया है कि भारतवर्षकी विशाल जनसंख्यामेंसे केवल हिंदुओंने ही गणितका अध्ययन किया, और उन्हें ही इस विषयमें रुचि थी, और भारतवर्षीय जनसंख्याके अन्य भागों, जैसे कि बौद्ध व जैनोंने, उसपर विशेष ध्यान नहीं दिया । विद्वानोंके इस मतका कारण यह है कि अभी अभी तक बौद्ध वा जैन गणितज्ञोंद्वारा लिखे गये कोई गणितशास्त्रके ग्रन्थ ज्ञात नहीं हुए हैं । किन्तु जैनियोंके आगमग्रन्थोंके अध्ययनसे प्रकट होता है कि गणितशास्त्रका जैनियोंमें भी खूब आदर था । यथार्थतः गणित और ज्योतिष विद्याका ज्ञान जैन मुनियोंकी एक मुख्य साधना समझी जाती थी^१ ।

अब हमें यह विदित हो चुका है कि जैनियोंकी गणितशास्त्रकी एक शाखा दक्षिण भारतमें थी, और इस शाखाका कमसे कम एक ग्रन्थ, महानीराचार्य-कृत गणितसारसंग्रह, उस समयकी अन्य उपलब्ध कृतियोंकी अपेक्षा अनेक बातोंमें श्रेष्ठ है । महानीराचार्यकी रचना सन् ८५० की है । उनका यह ग्रन्थ सामान्य रूपरेखामें ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, भास्कर और अन्य हिन्दु गणितज्ञोंके ग्रन्थोंके समान होते हुए भी विशेष बातोंमें उनसे पूर्णतः भिन्न है । उदाहरणार्थ— गणितसारसंग्रहके प्रश्न (problems) प्रायः सभी दूसरे ग्रन्थोंके प्रश्नोंसे भिन्न हैं ।

वर्तमानकालमें उपलब्ध गणितशास्त्रसम्बन्धी साहित्यके आधारपरसे हम यह कह सकते हैं कि गणितशास्त्रकी महत्वपूर्ण शाखाएँ पाटलिपुत्र (पटना), उज्जैन, मैसूर, मलबार और सम्भवतः बनारस, तक्षशिला और कुछ अन्य स्थानोंमें उन्नतिशील थीं । जब तक आगे प्रमाण प्राप्त न हों, तब तक यह निश्चयपूर्ण नहीं कहा जा सकता कि इन शाखाओंमें परस्पर क्या

^१ देखो—मगवती सूत्र, अमर्यदेव सूत्रकी टीका सहित, म्हेसाणानी आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित, १९१९, सूत्र ९० । जैकोबी दत्त उत्तराध्ययन सूत्रका अंग्रेजी अनुवाद, ऑक्सफोर्ड १८९५, पृष्ठ ७, ८, ३८

while the fifth arises out of the natural potentialities inherent in each soul (*parīṇāmika*) Thus, the first *Guṇasthāna* is *audāyika*, the second *parīṇāmika*, the third, fifth, sixth and seventh *kṣhāyopāśamika*, the fourth *aupāśamika*, *kṣhāyika* or *kṣhāyopāśamika*, eighth, ninth and tenth *aupāśamika* or *kṣhāyika*, eleventh *Aupāśamika* and the twelfth, thirteenth and fourteenth *kṣhāyika* The commentary explains these at great length

The eighth and last *prarūpanā* is *Alpa-bahutva* which, as its very name signifies, shows, in 382 Sūtras, the comparative numerical strength of the *Guṇasthānas* and the *Margāṇṭhānas* It is here shown that the number of souls in the 8th, 9th and 10th *Aupāśamika* *Guṇasthānas* as well as in the 11th is the least of all and mutually equal In the same three *Kṣhāpaka* *Guṇasthānas* and in the 12th, 13th and 14th, they are several times larger and mutually equal This is the numerical order from the point of view of entries (*praveśa*) into the *Guṇasthānas* From the point of view of the aggregates (*samcaya*) the souls at the 13th stage are several times larger than the last class, and similarly larger at each successive stage are those at the 7th and the 6th stage respectively Innumerable larger than the last at each successive stage are those at the 5th and the 2nd stage and the last is exceeded several times by those at the 3rd stage At the 4th stage they are innumerable larger and at the 1st infinitely larger successively The whole discussion shows how the exact sciences like mathematics have been harnessed into the service of the most speculative philosophy

The results of these *prarūpanās* we have tabulated in charts, as before, and added them to the Hindi introduction



धवलाका गणितशास्त्र

(पुस्तक ४ में प्रकाशित डा. अग्नेश नारायण सिंह,
लखनऊ यूनीवर्सिटी, के लेखका अनुवाद)

यह विदित हो चुका है कि भारतवर्षमें गणित- अकगणित, बीजगणित, क्षेत्रमिति आदिका अध्ययन अति प्राचीन कालमें किया जाता था । इस बातका भी अच्छी तरह पता चल गया है कि प्राचीन भारतवर्षीय गणितज्ञोंने गणितशास्त्रमें ठोस और सारगर्भित उन्नति की थी । यथार्थतः अर्वाचीन अकगणित और बीजगणितके जन्मदाता वे ही थे । हमें यह सोचनेका अभ्यास होगया है कि भारतवर्षकी विशाल जनसंख्यामेंसे केवल हिंदुओंने ही गणितका अध्ययन किया, और उन्हें ही इस विषयमें रुचि थी, और भारतवर्षीय जनसंख्याके अन्य भागों, जैसे कि बौद्ध व जैनोंने, उसपर विशेष ध्यान नहीं दिया । विद्वानोंके इस मतका कारण यह है कि अभी अभी तक बौद्ध वा जैन गणितज्ञोंद्वारा लिखे गये कोई गणितशास्त्रके ग्रंथ ज्ञात नहीं हुए थे । किन्तु जैनियोंके आगमग्रन्थोंके अध्ययनसे प्रकट होता है कि गणितशास्त्रका जैनियोंमें भी खूब आदर था । यथार्थतः गणित और ज्योतिष विद्याका ज्ञान जैन मुनियोंकी एक मुख्य साधना समझी जाती थी^१ ।

अब हमें यह विदित हो चुका है कि जैनियोंकी गणितशास्त्रकी एक शाखा दक्षिण भारतमें थी, और इस शाखाका कमसे कम एक ग्रन्थ, महावीराचार्य कृत गणितसारसमूह, उस समयकी अन्य उपलब्ध कृतियोंकी अपेक्षा अनेक बातोंमें श्रेष्ठ है । महावीराचार्यकी रचना सन् ८५० की है । उनका यह ग्रन्थ सामान्य रूपरेखामें ब्रह्मगुप्त, श्रीधराचार्य, भास्कर और अन्य हिन्दू गणितज्ञोंके ग्रन्थोंके समान होते हुए भी विशेष बातोंमें उनसे पूर्णतः भिन्न है । उदाहरणार्थ— गणितसारसमूहके प्रश्न (problems) प्रायः सभी दूसरे ग्रन्थोंके प्रश्नोंसे भिन्न हैं ।

वर्तमानकालमें उपलब्ध गणितशास्त्रसम्बन्धी साहित्यके आधारपरसे हम यह कह सकते हैं कि गणितशास्त्रकी महत्वपूर्ण शाखाएँ पाटलिपुत्र (पटना), उज्जैन, मैसूर, मल्लवार और समवत बनारस, तक्षशिला और कुछ अन्य स्थानोंमें उन्नतिशील थीं । जब तक आगे प्रमाण प्राप्त न हों, तब तक यह निश्चयपूर्ण नहीं कहा जा सकता कि इन शाखाओंमें परस्पर क्या

^१ देखो—मगवती सूत्र, अमरदेव सरित्री टीका सहित, श्वेताश्विनी आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित, १९१९, सूत्र १० । जैकोबी दत्त उच्चारण सूत्रों अग्नेजी अनुवाद, ऑक्सफोर्ड १८९५, अ. पा. ७, ८, ३८

सम्बन्ध था। फिर भी हमें पता चलता है कि भिन्न भिन्न शाखाओंसे आये हुए ग्रन्थोंकी सामान्य रूपरेखा तो एकसी है, किन्तु विस्तारमयरी विशेष बातोंमें उनमें विभिन्नता है। इससे पता चलता है कि भिन्न भिन्न शाखाओंमें आदान प्रदानका समय था, छात्रगण और विद्वान एक शाखासे दूसरी शाखामें गमन करते थे, और एक स्थानमें किये गये आविष्कार शीघ्र ही भारतके एक कोनेसे दूसरे कोने तक विज्ञापित कर दिये जाते थे।

प्रतात होता है कि बौद्ध धर्म और जैन धर्मके प्रचारके विभिन्न विज्ञानों और कलाओंके अध्ययनको बसेजना दी। सामान्यतः सभी भारतीय धार्मिक साहित्य, और मुख्यतया बौद्ध व जैनसाहित्य, बड़ी बड़ी सभाओंके उद्भवोंसे परिपूर्ण है। बड़ी सभाओंके प्रयोगने उन सभाओंको लिखनेके लिये सरल संकेतोंका आवश्यकता व्यक्त की, और उसीसे दशमिक क्रम (The place value system of notation) का आविष्कार हुआ। अब यह बात निस्संशयरूपसे सिद्ध हो चुकी है कि दशमिक क्रम का आविष्कार भारतमें ईसवी सन् के प्रारम्भ कालके लगभग हुआ था, जब कि बौद्धधर्म और जैनधर्म अपनी चरमोन्नति पर थे। यह नया अंक क्रम बड़ा शक्तिशाली सिद्ध हुआ, और इसने गणितशास्त्रको गतिप्रदान का मुख्यमार्गमें प्राप्त वेदवादीन प्राथमिक गणितको विकासका और बनाया, और बगहमिहिरके प्रयोगों प्राप्त पाँचवीं शताब्दीके सुसम्पन्न गणितशास्त्रमें परिणत कर दिया।

एक बड़ी महत्वपूर्ण बात, जो गणितके इतिहासकारोंकी दृष्टिमें नहीं आई, यह है कि पद्यविद् द्विदुओं, बौद्धों और जैनियोंका सामान्य साहित्य ईसासे पूर्व तीसरी व चौथी शताब्दीसे लगा-कार मध्यकालीन समय तक अविच्छिन्न है, क्योंकि प्रत्येक शताब्दीके मध्य उपलब्ध हैं, तथापि गणितशास्त्रसंबन्धी साहित्यमें विच्छेद है। यद्यपि सन् ४९९ में रचित आर्यभटीयसे पूर्वकी गणितशास्त्रसंबन्धी रचना कदाचित् कोई हो। अपवादमें ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त (Brahmasphuta-Siddhanta) नामक वह अपूर्ण हस्तलिखित ग्रन्थ ही है जो समस्त दूसरी या तीसरी शताब्दीकी रचना है। किन्तु इसकी उपलब्ध हस्तलिखित प्रतिसे हमें उस कालके गणित-ज्ञानकी स्थितिके विषयमें कोई निश्चित ज्ञात नहीं मिलता, क्योंकि यद्यपि यह आर्यभट्ट, प्रथमगुप्त अपना श्रीधर आदि के ग्रन्थोंके सहस्र गणितशास्त्रकी पुस्तक नहीं है। वह कुछ चुने हुए गणितसम्बन्धी प्रश्नोंकी व्याख्या करता टिप्पणीसी है। इस हस्तलिखित प्रतिसे हम केवल इतना ही अनुमान कर सकते हैं कि दशमिकक्रम और तत्सम्बन्धी अङ्कगणितकी मूल प्रक्रियायें उस समय अच्छी तरह विदित थीं, और पाठके गणितज्ञोंद्वारा उद्धिखित कुछ प्रकारके गणित प्रश्न (problems) भी ज्ञात थे।

यह पूर्व ही बताया जा चुका है कि आर्यभटीयमें प्राग् गणितशास्त्र विशेष उन्नत है, क्योंकि उसमें हमको निम्न लिखित विषयोंका उद्भव मिलता है—वर्तमानकालीन प्राथमिक

अंकगणितके सब भाग जिनमें अनुपात, त्रिनिमय और व्याजके नियम भी सम्मिलित हैं, तथा सरल और वर्ग समीकरण, और सरल कुट्टक (indeterminate equations) की प्रक्रिया तरुका बीजगणित भी है। अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि क्या आर्यभटने अपना गणितज्ञान विदेशसे ग्रहण किया, अथवा जो भी कुछ सामग्री आर्यभटीयमें अन्तर्हित है वह सब भारतवर्षकी ही मौलिक सम्पत्ति है ? आर्यभट लिखते हैं " ब्रह्म, पृथ्वी, चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, बृहस्पति, शनि और नक्षत्रोंको नमस्कार करके आर्यभट उस ज्ञानका वर्णन करता है जिसका कि यहा कुसुमपुरमें आदर है । " इससे पता चलता है कि उसने विदेशसे कुछ ग्रहण नहीं किया। दूसरे देशोंके गणितशास्त्रके इतिहासके अध्ययनसे भी यही अनुमान होता है, क्योंकि आर्यभटीय गणित संसारके किसी भी देशके तत्कालीन गणितसे बहुत आगे बढ़ा हुआ था। विदेशसे ग्रहण करनेकी समानताको इस प्रकार दूर कर देने पर प्रश्न उपस्थित होता है कि आर्यभटसे पूर्वकालीन गणितशास्त्रसंबंधी कोई ग्रंथ उपलब्ध क्यों नहीं है ? इस शंकाका निराकरण सरल है। दाशमिकरूपका आधिष्ठात ईसवी सन् के प्रारंभ कालके लगभग किसी समय हुआ था। इसे सामान्य प्रचारमें आनेके लिये चार पाँच शताब्दियाँ लग गई होंगी। दाशमिकरूपका प्रयोग करनेवाला आर्यभटका ग्रंथ ही सर्वप्रथम अच्छा ग्रंथ प्रतीत होता है। आर्यभटके ग्रंथसे पूर्वके ग्रंथोंमें या तो पुरानी सख्यापद्धतिका प्रयोग था, अथवा, वे समयकी कसौटी पर ठीक उतरने लायक अच्छे नहीं थे। गणितकी दृष्टिसे आर्यभटकी विस्तृत रचयिताका कारण, भरे मतानुसार, बहुतायतसे यही था कि उन्होंने ही सर्वप्रथम एक अच्छा ग्रंथ रचा, जिसमें दाशमिकरूपका प्रयोग किया गया था। आर्यभटके ही कारण पुरानी पुस्तकें अप्रचलित और त्रिहीन हो गईं। इससे साफ पता चल जाता है कि सन् ४९९ के पश्चात् लिखी हुई तो हमें इतनी पुस्तकें मिलती हैं, किन्तु उसके पूर्वके कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं है।

इस प्रकार सन् ५०० ईसवीसे पूर्वके भारतीय गणितशास्त्रके विकास और उन्नतिका चित्रण करनेके लिये यास्तगमें कोई सामान हमारे पास नहीं है। ऐसी अवस्थामें आर्यभटसे पूर्वके भारतीय गणितज्ञानका बोध करानेवाले ग्रंथोंकी खोज करना एक विशेष महत्वपूर्ण कार्य हो जाता है। गणितशास्त्रसंबंधी ग्रंथोंके नष्ट हो जानेके कारण सन् ५०० के पूर्वकालीन भारतीय गणितशास्त्रके इतिहासका पुनर्निर्माण करनेके लिये हमें हिंदुओं, बौद्धों और

१. ब्रह्मकुशलेऽथसुरविबुजयुरुः शोणमगणानमस्तु ।

आयमदीक्षित निगदति कुसुमपुरेऽप्यर्चितं ज्ञानम् ॥ आर्यभटीय २, १

प्रज्ञप्तिनक्षत्रगणानमस्तु कुसुमपुरे कुसुमपुराख्येऽस्मिन्देशे अर्चितं ज्ञानं कुसुमपुरवासिभि पूजितं
प्रगतिज्ञानसाधनं तत्तन्मायभटो निगदति । (परमेश्वराचार्यवट टीका)

संग्रह उपलब्ध होते हैं। हम यहां धरलाके अतर्गत अक्षरगोसे ला गई सत्याओंको व्यक्त करनेकी कुछ पद्धतियोंको उपस्थित करते हैं—

(१) ७९९९९९९८ को ऐसा सत्या कहा है कि जिसके आदिमें ७, अन्तमें ८ और मध्यमें छठ वार ९ की पुनरावृत्ति है^१।

(२) ४६६६६६६४ व्यक्त किया गया है— चोसठ, छठ सौ, द्वांसठ हजार, त्र्यासठ लाख, और चार करोड़^२।

(३) २२७९९४९८ व्यक्त किया गया है— दो करोड़, सत्ताइस, निम्नानेन हजार, चारसौ और अठारह^३।

इनमेंसे (१) में जिस पद्धति का उपयोग किया है वह जैन साहित्यमें अन्य स्थानोंमें भी पायी जाती है, और गणितसारसमूहमें भी कुछ स्थानोंमें है। उससे दशभिन्नरूपका सुपरिचय सिद्ध होता है। (२) में छोटी संख्याएं पहले व्यक्त की गई हैं। यह संस्कृत साहित्यमें प्रचलित साधारण रीतिके अनुसार नहीं है। उसी प्रकार यहां संकेत क्रम सौ है, न कि दश जो कि साधारणतः संस्कृत साहित्यमें पाया जाता है^४। किंतु पाळा और प्राकृतमें सौ का क्रम ही प्रायः उपयोगमें लाया गया है। (३) में सबसे बड़ी सत्या पहले व्यक्त की गई है। अवतरण (२) और (३) स्पष्टतः भिन्न स्थानोंसे लिये गये हैं।

बड़ी संख्यायें— यह सुविदित है कि जैन साहित्यमें बड़ी सत्यायें बहुतायतसे उपयोगमें आई हैं। धरलामें भी अनेक तरहकी जीवराशियों (द्रव्यप्रमाण) आदि पर तर्क रितर्क है। निश्चिन्तरूपसे लिखी गई सबसे बड़ी सत्या पर्याप्त मनुष्योंकी है। यह सत्या धरलामें^५ दो के छठे वर्ग और दो के साने वर्गके बीचकी, अथवा और भी निश्चिन्, बोटि कोटि-कोटि और कोटि-कोटि-कोटि-कोटिके बीचकी कही गई है। याने—

२२^६ और २२^७ के बीचकी। अथवा, और अधिक नियत (१,००,००,०००)^३ और (१,००,००,०००)^४ के बीचकी। अथवा, सर्वा निश्चित— २२^५ × २२^६। इन जीवोंकी सत्या अन्य मतानुसार ७९२२८१६२५१४२६४३३७५९३५४३९५०३३६ है।

१ घ भाग ३, पृष्ठ १८, गाथा ५१। देवो गाम्कसार, जीवराशि, पृष्ठ ६३३

२ घ भाग ३, पृष्ठ १९, गाथा ५२

३ घ भाग ३ पृष्ठ १००, गाथा ५३

४ देसों— गणितसारसमूह १, २७ और भी देवो— दश और सिद्धा हिन्दूगणितशास्त्रा इतिहास,

द १, लाहौर १९३५ पृष्ठ १६

५ दश और सिद्ध, पृष्ठ १४

६ घ भाग ३, पृष्ठ २५३

७ गोमटसार, जीवराशि, (से वू जै सीरीस) पृष्ठ १०४

यह सग्या उन्तीस अक ग्रहण करती है । इसमें भी उतने ही स्थान हैं जितने कि (१,००,००,०००)^५ में, परन्तु है वह उससे बड़ी सख्या । यह बात धवलाकारको ज्ञात है, और उन्होंने मनुष्यक्षेत्रका क्षेत्रफल निकालकर यह सिद्ध किया है कि उस सख्याके मनुष्य मनुष्यक्षेत्रमें नहीं समा सकते, और इसलिये उस सग्याजाल मत ठीक नहीं है ।

मौलिक प्रक्रियायें

धवलामें जोड़, बाकी, गुणा, भाग, वर्गमूल और घनमूल निकालना, तथा सख्याओंका घात निकालना (The raising of numbers to given powers) आदि मौलिक प्रक्रियाओंका कथन उपलब्ध है । ये क्रियाएँ पूर्णांक और भिन्न, दोनोंके समर्थमें कही गई हैं । धवलामें वर्णित घातांकका सिद्धान्त (Theory of indices) दूसरे गणित ग्रंथोंसे कुछ कुछ भिन्न है । निश्चयत यह सिद्धान्त प्राथमिक है, और सन् ५०० से पूर्वका है । इस सिद्धान्तसबधी मौलिक विचार निम्नलिखित प्रक्रियाओंके आधारपर प्रतीत होते हैं—(१) वर्ग, (२) घन, (३) उत्तरोत्तर वर्ग, (४) उत्तरोत्तर घन, (५) किसी सख्याका सख्यातुल्य घात निकालना (The raising of numbers to their own power), (६) वर्गमूल, (७) घनमूल, (८) उत्तरोत्तर वर्गमूल, (९) उत्तरोत्तर घनमूल, आदि । अन्य सब घातांक इन्हीं रूपोंमें प्रगट किये गये हैं ।

उदाहरणार्थ— a^2 को a के घनका प्रथम वर्गमूल कहा है । a^3 को a का घनका घन कहा है । a^4 को a के घनका वर्ग, या वर्गका घन कहा है, इत्यादि^१ । उत्तरोत्तर वर्ग और घनमूल नीचे लिखे अनुसार हैं—

अ का प्रथम वर्ग	याने	$(a)^2 = a^2$
” द्वितीय वर्ग	”	$(a^2)^2 = a^4 = a^{2^2}$
” तृतीय वर्ग	”	a^{2^3}
” न वर्ग	”	a^{2^n}
उसी प्रकार— a का प्रथम वर्गमूल	याने	$a^{\frac{1}{2}}$
” द्वितीय ”	”	$a^{\frac{1}{2^2}}$
” तृतीय ”	”	$a^{\frac{1}{2^3}}$
” न ”	”	$a^{\frac{1}{2^n}}$

वर्गित-संगित

परिभाषिक शब्द वर्णित समर्पितका प्रयोग किसी सत्यान्ता सद्ध्यातुल्य पात करनेके अर्थमें किया गया है ।

उदाहरणार्थ—न^० न का वर्गितसवर्गितरूप है ।

इस सम्बन्धमें धबलामें गिरलन देय 'फलाना और देना' नामक प्रतियाम्का वल्लेख थापा हे । कसिा सावाका 'गिरलन' काना व फलाना अर्णात् उस सरयाको एम्कमें अलग काना हे । जैसे, न के गिरलनका अर्थ हे—

१११११ न बार

'देय' का अर्थ है उपयुक्त अर्थोंमें प्रत्येक स्था पर एकही जगह न (विभक्ति स्या) को रख देना । फिर उस मिलन देयसे उपलब्ध सख्याओंको परस्पर गुणा कर देनेसे उस स्याका वर्गित सर्गित प्राप्त हो जाता है, और यही उस सख्याका प्रथम वर्गित सर्गित कहलाता है । जैसे, न का प्रथम वर्गित सर्गित न^२ ।

मिलन देखकी एकाग्र पुन प्रक्रिया करनेसे, अर्थात् न^न को छेन्न वही निधान पित करनेसे, द्वितीय वर्गित स्वर्गित (न^न) प्राप्त होता है। इसी निधानको पुन एकाग्र करनेसे

न या तृतीय वर्गित सगर्गित $\left\{ \begin{matrix} (न) \\ (न) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} (न) \\ (न) \end{matrix} \right\}$ प्राप्त होता है।

ध्वलामें उक्त प्रक्रियाका प्रयोग तीन बारसे अधिक अवस्थित नहीं हुआ है। निम्न, तृतीय वर्गितसवर्गितका उल्लेख अनेकवार बड़ी सख्याओं व असम्पात व अनन्तके समर्थमें किया गया है। इस प्रक्रियासे कितनी बड़ी सङ्ख्या प्राप्त होती है, इसका ज्ञान इस बातसे हो सकता है कि २ वा तृतीयवर्ग वर्गितसवर्गित रूप 256^{256} हो जाता है।

घातांक सिद्धान्त

उपर्युक्त वचनसे स्पष्ट है कि धरमनाथर धाराका सिद्धान्तसे पूर्णतः परिचित थे। जैसे—

(૧) અમ અન = અમ + ૧

(2) $\frac{a^m}{a^n} = a^{m-n}$

(३) $(a^m)^n = a^{mn}$

१ भइला, भाग ३, पृ २० आदि

उक्त सिद्धान्तोंके प्रयोगसमयी उदाहरण धनलमें अनेक हैं । एक रोचक उदाहरण निम्न प्रकारका है— कहा गया है कि २ के ७ वें वर्गमें २ के छठें वर्गका भाग देनेसे २ का छठा वर्ग लब्ध आता है । अर्थात्—

$$2^{2^7}/2^{2^6} = 2^{2^6}$$

जब दाशमिकक्रमका ज्ञान नहीं हो पाया था तब द्विगुणक्रम और अर्धक्रमकी प्रक्रियाएँ (The operations of duplation and mediation) महत्वपूर्ण समझी जाती थीं । भारतीय गणितशास्त्रके प्रथममें इन प्रक्रियाओंका कोई चिह्न नहीं मिलता । निम्न इन प्रक्रियाओंको मिश्र और यूनानके निवासी महत्वपूर्ण गिनते थे, और उनके अरुगणितसमयी प्रथमोंमें वे तदनुसार स्वीकार की जाती थीं । धनलमें इन प्रक्रियाओंके चिह्न मिलते हैं । दो या अन्य सख्याओंके उत्तरोत्तर वर्गीकरणका विचार निश्चयतः द्विगुणक्रमकी प्रक्रियासे ही परिष्कृतित हुआ होगा, और यह द्विगुणक्रमकी प्रक्रिया दाशमिकक्रमके प्रचारसे पूर्व भारतवर्षमें अवश्य प्रचलित रही होगी । उसी प्रकार अर्धक्रम पद्धतिका भी पता चलता है । धनलमें इस प्रक्रियाको हम २, ३, ४ आदि आधार-वाले लघुरिक्य सिद्धान्तमें साधारणीकृत पाते हैं ।

लघुरिक्य (Logarithm)

धनलमें निम्न पारिभाषिक शब्दोंके लक्षण पाये जाते हैं—

(१) अर्धच्छेद— जितनी बार एक सख्या उत्तरोत्तर आधी आधी की जा सकती है, उतने उस सख्याके अर्धच्छेद कहे जाते हैं । जैसे— २^म के अर्धच्छेद = ॥

अर्धच्छेदका सकेत अछे मान कर हम इसे आधुनिक पद्धतिमें इस प्रकार रख सकते हैं—
क का अछे (या अछे क) = छरि क । यहा लघुरिक्यका आधार २ है ।

(२) वर्गशलाका— किसी सख्याके अर्धच्छेदोंके अर्धच्छेद उस सख्याकी वर्ग-शलाका होती है । जैसे— क की वर्गशलाका = वश क = अछे अछे क = छरि छरि क । यहा लघुरिक्यका आधार २ है ।

(३) त्रिकच्छेद— जितने बार एक सख्या उत्तरोत्तर ३ से विभाजित की जाती है, उतने उस सख्याके त्रिकच्छेद होते हैं । जैसे— क के त्रिकच्छेद = त्रिछे क = छरि ३क । यहा लघुरिक्यका आधार ३ है ।

$$(घ) \text{ छरि छरि म } = \text{ छरि व } + \text{ छरि ररि व } \\ = \text{ ररि अ } + \text{ छरि छरि अ } + \text{ अ छरि अ }$$

$$(ङ) \text{ छरि म } = \text{ म छरि म }$$

$$(च) \text{ छरि छरि म } = \text{ छरि म } + \text{ छरि छरि म } । \text{ इत्यादि }$$

$$(८)^1 \text{ छरि ररि म } < \text{ व }^2$$

इस असाध्यतासे निम्न असाध्यता आती है—

$$\text{व छरि व } + \text{ छरि व } + \text{ छरि छरि व } < \text{ व }^3$$

भिन्न— अकगणितमें भिन्नोक्तों मौलिक प्रक्रियाओं, जिनका ज्ञान धवलामें ग्रहण कर लिया गया है, के अतिरिक्त यहाँ हम भिन्नसंबन्धी अनेक ऐसे रोचक सूत्र पाते हैं जो अन्य किसी गणितसंबन्धी ज्ञात ग्रन्थमें नहीं मिलते । इनमें निम्न लिखित उल्लेखनीय हैं—

$$(१)^1 \frac{n^2}{n \pm (n/p)} = n \mp \frac{n}{p \pm 1}$$

(२)^१ मान लो कि किसी एक सख्या म में द, द' ऐसे दो भाजकों का भाग दिया गया और उनसे क्रमशः क और क' ये दो छद्म (या भिन्न) उत्पन्न हुए । निम्न लिखित सूत्रमें म के $\frac{म}{द \pm द'}$ से भाग देने का परिणाम दिया गया है—

$$\frac{म}{द \pm द'} = \frac{क'}{(क'/क) \pm 1}$$

$$\text{अथवा} = \frac{क}{1 \pm (क/क')}$$

$$(३)^1 \text{ यदि } \frac{म}{द} = क, \text{ और } \frac{म'}{द} = क', \text{ तो— } द (क - क') + म' = म$$

$$(४)^1 \text{ यदि } \frac{अ}{व} = क, \text{ तो— } \frac{अ}{व + \frac{व}{न}} = क - \frac{क}{न + 1},$$

१ धवला, भाग ३, पृ २४

२ धवला, भाग ३, पृ ४६

५ भाग ३, पृ ४६, गाथा २४

२ धवला, भाग ३, पृ ४६

४ धवला, भाग ३, पृ. ४७, गाथा २७.

लिये घातांक नियमोंका उपयोग सर्वसाधारण है । उदाहरणार्थ— विश्वभरके विधुत्करणोंकी गणना करके उसकी व्यक्ति इस प्रकार की गई है— १३६२^{१५} तथा, रूढ़ सख्याओंके निकलन (distribution of primes) को सूचित करनेवाली स्केयूज सख्या (Skewes' number) निम्न प्रकारसे व्यक्त की जाती है—

$$१०१०१०३४$$

सख्याओंको व्यक्त करनेवाले उपर्युक्त समस्त प्रकारोंका उपयोग धवलामें किया गया है । इससे स्पष्ट है कि भारतवर्षमें उन प्रकारोंका ज्ञान सातवीं शताब्दिसे पूर्व ही सर्व साधारण हो गया था ।

अनन्तका वर्गीकरण

धवलामें अनन्तता वर्गीकरण पाया जाता है । साहित्यमें अनन्त शब्दका उपयोग अनेक अर्थोंमें हुआ है । जैन वर्गीकरणमें उन सबका ध्यान रखा गया है । जैन वर्गीकरणके अनुसार अनन्तके ग्यारह प्रकार हैं । जैसे—

(१) नामानन्त^१— नामका अनन्त । किसी भी वस्तु-समुदायके यथार्थत अनन्त होने या न होनेका विचार किये बिना ही केवल उसका बहुत्व प्रगट करनेके लिये साधारण बोलचालमें अथवा अवोध मनुष्यों द्वारा या उनके लिये, अथवा साहित्यमें, उसे अनन्त कह दिया जाता है । ऐसी अवस्थामें 'अनन्त' शब्दका अर्थ नाममात्रका अनन्त है । इसे ही नामानन्त कहते हैं ।

१ सख्या १३६२^{१५} की दाशमिन् क्रमसे व्यक्त करने पर जो रूप प्रगट होता है वह इस प्रकार है—
१५,७४७,७४४,१३६,२७५,००२,५७७,६०५,६५३,९६१,१८३,५५५,४६८,०४४,७१७,९१४,५७२,
११६,७०९,३६६,२३१,४२५,०७६,१८५,६३१,०३१,२९६,

इससे देखा जा सकता है कि २ का तृतीय बगित सर्वांगित अथवा २५६^५ विश्वभरके समस्त विधुत्करणोंकी सख्यासे अधिक होता है । यदि हम समस्त विश्वको एक शतरजका फलक मान लें और विधुत्करणोंको उसकी मोटियां, और दो विधुत्करणोंकी किसी भी परिवृत्तियों इस विश्वके खेलनी पुर 'चाल' मान लें, तो समस्त समस्त 'चालों' की सख्या—

$$१०१०१०३४ \text{ होगी ।}$$

यह सख्या रूढ़ सख्याओं (primes) के विभाग (distribution) से भी सबध रखती है ।

२ जीवाजीविसद्व्यस्स कारणित्वेक्कहा सण्णा अणता । धवला ३, पृ ११

भी आविष्कार किया। विशेषतः जेनियोंने जोरुमरके समस्त जीवों, काल प्रदेशों और क्षेत्र अथवा आकाश प्रदेशों आदिके प्रमाणका निरूपण करनेका प्रयत्न किया है।

बड़ी सख्याओं व्यक्त करनेके तीन प्रकार उपयोगमें लाये गये—

(१) दाशमिक क्रम (Place value notation)— जिसमें दशमानका उपयोग किया गया। इस सम्बन्धमें यह बात उल्लेखनीय है कि दशमानके आधारपर $१०^{१४}$ जैसी बड़ी सख्याओंको व्यक्त करनेवाले नाम कल्पित किये गये।

(२) पाताक नियम (Law of indices वर्ग सर्ग) का उपयोग बड़ी सख्याओंको सूक्ष्मतासे व्यक्त करनेके लिये किया गया। जैसे—

$$(अ) २' = ४$$

$$(ब) (२')' = ४' = २५६$$

$$(स) \{(२')'\} \{(२')'\} = २५६''$$

जिससे २ का तृतीय वर्गित सर्गित कहा है। यह सख्या समस्त विश्व (universe) के विद्युत्चणों (protons and electrons) की सख्यासे बड़ी है।

(३) लघुविक्ष (अर्थःछे) अथवा लघुविक्षके लघुविक्ष (अर्थःछेदशालाका) का उपयोग बड़ी सख्याओंके विचारको छोटी सख्याओंके विचारमें उतारनेके लिये किया गया। जैसे—

$$(अ) छि, २' = २$$

$$(ब) छि, छि, ४' = ३$$

$$(स) छि, छि, २५६'' = ११$$

इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आज भी सख्याओंको व्यक्त करनेके लिये हम लघुविक्ष तीन प्रकार से किसी एक प्रकारका उपयोग करते हैं। दाशमिकक्रम समस्त देशोंकी साधारण सम्पत्ति बन गई है। जहाँ बड़ी सख्याओंका गणित करना पड़ता है, वहाँ लघुविक्षोंका उपयोग किया जाता है। आधुनिक यदार्थविज्ञानमें परिमाणों (magnitudes) को व्यक्त करनेके

१ बड़ी सख्याओं तथा सख्या-नामोंके सर्वप्रथम विश्व जाननेके लिये देखिये दन जीर सिद्द एत हिन्दू
‘दशमिका इतिहास’ (History of Hindu Mathematics), भारतीय प्रज्ञापीठान, लाहौर, द्वारा
१९२९, भाग १, पृ ११ आदि

गणनानन्त (Numerical infinite)

धवलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनान्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता ^२ । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है ^३ । इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनान्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु धवलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसम्बन्धी प्रक्रियाएँ सत्यात और असत्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं ।

सत्यात, असत्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकमात्र नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अरब उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशमी शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिशोक्तसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एवं जघन्य अनन्तानन्त एक वटी भारी सत्या है, किन्तु है यह सान्त । उस प्रत्येक अनुसार सत्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सत्यात—जिसका सकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असत्यात—जिसका सकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका सकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सत्या-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सत्यात— (गणनीय) सत्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य सत्यात (अत्यन्त संख्या) जिसका सकेत हम स ज मान लेते हैं ।

(व) गम्य संख्यात (बीचकी सत्या) जिसका सकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ धवला ३, पृ १६

२ ' न च सत्यं तपि प्रमाणरूपपाणि, तथ तथारूपपादो ' । प ३, पृ १७

३ ' जेत गणनान्तं त बहुवर्णनीय सुगमं च ' । प ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहाँ किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहाँ इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञान उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सख्यात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आता है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अल्प परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखास्वरूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) विस्तारानन्त— द्विदिशारामक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतारामक अनन्ताकाश ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तक जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्ताकाश ।

(१०) भागनन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञान उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस और उपयोग है ।

(११) द्वाध्वतानन्त— निरवस्थाधी या अग्निवासी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण सब व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि ' अनन्त ' सज्ञान प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जे ४
वा जे २
२ जे ४

वा विचरन्तेषु वा पौत्रकम्पेषु वा
पुत्राणां नाम । ३, ४ ११ से १२

अन्तर्वा वा बराज्यो

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनान्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, 'क्योंकि उन अर्थ अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता'^२। यह भी कहा गया है कि 'गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है'^३। इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसम्बन्धी प्रक्रियाएँ सर्याय और असर्याय नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं।

सख्यात, असर्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है। किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा। प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं। किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया। उदाहरणार्थ—नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिलोकसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एवं जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी भारी सख्या है, किन्तु है वह सान्त। उस ग्रंथके अनुसार सर्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सर्यात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं।

(२) असर्यात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सर्या-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सर्यात—(गणनीय) सर्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सर्यात (अल्पतम सर्या) जिसका संकेत हम स ज मान लेते हैं।

(व) मध्यम सर्यात (बीचकी सर्या) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' न च सेसअणत्ताणि पमाणपरूयणाणि, तत्थ उपादत्तादो '। ध ३, पृ १७

३ ' जं त गणणाणत्त त बहुवर्णणीय सुगम च '। ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहा किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहा इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञान उपयोग उन पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सरयात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अन्य परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखारूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) विस्तारानन्त— द्विविस्तारत्मक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रसारामक अनन्तारकाश ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तक जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है निधानिस्तुत अनन्त, अर्थात् घनान्तर अनन्तारकाश ।

(१०) भावानन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानका अपेक्षा अनन्त । इस सज्ञान उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस और उपयोग है ।

(११) आश्रयतानन्त— निरवस्थायी या अविनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण स्वयं व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि ' अनन्त ' सज्ञान प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जैन ऋषिगणतं नाम तं ऋषिगणेषु वा चित्तगणेषु वा पौत्रगणेषु वा अकलो वा ब्राह्मणे वा जे च अन्ये द्विगणतं द्वित्रिगणतमिति तं सज्ज द्विगणतं नाम । घ ३, पृ ११ से १२

२ न तं द्वागणतं तं द्वित्रिगणतमिति तं सज्ज द्विगणतं नाम । घ ३, पृ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनान्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता^२ । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है^३ । इस कथनका अर्थ समवत^४ यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनान्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसंबन्धी प्रक्रियाएँ सख्यात और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं ।

सख्यात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अब उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने^५ ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिलोकसारके अनुसार परितानन्त, युक्तानन्त एवं जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी मारी सख्या है, किन्तु है वह सान्त । उस ग्रंथके अनुसार सख्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सख्यात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असख्यात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सख्या-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सख्यात— (गणनीय) सख्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सख्यात (अल्पतम सख्या) जिसका संकेत हम स ज मान लेते हैं ।

(व) मध्यम सख्यात (बीचकी सख्या) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' ण च सेसअणताणि पमाणपरूखणाणि, तत्थ तधादमणादो ' । ध ३, पृ १७

३ ' ज त गणणात्त त बहुवर्णणीय सुगम च ' । ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त^१— आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहां किसी वस्तुमें अनन्तका आरोपण कर लिया जाता है वहां इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त^२— तत्काल उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उस पुरुषोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त— सख्यात्मक अनन्त । यह संज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त— परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अल्प परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त— एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखारूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) विस्तारानन्त— द्विविस्तारात्मक अथवा पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतरात्मक अनन्तज्ञास ।

(८) उभयानन्त— द्विदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तक जाती है ।

(९) सर्गानन्त— आकाशात्मक अनन्त । इसका अर्थ है त्रिधा विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनान्तर अनन्तज्ञास ।

(१०) भागानन्त— तत्काल उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उस पुरुषके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस और उपयोग है ।

(११) द्वाधतानन्त— निर्विस्थायी या अविनाशी अनन्त ।

पूवोंक वर्गीकरण सब व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि ' अनन्त ' संज्ञाका प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जे व द्रव्याणु नाम व कट्टकम्मेसु वा चित्तकम्मेसु वा धोचकम्मेसु वा
वा जे व क्खे द्रव्याणु इविदा अणुमिदि त सत्त्व द्रव्याणु नाम । घ ३, पृ ११ से १२

२ जे व द्रव्याणु व इविह आगमदो भोजागमदा वा । घ ३, पृ १२

अथवा वा बराडयो

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनान्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, ' क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता ' । यह भी कहा गया है कि ' गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है ' । इस कथनका अर्थ समग्रत यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक विशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई । तो भी अनन्तसबधी प्रक्रियाएँ सख्यात और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं ।

सख्यात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है । किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा । प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अज उसकी परिभाषा करते हैं । किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया । उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशवीं शताब्दिमें लिखित ग्रंथ त्रिलोकसारके अनुसार परीतानन्त, युक्तानन्त एव जघन्य अनन्तानन्त एक उड़ी भारी सख्या है, किन्तु है वह सान्त । उस ग्रंथके अनुसार सख्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सख्यात—जिसका संकेत हम स मान लेते हैं ।

(२) असंख्यात—जिसका संकेत हम अ मान लेते हैं ।

(३) अनन्त—जिसका संकेत हम न मान लेते हैं ।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सख्या-प्रमाणोंके पुन तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सख्यात— (गणनीय) सख्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य सख्यात (अल्पतम सख्या) जिसका संकेत हम स अ मान लेते हैं ।

(व) मध्यम सख्यात (बीचकी सख्या) जिसका संकेत हम स म मान लेते हैं ।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ ' ग च सेसअणत्ताणि पमाणपरमणाणि, तत्थ तथादमणादे ' । ध ३, पृ १७

३ ' ज त गणणाणत्त त बहुवर्णणीय सुगम च ' । ध ३, पृ १६

(२) स्थापनानन्त—आरोपित या आनुपगिक, या स्थापित अनन्त । यह भी यथार्थ अनन्त नहीं है । जहाँ किसी वस्तुमें अनन्तता आरोपण कर लिया जाना है वहाँ इस शब्दका प्रयोग किया जाता है ।

(३) द्रव्यानन्त—तत्काळ उपयोगमें न आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उन पुरखोंके लिये किया जाता है जिन्हें अनन्त-विषयक शास्त्रका ज्ञान है, जिसका वर्तमानमें उपयोग नहीं है ।

(४) गणनानन्त—सख्यात्मक अनन्त । यह सज्ञा गणितशास्त्रमें प्रयुक्त वास्तविक अनन्तके अर्थमें आई है ।

(५) अप्रदेशिकानन्त—परिमाणहीन अर्थात् अत्यन्त अल्प परमाणुरूप ।

(६) एकानन्त—एकदिशात्मक अनन्त । यह वह अनन्त है जो एक दिशामें सीधी एक रेखाके रूपसे देखनेमें प्रतीत होता है ।

(७) निस्तारानन्त—द्विदिशात्मक अपना पृष्ठदेशीय अनन्त । इसका अर्थ है प्रतलमक अनन्ताकाश ।

(८) उभयानन्त—त्रिदिशात्मक अनन्त । इसका उदाहरण है एक सीधी रेखा जो दोनों दिशाओंमें अनन्त तक जाती है ।

(९) सर्गानन्त—आकाशालम्बक अनन्त । इसका अर्थ है निधान-विस्तृत अनन्त, अर्थात् घनाकार अनन्ताकाश ।

(१०) भावानन्त—तत्काळ उपयोगमें आने हुए ज्ञानकी अपेक्षा अनन्त । इस संज्ञाका उपयोग उन पुरखोंके लिये किया जाता है जिसे अनन्त विषयक शास्त्रका ज्ञान है और जिसका उस ओर उपयोग है ।

(११) श्वाश्वतानन्त—निरन्तरस्थायी या अविनाशी अनन्त ।

पूर्वोक्त वर्गीकरण सत्र व्यापक है जिसमें उन सब अर्थोंका समावेश हो गया है जिन अर्थोंमें कि 'अनन्त' संज्ञाका प्रयोग जैन साहित्यमें हुआ है ।

१ जे ह द्रव्याणाम् तं नाम तं षट्कर्मण्येसु वा चित्तकर्मण्येसु वा चोक्तकर्मण्येसु वा अकलो वा ब्रह्मण्येसु वा
 २ जे ह द्रव्याणाम् तं द्विविधं अणुनिधिं तं तत्त्वं द्रव्याणाम् तं नाम । घ ३, पृ ११ से १२
 ३ जे तं द्रव्याणाम् तं द्विविधं आगमयो गोजागमयो वा । घ ३, पृ १२

गणनानन्त (Numerical infinite)

ध्वलामें यह स्पष्टरूपसे कह दिया गया है कि प्रकृतमें अनन्त संज्ञाका प्रयोग^१ गणनानन्तके अर्थमें ही किया गया है, अन्य अनन्तोंके अर्थमें नहीं, 'क्योंकि उन अन्य अनन्तोंके द्वारा प्रमाणका प्ररूपण नहीं पाया जाता'^२। यह भी कहा गया है कि 'गणनानन्त बहुवर्णनीय और सुगम है'^३। इस कथनका अर्थ समस्त यह है कि जैन-साहित्यमें अनन्त अर्थात् गणनानन्तकी परिभाषा अधिक निशदरूपसे भिन्न भिन्न लेखकों द्वारा कर दी गई थी, तथा उसका प्रयोग और ज्ञान भी सुप्रचलित हो गया था। किन्तु ध्वलामें अनन्तकी परिभाषा नहीं दी गई। तो भी अनन्तसबधी प्रक्रियाएँ सत्यान और असख्यात नामक प्रमाणोंके साथ साथ बहुत बार उल्लिखित हुई हैं।

सत्यात, असख्यात और अनन्त प्रमाणोंका उपयोग जैन साहित्यमें प्राचीनतम ज्ञात-कालसे किया गया है। किन्तु प्रतीत होता है कि उनका अभिप्राय सदैव एकसा नहीं रहा। प्राचीनतर ग्रंथोंमें अनन्त सचमुच अनन्तके उसी अर्थमें प्रयुक्त हुआ था जिस अर्थमें हम अत्र उसकी परिभाषा करते हैं। किन्तु पीछेके ग्रंथोंमें उसका स्थान अनन्तानन्तने ले लिया। उदाहरणार्थ— नेमिचन्द्र द्वारा दशमी शताब्दिमें लिखित प्रथम त्रिलोकासारके अनुसार परितानन्त, युक्तानन्त एवं जघन्य अनन्तानन्त एक बड़ी भारी सत्या है, किन्तु है वह सान्त। उस प्रथमके अनुसार सत्याओंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—

(१) सख्यात—जिसका सकेत हम स मान लेते हैं।

(२) असख्यात—जिसका सकेत हम अ मान लेते हैं।

(३) अनन्त—जिसका सकेत हम न मान लेते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकारके सत्या-प्रमाणोंके पुनः तीन तीन प्रभेद किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

(१) सत्यात— (गणनीय) सत्याओंके तीन भेद हैं—

(अ) जघन्य-सत्यात (अल्पतम सत्या) जिसका सकेत हम स ज मान लेते हैं।

(ब) मध्यम सत्यात (बीचकी सत्या) जिसका सकेत हम स म मान लेते हैं।

१ ध्वला ३, पृ १६

२ 'य च सप्तजगताणि प्रमाणपञ्चगणानि, तस्य तद्वादसमादो'। ध ३, पृ १७

३ 'ज त गणनायत त बहुवर्णणीय सुगम च'। ध ३, पृ १६

(स) उत्कृष्ट-असख्यात (सबसे बड़ी संख्या) जिसका संकेत हम स उ मान लेते हैं ।

(२) असख्यात (अगणनीय) के भी तीन भेद हैं—

(अ) परीत असख्यात (प्रथम श्रेणीका असख्य) जिसका संकेत हम अ प मान लेते हैं ।

(ब) युक्त-असख्यात (बीचका असख्य) जिसका संकेत हम अ यु मान लेते हैं ।

(स) असख्यातासख्यात (असख्य-असख्य) जिसका संकेत हम अ अ मान लेते हैं ।

चूँकि इन तीनों भेदोंमेंसे प्रत्येकके पुन तीन तीन प्रभेद होते हैं । जैसे, जघन्य (सबसे छोटा), मध्यम (बीचका) और उत्कृष्ट (सबसे बड़ा) । इस प्रकार असख्यातके भीतर निम्न संख्याएँ प्रविष्ट हो जाती हैं—

१	जघन्य-परीत-असख्यात	अ प ज
२	मध्यम-परीत असख्यात	अ प म
३	उत्कृष्ट परीत असख्यात	अ प उ
१	जघन्य युक्त-असख्यात	अ यु ज
२	मध्यम-युक्त-असख्यात	अ यु म
३	उत्कृष्ट-युक्त-असख्यात	अ यु उ
१	जघन्य-असख्यातासख्यात	अ अ ज
२	मध्यम-असख्यातासख्यात	अ अ म
३	उत्कृष्ट-असख्यातासख्यात	अ अ उ

(३) अनन्त— जिसका संकेत हम न मान चुके हैं । उसके तीन भेद हैं—

(अ) परीत-अनन्त (प्रथम श्रेणीका अनन्त) जिसका संकेत हम न प मान लेते हैं ।

(ब) युक्त-अनन्त (बीचका अनन्त) जिसका संकेत हम न यु मान लेते हैं ।

(स) अनन्तानन्त (नि सीम अनन्त) जिसका संकेत हम न न मान लेते हैं ।

असख्यातके समान इन तीनों भेदोंके भी प्रत्येकके पुन तीन तीन प्रभेद होते हैं । जघन्य, मध्यम और उत्कृष्ट । अतः अनन्तके भेदोंमें हमें निम्न संख्याएँ प्राप्त होती हैं—

१	जघन्य-परीतानन्त	न प ज
२	मध्यम-परीतानन्त	न प म
३	उत्कृष्ट-परीतानन्त	न प उ

१	जघन्य-युक्तानन्त	..	न यु ज
२	मध्यम-युक्तानन्त		न यु म
३	उत्कृष्ट-युक्तानन्त		न यु उ
१	जघन्य-अनन्तानन्त	न न ज
२	मध्यम-अनन्तानन्त	..	न न म
३	उत्कृष्ट-अनन्तानन्त		न न उ

संख्यातका संख्यात्मक परिमाण— सभी जैन ग्रंथोंके अनुसार जघन्य सखात २ है, क्योंकि, उन ग्रंथोंके मतसे भिन्नताकी बोधक यहाँ सत्रसे छोटी सखा है। एकत्रको सखातमें सम्मिलित नहीं किया। मयम सखातमें २ ओर उत्कृष्ट सखातके बीचकी समस्त गणना आ जाती है, तथा उत्कृष्ट सखात जघन्य परीतसखातसे पूर्ववर्ती अर्थात् एक कम गणनाका नाम है। अर्थात् स उ = अ प ज - १। अ प ज को त्रिलोकसारमें निम्न प्रकारसे समझाया है—

जैन भूगोलानुसार यह विश्व, अर्थात् मध्यलोक, भूमि और जलके क्रमवार घलयोंसे बना हुआ है। उनकी सीमाएँ उत्तरोत्तर बढ़ती हुई त्रियायांगले समकेन्द्रीय वृत्तरूप हैं। किसी भी भूमि या जलमय एक घलयका विस्तार उससे पूर्ववर्ती घलयके विस्तारसे दुगुना है। केन्द्र-वर्ती वृत्त (समसे प्रथम बीचका वृत्त) एक लाख (१००,०००) योजन व्यासवाला है, और जम्बूद्वीप कहलाता है।

अन बेलनके आकारके चार ऐसे गड्ढोंकी कल्पना कीजिये जो प्रत्येक एक लाख योजन व्यासवाले और एक हजार योजन गहरे हों। इन्हें अ_१, व_१, स_१ और ड_१ कहिये। अब कल्पना कीजिये कि अ_१ सरसोंके बीजोंसे पूरा भर दिया गया और फिर भी उस पर और सरसों डाले गये जब तक कि उसकी शिखा शुकुके आकारकी हो जाय, जिसमें सत्रसे ऊपर एक सरसोंका बीज रहे। इस प्रक्रियाके लिये जितने सरसोंके बीजोंकी आवश्यकता होगी उनकी सत्पा इस प्रकार है—

[illegible]

इस पूर्वोक्त प्रक्रियाको हम बेलनामर गड्डेका सरसोंके बीजोंसे 'शिखायुक्त पूर्ण' कहेंगे। अब उपर्युक्त शिखायुक्त पूर्ण गड्डेमेंसे उन बीजोंको निकालिये और जम्बूद्वीपसे प्रारम्भ करने प्रत्येक द्वीप और समुद्रके बलयोंमें एक एक बीज डालिये। चूँकि बीजोंकी सरसों सम है, इसलिये अंतिम बीज समुद्रबलय पर पड़ेगा। अब एक बीज व_१ नामक गड्डेमें डाल दीजिये, यह बतलानेके लिये कि उक्त प्रक्रिया एक बार होगई।

अब एक ऐसे बेलनका कल्पना कीजिये जिसका व्यास उस समुद्रकी सीतापर्यंत व्यासके बराबर हो जिसमें यह अंतिम सरसोंका बीज डाला हो। इस बेलनको अ_२ कहिये। अब इस अ_२ को भी पूर्वोक्त प्रकार सरसोंसे शिखायुक्त भर देनेकी कल्पना कीजिये। फिर इन बीजोंको भी पूर्व प्राप्त अंतिम समुद्र-सरसोंसे आगेके द्वीप समुद्ररूप बलयोंमें पूर्वोक्त प्रकारसे क्रमशः एक एक बीज डालिये। इस द्वितीय बार विराममें भी अंतिम सरसों किसी समुद्रबलय पर ही पड़ेगा। अब व_१ में एक और सरसों डाल दो, यह बतलानेके लिये कि उक्त प्रक्रिया द्वितीय बार हो चुकी।

अब फिर एक ऐसे बेलनकी कल्पना कीजिये जिसका व्यास उसी अंतिम प्राप्त समुद्रबलयके व्यासके बराबर हो तथा जो एक हजार योजन गहरा हो। इस बेलनको अ_३ कहिये। अ_३ को भी सरसोंसे शिखायुक्त भर देना चाहिये और फिर उन बीजोंको आगेके द्वीपसमुद्रोंमें पूर्वोक्त प्रकारसे एक एक डालना चाहिये। अंतमें एक और सरसों व_१ में डाल देना चाहिये।

कल्पना कीजिये कि यही प्रक्रिया तब तक चालू रखी गई जब तक कि व_१ शिखायुक्त न भर जाय। इस प्रक्रियामें हमें उत्तरोत्तर बढ़ते हुए आकारके बेलन लेना पड़ेंगे—

अ_१, अ_२, अ_३,

मान लीजिये कि व_१ के शिखायुक्त भरने पर अंतिम बेलन अ' प्राप्त हुआ।

अब अ' को प्रथम शिखायुक्त भर गईना मान कर उस जलबलयके बादसे जिसमें पिछला क्रियाके अनुसार अंतिम बीज डाला गया था, प्रारम्भ करने प्रत्येक जल और स्थलके बलयोंमें एक एक बीज छोड़ने की क्रियाको आगे बढ़ाविये। तब स_१ में एक बीज छोड़िये। इस प्रक्रियाको तब तक चालू रखिये जब तक कि स_१ शिखायुक्त न भर जाय। मान लीजिये कि इस प्रक्रियासे हमें अंतिम बेलन अ'' प्राप्त हुआ। तब फिर इस अ'' से वही प्रक्रिया प्रारम्भ कर दीजिये और उसे व_१ के शिखायुक्त भर जाने तक चालू रखिये। मान लीजिये कि इस प्रक्रियाके अंतमें हमें अ''' प्राप्त हुआ। अतएव जघन्यपरीतासङ्ख्या

अ प ज का प्रमाण अ^३ में समानेवाले सरसप बीजोंकी सरयाके बराबर होगा और उच्छ्रष्ट-
सरयात = स उ = अ प ज - १

पर्यालोचन— सरयाओंको तीन भेदोंमें विभक्त करनेका मुख्य अभिप्राय यह प्रतीत होता है— सख्यात अर्थात् गणना कहा तरु की जा सकती है यह भाषामें सख्या नामोंकी उपलब्धि अपना सरयान्वयिके अन्य उपयोगोंकी प्राप्ति पर अलम्बित है। अतएव भाषामें गणनाका क्षेत्र बढ़ानेके लिये भारतवर्षमें प्रधानतः दश मानके आधारपर सख्या-नामोंकी एक लम्बी श्रेणी बनाई गई। हिन्दू १०^{१०} तरुकी गणनाको भाषामें व्यक्त कर सकनेवाले अठारह नामोंसे सतुष्ट होगये। १०^{१०} से ऊपरकी सख्याएँ उन्हीं नामोंकी पुनरावृत्ति द्वारा व्यक्त की जा सकती थीं, जैसा कि अब हम दश दश-लाख (million million) आदि कह कर करते हैं। किन्तु इस बातका अनुभव होगया कि यह पुनरावृत्ति भारभूत (cumbersome) है। बौद्धों और जैनियोंको अपने दर्शन और निश्चरचना सबधी निचारोंके लिये १०^{१०} से बहुत बड़ी सख्याओंकी आवश्यकता पड़ी। अतएव उन्होंने और बड़ी बड़ी सख्याओंके नाम कल्पित कर लिये। जैनियोंके सख्यानामोंका तो अब हमें पता नहीं है, किन्तु बौद्धोंद्वारा कल्पित सरया-

१ जनियोंके प्राचीन साहित्यमें दीप काल प्रमाणोंके सूचन नामोरी तालिका पाई जाती है जो एक वर्ष प्रमाणसे प्रारम्भ होती है यह नामावली इस प्रकार है—

१ वर्ष		१७ अट्ठांग	= ८४ घुटित
२ युग	= ५ वर्ष	१८ अट्ट	= ,, लाख अट्ठांग
३ पूर्वांग	= ८४ लाख वर्ष	१९ अममांग	= ,, अट्ट
४ पूव	= ,, लाख पूर्वांग	२० अमम	= ,, लाख अममांग
५ नयुतांग	= ,, पूर्ण	२१ हाहांग	= ,, अमम
६ नयुत	= ,, लाख नयुतांग	२२ हाहा	= ,, लाख हाहांग
७ कुमुदांग	= ,, नयुत	२३ ह्रांग	= ,, हाहा
८ कुमुद	= ,, लाख कुमुदांग	२४ ह्रह	= ,, लाख ह्रांग
९ पचांग	= ,, कुमुद	२५ लतांग	= ,, ह्रह
१० पच	= ,, लाख पचांग	२६ लता	= ,, लाख लतांग
११ नल्लिनांग	= ,, पच	२७ महालतांग	= ,, लता
१२ नल्लिन	= ,, लाख नल्लिनांग	२८ महालता	= ,, लाख महालतांग
१३ कमलांग	= ,, नल्लिन	२९ श्रीनस्य	= ,, लाख महालता
१४ कमल	= ,, लाख कमलांग	३० हस्तप्रहेलित	= ,, लाख श्रीनस्य
१५ घुटितांग	= ,, कमल	३१ अचलत्र	= ,, लाख हस्तप्रहेलित
१६ घुटित	= ,, लाख घुटितांग		

यह नामावली मिलोम्प्रति (४-६ वीं शताब्दि) हविषपुराण (८ वीं शताब्दि) और राज वार्तिक (८ वीं शताब्दि) में कुछ नामभेदोंके साथ पाई जाती है। मिलोम्प्रसूतिने एक उल्लेखानुसार अचलत्रा प्रमाण ८४ को ३१ बार परस्पर गुणा करनेसे प्राप्त होता है—अचलत्र = ८४^{३१} तथा यह सख्या ९० अरु प्रमाण होगी। किन्तु लघुरिक्थ तालिका (Logarithmic tables) के अनुसार ८४^{३१} सरया ६० अरु प्रमाण ही प्राप्त होती है। देखिये भवला, भाग ३, प्रस्तावना व फुट नोट, पृ ३४ —सम्पादक

नामोंकी निम्न श्रेणिका चित्ताकर्षक है—

१ एक	= १	१५ अम्बुद	= (१०,०००,०००) ^१
२ दस	= १०	१६ निम्बुद	= (१०,०००,०००) ^१
३ सप्त	= १००	१७ अद्दह	= (१०,०००,०००) ^{१०}
४ सहस्र	= १,०००	१८ अन्नव	= (१०,०००,०००) ^{१०}
५ दससहस्र	= १०,०००	१९ अट्ट	= (१०,०००,०००) ^{१०}
६ सप्तमहस्र	= १००,०००	२० सौमधिक	= (१०,०००,०००) ^{१०}
७ दससप्तमहस्र	= १,०००,०००	२१ उण्ड	= (१०,०००,०००) ^{१०}
८ कोटि	= १०,०००,०००	२२ कुमुद	= (१०,०००,०००) ^{१०}
९ पकोटि	= (१०,०००,०००) ^१	२३ पुटरीक	= (१०,०००,०००) ^{१०}
१० कौटिप्यकोटि	= (१०,०००,०००) ^१	२४ पटुम	= (१०,०००,०००) ^{१०}
११ नहुत	= (१०,०००,०००) ^१	२५ कपान	= (१०,०००,०००) ^{१०}
१२ निनहुत	= (१०,०००,०००) ^१	२६ महास्थान	= (१०,०००,०००) ^१
१३ अखोमिनी	= (१०,०००,०००) ^१	२७ असरयेय	= (१०,०००,०००) ^{१०}
१४ निवृ	= (१०,०००,०००) ^{१०}		

यहां देखा जाता है कि श्रेणिकामें अतिथ नाम असरयेय है। इसका अभिप्राय यही प्रतीत होता है कि असरयेयके ऊपरकी सरयाए गणनानीत हैं।

असरयेयका परिमाण समय समय पर अनन्य बदलता रहा होगा। नेमिचंद्रका असख्यात उपर्युक्त असरयेयमे, जिसका प्रमाण १०^{१४} होता है, निश्चयत भिन्न है।

असख्यात— ऊपर कहा ही जा चुका है कि असख्यातके तीन मुख्य भेद हैं और उनमेंसे भी प्रत्येकके तीन तीन भेद हैं। ऊपर निर्दिष्ट सचेतोंके प्रयोग करनेमें हमें नेमिचंद्रके अनुसार निम्न प्रमाण प्राप्त होते हैं—

$$\text{अधम-परीत-असख्यात (अ प ज)} = स उ + १$$

$$\text{मध्यम-परीत-असख्यात (अ प म)} \text{ है } > \text{अ प ज, किंतु } < \text{अ प उ}$$

$$\text{उत्कृष्ट परीत असख्यात (अ प उ)} = \text{अ यु ज} - १$$

जहां—

$$\text{अधम-युक्त-असख्यात (अ यु ज)} = (\text{अ प ज}) \text{ अ प ज}$$

$$\text{मध्यम-युक्त-असख्यात (अ यु म)} \text{ है } > \text{अ यु ज, किंतु } < \text{अ यु उ}$$

उत्कृष्ट-युक्त असरयात (अ यु उ = अ अ ज - १

जहाँ—

जघन्य-असरयातासख्यात (अ अ ज) = (अ यु ज)^१

मध्यम असख्यातासख्यात (अ अ म) है > अ अ ज, किन्तु < अ अ उ.

उत्कृष्ट-असख्यातासख्यात (अ अ उ) = अ प ज - १.

जहाँ—

न प ज जघन्य-परीत-अनन्तका बोधक है ।

अनन्त— अनन्त श्रेणीकी सख्याएँ निम्न प्रकार हैं—

जघन्य-परीत-अनन्त (न प ज) निम्न प्रकारसे प्राप्त होता है—

$$क = \left[\left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \right] \left[\left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} (अअज) \\ (अअज) \end{matrix} \right\} \right]$$

मानलो ख = क + छह द्रव्य^१

$$\text{मानलो ग} = \left\{ \begin{matrix} \text{खख} \\ (\text{खख}) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} \text{खख} \\ (\text{खख}) \end{matrix} \right\} + ४ राशियाँ$$

तब—

$$\text{जघन्य-परीत-अनन्त (न प ज)} = \left\{ \begin{matrix} गग \\ (गग) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} गग \\ (गग) \end{matrix} \right\}$$

मध्यम-परीत-अनन्त (न प म) है > न प ज, किन्तु < न प उ

उत्कृष्ट परीत-अनन्त (न प उ) = न यु ज - १,

१ छह द्रव्य ये हैं— (१) धर्म, (२) जघर्म, (३) एक जीव, (४) लोकाकाश, (५) अप्रतिष्ठित (वनस्पति जीव), और (६) प्रतिष्ठित (वनस्पति जीव)

२ चार सप्रदाय ये हैं— (१) एक कल्पकालके समय, (२) लोकाकाशके प्रदेश, (३) अत्रमागवध अप्यवसायस्थान, और (४) योगके अधिभाग प्रतिच्छेद

जहाँ—

(अ प ज)

जघन्य युक्त अनन्त (न यु ज) = (अ प ज)

मध्यम युक्त अनन्त (न यु म) है > न यु ज, किंतु < न यु उ

उत्कृष्ट युक्त अनन्त (न यु उ) = न न ज - १

जहाँ—

जघन्य अनन्तानन्त (न न ज) = (न यु ज)^१

मध्यम-अनन्तानन्त (न न म) > है न न ज, किंतु < न न उ

जहाँ—

न न उ उत्कृष्ट अनन्तानन्तके लिये पयुक्त है, जो कि नेमिचन्द्रके अनुसार निम्न प्रकारसे प्राप्त होता है—

$$\text{क्ष} = \left[\left\{ \begin{matrix} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{matrix} \right\} \right] \left[\left\{ \begin{matrix} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} \text{ननज} \\ (\text{ननज}) \end{matrix} \right\} \right] + \text{छह राशियाँ}^2$$

$$\text{म} = \left\{ \begin{matrix} \text{क्षक्ष} \\ (\text{क्षक्ष}) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} \text{क्षक्ष} \\ (\text{क्षक्ष}) \end{matrix} \right\} + \text{दो राशियाँ}^2$$

$$\text{ज} = \left\{ \begin{matrix} \text{मम} \\ (\text{मम}) \end{matrix} \right\} \left\{ \begin{matrix} \text{मम} \\ (\text{मम}) \end{matrix} \right\}$$

अन, केवलज्ञान राशि ज से भा बड़ी है और—

न न उ = केवलज्ञान - ज + ज = केवलज्ञान

पर्यालोचन— उपर्युक्त निरूपण यह निर्धार्य निकलता है—

(१) जघन्य परीत अनन्त (न प ज) अनन्त नहीं होता जबतक उसमें प्रक्षिप्त किये गये छह द्रव्यों या चार राशियोंमेंसे एक या अधिक अनन्त न मान लिये जाय ।

१ छह राशियाँ ये हैं— (१) मित्र, (२) साधारण वनस्पति निगोद, (३) वनस्पति, (४) पुद्गल, (५) भवदाराल और (६) अलोकाश

२ ये दो राशियाँ हैं— (१) धर्मद्रव्य, (२) अधर्मद्रव्य, (इन दोनोंमें अष्टकलसु गुणने अविभाग प्रतिस्केद)

(२) उत्कृष्ट अनन्त अनन्त (न न उ) केवलज्ञानराशिके समप्रमाण है । उपर्युक्त विवरणसे यह अभिप्राय निम्नलता है कि उत्कृष्ट अनन्तानन्त अकगणितज्ञ किसी प्रक्रियाद्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता, चाहे वह प्रक्रिया कितनी ही दूर क्यों न छे जाई जाय । यथार्थत वह अकगणितद्वारा प्राप्त ज्ञ की किसी भी सप्रासे अधिक ही रहेगा । अतः मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि केवलज्ञान अनन्त है, और इसीलिये उत्कृष्ट अनन्तानन्त भी अनन्त है ।

इस प्रकार त्रिलोकसारान्तर्गत विवरण हमें कुछ सशयमें ही छोड़ देता है कि परीतानन्त और युक्तानन्तके तीन तीन प्रकार तथा जघन्य अनन्तानन्त सचमुच अनन्त है या नहीं, क्योंकि ये सन असत्पातके ही गुणनफल कहे गये हैं, और जो राशियां उनमें जोड़ी गई हैं वे भी असत्पातमात्र ही हैं । किन्तु धनलाल अनन्त सचमुच अनन्त ही है, क्योंकि यहां यह स्पष्ट कह दिया गया है कि 'व्यय होनेसे जो राशि नष्ट हो वह अनन्त नहीं कही जा सकती' । धनलालमें यह भी कह दिया गया है कि अनन्तानन्तसे सर्वत्र तात्पर्य मध्यम अनन्तानन्तसे है । अतः धनलालानुसार मध्यम-अनन्तानन्त अनन्त ही है । धनलालमें उल्लिखित दो राशियोंके मिलानकी निम्न रीति बड़ी रोचक है—

एक ओर गतकालकी समस्त अस्तर्षिणी और तत्सर्षिणी अर्थात् कल्पकालके समयोंको (time instants) स्थापित करो । (इनमें अनादि-सातत्य होनेसे अनन्तत्व है ही ।) दूसरी ओर भिष्यादृष्टि जीवराशि रखो । अब दोनों राशियोंमेंसे एक एक रूप बराबर उठा-उठा कर फेकते जाओ । इस प्रकार करते जानेसे कालराशि नष्ट हो जाती है, किन्तु जीव-राशिका अपहार नहीं होता । धनलालमें इस प्रकारसे यह निष्कर्ष निकाला गया है कि भिष्यादृष्टि राशि अतीत कल्पोंके समयोंसे अधिक है ।

यह उपर्युक्त रीति और कुछ नहीं केवल एकसे एककी संगति (one-to one correspondence) का प्रकार है जो आधुनिक अनन्त गणनाकोंके सिद्धान्त (Theory of infinite cardinals) का मूलधार है । यह कहा सकता है कि यह रीति परिमित गणनाकोंके मिलानमें भी उपयुक्त होती है, और इसीलिये उसका आलम्बन दो बड़ी परिमित राशियोंके मिलानके लिये लिया गया था— इतनी बड़ी राशियां जिनके अंगों (elements)

१ 'सते वए णडवत्स अणतवपरिहादो' । ध ३, पृ २५

२ धनलाल ३, पृ २८

३ 'अणतगणताहि ओमपिणि उस्सपिणीहि ण अवहरति बालेण' । ध ३, पृ २८ सूत्र ३ देखो टीका, पृ २८ 'कथं बालेण मिणि जते भिष्यादृष्टी जीवा' ? आदि ।

की गणना किसी सर्यात्मक सङ्का द्वारा नहीं का जा सकी । यह दृष्टिकोण इस बातसे और भा-
 ' पुष्ट होता है कि जैन ग्रंथोंमें समयके अवानका भी निश्चय कर दिया गया है, और इसलिये
 एक कल्प (अतसर्पिणी-उत्सर्पिणी) के कालप्रदेश परिमित ही होना चाहिये, क्योंकि, व-
 स्वय कोई अनन्त कालमान नहीं है । इस अन्तिम मतके अनुसार जद्यप्य परीत अनन्त, जो कि
 परिभाषानुसार कल्पके कालप्रदेशोंकी राशिसे अधिक है, परिमित ही है ।

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, एकसे एकरी समानिकी शक्ति अनन्त गणनाओंके
 ' अध्ययनके लिये सबसे प्रबल साधन सिद्ध हुई है, और उस सिद्धांतके अभेद तथा सर्व प्रथम
 ' प्रयोगका श्रेय जैनियोंको ही है ।

सर्याओंके उपर्युक्त वर्गीकरणमें मुझे अनन्त गणनाओंके सिद्धांतको त्रिकसित करनेका
 प्राथमिक प्रयत्न दिखाई देता है । कि तु इस सिद्धांतमें कुछ गभीर दोष हैं । ये दोष शिरोध-
 र्भूत करेंगे । इनमेंसे एक स-१ की रूपरानी उल्लेखनीय है, जहां स अनन्त है और एक
 वर्गके सीमाका नियामक है । इसके विपरीत जैनियोंका यह सिद्धांत कि एक सर्या स का
 वर्गित स्वर्गित रूप अर्थात् स^२ एक नवीन सर्या उत्पन्न कर देता है, युक्तपूर्ण है । यदि यह
 ' सच हो कि प्राचीन जैन साहित्यका उल्लेख असंख्यत अनन्तसे मेल खाता है, तो अनन्तकी
 सर्याओंकी उत्पत्तिमें आधुनिक अनन्त गणनाओंके सिद्धान्त (Theory of infinite
 - cardinals) का कुछ सीमा तक पूर्वनिर्माण हो गया है । गणितशास्त्राय विनासके उतने
 प्राचीन काठ और उस प्रारम्भिक स्थितिमें इस प्रकारके किसी भी प्रयत्नकी असफलता अदृश्यभारी
 था । आश्चर्य तो यह है कि ऐसा प्रयत्न किया गया था ।

अनन्तके अनेक प्रकारोंकी सत्ताको जार्ज केटरने उन्नीसवीं शताब्दिके मध्यकालके लग-
 भग प्रकाश-सिद्ध करके दिखाया था । उन्होंने सीमातीत (transfinite) सर्याओंका सिद्धांत
 स्थापित किया । अनन्त राशियोंके क्षेत्र (domain) के विषयमें केटरने अन्वेषणोंसे गणितशास्त्रके लिये
 ' एक पुष्ट आधार खोजके लिये एक प्रबल साधन और गणितज्ञान का अत्यन्त गूढ़ विचारोंकी ठीक
 रूपसे व्यक्त करनेके लिये एक मापा मित गई है । तो भी यह सीमातीत सर्याओंका सिद्धांत
 ' अभी अपनी प्राथमिक अवस्थामें ही है । अभी तक इन सर्याओंका कलन (Calculus)
 प्राप्त नहीं हो पाया है, और इसलिये हम उन्हें अभी तक प्रचलतासे गणितशास्त्रीय विवेचनमें
 नहीं उतार सके हैं ।

शब्द-सूची



‘धनञ्जया गणितशास्त्र’ शीर्षक लेखमें जो गणितसे सम्बन्ध रखनेवाले विशेष हिन्दी शब्दोंका उपयोग किया गया है उनके समरूप अंग्रेजी शब्द निम्न प्रकार हैं—

अनन्त-Infinite	घनमूल-Cube root
अनन्त गणनांश सिद्धांत-Theory of infinite cardinals	घात निश्चालना, °करना-Raising of numbers to given powers
अनुपात-Proportion	घातार-Powers
अर्धनम-Operation of mediation	घातांक सिद्धान्त-Theory of indices
अध्वच्छेद-Number of times a number is halved, mediation, logarithm	खतुषच्छेद-Number of times that a number can be divided by 4
अपर्याप्त-Innumerable	चिह्न-Trace
असाम्यता-Inequality	जोड़-Addition
अंश-Notational place	ज्योतिषविद्या-Astronomy
असंगणित-Arithmetic	टिप्पणी-Notes
अंग-Element	त्रिरुच्छेद-Number of times that a number can be divided by 3
आधार-Base (of logarithm)	त्रिज्या-Radius
आविष्कार-Discovery, invention	त्राशिर-Rule of three
उद्योत्तर-Successive	दशमान-Scale of ten
एकदिशात्मक-One directional	दाशमिकक्रम-Decimal place-value notation
एकमे-एकत्री सगति-One to one correspondence	द्विगुणक्रम-Operation of duplication
कला-Art	द्विदिशात्मक-Two dimensional, superficial
कालप्रदेश-Time instant	निर्दृष्टवर्क-Abstract reasoning
कुट्टर-Indeterminate equation	नियम-Rule
केन्द्रवर्ती वृत्त-Initial circle, central core	पद्धति-Method
क्रिया-Operation	परिणाम-Result
क्षेत्रप्रदेश-Locations, points or places	परिमाण-Magnitude
क्षेत्रमिति-Mensuration	परिमाणहीन-Dimensionless
गणित, °शास्त्र-Mathematics	परिमित गणनांश-Finite cardinals,
गणितज्ञ-Mathematician	
गुणा-Multiplication	

पूर्वाङ्क-Integer

प्रक्रिया-Process, operation

अनन्ततमक अतत धाराङ्क-Infinite plane area

प्रश्न-Problem

प्राथमिक-Elementary, primitive

बाकी-Subtraction

बीजगणित-Algebra

बेलनाकार-Cylindrical

भाग-Division

भाजक-Divisor

भिन्न-Fraction

मूल, "मौलिक प्रक्रिया-Fundamental
operation

राशि-Aggregate

रूढ़ संख्या-Prime

रूपरेखा-General outline

लघुगुणित-Logarithm

लघु-Quotient

वर्ग-Square

वर्गमूल-Square root

वर्गलगाई-Logarithm of logarithm

वर्गसमीकरण-Quadratic equation

वर्धित-सर्वाङ्क-Raising a number to its
own power (सहस्रसुख धात)

वलय-Ring

वितरण-Distribution

विज्ञान-Science

प्रोटॉन-Protons and electrons

विनिमय-Barter and exchange

वितरण-Distribution, spreading

वितरण देय-Spread and give

विश्लेषण-Analysis

विस्तार-Details

वृत्त-Circle

व्याज-Interest.

व्यास-Diameter

अधोवर्ती शिखर-Super incumbent cone

शाला School

श्रेणीबद्ध करना-Classify

समवेद दंड-Concentric

सरल समीकरण-Simple equation

संकेत-Symbol, notation

संकेतक्रम-Scale of notation

संख्या-Number

संख्यात-Numberable

संख्यासुख धात-Raising of a number to
its own power

सतत-Continuum

सामान्यीकृत-Generalised

सीमा-Boundary

सीमातीत संख्या-Transfinite number

सूत्र-Formula

२ कन्नड प्रशस्ति

अन्तर-प्ररूपणाके पश्चात् और भाव-प्ररूपणासे पूर्व प्रतियोंमें दो कन्नड पद्योंकी प्रशस्ति पाई जाती है जो इस प्रकार हैं—

पोढनियोळु मल्लिदेवन
पडेद्वर्थयदर्थिजनक्याश्रितजनक ।
पडेदोडमेयादुदिती
पडेउठनीनार्यनोऽग्ने वणिगुदो ॥
बहुबोद्ययन्नदान
बेडगुजडेदेसेव जिनगृहगळुन वा ।
नेडेवरिये माटिसुव
पडेउळनी मल्लिदेवनैव विधाय ॥

ये दोनों पद्य कन्नड भाषाके कदवृत्तमें हैं । इनका अनुवाद इस प्रकार है—

“ इस संसारमें मल्लिदेव द्वाग उपार्जित धन अर्था और आश्रित जनोंकी सम्पत्ति हो गया । अब सेनापतिनी उदारताका यथार्थ वर्णन किस प्रकार किया जा सकता है ? ”

“ उनका अन्नदान बड़ा आश्चर्यजनक है । ये सेनापति मल्लिदेव नामके विधाता बिना किसी स्थानके भेदभावके सुन्दर और महान् जिनगृह निर्माण करा रहे हैं । ”

इन पद्योंमें मल्लिदेव नामके एक सेनापतिके दान-धर्मकी प्रशंसा की गई है । उनके विषयमें यहाँ केवल इतना ही कहा गया है कि वे बड़े दानशील और अनेक जैन मन्दिरोंके निर्माता थे । तेरहवीं शताब्दिके प्रारम्भमें मल्लिदेव नामके एक सिन्द-नरेश हुए हैं । उनके एचण नामके मंत्री थे जो जैनधर्म पालते थे और उन्होंने अनेक जैन मन्दिरोंका निर्माण भी कराया था । उनकी पत्नीका नाम सोमिलदेवी था । (ए क ७, लेख न ३१७, ३२० और ३२१)

कर्नाटकके लेखोंमें तेरहवीं शताब्दिके एक मल्लिदेवका भी उल्लेख मिलता है जो होयसलनरेश नरसिंह तृतीयके सेनापति थे । किंतु इनके विषयमें यह निश्चय नहीं है कि वे जैनधर्मावलम्बी थे या नहीं । श्रवणबेलगोलके शिलालेख न १३० (३३५) में भी एक मल्लिदेवका उल्लेख आया है जो होयसलनरेश वारिवल्लालके पट्टणस्वामी व सचिव नागदेव और उनकी भार्या चन्द्रव्ये (मल्लिसेट्टिकी पुत्री) के पुत्र थे । नागदेव जैनधर्मावलम्बी थे

इसमें कोई संदेह नहीं, क्योंकि, उक्त छेदमें वे नयनार्ति द्विधा तत्त्वज्ञानार्थके पदमक्त शिष्य बंधे गये हैं और उ होने नगरजिनालय तथा कमठगार्धदेव अग्निर्के समुग्र दिष्टपुष्टम और गगना निर्माण बगई था तथा नगर जिनालयको कुछ भूमिका दान भी किया था। मन्त्रिदेवता प्रशसांमें इस छेदमें जो एक पद्य आया है वह इस प्रकार है—

परमानन्ददिनन्तु नाकपतिग पौत्रेभिर्ग पुत्रिदो

वरसौन्दर्यजयतनं तुहिन धर्माद कहो मा—

सुरक्षात्तमेवमगदेरमिमुष चन्द्येग पुत्रि ३।

रिधरनापदणमामिनिधिविनुत धामादिदराद्वय ॥ १० ॥

अर्थात् 'जिस प्रकार इन्द्र और पौत्रेमा (३ गणी) के परमानन्द पूर्णतः सुन्दर जयतनी उत्पत्ति हुई थी, उसी प्रकार तुहिन (चर्क) तथा क्षात्रोदधित्री वछाछोत्रे समान भास्वर मार्तिके प्रेमी नागदेव मिश्र और चन्द्येसे इन रिधरयुद्धि विश्वविभुत पदणरवाभा मन्त्रिदेवता उत्पत्ति हुई।' इससे आगेके पद्यमें कहा गया है कि वे नागदेव श्रितित्त्वपर शोभायमान हैं जिनके वग्मदेव और जोगये माता पिता तथा पणरवाभी मन्त्रिदेव पुत्र हैं। यह छेद शक स १११८ (ईस्वी १९६६) का है, अतः यही साल पदणरवाभा मन्त्रिदेवका पदता है। अभी निश्चयत तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु संभव है कि यही मन्त्रिदेव हों जिनकी प्रशसा धनला प्रतिके उपर्युक्त दो पद्यों की गई है।

३ शका-समाधान

पुस्तक ४, पृष्ठ ३८

१ शका—पृष्ठ ३८ पर लिखा है— 'मिथ्यादृष्टिस्तैस्तैर्निर्णिग रिमेमणाणि न सभयति, तत्कारणमभ्याविगुणगमभावादो' यानी तैजससमुदात प्रमत्तगुणस्थान पर ही होता है, सो इसमें कुछ शका होता है। क्या अशुभ तैजस भी इसी गुणस्थान पर होता है? प्रमत्तगुणस्थान पर ऐसी तीव्र कपाय होना कि मर्मन्व भरम कर दे और स्वयं भी उससे भरम हो जाय और नरक तक चला जाय, ऐसा कुछ समझमें नहीं आता।

समाधान—मिथ्यादृष्टिके शेष तीन विशेषण अर्थात् आहारकसमुदात, तैजससमुदात और केतिसमुदात समान नहीं हैं, क्योंकि, इनके कारणभूत सयमादि गुणोंका मिथ्यादृष्टिके अभान है। इस पक्षिना अर्थ स्पष्ट है कि जिन सयमादि विशिष्ट गुणोंके निमित्तसे आहारकशब्द

आदिनी प्राप्ति होती है, वे गुण मिथ्यादृष्टि जीयके समय नहीं हैं । शंकाकारके द्वारा उठाई गई आपत्तिका परिहार यह है कि तैजसशक्तिकी प्राप्तिके लिये भी उस समय विशेषकी आवश्यकता है जो कि मिथ्यादृष्टि जीयके हो नहीं सकता । किन्तु अश्रुमतैजसका उपयोग प्रमत्तसयत साधु नहीं करते । जो करते हैं, उन्हें उस समय भावलिंगी साधु नहीं, किन्तु द्रव्यलिंगी समझना चाहिए ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ४५

२ शंका— त्रिदेहमें सयतराशिका उत्सेव ५०० धनुष लिखा है, सो क्या यह विशेषताकी अपेक्षासे कथन है, या सर्वा नियम ही है ? (नानन्वच जेन, खतोली, पत्र ता १४४२)

समाधान— त्रिदेहमें सयतराशिका ही उत्सेव नहीं, किन्तु नहा उत्पन्न होनेवाले मनुष्यमात्रका उत्सेव पांचसो धनुष होता है, ऐसा सर्वा नियम ही है जैसा कि उसी चतुर्थ भागके पृ ४५ पर आई हुई “ एदाओ दो नि ओगाइणाओ भरह-इरावण्णु चेव हांति ण त्रिदेहेसु, वय पच्चधणुस्सदुस्सेधणियमा ” इस तीसरी पक्तिसे स्पष्ट है । उसी पक्ति पर तिलोयपण्णत्तीसे दी गई टिप्पणीसे भी उक्त नियमकी पुष्टि होती है । विशेषके लिए देखो तिलोयपण्णत्ती, अधिहार ४, गाथा २२५५ आदि ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ७६

३ शंका— पृष्ठ ७६ में मूलमें ‘मारणतिय’ के पहलेका ‘मुक्’ शब्द अभी विचारणीय प्रतीत होता है ? (जेनस-देश, ता २३-४-४२)

समाधान— मूलमें ‘मुक्मारणनियरामी’ पाठ आया है, जिसका अर्थ— “ क्रिया है मारणात्तिरसमुद्रात् जिन्होंने ” ऐसा किया है । प्रकरणको देखते हुए यही अर्थ समुचित प्रतीत होता है, जिसकी कि पुष्टि गो जी गा ५४४ (पृ ९५२) की टीकामें आए हुए ‘क्रियमाण मारणात्तिरदृश्य’, ‘तियज्जीयमुक्तेपपाददृश्य’, तथा, ५४७ वीं गाथानी टीकामें (पृ ५६७) आये हुए ‘अएमपृथ्वीसनधिमादरपयाप्तपृथ्वीमायेणु उण्णत्तु मुक्कत्तसमुद्रात्तद्वाना’ आदि पाठोंसे भी होती है । “यान देनेकी बात यह है कि द्वितीय व तृतीय उद्धरणमें जिस अर्थमें ‘मुक्’ शब्दका प्रयोग हुआ है, प्रथम अवतरणमें उसी अर्थमें ‘क्रियमाण’ शब्दका उपयोग हुआ है और यह कहनेकी आवश्यकता ही नहीं है कि प्राकृत ‘मुक्क’ शब्दकी सरकृन्च्छाया ‘मुक्’ ही होती है । पटित टोडरमछजीने भी उक्त स्थलपर ‘मुक्’ शब्दका यही अर्थ किया है । इस प्रकार ‘मुक्’ शब्दके किये गये अर्थमें कोई शंका नहीं रह जाती है ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३१३

९ शका—पृ ३१३ में—‘सपरप्यासयमणपमाणपद्मिनादीण’ पाठ अशुद्ध प्रतीत होता है, इसके स्थानमें यदि ‘सपरप्यासयमणपमाणपद्मवादीण’ पाठ हो तो अर्थकी संगति ठीक बैठ जाती है ।

(जैनसन्देश, २० ४ ४२)

समाधान—प्रस्तुत स्थलपर उपलब्ध तीनों प्रतियोंमें जो विभिन्न पाठ प्राप्त हुए और मूढविद्दीप्तिसे जो पाठ प्राप्त हुआ उन सबका उल्लेख वहीं टिप्पणीमें दे दिया गया है । उनमें अधिक हेर फेर करना हमने उचित नहीं समझा और यथाशक्ति उपलब्ध पाठोंपरसे ही अर्थकी संगति बैठा दी । यदि पाठ बदलकर ओर और कुछ सुसंगत अर्थ निकालना ही अभीष्ट हो तो ठीक पाठको इस प्रकार रखना अधिक सुसंगत होगा—स परप्यासयमणपद्मिनादीणमुबल्ला । इस पाठके अनुसार अर्थ इस प्रकार होगा—“ क्योंकि स्व परप्रकाशक प्रमाण व प्रदीपादिक पाये पाये जाते हैं (इसलिये शब्दके भी स्वप्रतिपादकता बन जाती है) ” ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३५०

१० शका—ध्वलराज पद ४, पृष्ठ ३५०, ३६६ पर सम्पूर्ण जीवके सम्यग्दर्शन होना लिखा है । परन्तु लघ्विसार गाथा २ में सम्यग्दर्शनकी योग्यता गर्भजके लिखी है, सो इसमें विरोधसा प्रतीत होता है, खुलासा करिए ।

(नानकचन्द्र जैन, खताली, पन्ना १६ २ ४२)

समाधान—लघ्विसार गाथा दूसरीमें जो गर्भजका उल्लेख है, वह प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्तिकी अपेक्षासे है । किन्तु यहाँ उपर्युक्त पृष्ठोंमें जो सम्पूर्ण जीवके सम्यग्दर्शन पानेका निरूपण है, उसमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वका उल्लेख नहीं है, जिससे ज्ञात होता है कि यहाँ वह कथन वेदकसम्यक्त्वकी अपेक्षासे किया गया है । अतएव दोनों कथनोंमें कोई विरोध नहीं समझना चाहिए ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ३५२

११ शका—आपने अपूर्णकरण उपशमकको मरण करके अनुत्तर विमानोंमें उत्पन्न होना लिखा है, जब कि मूलमें ‘उत्तमो देवो’ पाठ है । क्या उपशमश्रेणीमें मरण करनेवाले जाव नियमसे अनुत्तम ही जाते हैं ? क्या प्रमत्त और अप्रमत्तवाले भी सर्वार्थसिद्धिमें जा सकते हैं ?

(नानकचन्द्र जैन खताली, पन्ना ता १-४-३२)

समाधान—इस शकामें तीन शक्योंमें गर्हित हैं जिनका समाधान क्रमशः इस प्रकार है—

(१) मूलमें ‘उत्तमो देवो’ पाठ नहीं, किन्तु ‘लघुसत्तमो देवो’ पाठ है । लघुसत्तमकका अर्थ अनुत्तर विमानवासी देव होता है । यथा—लघुसत्तम-लघुसत्तम-पु० । पञ्चानुत्तरविमानस्य

देवेसु । सूत्र० १ श्रु ६ अ । सम्प्रतिःस्वसत्तमदेवस्वरूपमाह—

सत्त एवा जह्वात् पटु पमाण ततो उ सिञ्जते ।

वत्तियमेत्त न हु त तो वे स्वसत्तमा जाया ॥ १३२ ॥

सव्यट्टसिद्धिनामे उक्कोसिद्धिं य निजयमादीसु ।

एगात्तसेसगन्भा भवति स्वसत्तमा देवा ॥ १३३ ॥ व्य ५ उ

अभिधानराजेन्द्र, लवसत्तमश्च

(२) उपशमश्रेणीमें मरण करनेवाले जीव नियमसे अनुत्तर विमानोंमें ही जाते हैं, ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु त्रिलोकप्रज्ञसिद्धि की निम्न गाथासे ऐसा अग्रय ज्ञात होता है कि चतुर्दशपूर्ववारी जीव लान्तव कापिष्ठ कल्पसे लगाकर सर्गार्थसिद्धिपर्यंत उत्पन्न होते हैं । चूकि 'गुके बाये पूरंविद' के नियमानुसार उपशमश्रेणीवाले भी जीव पूर्ववत् हो जाते हैं, अतएव उनकी लातनरूपसे ऊपर ही उत्पत्ति होती है नीचे नहीं, ऐसा अग्रय कहा जा सकता है । यह गाथा इस प्रकार है—

दमपुवधरा सोहम्मगहुदि सव्यट्टसिद्धिपरियत्त

चोहम्मपुवधरा तह एत्तवकप्पादि वच्चे ॥ ति ५ पत्र २१७, १६

(३) उपशमश्रेणीपर नहीं चटनेवाले, पमत्त अप्रमत्तसयत गुणस्थानोंमें ही परिवर्तन-सहजोंको करनेवाले साधु सर्गार्थसिद्धिमें नहीं जा सकते हैं, ऐसा स्पष्ट उल्लेख देखनेमें नहीं आया । प्रत्युत इसके त्रिलोकसार गाथा न ५४६ के 'सव्यट्टो त्ति बुद्धिद्वी महत्त्वहं' पदसे द्रव्य-भाररूपसे महाव्रती सयतोंका सर्गार्थसिद्धि तक जानेका स्पष्ट विधान मिलता है ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ४११

१२ शंका—योग परिवर्तन और व्याघात परिवर्तनमें क्या अन्तर है ?

(नानन्धचन्द्र जेन, खतौली, पत्र ता १४४२)

समाधान—निश्चित योगका अन्य किसी व्याघातके बिना काल क्षय हो जाने पर अथ योगके परिणमनको योग परिवर्तन कहते हैं । किन्तु निश्चित योगका कालक्षय होनेके पूर्व ही क्रोधादि निमित्तसे योग परिवर्तनको व्याघात कहते हैं । जैसे—कोई एक जीव मनोयोगके साथ विद्यमान है । जब अन्तर्मुहूर्तप्रमाण मनोयोगका काल पूरा हो गया तब वह वचनयोगी या काययोगी हो गया । यह योग-परिवर्तन है । इसी जीवके मनोयोगका काल पूरा होनेके पूर्व ही कषाय, उपद्रव, उपसर्ग आदिके निमित्तसे मन चंचल हो उठा और वह वचनयोगी या काययोगी हो गया, तो यह योगका परिवर्तन व्याघातकी अपेक्षासे हुआ । योग-परिवर्तनमें काल प्रधान है, जब कि व्याघात-परिवर्तनमें कषाय आदिका व्याघात प्रधान है । यही दोनोंमें अन्तर है ।

पुस्तक ४, पृष्ठ ४५६

१३ श्रुति— पृष्ठ ४५६ में ' अणलेस्सागमणामभा ' का अर्थ ' अय लेस्यास आगमन असम्भव है ' किया है, होना चाहिए— अय लेस्यामं गमन असम्भव है ।

(जैन-देश, ता २०-४-४२)

समाधान— किये गये अर्थमें और सुझाये गये अर्थमें कोई भेद नहीं है । ' अय लेस्यास आगमन ' और ' अय लेस्यामं गमन ' कहनेसे अर्थमें कोई अंतर नहीं पड़ता । मूर्तों भा दोनों प्रकारके प्रयोग पाये जाते हैं । उदाहरणार्थ— प्रस्तुत पाठके ऊपर ही पाक्ष है— ' हीयमाण-बहुमाणनिन्देस्साण काउलेस्साण वा वच्छिदस्स नीललेस्सा आगदा ' अर्थात् हीयमाण कृष्ण लेस्यामं अथवा वर्धमान कापोतलेस्यामं विद्यमान किसी जीवके नीललेस्या आ गई, इत्यादि ।

४ विषय-परिचय



जीवस्थानकी आठ प्ररूपणाओंमेंसे प्रथम पांच प्ररूपणाओंका वर्णन पूर्व प्रकाशित चार भागोंमें किया गया है । अब प्रस्तुत भागमें अवशिष्ट तीन प्ररूपणाएं प्रकाशित की जा रही हैं— अंतरानुगम, भागानुगम और अल्पबहुत्यानुगम ।

१ अन्तरानुगम

निश्चित गुणस्थानवर्ती जीवका उस गुणस्थानको छोड़कर अय गुणस्थानमें चले जाने पर पुन उसी गुणस्थानकी प्राप्तिके पूर्व तकके कालको अतर, व्युच्छेद या विरहकाल कहते हैं । सन्ने छोटे विरहकालको जघन्य अतर और सबसे बड़े विरहकालको उत्कृष्ट अतर कहते हैं । गुणस्थान और मार्गस्थानोंमें इन दोनों प्रकारोंके अतरोंके प्रतिपादन करनेवाले अनुयोगद्वाराको अंतरानुगम कहते हैं ।

पूर्व प्ररूपणाओंके समान इस अतरप्ररूपणामें भी ओष और आदेशकी अपेक्षा अतरकी निर्णय किया गया है, अर्थात् यह बताया गया है कि यह जान किस गुणस्थान या मार्गस्थानसे कबसे कम कितने काळ तक के लिए और अधिकसे अधिक कितने काल तक के लिए अतरको प्राप्त होता है ।

उदाहरणार्थ—ओषकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टि जीवोंका अतर कितने काळ होता है प्रश्नके उत्तरमें बताया गया है कि नाना जीवोंकी अपेक्षा अतर नहीं है, निरतर है

इसका अभिप्राय यह है कि मिथ्यात्वपर्यायसे परिणत जीवोंका तीनों ही कालोंमें व्युच्छेद, विरह या अभाव नहीं है, अर्थात् इस ससारमें मिथ्यादृष्टि जीव सर्वकाल पाये जाते हैं । किन्तु एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यात्वका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्तकालप्रमाण है । यह जघन्य अन्तरकाल इस प्रकार घटित होता है कि कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंकी विशुद्धिके निमित्तसे सम्यक्त्वको प्राप्तकर असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानवर्ती हुआ । वह चतुर्थ गुणस्थानमें सबसे छोटे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण सम्यक्त्वके साथ रहकर सञ्ज्ञ आदि के निमित्तसे गिरा और मिथ्यात्वको प्राप्त होगया, अर्थात् पुन मिथ्यादृष्टि होगया । इस प्रकार मिथ्यात्व गुणस्थानको छोड़कर अन्य गुणस्थानको प्राप्त होकर पुन उसी गुणस्थानमें आनेके पूर्व तक जो अन्तर्मुहूर्तकाल मिथ्यात्वपर्यायसे निरहित रहा, यही उस एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका जघन्य अन्तर माना जायगा ।

इसी एक जीवकी अपेक्षा मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो छयासठ अर्थात् एक सौ बत्तीस (१३२) सागरोपम काल है । यह उत्कृष्ट अन्तरकाल इस प्रकार घटित होता है कि कोई एक मिथ्यादृष्टि तिर्यच अथवा मनुष्य चौदह सागरोपम आयुस्थितिवाले लान्तवकापिष्ठ कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ वह एक सागरोपम कालके पश्चात् सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । तेरह सागरोपम काल वहाँ सम्यक्त्वके साथ रहकर च्युत हो मनुष्य होगया । उस मनुष्यभयमें सयमको, अथवा सयमासयमको पालन कर बाईस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले आरण-अच्युत कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत होकर पुन मनुष्य हुआ । इस मनुष्यभयमें सयम धारण कर मरा और इकतीस सागरोपमकी आयुवाले उपरिम प्रेयस्वके अहमिन्द्रोंमें उत्पन्न हुआ । जहासे च्युत हो मनुष्य हुआ, और सयम धारण कर पुनः उक्त प्रकारसे बीस, बाईस और चौतीस सागरोपमकी आयुवाले देवों ओर अहमिन्द्रोंमें क्रमशः उत्पन्न हुआ । इस प्रकार वह पूरे एक सौ बत्तीस (१३२) सागरोपम सम्यक्त्वके साथ रहकर अन्तमें पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस तरह मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर सिद्ध होगया । उक्त विवेचनमें यह बात ध्यान रखनेकी है कि वह जीव जिनने बार मनुष्य हुआ, उतने बार मनुष्यभयसम्बन्धी आयुसे कम ही देवायुको प्राप्त हुआ है, अन्यथा बतलाए गए कालसे अधिक अन्तर हो जायगा । कुछ कम दो छयासठ सागरोपम कहनेका अभिप्राय यह है कि वह जीव दो छयासठ सागरोपम कालके प्रारम्भमें ही मिथ्यात्वको छोड़कर सम्यक्त्वकी बना और उसी दो छयासठ सागरोपमकालके अन्तमें पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हो गया । इसलिए उतना काल उनमेंसे घटा दिया गया ।

यहाँ ध्यान रखनेकी खास बात यह है कि काल-प्ररूपणामें जिन-जिन गुणस्थानोंका काल नानाजीवोंकी अपेक्षा सर्वकाल बतलाया गया है, उन-उन गुणस्थानवर्ती जीवोंका नानाजीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं होता है । किन्तु उनके सिवाय शेष सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंका नानाजीवोंकी

तथा एक जीवकी अपेक्षा अंतर होता है। इस प्रकार नानाजीवोंकी अपेक्षा कभी भी सिद्ध हो नहीं प्राप्त होनेवाले छह गुणस्थान हैं— १ भिव्यादृष्टि, २ असयनसम्पत्तृष्टि, सपत्तासयत, ४ प्रमत्त सयत, ५ अप्रमत्तसयन और ६ सयोगिकेन। इन गुणस्थानोंमें केवल एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अंतर बतलाया गया है, जिसे प्रत्येक अव्ययनसे पाठक मली भाति जान सकेंगे।

जिस प्रकार ओरसे अंतर का निरूपण किया गया है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी उन उन मार्गणाओंमें समग्र गुणस्थानोंका अंतर जानना चाहिए। मार्गणाओंमें आठ सान्तरमार्गणाएँ होती हैं, अर्थात् जिनका अंतर होता है। जैसे— १ उपशमसम्पत्तृष्टिमार्गणा, २ सूक्ष्मसाध्यापमयमार्गणा, ३ आहारकृत्ययोगमार्गणा, ४ आहारकृतिश्रुतयोगमार्गणा, ५ वैकृत्यिकमिश्रकृत्ययोगमार्गणा, ६ लक्ष्यपर्याप्तमनुष्यगतिमार्गणा, ७ सासादनसम्पत्तृष्टिमार्गणा और सन्ध्यभिध्यान्वमार्गणा। इन आठोंका उत्कृष्ट अंतर काल रूपश १ सात दिन, २ छह मास, ३ वर्षपृथक्, ४ वर्षपृथक्, ५ बारह मूर्त्त, और अन्तिम तीन सांतर मार्गणाओंका अंतरवाले पृथक् पृथक् पल्लोपमका अपर्यायता माग है। इन सब सांतर मार्गणाओंका जघन्य अंतरकाल एक समप्रमाण ही है। इन सांतर मार्गणाओंके अतिरिक्त शेष सब मार्गणाएँ नानाजीवोंकी अपेक्षा अंतर रहित हैं, यह प्रत्येक स्वाध्यायसे सरलतापूर्वक हृदयगत किया जा सकेगा।

२ भावानुगम

कामके उपशम, क्षय आदिके निमित्तसे जावके जो परिणामविशेष होते हैं, उन्हें मात्र कहते हैं। वे भाव पांच प्रकारके होते हैं— १ औदयिकभाव, २ औपशमिकभाव, ३ क्षायिकभाव, ४ क्षयोपशमिकभाव और पारिणामिकभाव। कामोंके उदयसे होनेवाले भावोंको औदयिक मात्र कहते हैं। इसके इक्कीस भेद हैं— चार गतिया (नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति), तीन छिग (ला, पुरुष, और नपुमकछिग), चार त्रयाय (क्रोध, मान, माया और लोभ), मिथ्यादर्शन, असिद्ध, अज्ञान, छह छेदपाएँ (कृष्ण, नील, काशित, तेज, पद्म और गुच्छेष्टमा), तथा असयम। मोहनीषकर्मके उपशमसे (क्योंकि, शेष सात कामोंका उपशम नहीं होता है) उत्पन्न होनेवाले भावोंको औपशमिक मात्र कहते हैं। इसके दो भेद हैं— १ औपशमिसम्पत्तृष्टि और २ औपशमिन्चारित्र। कामोंके क्षयसे उत्पन्न होनेवाले भावोंको क्षायिकभाव कहते हैं। इसके नौ भेद हैं — १ क्षायिसम्पत्तृष्टि, २ क्षायिन्चारित्र, ३ क्षायिकज्ञान, ४ क्षायिकज्ञान, ५ क्षायिकज्ञान, ६ क्षायिकज्ञान, ७ क्षायिकमोग, ८ क्षायिकउपमोग और ९ क्षायिकतार्य। कामके क्षयोपशमसे उत्पन्न होनेवाले भावोंको क्षयोपशमिकभाव कहते हैं। अष्टाह भेद हैं— चार ज्ञान (मति, श्रुत, अप्रति आर मन पर्ययज्ञान), तीन अज्ञान

(कुमति, कुश्रुत और विभगावधि), तीन दर्शन (चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन), पाच लब्धियाँ (क्षायोपशमिक दान, लाम, भोग, उपभोग और वीर्य), क्षायोपशमिकसम्पत्कन, क्षायोपशमिकचारित्र और समयसयम । इन पूर्वोक्त चारों भागोंसे विभिन्न, कर्मोंके उदय, उपशम आदिर्क्षा अपेक्षा न रखते हुए स्वतः उत्पन्न भागोंको परिणामिकमान कहते हैं । इसके तीन भेद हैं— १ जीवत्व, २ भव्यत्व और ३ अभव्यत्व ।

इन उपर्युक्त भागोंके अनुगमको भागानुगम कहते हैं । इस अनुयोगद्वारमें भी ओघ और आदेशकी अपेक्षा भागोंका विवेचन किया गया है । ओघनिर्देशकी अपेक्षा प्रश्न किया गया है कि ' मिथ्यादृष्टि ' यह कौनसा भाग है ? इसके उत्तरमें कहा गया है कि मिथ्यादृष्टि यह औदयिकमान है, क्योंकि, जीवोंके मिथ्या दृष्टि मिथ्यात्वकर्मके उदयसे उत्पन्न होती है । यहाँ यह शका उठाई गई है कि, जब मिथ्यादृष्टि जीवोंके मिथ्यात्वभावके अतिरिक्त ज्ञान, दर्शन, गति, लिंग, कषाय भव्यत्व आदि और भी भाग होते हैं, तब यहाँ केवल एक औदयिकमानको ही बतानेका क्या कारण है ? इस शकाके उत्तरमें कहा गया है कि यद्यपि मिथ्यादृष्टि जीवोंके औदयिकभावके अतिरिक्त अन्य भाव भी होते हैं, किन्तु वे मिथ्यादृष्टिसे कारण नहीं हैं, एक मिथ्यात्वकर्मका उदय ही मिथ्यादृष्टिका कारण होता है, इसलिए मिथ्यादृष्टिको औदयिकभाव कहा गया है ।

सासादनगुणस्थानमें पारिणामिकमान बताया गया है, और इसका कारण यह कहा गया है कि जिस प्रकार जीवन आदि पारिणामिक भागोंके लिए कर्मोंका उदय आदि कारण नहीं है, उसी प्रकार सासादनसम्पत्कनके लिए दर्शनमोहनीयकर्मका उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशम, ये कोई भी कारण नहीं हैं, इसलिए इसे यहाँ पारिणामिकमान ही मानना चाहिए ।

सम्यग्मिथ्यात्वगुणस्थानमें क्षायोपशमिकमान होता है । यहाँ शका उठाई गई है कि प्रतिवधीकर्मके उदय होनेपर भी जो जीवोंके स्वाभाविक गुणका अंश पाया जाता है, वह क्षायोपशमिक कहलाता है, किन्तु सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके उदय रहते हुए तो सम्यक्त्वगुणकी कणिका भी अवशिष्ट नहीं रहती है, अथवा सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके सर्वशतीपना नहीं बन सकता है । अतएव सम्यग्मिथ्यात्वमान क्षायोपशमिक सिद्ध नहीं होता है ? इसके उत्तरमें कहा गया है कि सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके उदय होनेपर श्रद्धानाश्रद्धानात्मक एक मिश्रमान उत्पन्न होता है । उसमें जो श्रद्धानाश है, वह सम्यक्त्वगुणका अंश है । उसे सम्यग्मिथ्यात्वकर्मका उदय नष्ट नहीं करता है, अतएव सम्यग्मिथ्यात्वमान क्षायोपशमिक है ।

असयनसम्पत्दृष्टिगुणस्थानमें औपशमिक, क्षायिक और क्षायोपशमिक, ये तीन भाव पाये जाते हैं, क्योंकि, यहाँ दर्शनमोहनीयकर्मका उपशम, क्षय और क्षयोपशम, ये तीनों होते हैं ।

यह। यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि चौथे गुणस्थान तक भाग्योत्तरा प्रत्यक्ष दर्शन मोहनीय कर्मोंकी अपेक्षा किया गया है। इसका कारण यह है कि गुणस्थानोंका तात्पर्य या निराशा-रूप मोह और पापोंके आश्रित है। माहकर्मके दो भेद हैं— एक दर्शनमोहनीय और दूसरा चारित्र्यमोहनीय। आत्माके सम्पूर्णगुणोंको धारणयोग्य दर्शनमोहनीय है निमित्त निमित्तसे आत्मा वस्तुत्वभावसे या अपने हित अहितका देखना और जानना हुआ भी, भ्रमज्ञान नहीं कर सकता है। चारित्र्यगुणोंको धारणयोग्य चारित्र्यमोहनीयकर्म है। यह वह कर्म है जिसके निमित्त वस्तुत्वस्वरूप यथाथ भ्रमज्ञान करते हुए भी, स्वर्गार्थको जानने हुए भी, जीव उत्तर चउ नहीं पाता है। मन, वचन और वापसी चंचलताको योग कहते हैं। इससे निमित्तसे आत्मा सर्व परस्परानुगत रहता है, और कर्मभ्रमका कारण भी यही है। आत्मके चार गुणस्थान दर्शन मोहनीय कर्मके उदय, उपशम, क्षयोपशम आदिम उपाय होने हैं, इसीलिए उन गुणस्थानोंमें दर्शनमोहका अपेक्षासे (अथ भावोंके होते हुए भी) भाग्योत्तरा प्रत्यक्ष किया गया है। तपस्वी चौथे गुणस्थान तक रहनेवाला असंयममात्र चारित्र्यमोहनीयकर्मके उदयसे अपेक्षासे है, अन उस आधिक्यभावा ही जानना चाहिए। पाचवेंके उत्तर ग्राह्यें तक आठ गुणस्थानोंका आधार चारित्र्य मोहनीयकर्म है अर्थात् ये आठों गुणस्थान चारित्र्यमोहनीयकर्मके उपशम, क्षयोपशम, उपशम और क्षयसे होने हैं, अर्थात् पाचवें, छठे और सातवें गुणस्थानमें क्षयोपशमिक्रमात्, आठवें, नवें, दशवें और ग्यारहवें, इन चारों उपशमिक गुणस्थानोंमें औपशमिक्रमात्, तथा क्षयकशेगासम-की चारों गुणस्थानोंमें, तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानमें क्षयिक्रमात् कहा गया है। तेरहवें गुणस्थानमें मोहका अभाव हो जानेसे केवल योगको ही प्रज्ञानता है और इसीलिए इस गुणस्थानका नाम सरोजिनीरूपी रखा गया है। चौदहवें गुणस्थानमें योगके अभावकी प्रधानता है, अतएव अपोमि केवली ऐसा नाम सार्यक है। इस प्रकार बाह्यमें यह कल्पितार्थ जानना चाहिए कि निश्चित गुणस्थानमें ममत्त अन्य मात्र पाये जाते हैं, किन्तु यहाँ मात्रप्रत्यक्षार्थमें केवल उन्हीं भाग्योत्तरा बनाया गया है, जो कि उन गुणस्थानोंके मुख्य आधार हैं।

आदेशकी अपेक्षा भी इसी प्रकारसे भाग्योत्तरा प्रतिपादन किया गया है, जो कि प्रचारक-कर्मों व प्रज्ञानार्थमें दिव्य गये नरकोंके मिहाराश्रयमें सहजमें ही जाने जा सकते हैं।

३ अल्पबहुत्वानुगम

द्रव्यप्रमाणानुगममें कलये गये सत्या-प्रमाणके आधार पर गुणस्थानों और मार्गस्थानोंमें समान पारस्परिक सत्यापन हीनता और अविच्छेदका निर्णय करनेवाला अल्पबहुत्वानुगम नामक अनुयोगद्वार है। यद्यपि युक्त पाठक द्रव्यप्रमाणानुगम अनुयोगद्वारके द्वारा ही उक्त अल्पबहुत्वानुगम निर्णय कर सकते हैं, पर आचार्यने विस्ताररुचि शिष्याके लाभार्थ इस नाम

एक पृथक् ही अनुयोगद्वारा बनाया, क्योंकि, सक्षेपरचि शिष्योंकी जिज्ञासाको तृप्त करना ही शास्त्र-प्रणयनका फल बनलाया गया है ।

अन्य प्ररूपणाओंके समान यहां भी ओघनिर्देश और आदेशनिर्देशकी अपेक्षा अल्प-बहुवृत्ता निर्णय किया गया है । ओघनिर्देशसे अपूर्व-भरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा परस्पर तुल्य हैं, तथा शेष सब गुणस्थानोंके प्रमाणसे अल्प हैं, क्योंकि, इन तीनों ही गुणस्थानोंमें पृथक् पृथक् रूपसे प्रवेश करनेवाले जीव एक दो को आदि लेकर अधिकसे अधिक चौपन तक ही पाये जाते हैं । इतने कम जीव इन तीनों उपशामक गुणस्थानोंको छोड़कर और किसी गुणस्थानमें नहीं पाये जाते हैं । उपशान्त-रूपायनीतरागछद्मस्थ जीव भी पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, क्योंकि, उक्त उपशामक जीव ही प्रवेश करते हुए इस म्पारहवें गुणस्थानमें आते हैं । उपशान्त-रूपायनीतरागछद्मस्थोंसे अपूर्व-भरणादि तीन गुणस्थानवर्ती क्षपक सत्यातगुणित हैं, क्योंकि, उपशामकके एक गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले चौपन जीवोंकी अपेक्षा क्षपकके एक गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले एक सौ आठ जीवोंके दूने प्रमाण-स्वरूप सख्यातगुणितता पाई जाती है । क्षीण-रूपायनीतरागछद्मस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, क्योंकि, उक्त क्षपक जीव ही इस बारहवें गुणस्थानमें प्रवेश करते हैं । सयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा दोनों ही परस्पर तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण अर्थात् एक सौ आठ हैं । किन्तु सयोगिकेवली जिन सचयकालकी अपेक्षा प्रविश्यमान जीवोंसे सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, पांचसौ अठानवे मात्र जीवोंकी अपेक्षा आठ लाख अठानवे हजार पांचसौ दो (८९८५०२) सख्याप्रमाण जीवोंके सख्यातगुणितता पाई जाती है । दूसरी बात यह है कि इस तेरहवें गुणस्थानका काल अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षसे कम पूर्वकोटीर्ण माना गया है । सयोगिकेवली जिनोंसे उपशम और क्षपकश्रेणीपर नहीं चढ़नेवाले अप्रमत्तसंयत जीव सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, अप्रमत्तसंयतोंका प्रमाण दो करोड़ छथानवे लाख निन्यानवे हजार एकसी तीन (२९६९९१०३) है । अप्रमत्तसंयतोंसे प्रमत्तसंयत सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, उनसे इनका प्रमाण दूना अर्थात् पांच करोड़ तेरानवे लाख अठानवे हजार दोसौ छह (५९३९८२०६) है । प्रमत्तसंयतोंसे सयतासंयत जीव असख्यातगुणित हैं, क्योंकि, वे पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण हैं । सयतासंयतोंसे सासादनसम्पद्दष्टि जीव असत्यातगुणित हैं, क्योंकि, सयमा-सयमकी अपेक्षा सासादनसम्पक्त्वका पाना बहुत सुलभ है । यहांपर गुणकारका प्रमाण आवलीका असत्यातवां भाग जानना चाहिए, अर्थात् आवलीके असख्यातवें भागमें जितने समय होते हैं, उनके द्वारा सयतासंयत जीवोंकी रश्मिके गुणित करने पर जो प्रमाण आता है, उतने सासादन-सम्पद्दष्टि जीव हैं । सासादनसम्पद्दष्टियोंसे सम्पद्गिम्यादष्टि जीव सत्यातगुणित हैं, क्योंकि,

दूसरे गुणस्थानकी अपेक्षा तीसरे गुणस्थानका षाठ सख्यातगुणा है। सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असत्य सम्यग्दृष्टि जाव असत्यातगुणित है, क्योंकि, तीसरे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशिकी अपेक्षा चौथे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशि आवलीके असत्यातमें भागगुणित है। असत्यसम्यग्दृष्टि जीवोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित है, क्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त होते हैं। इस प्रकार यह चौदहों गुणस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा गया है, जिसका मूल आचार द्रव्यप्रमाण है। यह अल्पबहुत्व गुणस्थानोंमें दो दृष्टियोंसे उताया गया है प्रवेशकी अपेक्षा और सचयकालकी अपेक्षा। जिन गुणस्थानोंमें अन्तरका अभाव है अर्थात् जो गुणस्थान सर्वकाल समान हैं, उनका अल्पबहुत्व सचयकालकी ही अपेक्षासे कहा गया है। ऐसे गुणस्थान, जैसा कि अन्तरप्रत्ययणमें बताया जा चुका है, मिथ्यादृष्टि, असत्यसम्यग्दृष्टि आदि चार ओर सयोगितेजली, ये छह हैं। जिन गुणस्थानोंमें अन्तर पड़ता है, उनमें अल्पबहुत्व प्रवेश और सचयकाल, इन दोनोंकी अपेक्षा बताया गया है। जैसे— अन्तरकाल समाप्त होनेके पश्चात् उपशामक और क्षपक गुणस्थानोंमें कमसे कम एक दो तीनसे लगाकर अधिकसे अधिक ५४ और १०८ तक जीव एक समयमें प्रवेश कर सकते हैं, और निरन्तर आठ समयोंमें प्रवेश करने पर उनके सचयका प्रमाण क्रमशः ३०४ और ६०८ तक एक एक गुणस्थानमें हो जाता है। दूसरे और तीसरे गुणस्थानका प्रवेश और सचय प्रयानुसार जानना चाहिए। ऐसे गुणस्थान चारों उपशामक, चारों क्षपक, अयोगितेजली सम्यग्मिथ्यादृष्टि और साक्षादनसम्यग्दृष्टि हैं।

इसके अतिरिक्त हम अनुयोगद्वारमें मूलसूत्रकारने एकही गुणस्थानमें सम्यक्त्वकी अपेक्षासे भी अल्पबहुत्व बताया है। जैसे— असत्यसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं। उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जाव असत्यातगुणित है और क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असम्यातगुणित हैं। इस हीनाभित्ताका कारण उत्तरोत्तर सचयकालकी अधिरता है। सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं, क्योंकि, देश सपमको धारण करनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका होना अत्यन्त दुर्लभ है। दूसरी बात यह है कि तिर्यचोमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ देशसयम नहीं पाया जाता है। इसका कारण यह है कि तिर्यचोमें दर्शनमोहनीयर्मको क्षपणा नहीं होती है। इसी सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि मयतासयत असत्यातगुणित हैं और उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि सयतासयत असत्यातगुणित हैं। प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, उनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं, उनसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सत्यातगुणित हैं। इस अल्पबहुत्वका कारण सचयकालकी हीनाभिरता

गुणस्थानोंकी अपेक्षा जीवोंके अन्तर, भाग

गुणस्थान	अन्तर			
	नाना जीवोंकी अपेक्षा		एक जीवकी अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
१ दिव्यान्धि	निरन्तर		अतर्मुहूर्त	देशीय दो छयासठ
२ सासादनसम्यग्दधि	एक समय	पत्योपमना असख्या तवां भाग	पत्योपमना असख्या तवां भाग	सागरीयम ,, अर्धपुद्गलपरिवर्तन
३ सम्यग्दिव्यान्धि	"	"	अतर्मुहूर्त	"
४ असयतसम्यग्दधि	निरन्तर		"	"
५ सयनासयत	"		"	"
६ प्रमत्तसयत	"		"	"
७ अत्रमत्तसयत	"		"	"
८ अपूर्वकरण	{ उपशा एक समय क्षपक "	वर्षपृथक्त्व छह मास	"	निरन्तर
९ अनिदृष्टिस्तरण	{ उपशा " क्षपक "	वर्षपृथक्त्व छह मास	"	निरन्तर
१० सूक्ष्मसाम्पराय	{ उपशा " क्षपक "	वर्षपृथक्त्व छह मास	"	निरन्तर
११ व्यपशान्तनयाय	"	वर्षपृथक्त्व	"	"
१२ शीतमोह	"	छह मास	निरन्तर	
१३ सयागिन्निवली	निरन्तर		"	
१४ अयोगिन्निवली	एक समय	छह मास	"	

दूसरे गुणस्थानकी अपेक्षा तीसरे गुणस्थानका काल सख्यातगुणा है। सम्य, सम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं, क्योंकि, तीसरे गुणस्थानको प्राप्त हो चोथे गुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशि आत्मीयके असंख्यातमें भागगुणित है जीवोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं, क्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त ८ यह चौदहों गुणस्थानोंकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा गया है, जिसका मूल आध। यह अल्पबहुत्व गुणस्थानोंमें दो दृष्टियोंसे बताया गया है प्रवेशकी अपेक्षा और सचय निम्न गुणस्थानोंमें अन्तरका अमान है अर्थात् जो गुणस्थान सर्वकाल समग्र है, वद्वय सचयकालकी ही अपेक्षामें कहा गया है। ऐसे गुणस्थान, जैसा कि अ बताया जा चुका है, मिथ्यादृष्टि, असत्यसम्यग्दृष्टि आदि चार और सयोगिवैतर्क्य, ये निम्न गुणस्थानोंमें अन्त पड़ता है, उनमें अपबहुत्व प्रवेश और सचयकाल, इन दोनों बताया गया है। जैसे— अन्तकाल समाप्त होनेके पश्चात् उपशामक और क्षपक गुणस्थानों कम एक दो तीनसे उग्यार अधिरामे अधिक ५४ और १०८ तक जीव एक समयमें पर सकते हैं, और निरन्तर आठ समयोंमें प्रवेश करने पर उनके सचयका प्रमाण क्रमश और ६०८ तक एक एक गुणस्थानमें हो जाता है। दूसरे और तीसरे गुणस्थानका प्रवेश सचय प्रयानुसार जानना चाहिए। ऐसे गुणस्थान चारों उपशामक, चारों क्षपक, अयोगिकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि हैं।

इसके अनिरिक्त इस अनुयोगद्वारमें मूढसूत्रकारने एक ही गुणस्थानमें सम्यक्त्वकी अपेक्षामें भी अल्पबहुत्व बताया है। जैसे— असत्यसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशामसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं। उपशामसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं और क्षायिकसम्यग्दृष्टि में वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं। इस एतानामित्याका कारण उत्तरोत्तर सचयकाटकी अनिरिक्त है। सचयसत्य गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, क्योंकि, देशसमयकी धारण करनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका होना अत्यन्त दुर्लभ है। दूसरी बात यह है कि नियंत्रणमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ देशसमय नहीं पाया जाता है। इसका कारण यह है कि नियंत्रणमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणा नहीं होती है। इसी सत्यतासत्य गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशामसम्यग्दृष्टि सचयसत्य असंख्यातगुणित हैं और उपशामसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि क्षपकसत्य असंख्यातगुणित हैं। प्रमत्तसत्य और अप्रमत्तसत्य गुणस्थानमें उपशामसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं, उनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव संख्यातगुणित हैं, वासे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव संख्यातगुणित हैं। इस अल्पबहुत्वका कारण सचयकालकी हीनाधिकता

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा जीवों अल्पवहुत्वका प्रमाण.

मार्गणा	मार्गणाके अन्तर भेद	अन्तर नाना जीवोंकी अपेक्षा			भाव
		जघन्य	उत्कृष्ट	प्राप्त है	
चिह्न	नित्यराशि	ओषधत्	ओषधत्	ओषधत्	ओषधत्
	{ सामादनसम्पन्नराशि सम्पन्ननित्यराशि	"	"	"	"
स्तर	{ पृथिव्याकाशिक आदि चार वस्तुवैज्ञानिक	निरन्तर		भूतमन्त्रा अप- न्न	औद्योगिक
		"		"	"
वर्ण	नित्यराशि	ओषधत्	ओषधत्	काल से	ओषधत्
	{ सामादनसम्पन्नराशि सम्पन्ननित्यराशि	"	"	"	"
	{ समस्ततादि चार दुर्गन्ध	निरन्तर		स्तर	"
	{ चारों उपद्रवमक	ओषधत्	ओषधत्	"	औषधमिक
वर्ण	{ चारों उपद्रव कालादिचरणी बालादिचरणी	"	"	"	सायिक
वर्ण	{ नित्यराशि स्तरतत्त्वसम्पन्नराशि सम्पन्ननित्यराशि सम्पन्ननित्यराशि सम्पन्ननित्यराशि	निरन्तर		"	ओषधत्

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा शीतके अन्तर, भाव और अल्पगुह्यका प्र

माना जीवों की व्यवस्था		सहचयीकी अपेक्षा		भाव
	उत्पत्ति	काल	उत्पत्ति	
नग्न	कन्दर	देखान १, ३, ७, १०, १७ २२, ३३	सागरोपम	औदयिक औप क्षायिक पारिणामि- क्षायोपशमि
पर्यावरण का अन्तःस्थ भाग	पर्यावरण का भाग कन्दर	देखान तीन पर्योपम	ओषक्	औदयिक ओषक्
नग्न	कन्दर	देखान तीन पर्योपम	पूर्वकोटीपुष्पकत्वसे अधिक तीन पर्योपम	औदयिक पारिणामि क्षायोपशम औप क्षायिक
पर्यावरण का अन्तःस्थ भाग	पर्यावरण का भाग कन्दर	पूर्वकोटीपुष्पकत्व	"	क्षायोपशम "
"	"	"	"	औपक्षायिक
"	आपक्व	ओषक्		क्षायिक
"	आपक्व	देखान ३१ सागरोपम	"	आदयिक औप क्षायिक पारिणामिक क्षायोपशमिक
"	अधिकांश	पूर्वकोटीपुष्पकत्वसे अधिक दो हजार सागरोपम अनन्तकालात्मक अवस्थान पुट्ट परिवर्तन		औदयिक "

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा की अल्पबहुत्वका प्रमाण.

मार्गवाक सवान्तर भेद	नाना जीवोंकी अपेक्षा		अन्तर	भाव	प्रकार
	जघन्य	उत्तम	वत		
रुनाद्यप्राणी निष्पादि " सप्तादनसम्यग्पादि " अक्षयसम्यग्पादि " सप्ताभिबली	औदारिक मिश्रवत्	औदारिक मिश्रवत्	औदारिक	ओषवत्	सयोगिनेन सासादनसम्यग् अक्षयसम्यग् निष्पादि
निष्पादि { सासादनसम्यग्पादि सप्तनिष्पादि { अक्षयसम्यग्पादिसे अक्षयसम्यग्पादि तक अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण { अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण	निरन्तर ओषवत् निरन्तर "	ओषवत् ओषवत् निरन्तर "	अक्षयसम्यग्पादि अक्षयसम्यग्पादि "	ओषवत् "	सर्वप्रकारपर्याप्त
निष्पादि { सासादनसम्यग्पादि सप्तनिष्पादि { अक्षयसम्यग्पादिसे अक्षयसम्यग्पादि तक अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण { अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण	ओषवत् "	ओषवत् "	अक्षयसम्यग्पादि अक्षयसम्यग्पादि "	ओषवत् "	"
निष्पादि { सासादनसम्यग्पादि सप्तनिष्पादि { अक्षयसम्यग्पादिसे अक्षयसम्यग्पादि तक अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण { अक्षयसम्यग्पादि " अनिवृत्तिकरण	ओषवत् निरन्तर ओषवत् एक समय	ओषवत् निरन्तर ओषवत् वर्षपृथक्त्व	अक्षयसम्यग्पादि अक्षयसम्यग्पादि "	ओषवत् "	"

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा जीवोंके अन्तर, भाव और अल्पबहुत्वका प्रमाण.

मार्ग जीवोंकी अपेक्षा	अन्तर		भाव	अल्प
	एक जीवकी अपेक्षा			
उत्पत्ति	स्थिति	उत्पत्ति		गुणस्थान
पर्याप्तमका अम स्यातवी भाग	निरन्तर		ओषधन्	
ओषधन्		"	औषधमिर	सर्वगुणस्थान
"	ओषधन्	ओषधन्	क्षायिक	
मनोयोगिवन्	मनोयोगिवन्	मनोयोगिवन्	ओषधन्	मिथ्यादृष्टि
ओषधन्	निरन्तर		"	सयोगिकेवली
वपपुष्पकन्व		"	"	असयत्तसम्यग्दृष्टि
"		"	क्षायिक, क्षायोपसन्निक	सात्तादनसम्यग्दृष्टि
		"	क्षायिक	मिथ्यादृष्टि
मनोयोगिवन्	मनोयोगिवन्	मनोयोगिवन्	ओषधन्	चारों गुणस्थान
बारह स्रुत	निरन्तर		"	सात्तादनसम्यग्दृष्टि
औदारिकमिथवन्	औदारिकमिथवन्	औदारिकमिथवन्	"	असयत्तसम्यग्दृष्टि
			"	मिथ्यादृष्टि
वपपुष्पकन्व	निरन्तर		क्षायोपसन्निक	गुणस्थानभेदाभाव

मार्गणास्थानोंकी अपेक्षा हैं अत्यन्त ही प्रमाण.

[illegible]

जीवोंके अन्तर, भाव और अल्पगुह्यका प्रमाण.

एक जीवकी अपेक्षा		भाव	अल्पगुह्यत्व	
विषय	उद्देश		गुणस्थान	प्रमाण
मनुष्य	देशीय ३३ सागरोपम	औद्योगिक	सबगुणस्थान	औद्योगिक
मनुष्य	औद्योगिक	औद्योगिक		
मनुष्य	निरन्तर	साधारण		
मनुष्य	अतिसूक्ष्म	औद्योगिक	"	"
मनुष्य	निरन्तर	"		
मनुष्य	आपन्न	"	"	"
मनुष्य	मनोयोगिक	आपन्न	अप्यतमस्थानदि तरु मिथ्यादि सूक्ष्म उप " क्षपण	पुरुषवेदिवत् अनन्तगुणिन विशेषाधिक सरयातगुणित
मनुष्य	निरन्तर	"		
मनुष्य	औद्योगिक	"		
मनुष्य	निरन्तर	"		
मनुष्य	"	साधारण	चारी गुणस्थान	औद्योगिक
मनुष्य	निरन्तर	औद्योगिक	सासादनसम्पत्ति मिथ्यादि	समस्त कम असख्यातगुणित अनन्तगुणित
मनुष्य	"	पारिषादिक		

ही है । इसी प्रकारका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व अपूर्णकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें जानना चाहिए । यहा ध्यान रखनेकी बात यह है कि इन गुणस्थानोंमें उपशमसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व, ये दो ही सम्यक्त्व होते हैं । यहा वेदकसम्यक्त्व नहीं पाया जाता, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीके आरोहणका अभाव है । अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमसम्यक्त्वकी जीव सबसे कम हैं, उनसे उर्ही गुणस्थानतर्ती क्षायिकसम्यक्त्वकी जीव सख्यात-गुणित हैं । आगेके गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, वहां सभी जीवोंके एकमान क्षायिकसम्यक्त्व ही पाया जाता है । इसी प्रकार प्रारम्भके तीन गुणस्थानोंमें भी यह अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, उनमें सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है ।

जिस प्रकार यह ओघकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी मार्गणास्थानोंमें अल्पबहुत्व जानना चाहिए । भिन्न भिन्न मार्गणाओंमें जो खास विशेषता है, वह प्रथमे स्वाध्यायसे ही हृदयगम की जा सकेगी । किन्तु स्थूलरीतिका अल्पबहुत्व द्रव्यप्रमाणानुगम (भाग ३) पृष्ठ ३८ से ४२ तक अरुसदृष्टिके साथ बताया गया है, जो कि वहासे जाना जा सकता है । भेद केवल इतना ही है कि वहां वह कम बहुतसे अल्पकी ओर रखा गया है ।

इन प्ररूपणाओंका मधितार्थ साथमें लगाये गये नकशोंसे सुस्पष्ट हो जाता है ।

इस प्रकार अल्पबहुत्वप्ररूपणाकी समाप्तिके साथ जीवस्थाननामक प्रथम खण्डकी आठों प्ररूपणाएँ समाप्त हो जाती हैं ।



ही है। इसी प्रकारका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व अपूर्णकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें जानना चाहिए। यहाँ ध्यान रखनेकी बात यह है कि इन गुणस्थानोंमें उपशमसम्यक्त्व और क्षायिकसम्यक्त्व, ये दो ही सम्यक्त्व होते हैं। यहाँ वेदकसम्यक्त्व नहीं पाया जाता, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीके आरोहणका अभाव है। अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमसम्यक्त्वी जीव सबसे कम हैं, उनसे उन्हीं गुणस्थानवर्ती क्षायिकसम्यक्त्वी जीव सरयात-गुणित हैं। आगेके गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, वहाँ सभी जीवोंके परमात्र क्षायिकसम्यक्त्व ही पाया जाता है। इसी प्रकार प्रारम्भके तीन गुणस्थानोंमें भी यह अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, उनमें सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है।

जिस प्रकार यह ओघकी अपेक्षा अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार आदेशकी अपेक्षा भी मार्गणास्थानोंमें अल्पबहुत्व जानना चाहिए। भिन्न भिन्न मार्गणाओंमें जो खास विशेषता है, वह प्रत्येक स्वाध्यायसे ही हृदयगम की जा सकेगी। किन्तु स्थूलरीतिकी अल्पबहुत्व द्रव्यप्रमाणानुगम (भाग ३) पृष्ठ ३८ से ४२ तक अरुसदृष्टिके साथ बताया गया है, जो कि बहसि जाना जा सकता है। भेद केवल इतना ही है कि वहाँ वह कम बहुत्वसे अल्पकी ओर रखा गया है।

इन प्ररूपणाओंका मधितार्थ साथमें लगाये गये नकशोंसे सुस्पष्ट हो जाता है।

इस प्रकार अल्पबहुत्वप्ररूपणाकी समाप्तिके साथ जीवस्थाननामक प्रथम खंडकी आठों प्ररूपणाएँ समाप्त हो जाती हैं।



क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं
	१ नतिमार्गणा	२२-३१
	(नररुगति)	
१८	नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके नाना ओर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण	२२-२३
१९	नारकियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सद्यन्त निरूपण	२४-२६
२०	प्रथम पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि नारकियोंके दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका दृष्टान्तपूर्वक प्रतिपादन	२७-२८
२१	सातों पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकियोंका नाना ओर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	२९-३१
	(तिर्यचगति)	३१-४६
२२	तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका नाना ओर एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३१-३२
२३	तिर्यच और मनुष्य जन्मके कितने समय पश्चात् सम्यक्त्व और सयमासयम आदिको प्राप्त कर सकते हैं, इस विषयमें दक्षिण और उत्तर प्रतिपात्तिके अनुसार दो प्रकारके उपदेशोंका निरूपण	३०
२४	सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे लेकर सयतासयत गुणस्थान तकके	

क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं
	तिर्यचोंका सोपपत्तिक अन्तर-निरूपण	३३-३७
२५	पचेन्द्रियतिर्यच, पचेन्द्रिय-तिर्यचपर्याप्त और पचेन्द्रिय-तिर्यचयोनिमती मिथ्यादृष्टियोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३७-३८
२६	तीनों प्रकारके तिर्यचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३८-४१
२७	तीनों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४१-४३
२८	तीनों प्रकारके सयतासयत तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४३-४५
२९	पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध पर्याप्तिकोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४५-४६
	(मनुष्यगति)	४६-५७
३०	मनुष्य, मनुष्यपर्याप्तक और मनुष्यनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	४६-४७
३१	भोगभूमिज मनुष्योंमें जन्म लेनेके पश्चात् सात सप्ताहके द्वारा प्राप्त होनेवाली योग्यताका वर्णन	४७
३२	उक्त तीनों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्योंका अन्तर	४८-५०
३३	तीनों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका अन्तर	५०-५१

५ विषय-सूची

(अन्तरानुगम)

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	१ विषयकी उत्थानिका	१ ४		सम्यग्मिध्यादष्टि जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा सोदा हरण जघन्य अन्तर प्रतिपादन	७
१	धवलाकारका भगलाचरण और प्रतिक्षा	१	११	उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर निरूपण	८
२	अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश भेद-कथन	"	१२	सासादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा सोदा हरण जघन्य अन्तर निरूपण	९-११
३	नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव, इन छह भेद रूप अन्तरका स्वरूप निरूपण	१ ३	१३	उपर्युक्त जीवोंका सोदाहरण उत्कृष्ट अन्तर	११-१३
४	कौनसे अन्तरसे प्रयोजन है, यह पताकर अन्तरके प्रकारों वाचक नाम	३	१४	असत्यतसम्यग्दष्टिसे लेकर अप्रमत्तसत्यत गुणस्थान तक नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरू पण	१३-१७
५	अन्तरानुगमका स्वरूप तथा उसके द्विविध निर्देशका सयु क्त निरूपण	"	१५	चारों उपशामक गुणस्थानोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण	१७-२०
	२	४ २२	१६	चारों रूपरु ओर अयोगि केचलीका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	२० २१
६	मिध्यादष्टि जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर निरू पण, तथा सूत्र पठित 'णत्थि अन्तर, गिरन्तर' इन दोनों पदोंका सार्थकता प्रतिपादन	४ ५	१७	सयोगिकेचलीके नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरके अभावका प्रतिपादन	२१
७	मिध्यादष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरका सोदाहरण निरूपण	५		३	
८	सम्यक्त्व दृष्टनेके पश्चात् होनेवाला अन्तिम मिध्यात्व पहलेका मिध्यात्व नहीं हो सकता, इस दावाका समाधान	"		अदेशसे अन्तरानुगमनिर्देश	२२-१७९
९	मिध्यादष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर का सोदाहरण निरूपण	६			
१०	सासादनसम्यग्दष्टि और				

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	१ मतिमार्गणा	२२-३१
	(नरकगति)	
१८	नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सोदाहरण निरूपण	२७ २३
१९	नारकियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका सहप्रान्त निरूपण	२४ २६
२०	प्रथम पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि नारकियोंके दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंका दृष्टान्तपूर्वक प्रतिपादन	२७ २८
२१	सातों पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	२९-३१
	(तिर्यचगति)	३१-४६
२२	तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३१-३२
२३	तिर्यच और मनुष्य जन्मके कितने समय पश्चात् सम्यक्त्व और सयमासयम आदिकी प्राप्त कर सकते हैं, इस विषयमें दक्षिण और उत्तर प्रतिपत्तिके अनुसार दो प्रकारके उपदेशोंका निरूपण	३०
२४	सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे लेकर सयतासयत गुणस्थान तकके	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	तिर्यचोंका सोपपत्तिक अन्तर-निरूपण	३३-३७
२५	पचेन्द्रियतिर्यच, पचेन्द्रिय-तिर्यचपर्याप्त और पचेन्द्रिय-तिर्यचयोनिमती मिथ्यादृष्टियोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३७ ३८
२६	तीनों प्रकारके तिर्यचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	३८ ४१
२७	तीनों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४१ ४३
२८	तीनों प्रकारके सयतासयत तिर्यचोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४३ ४५
२९	पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध पर्याप्तकोंका दोनों अपेक्षाओंसे जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर	४५ ४६
	(मनुष्यगति)	४६-५७
३०	मनुष्य, मनुष्यपर्याप्तक और मनुष्यनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	४६ ४७
३१	भोगभूमिज मनुष्योंमें जन्म लेनेके पश्चात् सात सप्ताहके द्वारा प्राप्त होनेवाली योग्यताका वर्णन	४७
३२	उक्त तीनों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि मनुष्योंका अन्तर	४८ ५०
३३	तीनों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका अन्तर	५० ५१

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
३४	सयतासयतसे लेकर अप्रमत्त सयत गुणस्थान तक तीनों प्रकारके मनुष्योंका अन्तर	११३		योंमें ले जाकर, अमम्यान् पुद्गलपरिवर्तन तक उनमें परिभ्रमण कराके पीछे देवोंमें उत्पन्न कराकर देवाका अन्तर क्यों नहीं कहा? इस शकाका समाधान	६
३५	चारों उपशामक मनुष्यानि कोंका अन्तर	५३१५			
३६	चारों स्वर, अयोगिकेवली और सयोगिकेवली मनुष्य निकोंका अन्तर	११५२	४७	एकेन्द्रिय जीवको प्रमत्तायिक जीवोंमें उत्पन्न कराकर अन्तर कदनेसे मार्गणाका विनाश क्यों नहीं होगा? इस शकाका समाधान	६६
३७	लब्धपर्याप्तक मनुष्योंका अन्तर	५६५७	४८	यादर एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर	६६६७
	(देवगति)	५७६४	४९	यादर एकेन्द्रियपर्याप्त और यादर एकेन्द्रियअपर्याप्तकोंका अन्तर	६७
३८	मिथ्यादृष्टि और अमयत सम्यग्दृष्टि देवोंका अन्तर	१७८	५०	सूक्ष्म एकेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त और सूक्ष्म एकेन्द्रिय अपर्याप्तकोंका अन्तर	६७६८
३९	सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर	१०२	५१	द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतु रीन्द्रिय और उर्द्धांश पर्याप्त तथा लब्धपर्याप्तक जीवोंका अन्तर	६८६९
४०	भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषा तथा सोधम ईशानरूपसे लेकर शतार-सहस्रारकल्प तकने मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अन्तर	६१६२	५२	पंचेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि, सासादन सम्यग्दृष्टि तथा सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	६९७१
४१	उक्त देवोंमें सासादनमम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि योंका अन्तर	६०	५३	असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तक दोनों प्रकारके पंचेन्द्रिय जीवोंका अन्तर	७१७५
४२	आनतकल्पसे लेकर नवग्रहे यन्त्र-विमानवासी देवोंमें मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर	६२६३	५४	पंचेन्द्रियपर्याप्तकोंके स्थान रोपमगतपृथक्त्वप्रमाण अन्तर कहते समय 'देशान' पद क्यों नहीं कहा? विद्यक्षित जीवको सही, सम्मूर्च्छिम	
४३	उक्त कल्पोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर	६४			
४४	नव अनुदिश और पाच अनुसरविमानवासी देवोंमें अन्तरमायका प्रतिपादन				
	२ इन्द्रियमार्गणा	६५७७			
	एकेन्द्रिय जीवोंका अन्तर	६५६६			
	देव मिथ्यादृष्टिको एकेन्द्र				

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराकर ओर सम्यक्त्वको ग्रहण कराकर मिथ्यात्वके द्वारा अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ? इत्यादि शकाओंका समाधान	७३		सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या-दृष्टि जीवोंका अन्तर	८८
५५	पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें चारों उपशाम-कोंका अन्तर	७४-७६	६४	उक्त योगवाले चारों उपशामक और चारों क्षपकोंका अन्तर	८८ ८९
५६	उक्त जीवोंमें चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगि-केवलीका अन्तर	७७	६५	एक योगके परिणमन कालसे गुणस्थानका काल सत्यात-गुणा हे, यह कैसे जाना ? इस शकाका समाधान	८९
५७	पचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर	"	६६	ओदारिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और सयोगिकेवलीका पृथक् पृथक् अन्तर प्रतिपादन	८९ ९१
	३ कायमार्गणा	७८ ८७	६७	वैक्रियिककाययोगी चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्तर	९१
५८	पृथिवीकायिक आदि चार स्थावर कायिकोंका अन्तर	७८	६८	वेक्रियिकमिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर	९१ ९३
५९	घनस्पतिकायिक वादर, सूक्ष्म और पर्याप्तक तथा अपर्याप्तक जीवोंका अन्तर	७९-८०	६९	आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी प्रमत्त-सयतोंका अन्तर	९३
६०	असकायिक और असकायिक-पर्याप्तकोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तरुके जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण	८० ८६	७०	कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयत सम्यग्दृष्टि और सयोगिके-वलीका अन्तर	"
६१	असकायिक लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर	८६ ८७		५ वेदमार्गणा	९४-१११
	४ योगमार्गणा	८७-९४	७१	रवीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	९४
६२	पाचों मनोयोगी, पाचां वचनयोगी, काययोगी और ओदारिककाययोगी मिथ्या-दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत आर सयोगि केवली जिनका अन्तर	८७	७२	रवीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवों का अन्तर	९५-९६
६३	उक्त योगवाले सासादन		७३	असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तकके रवीवेदी जीवोंका अन्तर	९७ ९८

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
७४	स्त्रीवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण उपशामकका अन्तर	१११००	८६	आभिनिवोधिकक्षानी, श्रुत क्षानी और अवधिक्षानी असयत सम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर	११४११६
७५	स्त्रीवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण क्षपकका अन्तर	१००	८७	उक्त तीनों ज्ञानवाले सयता सयतोंका तदन्तर्गत शका समाधानपूर्वक अन्तर निरूपण	११६११९
७६	पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर	"	८८	सही, सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक जीवोंमें अवधिज्ञान और उप शमसम्यक्त्वका अभाव है, यह कैसे जाना? इस शकाका तथा इसीसे सम्यन्धित अन्य अनेकों शकाओंका सप्रमाण समाधान	११८११९
७७	पुरुषवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर	१०१	८९	तीनों ज्ञानवाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर तथा तदन्तर्गत विशेषताओंका प्रतिपादन	११९१२२
७८	असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तकके पुरुषवेदी जीवोंका अन्तर	१०२१०४	९०	तीनों ज्ञानवाले चारों उप शामक और चारों क्षपकोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण	१२२१२४
७९	पुरुषवेदी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण उपशामक तथा क्षपकोंका पृथक् पृथक् अन्तर प्रतिपादन	१०४१०६	९१	प्रमत्तसयतसे लेकर क्षीण कपाय गुणस्थान तक भक्त पर्ययक्षानी जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर निरूपण	१२४१२७
८०	नपुंसकवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	१०६	९२	केवलज्ञानी जीवोंका अन्तर	१२७
८१	सासादनसम्यग्दृष्टिसे लेकर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान तक पृथक् पृथक् नपुंसकवेदी जीवोंका अन्तर	१०७-१००	८ सयममार्गणा १२८-१३५		
८२	अपगतवेदी जीवोंका अन्तर	१०९१११	९३	प्रमत्तसयतसे लेकर अयोगि केवली गुणस्थान तक समस्त सयतोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१२८
८३	मिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्म साम्प्रदाय गुणस्थान तक चारों क्षपायवाले जीवोंका तदन्तर्गत शका-समाधान पूर्वक अन्तर निरूपण	१११११२	९४	सामायिक ओर छेदोपस्थापनासयमी प्रमत्तसयतादि चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१२८१३१
८४	अज्ञापी जीवोंका अन्तर	११३	९५	परिहारशुद्धिसयमी प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर	१३१
	७ ज्ञानमार्गणा	११४१२७			
८५	मत्तक्षानी, श्रुतक्षानी और विभगक्षानी मिथ्यादृष्टि तथा सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	११४			

क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं	क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं
९६	सूक्ष्मसाम्परायसयमी उप- शामक और क्षपक सूक्ष्म साम्परायिक सयनोंका अन्तर	१३२		लेद्या और पञ्चलेद्यावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१४६ १४९
९७	यथाव्यातिहारसयमी चारों गुणस्थानोंका अन्तर	"	१०९	मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगि केवली गुणस्थान तक शुद्धलेद्यावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१४९ १५४
९८	सयतासयनोंका अन्तर	१३३		११ भव्यमार्गणा	१५४
९९	असयमी चारों गुणस्थानोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१३३-१३५	११०	समस्त गुणस्थानवर्ती भव्य- जीवोंका अन्तर	"
	९ दर्शनमार्गणा	१३५-१४३	१११	अभव्य जीवोंका अन्तर	"
१००	चक्षुदर्शनी मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	१३५		१२ सम्यक्त्वमार्गणा	१५५-१७१
१०१	चक्षुदर्शनी सासादनसम्य- ग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्या दृष्टि जीवोंका अन्तर	१३६ १३७	११२	अनयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक सम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१५५ १५६
१०२	असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अप्रमत्तसयत गुणस्थान तक चक्षुदर्शनी जीवोंका अन्तर	१३८-१४१	११३	क्षायिकसम्यक्त्वजी असयत- सम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर	१५६ १५७
१०३	चक्षुदर्शनी चारों उपशाम कोंका अन्तर	१४१	११४	क्षायिकसम्यक्त्वजी सयता- सयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयनोंका अन्तर	१५७-१६०
१०४	चक्षुदर्शनी चारों क्षपकोंका अन्तर	१४२	११५	क्षायिकसम्यक्त्वजी चारों उपशामकोंका अन्तर	१६० १६१
१०५	अचक्षुदर्शनी, अयधिदर्शनी और फलदर्शनी जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१४३	११६	क्षायिकसम्यक्त्वजी चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीका अन्तर	१६१ १६२
	१० लेद्यामार्गणा	१४३-१५४	११७	असयतसम्यग्दृष्टि वादि चार गुणस्थानवर्ती वेदक- सम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१६२ १६५
१०६	वृष्ण, नील और काफेत लेद्यावाले मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर	१५३ १५५	११८	असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर उपशान्नक्षपाय गुणस्थान तक उपशामसम्यग्दृष्टि जीवोंका पृथक् पृथक् अन्तर	१६५ १७०
१०७	उक्त तीनों अशुभ लेद्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर	१४१ १४६	११९	सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि और मिथ्या-	
१०८	मिथ्यादृष्टिसे लेकर अप्रमत्त सयत गुणस्थान तक तेजो				

क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं	क्रम नं	विषय	पृष्ठ नं
	दृष्टि जावोंका पृथक् पृथक् अन्तर १७०-१७१			विशेषता न होनेसे तीन ही निक्षेप कहना चाहिए ? इस शकाका सयुक्तिक और सप्र माण समाधान १८५ १८६	
	१३ सनिमार्गणा १७१-१७२				
१२० मिध्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणकपाय तक सभी जीवोंका अन्तर "			६ औदयिकृमादि पाच भावोंमेंसे प्रवृत्तमें किस भावसे प्रयोजन है ? भावोंके अनेक भेद हैं, फिर यहाँ पाच ही भेद क्यों कहे ? इन शकाओंका समाधान १८६ १८७		
१२१ असशी जीवोंका अन्तर १७२					
१४ आहारमार्गणा १७३-१७५			७ निद्रा, स्वामिद्र आदि छह अनुयोगधारोंसे भावका स्वरूप निरूपण १८७ १८८		
१२२ आहारकमिध्यादृष्टि, सासा इनसम्यग्दृष्टि और सम्य मिध्यादृष्टि जावोंका अन्तर १७३ १७४					
१२३ असयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानवाले आहा रक जीवोंका अन्तर १७४ १७७			८ औदयिकृमावके स्थान और विरूपकी अपेक्षा भेद तथा स्थानका स्वरूप निरूपण १८९		
१२४ आहारक चारों उपशाम कोंका अन्तर १७७ १७८			९ असिद्धत्व किसे कहते हैं ? जाति, सस्थान, सहनन आदि औदयिकृमावोंका किस भावमें अतभाव होता है ? इन शकाओंका समाधान "		
१२५ आहारक चारों क्षपक और सयोगिकेवलीका अन्तर १७८			१० औपशमिकभावके स्थान और विरूपकी अपेक्षा भेद निरु पण १९०		
१२६ अनाहारक जीवोंका अन्तर १७८ १७९					
भावानुगम					
१					
विषयकी उत्थानिका १८३ १९३					
१ धषटाकारका मगलाचरण और प्रतिज्ञा १८३			११ औपशमिकचारित्रके सात भेदोंका विवरण "		
२ भागानुगमकी अपेक्षा निर्देश भेद निरूपण "			१२ क्षायिकभावके स्थान और विरूपकी अपेक्षा भेद १९० १९१		
३ नामभाव, स्थापनाभाव, द्रव्य भाव और भावभाव, इन चार प्रकारके भावोंका भेद स्वरूप निरूपण १८२ १८५			१३ आयोपशमिकभावके स्थान और विरूपकी अपेक्षा भेद १९१ १९२		
४ प्रवृत्तमें नोभागभावभावामे प्रयोजनका उद्देश्य १८०			१४ पारिणामिकभावके भेद "		
नाम और स्थापनामें दोर			१५ साधिपातिकभावका स्वरूप और भग निरूपण १९३		
			१६ भगोंके निकालनेके त्रिप करणसूत्र "		

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	२				
	ओघसे भाषानुगमनिर्देश १९४-२०६			जाता ? इस शकाका तथा इसी प्रकारकी अन्य शकाओंका समाधान	१९७
१७	मिथ्यादृष्टि जीवके भावका निरूपण	१९४	२४	सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवके भावका अनेक शकाओंके समाधानपूर्वक विशद निरूपण	१९८-१९९
१८	मिथ्यादृष्टि जीवके अन्य भी ज्ञान-दर्शनादिक भाव पाये जाते हैं, फिर उन्हें क्यों नहीं कहा ? इस शकाको उठाते हुए गुणस्थानोंमें सबव भावोंके सयोगी भगोंका निरूपण तथा उक्त शकाका समाधान	१९४ १९६	२५	असयतसम्यग्दृष्टि जीवके भावोंका अनेक शका-समाधानके साथ विशद विवेचन	१९९ २००
१९	सासादनसम्यग्दृष्टि जीवके भावका निरूपण	१९६	२६	असयतसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदयिकभावकी अपेक्षा है, इस बातका सूत्रकारद्वारा स्पष्टीकरण	२०१
२०	दूसरे निमित्तसे उत्पन्न हुए भावको पारिणामिक माना जा सकता है, या नहीं, इस शकाका सयुक्तिक समाधान	"	२७	सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंके भावोंका तदन्तर्गत शका-समाधानपूर्वक निरूपण	२०१ २०४
२१	सत्त्व, प्रमेयत्व आदिक भाव कारणके बिना उत्पन्न होनेवाले पाये जाते हैं, फिर यह कैसे कहा कि कारणके बिना उत्पन्न होनेवाले परिणामका अभाव है ? इस शकाका समाधान	१९७	२८	दर्शनमोहनीयकर्मके उपशम, क्षय और क्षयोपशमकी अपेक्षा सयतासयतोंके औपशमिकादि भाव क्यों नहीं दत्त-लाये ? इस शकाका समाधान	२०३
२२	सासादनसम्यग्दृष्टिना भी सम्यक्त्व और चारित्र्य, इन दोनोंके विरोधी अनन्तानुबन्धी कषायके उदयके बिना नहीं होता है, इसलिए उसे ओदयिक क्यों नहीं मानते हैं ? इस शकाका समाधान	"	२९	चारों उपशमकोंके भावोंका निरूपण	२०४ २०५
२३	सासादनसम्यक्त्वको छोड़कर अन्य गुणस्थानसम्वन्धी भावोंमें पारिणामिकपनेका व्यवहार क्यों नहीं किया		३०	मोहनीयकर्मके उपशमसे रहित अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें औपशमिकभाव कैसे समभव है ? इस शकाका अनेक प्रकारोंसे सयुक्तिक समाधान	"
			३१	चारों क्षपक, सयोगिकेचली और अयोगिकेचलीके भावोंका तदन्तर्गत अनेकों शकाओंका समाधान करते हुए विशद विवेचन	२०५ २०६

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	३	
	आदेशमे भारानुगमनिर्देश २०६ २३८	
	१ गतिमार्गणा २०६ २१६	
	(नरकगति) २०६ २१२	
३२	नारकी मिथ्यादृष्टि जीवोंके भाव	२०६
३३	सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्वधर्मोंके उदयक्षयसे, उर्हीने सदायस्धारूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघाती स्वधर्मोंके उदयक्षयसे, उर्हीके सदायस्धारूप उपशमसे अथवा अनुद्योपशमसे और मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्वधर्मोंके उदयसे मिथ्यादृष्टिभाव उत्पन्न होता है, इसलिये उसे क्षायोपशमिन् क्यों न माना जाय ? इस शराना सयुक्ति समाधान	२०६ २०७
३४	नारकी साक्षादनसम्यग्दृष्टि जीवोंके भाव	२०७
३५	जय कि अनन्तानुगामी क्या यके उदयसे ही जीव साक्षादनसम्यग्दृष्टि होता है, तब उसे औदयिकभाव क्यों न कहा जाय ? इस शराना समाधान	"
३६	नारकी सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंके भावना तदन्तगता शका-समाधानपूर्वक निरूपण	२०८
३७	नारकी असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंके भाव	२०८ २०९
३८	असयतसम्यग्दृष्टि नारकी योंका असयतत्व औदयिक	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	है, इस बातका स्पष्ट निरूपण	२०९
३९	प्रथम पृथिवीमिथ्याता सातवीं पृथिवी तक नारकी जीवोंके भावोंका निरूपण	२०९ २१२
	(तिर्यचगति) २१२ २१३	
४०	सामान्य तिर्यच, पचेन्द्रिय तिर्यच, पचेन्द्रियतिर्यचपर्याप्त और पचेन्द्रियतिर्यच योनिमती जीवोंके सब गुणस्थान सम्यग्धी भावोंका निरूपण तथा योनिमती तिर्यचोंमें क्षायिकमात्र न पाये जानेका स्पष्टीकरण	"
	(मनुष्यगति) २१३	
४१	सामान्यमनुष्य, पर्याप्तमनुष्य और मनुष्यनियोंके सर्वगुणस्थानसम्यग्धी भावोंका निरूपण	"
४२	लघुपर्याप्त मनुष्य और तिर्यचोंके भावोंका सूक्ष्मकारण सप्रित न होनेका कारण	"
	(देवगति) २१४ २१६	
४३	चारों गुणस्थानधरा देवोंके भाव	२१४
४४	भवनवासी, ध्यन्तर ज्योतिषी देव और देवियोंके तथा सौधर्म इशानरूपवासी देवियोंके भावोंका निरूपण	२१४ २१५
४५	सौधर्म-ईशानकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तक देवोंके भावोंका विवरण	२१५ २१६
	२ इन्द्रियमार्गणा २१६ २१७	
४६	मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकरणी गुणस्थान तक पचेन्द्रियपर्याप्तकोंके भावोंका	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	निरूपण, तथा एकेन्द्रिय, त्रिकलेन्द्रिय और लब्ध पर्याप्तक पचेन्द्रिय जीवोंके भाव न कहनेका कारण २१६-२१७	
	३ कायमार्गणा २१७-२१८	
४७	असत्कायिक और असत्कायिक- पर्याप्तक जीवोंके सर्व गुण स्थानसम्बन्धी भावोंका प्रति- पादन, तथा तत्सम्बन्धी शका समाधान "	
	४ योगमार्गणा २१८-२२१	
४८	पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और ओदारिककाययोगी जीवोंके भाव २१८	
४९	ओदारिकमिश्रकाययोगी मि- थ्यादृष्टि, सासादनसम्य- गदृष्टि, असयतसम्यगदृष्टि और सयोगिकेवली जीवोंके भावोंका पृथक् पृथक् निरूपण २१८-२१९	
५०	ओदारिकमिश्रकाययोगी अस- यतसम्यगदृष्टि जीवोंमें ओप- शमिकभाव न बतलानेका कारण २१९	
५१	चारों गुणस्थानवर्ती वैक्रियिक काययोगी जीवोंके भाव २१९-२२०	
५२	वैक्रियिकमिश्रकाययोगी मि- थ्यादृष्टि, सासादनसम्यगदृष्टि और असयतसम्यगदृष्टि जीवोंके भाव २२०	
५३	आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जीवों के भाव "	
५४	कार्मणकाययोगी मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यगदृष्टि, असयत	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	सम्यगदृष्टि और सयोगिकेवली जीवोंके भाव २२१	
	५ वेदमार्गणा २२१-२२२	
५५	स्त्रीवेदी, पुंस्त्ववेदी और नपु- सस्त्ववेदी जीवोंके भाव २२१	
५६	अपगतवेदी जीवोंके भाव २२२	
५७	अपगतवेदी किसे कहा जाय ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान "	
	६ कपायमार्गणा २२३	
५८	चतुष्कपायी जीवोंके भाव "	
५९	अरुपायी जीवोंके भाव "	
६०	रुपाय क्या वस्तु है, अरुपा- यता किस प्रकार घटित होती है ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान "	
	७ ज्ञानमार्गणा २२४-२२६	
६१	मत्स्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और त्रिभगज्ञानी जीवोंके भाव २२४-२२५	
६२	मिथ्यादृष्टि जीवोंके ज्ञानको अज्ञानपना कैसे है ? ज्ञानका कार्य क्या है ? इत्यादि अनेकों शकाओंका समाधान "	
६३	मति, श्रुत, अवधि, मन पर्यय और केवलज्ञानी जीवोंके भावोंका पृथक् पृथक् निरूपण २२५-२२६	
६४	'सयोग' यह कैसा भाव है ? योगको कार्मणशरीरसे उत्पन्न होनेवाला क्यों न माना जाय ? इन शकाओंका सयुक्तिक समाधान "	
	८ सयममार्गणा २२७-२२८	
६५	प्रमत्तसयतसे लेकर अयोगि केवली गुणस्थान तक सयमी जीवोंके भाव २२७	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
६६	सामायिक, ऐश्वर्यस्थापना, परिहारविपुलि और शुद्ध साम्प्रदायिक सयमी जीयोंक भाषोंका पृथक् पृथक् निरूपण	२०३	७७	गुणस्थानपत्ती आदिह साधनद्वि जीयोंक भाषोंका और उनके साधनपत्रा लक्षणोंन दावा समाधान पृथक् निरूपण	२११-२१४
६७	यथास्थानसयमी, सयमा सयमी और भयसयमी जीयोंक भाषोंका पृथक् पृथक् निरूपण	२०८	७८	अर्थपत्रमालाद्वि भादि साध गुणस्थानपत्ती केद्वारा द्वि जीयोंक भाषोंका और साधनपत्रा निरूपण	२१४-२१५
९	दर्शनमार्गणा	२०८-२०९	७९	साधनपत्रमालाद्वि लेखर उपाधिपत्राद्वि गुणस्थान तक उपपन्नमालाद्वि जीयोंक भाषोंका और साधनपत्रा निरूपण	२१५-२१६
६८	चतुर्दशी और अष्टादशी जीयोंक भाष	२०९	८०	साधनपत्रमालाद्वि साध मिथ्याद्वि भादि मिथ्याद्वि जीयोंक भाष	२१६-२१७
६९	अष्टादशी और केच दशमी जीयोंक भाष	२०९	१३	मीमांसामार्गणा	२१७
१०	लेखमार्गणा	२२९-२३०	८१	मिथ्याद्वि लेखर साध कथाप गुणस्थान तक गदी जीयोंक भाष	"
७०	पृष्ठा, मीन और काया लेखपाये आदिह चार गुणस्थानपत्ती जीयोंके भाष	२३०	८२	मगधी जीयोंक भाष	"
७१	तेजोलेख और पद्मलेख पाले आदिह सात गुणस्थान पत्ती जीयोंक भाष	"	१४	आदारमार्गणा	२३८
७२	शुद्धलेखपाये आदिह तरह गुणस्थानपत्ती जीयोंके भाष	२३०	८३	मिथ्याद्वि लेखर गद्योनि केद्वी गुणस्थान तक आदा तक जीयोंक भाष	"
११	मध्यमार्गणा	२३०-२३१	८४	अनादरक जीयोंके भाष	"
७३	सयगुणस्थानपत्ती जीयोंके भाष	मध्य			
७४	अमध्य जीयोंके भाष	२३०			
७५	अमध्यमार्गणामें गुणस्थानक भाषको न कह कर मागणा स्थान-सयमी भाषके कहनेका क्या अमिमाय है ? इस दावाका समाधान	२३०-२३१			
१२	सम्यक्त्वमार्गणा	२३१-२३७			
७६	असत्यतत्त्वमालाद्वि लेखर अयोगिकेयली गुणस्थान तक मालाद्वि जीयोंके भाष	२३१			

अल्पनहुत्वनुगम

१

निपयरी उत्थानिरा २४१ २५०

१ धयन्ताकारका मगगापरण और प्रतिष्ठा

अल्पनहुत्वनुगमकी अपेक्षा २४१

निर्देश मेद निरूपण

"

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
२	नाम अल्पगुह्य, स्थापना- अल्पगुह्य, द्रव्य अल्पगुह्य और भाव अल्पगुह्य, इन चार प्रकारके अल्पगुह्योंका समेद-स्वरूप निरूपण	२४१ २४२
३	प्रकृतमें सचित्त द्रव्याल्प गुह्यसे प्रयोजनका उल्लेख	२४२
४	निर्देश, स्थामित्व, आदि छह अनुयोगद्वारासे अल्पगुह्य- त्वका स्वरूप निरूपण	२४२ २४३
५	ओघ और आवेशका स्वरूप	२४३
	२	
	ओघसे अल्पगुह्यानुगमनिर्देश २४३-२६१	
६	अपूर्वकरणादि तीन गुणस्थान- घर्ती उपशामक जीवोंका प्रवेशकी अपेक्षा अल्पगुह्य	२४३ २४४
७	अपूर्वकरण आदिके कालोंमें परस्पर हीनाधिकता होनेसे सचय विसदृश क्यों नहीं होता ? इस शकाका सयुक्तिक समाधान	२४४
८	उपशान्तकपायवीतरागद्वन्द्व- स्थोंका अल्पगुह्य	२४५
९	क्षपक जीवोंका अल्पगुह्य	२४५ २४६
१०	सयोगिकेवली और अयोगि केवलीका प्रवेशकी अपेक्षा अल्पगुह्य	२४६
११	सयोगिकेवलीका सचय कालकी अपेक्षा अल्पगुह्य	२४७
१२	प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीवोंका अल्पगुह्य	२४७ २४८
१३	सयतासयतोंका अल्पगुह्य और तत्सयधी शकाका समाधान	२४८
१४	सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पगुह्य और तदन्तर्गत अनेक शकाओंका समाधान	२४८ २४९

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
१५	सासादनसम्यग्दृष्टियोंका गु- णकार चतुर्लते हुए गुण- कारके तीन प्रकारोंका वर्णन	२४९
१६	सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असयत- सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका सयुक्तिक पच सप्र- माण अल्पगुह्य निरूपण	२५० २५३
१७	असयतसम्यग्दृष्टि गुण- स्थानमें सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पगुह्यका अनेक शका- ओंके समाधानपूर्वक निरू- पण	२५३ २५६
१८	सयतासयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पगुह्य- त्वका तदन्तर्गत अनेक शका- ओंके समाधानपूर्वक सयु- क्तिक निरूपण	२५६ २५७
१९	प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्व- सम्यग्धी अल्पगुह्य	२५८
२०	उपशामक और क्षपकोंमें सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पगुह्य तथा तदन्तर्गत अनेक शका- ओंका समाधान	२५८ २६१
	३	
	आदेशसे अल्पगुह्यानुगम- निर्देश	२६१ ३५०
	१ गतिमार्गणा	२६१ २८७
	(नरकगति)	२६१-२६७
२१	सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि, असयतसम्य- ग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि नारकी जीवोंके अल्पगुह्यका क्रमशः सयुक्तिक निरूपण	२६१ २६३
२२	असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें नारकीयोंका सम्यक्त्वसयधी अल्पगुह्य	२६३ २६४

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
२२	पृथक्त्व शब्दका अर्थ वैपुल्य वाचा कैसे किया ? इस शकाका समाधान	२५४
२४	सातों पृथिवियोंके नारकी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्प गहुत्व	२६४ २६७
२५	अतमुहूर्तना अथ असरयात आचलियालेनेसे उसका अन्त मुहूर्तपना विरोधको क्यों नहीं प्राप्त होगा ? इस शकाका समाधान	२६६
	(तिर्यचगति)	२६८ २७३
२६	सामान्यतिथ्यच पचेन्द्रिय तिर्यच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रियपानिमतातिथ्यचोने तत्तगत अनेक शकाओंके समाधानपूर्वक अल्पगहुत्वका निरूपण	२६८ २७०
२७	असत्यतसम्यग्दृष्टि और सत्य तात्पर्यत गुणस्थानमें उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंका सम्यक्स्वरूपभी अल्पगहुत्व	२७० २७३
२८	असत्यत तिर्यचोंमें क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंसे घेदकसम्यग्दृष्टि जाय क्यों असत्यात गुणित है, इस यातना सयुक्तिक निरूपण	२७१
२९	स्यतास्यत तिर्यचोंमें क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंका अल्पगहुत्व क्यों नहीं कहा ? इस शकाका समाधान	२७२
	(मनुष्यगति)	२७३ २८०
३०	सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और मनुष्यनियोंके तत्तगत शका-समाधान पूर्वक सत्र गुणस्थानसम्बन्धी	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	अल्पगहुत्वका पृथक् पृथक् निरूपण	२७३
	(देवगति)	२८०-२८७
३१	चारों गुणस्थानवर्ती देवोंका अल्पगहुत्व	२८०
३२	अमयतसम्यग्दृष्टिगुणस्थानमें देवोंका सम्यक्त्वसम्बन्धा अल्पगहुत्व	२८० २८१
३३	भयनयानी, व्यन्तर, ज्योतिरी, देव और देवियोंका, तथा सौधम-ईशानकल्पयातिनी, देवियोंका अल्पगहुत्व	२८१-२८२
३४	सौधम ईशानकल्पसे लेकर सयावसिद्धि तक विमान धामी देवोंके चारों गुण स्थानसम्बन्धी तथा सम्यक्स्वरूप सम्बन्धी अल्पगहुत्वका तत्तगत शका-समाधान पूर्वक पृथक् पृथक् निरूपण	२८२ २८६
३५	सर्गाधिसिद्धिमें असत्यात देव क्यों नहीं होते ? यद्यपि पृथक्त्वके अन्तरवाले आन तादि कल्पगत्ती देवोंमें सख्यात आचलियोंसे भाजित पत्नोपमप्रमाण जीव क्यों नहीं होते ? इत्यादि अनेक शकाओंका सयुक्तिक और सप्रमाण समाधान	२८६ २८७
	२ इन्द्रियमार्गणा	२८८-२८९
३६	पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंका अल्पगहुत्व	"
३७	इन्द्रियमागणामें स्वस्थान अल्पगहुत्व और सर्वपरस्थान अल्पगहुत्व क्यों नहीं रहे ? इस शकाका समाधान	२८९

क्रम न	विषय	पृष्ठ न	क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	३ कायमार्गणा	२८९-२९०		का सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्प- ग्रहत्व	२९९ ३००
३८	वसुक्रादिक और वसुक्रादिक- पर्याप्त जीवोंका अल्पग्रहत्व	"	४८	पल्योपमके असख्यातवें भाग- प्रमाण क्षाधिकसम्यग्दृष्टि- योंमेंसे असख्यात जीव विग्रह क्यों नहीं करते? इस शकाका समाधान	"
	४ योगमार्गणा	२९० ३००		५ वेदमार्गणा	३००-३११
३९	पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और औदारिककाययोगी जीवोंके समय गुणस्थानसम्यग्दृष्टि और सम्यक्त्वसम्यग्दृष्टि अल्प- ग्रहत्वका पृथक् पृथक् निरूपण	२९० २९४	४९	प्रारम्भके नव गुणस्थानवर्ती छविदेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व	३००-३०२
४०	औदारिकमिश्रकाययोगी स योगिकेवली, असयतसम्य- ग्दृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व	२९४ २९५	५०	असयतसम्यग्दृष्टि, सयता सयत, प्रमत्तसयत, अप्रमत्त- सयत, अपूर्वकरण और अनि- वृत्तिरूपण गुणस्थानवर्ती छविदेदियोंका पृथक् पृथक् सम्यक्त्वसम्यग्दृष्टि अल्पग्रहत्व	३०२ ३०४
४१	वैक्रियिककाययोगी जीवोंका अल्पग्रहत्व	२९५ २९६	५१	प्रारम्भके नव गुणस्थानवर्ती पुरपवेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व	३०४ ३०६
४२	वैक्रियिकमिश्रकाययोगी सा- सादनसम्यग्दृष्टि, असयत सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व	२९६	५२	असयतसम्यग्दृष्टि आदि छह गुणस्थानवर्ती पुरपवेदी जीवोंका सम्यक्त्वसम्यग्दृष्टि पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व	३०६ ३०७
४३	वैक्रियिकमिश्रकाययोगी अस- यतसम्यग्दृष्टि जीवोंका सम्य- क्त्वसम्यग्दृष्टि अल्पग्रहत्व	२९७	५३	आदिके नव गुणस्थानवर्ती नपुसकवेदी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पग्रहत्व	३०७ ३०८
४४	आहारकाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगी जी- वोंका अल्पग्रहत्व	२९७-२९८	५४	असयतसम्यग्दृष्टि आदि छह गुणस्थानवर्ती नपुसकवेदी जीवोंका सम्यक्त्वसम्यग्दृष्टि अल्पग्रहत्व	३०९-३१०
४५	उपशमसम्यक्त्वके साथ आहारकनदि क्यों नहीं होती? इस शकाका समाधान	२९८	५५	अपगतवेदी जीवोंका अल्प- ग्रहत्व	३११
४६	कर्मणकाययोगी सयोगिके- वली, सासादनसम्यग्दृष्टि, असयतसम्यग्दृष्टि और मि- थ्यादृष्टि जीवोंका अल्पग्रहत्व	२९८ २९९		६ कपायमार्गणा	३१२-३१६
४७	असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्था- नमें कर्मणकाययोगी जीवों-		५६	चारों कपायवाले जीवोंका अल्पग्रहत्व	३१२ ३१४

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
५७	अपूर्वकरण और अनिवृत्ति करण, इन दो उपशामक गुणस्थानोंमें प्रवेश करने वाले जीवोंसे सत्यातगुणित प्रमाणवाले इन्हीं दो गुण स्थानोंमें प्रवेश करनेवाले क्षपकोंकी अपेक्षा सूक्ष्मसाम्प रायिक उपशामक जीव विशेष अधिक कैसे हो सकते हैं ? इस शकाका समाधान	३१२
५८	असयतसम्यग्दृष्टि आदि सात गुणस्थानवर्ती कपायी जीवों का सम्यक्त्वसम्यग्धी पृथक् पृथक् अल्पबहुत्व	३१५ ३१६
५९	अकपायी जीवोंका अल्पबहुत्व	३१६
	७ ज्ञानमार्गणा	३१६ ३२२
६०	मल्लहानी, धुताहानी और विभगहानी जीवोंका अल्प बहुत्व	३१६ ३१७
६१	आभिनिरोधिहानी, धुत हानी और अयधिहानी जीवों का असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ गुणस्थान तक पृथक् पृथक् अल्पबहुत्व	३१७-३१९
६२	उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पबहुत्व	३१९
६३	प्रमत्तसयतसे लेकर क्षीण कपाय गुणस्थान तक मन पपयहानी जीवोंका अल्प बहुत्व	३२०
६४	उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पबहुत्व	३२१

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
६५	केवलहानी सयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिनोंका अल्पबहुत्व	३२१ ३२२
	८ सयममार्गणा	३२२ ३३०
६६	सामान्य सयतोंका प्रमत्त सयतसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक अल्पबहुत्व	३२२ ३२४
६७	उक्त जीवोंका दसवें गुण स्थान तक सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्पबहुत्व	३२४ ३२५
६८	प्रमत्तसयतादि चार गुण- स्थानवर्ती सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंका अल्पबहुत्व	३२५ ३२६
६९	उक्त जीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पबहुत्व	३२६
७०	परिहारशुद्धिसयमी प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थान वर्ती जीवोंका अल्पबहुत्व	३२७
७१	उक्त जीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पबहुत्व	"
७२	परिहारशुद्धिसयतोंके उप शमसम्यक्त्व नहीं होता है, इस सिद्धान्तका स्पष्टीकरण	"
७३	सूक्ष्मसापरायिकसयमी उप शामक और क्षपक जीवोंका अल्पबहुत्व	३२८
७४	यथाप्यातविहारशुद्धिसय- तोंका अल्पबहुत्व	"
७५	सयतासयतोंका अल्पबहुत्व नहीं है इस बातका स्पष्टीकरण	"
७६	सयतासयत और असयत सम्यग्दृष्टिजीवोंका सम्यक्त्व सम्यग्धी अल्पबहुत्व	३२८ ३३०
	९ दर्शनमार्गणा	३३१
७७	चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी, अवधिदर्शनी	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	दर्शनी जीवोंका पृथक् पृथक् अल्पबहुत्व	३२१
	१० लेश्यामार्गणा	३३२-३३९
७८	आदिके चार गुणस्थानवर्ती कृष्ण, नील और कापोत- लेइयावाले जीवोंका अल्प- बहुत्व	३३२
७९	असंयतसम्यग्दृष्टि गुण- स्थानमें उक्त जीवोंका सम्य- क्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व	३३०-३३३
८०	आदिके सात गुणस्थानवर्ती तेज और पद्मलेइयावाले जीवोंका पृथक् पृथक् अल्प- बहुत्व	३३४ ३३५
८१	असंयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानोंमें उक्त जीवोंका सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व	३३५
८२	मिथ्यादृष्टि आदि तेरह गुण- स्थानवर्ती शुक्ललेइयावाले जीवोंका अल्पबहुत्व	३३६ ३३८
८३	असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्था- नसे लेकर दसवें गुणस्थान तक शुक्ललेइयावाले जीवोंका सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व	३३८ ३३९
	११ भ्रूयमार्गणा	३३९-३४०
८४	सर्गगुणस्थानवर्ती भ्रूय जीवोंका अल्पबहुत्व	३३९
८५	अभ्रूय जीवोंका अल्पबहुत्व	३४०
	१२ सम्यक्त्वमार्गणा	३४०-३४५
८६	सामान्य सम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व	३४०
८७	चौथे गुणस्थानसे लेकर चौद- हवें गुणस्थान तक क्षात्रिक सम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्प- बहुत्व	३४० ३४२
८८	असंयतसम्यग्दृष्टि आदि चार	

क्रम न	विषय	पृष्ठ न
	गुणस्थानोंमें एक ही पद होनेके कारण सम्यक्त्व सम्यन्धी अल्पबहुत्व नहीं है, इस बातका स्पष्टीकरण	३४२
८९	असंयतसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानवर्ती वेदकसम्य- ग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व	३४२ ३४३
९०	उक्त जीवोंके सम्यक्त्व- सम्यन्धी अल्पबहुत्वके अभा- वका निरूपण	३४३
९१	असंयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर उपशातकपाय गुणस्थान तक उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व	३४४
९२	उक्त जीवोंके सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्वके अभावका स्पष्टी- करण	३४५
९३	सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्य- ग्मिथ्यादृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंके अल्पबहुत्वका अभाव प्रदर्शन	"
	१३ सक्षिमार्गणा	३४५-३४६
९४	आदिके बारह गुणस्थानवर्ती सक्षी जीवोंका अल्पबहुत्व	३४५
९५	असक्षी जीवोंके अल्पबहुत्वका अभाव निरूपण	३४६
	१४ आहारमार्गणा	३४६-३५०
९६	आदिके तेरह गुणस्थानवर्ती आहारक जीवोंका अल्पबहुत्व	३४६ ३४७
९७	चौथेसे दसवें गुणस्थान तक आहारक जीवोंका सम्यक्त्व- सम्यन्धी अल्पबहुत्व	३४८
९८	अनाहारक जीवोंका अल्प- बहुत्व	३४८ ३४९
९९	असंयतसम्यग्दृष्टि गुण- स्थानमें अनाहारक जीवोंका सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व	३४९-३५०

शुद्धिपत्र

—०—

(पुस्तक ४)

पृष्ठ	पंक्ति	अनुद्ध	शुद्ध
२८	५	णामपत्तिर्द्वीण	णाम पत्तिर्द्वीण
"	२०	जिनको ऋद्धि प्राप्त हुई है,	जिनको ऋद्धि प्राप्त हुई है,
४१	२९	विष्कम और आयामसे तिर्यग्लोक है,	घनलोच, उर्ध्वलोक और अग्रेयलोक, इन तीनों लोकोंके असंख्यातमें भाग क्षेत्रमें विष्कम आर आयामसे एक शतप्रमाण ही तिर्यग्लोक है,
७०	२८	तिर्यंच पर्याप्त मिथ्यादृष्टि	तिर्यंच मिथ्यादृष्टि
७२	१२	तिर्यंच पर्याप्त जीव	तिर्यंच जीव
"	१३	"	"
७४	१३	मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य और योनिमयी मिथ्यादृष्टि मनुष्य	मिथ्यादृष्टि मनुष्य
"	२२	"	"
८५	२२	खडित करके उसका उतनी राशि	खडित करके जो लब्ध आये उसके असं ख्यातमें अथवा संख्यातमें भाग राशि
१२१	१३	देखा जाता है, (न कि यथा- र्थतः) किंतु क्षीणमोक्षी	देखा जाता है। इस प्रकारका स्वस्थानपद अयोगिकेवलमें नहीं पाया जाता, क्योंकि, क्षीणमोक्षी
१४२	०	उसहो अजीवो	उसहो अजीवो
"	१३	यह अजित है,	यह अजित है,
१४७	६	प्रमाणसे	प्रमाणसे
१६३	१६	किंतु वे उस गुणस्थानमें	किंतु वे एकोद्विधमें
"	१७	न कि वे सासादनसम्य दृष्टियोंमें उपन	न कि वे अर्थात् सासादनसम्यदृष्टि जीव एकोद्विधमें उपन

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८२	२३	चाहिए ।	चाहिए । (किन्तु सम्यग्निर्मम्याद्यष्टि गुणस्थानमें मरण नहीं होता है ।)
१९१	१०	और अगस्तन चार पृथिवियों- सम्बन्धी चार	और सातवीं पृथिवीसम्बन्धी अगस्तन चार
२६२	७	मारणतिय (उचवाद्) परिणदेहि	मारणतियपरिणदेहि
”	२२	मारणान्तिरुसमुद्रात् और उप- पादपदपरिणत	मारणान्तिरुसमुद्रात्-पदपरिणत
२६९	१३	वैक्रियिरुमिश्रकाययोगी जीर्णोका	असयतसम्यग्द्यष्टि जीर्णोका
२७३	२१	नारक्तियोंसे सासादन- सम्यग्द्यष्टि	नारक्तियोंमेंसे तिर्यचो और मनुष्योंमें मार- णान्तिरुसमुद्रात् करनेवाले बी और पुरुष- वेदी सासादनसम्यग्द्यष्टि
३६९	१५	लब्ध्यपर्याप्तकोंमें	अपर्याप्तकोंमें
”	१६	लब्ध्यपर्याप्त	अपर्याप्त
४१०	१७	अर्थात् उनमें पुन वापिस आनेसे,	अर्थात् अपने विवक्षित गुणस्थानको छोड़कर नवीन गुणस्थानमें जानेसे,
४१७	३	-परियट्टेसुप्यण्णेषु	-परियट्टेसु पुण्णेषु
”	१५	शेष रहने पर	पूर्ण होने पर
४२२	२२	उदयमें आये हैं	उपार्जित किये हैं
४४५	५	णिरयगदीण	णिरयगदीण ण
”	६	मणुसगदीण	मणुसगदीण ण
”	७	तिरियत्तगर्हण	तिरियत्तगर्हण ण
”	८	देवगदीण	देवगदीण ण
”	१९, २०, २२, २४	उत्पन्न	नहीं उत्पन्न
४६४	२४	अन्तर्मुहूर्तसे काल	अन्तर्मुहूर्तसे अधिक अर्द्धाई सागरोपम काल
”	२५	अर्द्धाई सागरोपमकालके आदि	निश्चित पर्यायके आदि
४६८	१२	वर्धमान	शुक्ला-वर्धमान
”	१७	शुक्ला-तेज	तेज
४७७	१७	सादि-सान्त	सादि

पृष्ठ पवि अनुद

शुद्ध

(पुस्तक ५)

२	१६ अन्तरूप	आगमको	अंतरके प्रतिपादक द्रव्यरूप आगमको
"	२८ वर्तमानमें इस समय		वर्तमानमें अथ पदार्थके
७	९ साक्षाण		साक्षण
१०	१४ कालमें रहने पर		कालके स्थानमें अन्तर्मुहूर्तके द्वारा
१२	८ गहिदसम्मत्त		गहिदसम्मत्त
१४	१७ असयनादि		प्रमत्तादि
१८	४ वासपुघत्ते		वासपुघत्ते
१९	१० वेदगसम्मत्तमुवणमिय		वेदगसम्मत्तमुवसामिय
"	२७ प्राप्त कर		उपशामित कर अर्थात् द्वितीयोपशमसम्प
			कत्वको प्राप्त कर
५६	२२ यह तो राशियोंका		यह तो इस राशिका
५९	२१, २२ उच्छ्रित अन्तर		जघय अन्तर
७१	१९ आयुके		उसके
७७	२६ गतिकी		इन्द्रियकी
९७	७ देवेसु		देवीसु
"	२२ देवोंमें		देवियोंमें
१०६	२१ अंतरसे अधिक अंतरका		अंतरका
१०८	९ उक्कस्सेण		उक्कस्सेण
११७	१९ तीनों ज्ञानवाले		मति-श्रुतज्ञानवाले
१२१	१ अतरम्भतरादो		अतरम्भतरा दो
१२५	१५ अप्रमत्तसयतका काल		अप्रमत्तसयतके दो काल
१२७	२३ तीनों ज्ञानवाले		मति-श्रुतज्ञानवाले
१३७	५ अनममज्जदाण		अमत्तसजद-अप्पमत्तसजदाण
"	१८ अममत्तसयत		अमत्तसयत और अप्रमत्तसयत
१४८	१३ (अममत्तसयत) सिद्ध		सिद्ध
"	२२ (अममत्तसयत) और आयुके)		आयुके कालक्षयसे

पृष्ठ पक्ति अशुद्ध

शुद्ध

१७० २१ जाना जाना है कि
अन्तर रहित है ।

जाना जाता है कि उपशमश्रेणीके समारोहण
योग्य कालसे शेष उपशमसम्पत्त्वका काल
अल्प है ।

१८६ ० धम्मभावो ।

धम्मभावो य ।

१९८ २८-२९ अवयवरूप अश

अवयवरूप सम्पत्त्वगुणका तो निराकरण
रहता है, किन्तु सम्पत्त्वगुणका अवयव-
रूप अश

२०४ १० सखेज्जाणत-

असखेज्जाणत-

२२४ १९ दयाधर्मसे हुए

दयाधर्मको जाननेवाले ज्ञानियोंमें वर्तमान

॥ २१ क्योंकि, आप्त ययार्थ

क्योंकि, दयाधर्मके ज्ञाताओंमें भी आप्त,
आगम और पदार्थके श्रद्धानसे रहित
जीवके ययार्थ

२२५ ९ सजोगिकेचली

सजोगिकेचली (अजोगिकेचली)

२२६ २८ पारिणामिकमानकी

भव्यत्वमानकी

२३८ १६ कर्मणस्त्रययोगियोंमें

कर्मणस्त्रययोगियोंसे

॥ १७ कर्मणस्त्रययोगी

अनाहारक

२४६ ८ पुधसुत्तारमो

पुधसुत्तारमो

३६४ ५ -मेतो-

-मेत्तो-

२५५ १६ प्रमाणराशिसे भाजित

फलराशिसे इच्छाराशिको गुणित करके
प्रमाणराशिसे भाजित

२७५ २८ सासादनसम्पत्त्वद्वि जीव
संख्यातगुणित

सासादनसम्पत्त्वद्वि जीव सयतासयत मनुष्य-
नियोंसे सख्यातगुणित

२८६ २९ असख्यातने

सख्यातने

अंतराणुगमो

मोक्षेण अप्पाणहि पयद्दो । दृग्णतरं दुग्धिं सम्भासम्भासभेण । भरह-बाहुलीणमतर
मुव्वेल्लतो णदो सम्भासदृग्णतर । अतरमिदि बुद्धीए सक्कप्पिय दड-कड-कोदहादओ
असम्भासदृग्णतर । दन्तरं दुग्धिं आगम-णोआगमभेण । अतरपाहुडजाणओ अणुवजुत्ता
अतरदच्चागमो वा आगमदन्तर । णोआगमदन्तर जाणुगमरीर-भणिय-तव्वदिरित्तभेण
तिग्धिं । आधारे आधेयोनयारेण लद्धतरमण्ण जाणुगमरीर भणिय-वद्धमाण-समुज्जाद
भेण तिग्धिं । कधं भणियस्स जणाहारदाए द्विदस्स अंतरवयणो ? ण एम दोमो,
कूरपज्जायाणाहारेसु णि तदुल्लेसु एत्थ कूरपण्णसुलभा । कधं भूदे एमो वरहारो ? ण,
रज्जपज्जायाणाहारे णि पुरिसे राओ आगच्छदि त्ति वरहारुलभा । भणियणोआगम
दन्तर भविस्सकाले अतरपाहुडजाणओ सपहि मते णि उज्जोए अतरपाहुडअगम

यह शब्द नाम अन्तरनिक्षेप है। स्थापना अन्तर सद्भाव और असद्भावके भेदसे दो प्रकारका है। भरत और बाहुषलिके बीच उमङ्गता हुआ नद सद्भावस्थापना अन्तर है। अन्तर इस प्रकारकी बुद्धिसे सकल करके दड, घाण, धनुष आदिक असद्भावस्थापना अन्तर है, अर्थात् दड, घाणादिके न होने हुए भी तत्प्रमाण क्षेत्रवर्ती अन्तरकी, यह अन्तर इतने धनुष है ऐसी जा कल्पना कर लेते हैं, उसे असद्भावस्थापना अन्तर कहते हैं।

द्रव्यान्तर आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है। अन्तर विषयक प्राकृतके शायक तथा वर्तमानमें अनुपयुक्त पुरुषको आगमद्रव्यान्तर कहते हैं। अथवा, अन्तररूप द्रव्यके प्रतिपादक आगमको आगमद्रव्यान्तर कहते हैं। नोआगमद्रव्यान्तर शायकशरीर, भय और तद्ध्यतिरिक्तके भेदसे तीन प्रकारका है। आधारमें आधेयके उपचारसे प्राप्त हुए हैं अन्तरसहा जिसको ऐसा शायकशरीर भय, वर्तमान और समुत्पत्तिके भेदसे तीन प्रकारका है।

शंका—भनाधारतासे स्थित, अर्थात् वर्तमानमें जो अन्तरागमका आधार नहीं है ऐसे, भावी शरीरके 'अन्तर' इस सद्भावका व्यवहार कैसे हो सकता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, कूर (भात) रूप पर्यायके आधार न होने पर भी तदुल्लेख यहां, अर्थात् व्यवहारमें, कूर सज्ञा पाई जाती है।

शंका—भूत शायकशरीरके यह अन्तरका व्यवहार कैसे चलेगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, राज्यपर्यायके नहीं धारण करनेवाले पुरुषमें भी 'राज्य' आता है' इस प्रकारका व्यवहार पाया जाता है।

मविष्यकालमें जो अन्तरशास्त्रका शायक होगा, परंतु वर्तमानमें इस समय उपयोगके होते हुए भी अन्तरशास्त्रके ज्ञानसे रहित है, ऐसे पुरुषको भय नोआगमद्रव्यान्तर कहते हैं।

रहिओ । तव्यदिरिचदव्वंतरं तिनिहं सचित्ताचित्त-मिस्मभेएण । तत्थ सचित्ततरं उसह-संभमाण मज्जे द्विओ अजिओ । अचित्ततव्यदिरिचदव्वंतरं णाम घणोअहि-तणु-वादाणं मज्जे द्विओ घणाणिलो । मिस्संतर जहा उज्जत-सचुंजयाण पिच्चालद्धिदगाम-णगराड । सेत्त-कालतराणि दव्वतरे परिट्ठाणि, उदव्वयदिरिचसेत्त-कालाणमभाया । भावंतरं दुनिह आगम-णोआगमभेएण । अतरपाहुडजाणओ उज्जुत्तो भायागमो वा आगम-भावंतरं । णोआगमभावंतरं णाम ओदइयादी पच्च भाया दोण्ह भायाणमतरे द्विदा ।

एत्थ केण अतरेण पयदं ? णोआगमदो भावतरेण । तत्थ वि अजीवभावंतरं मोत्तूण जीवभावतरे पयदं, अजीवभावतरेण इह पओजणाभाया । अंतरमुच्छेदो निरहो परिणामतरंगमण णत्थित्तगमण अण्णभायच्चरहाणमिदि एयट्ठो । एदस्स अंतरस्स अणु-गमो अतराणुगमो । तेण अंतराणुगमेण दुनिहो निहेमो दव्वयद्विय-पज्जयद्वियणयाउलंघणेण । तिनिहो निहेमो किण्ण^१ होज्ज ? ण, तडज्जस्म णयस्स अभावा । त पि कथं णव्वदे ?

तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर सचित्त, अचित्त और मिश्रके भेदसे तीन प्रकारका है । उनमेंसे घृपभ जिन और नभव जिनके मध्यमें स्थित अजित जिन सचित्त तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तरके उदाहरण है । घनोदधि और तनुवातके मध्यमें स्थित घनवात अचित्त तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर है । ऊर्जयन्त और शङ्खजके मध्यमें स्थित ग्राम नगरादिक मिश्र तद्व्यतिरिक्त द्रव्यान्तर है । क्षेत्रान्तर और कालान्तर, ये दोनों ही द्रव्यान्तरमें प्रविष्ट हो जाते हैं, क्योंकि, छह द्रव्योंसे व्यतिरिक्त क्षेत्र और कालका अभाव है ।

भावान्तर आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है । अन्तरशास्त्रके ज्ञायक और उपयुक्त पुरुषको आगमभावान्तर कहते हैं, अथवा भावरूप अन्तर आगमको आगमभावान्तर कहते हैं । औदयिक आदि पांच भावोंमेंसे किन्हीं दो भावोंके मध्यमें स्थित विवक्षित भावको नोआगम भावान्तर कहते हैं ।

शंका—यहां पर किस प्रकारके अन्तरसे प्रयोजन है ?

समाधान—नोआगमभावान्तरसे प्रयोजन है । उसमें भी अजीवभावान्तरको छोड़कर जीवभावान्तर प्रकृत है, क्योंकि, यहां पर अजीवभावान्तरसे कोई प्रयोजन नहीं है ।

अन्तर, उच्छेद, विरह, परिणामान्तरगमन, नास्तित्वगमन और अन्यभावव्यवधान, ये सब एकार्यार्थी नाम हैं । इस प्रकारके अन्तरके अनुगमको अन्तरानुगम कहते हैं । उस अन्तरानुगमसे दो प्रकारका निर्देश है, क्योंकि, वह निर्देश द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नयका अवलोकन करनेवाला है ।

शंका—तीन प्रकारका निर्देश क्यों नहीं होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, तीसरे प्रकारका कोई नय ही नहीं है ।

शंका—यह भी कैसे जाना ?

१ प्रतिपु 'अजीओ' मप्रती 'अजीओ' इति पाठ ।

२ प्रतिपु 'पुणोअहि' इति पाठः ।

३ प्रतिपु 'विण्ह' इति पाठः ।

संग्रहामगहदिरित्तविसयाणुलभा । एव मणम्मि काऊण ओघेणादेसेण येत्ति' उक्त ।
एकेण णिदेमेण पञ्चत्तमिदि चे ण, एकेण दुणयाल्लिजीणाणमुत्तयारकरणे उतायामात्ता ।

ओघेण मिच्छादिद्वीणमन्तरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च णत्थि अतरं, णिरन्तरं ॥ २ ॥

‘जहा उदेसो तहा णिदेसो’ ति णायममाल्लु ओघेणेत्ति उक्त । मेसगुणद्वान
उदामद्वो मिच्छादिद्विणिदेसो । केवचिरं कालादो उदि पुच्छा एदस्म पमाणत्तपटुप्पायण
फला । णाणाजीवमिदि वहुस्सु एययणणिमेसो कव घडदे ? णाणाजीवद्वियसामण
मिक्खाए बहूण पि एगत्तमिगेहामात्ता । णत्थि अतरं मिच्छत्तपञ्चपरिणदजीणाण तिसु
मि फालेसु पोच्छेदो मिरहो अभासो' णत्थि ति उक्त होदि । अतरस्स पडिमेहं कदे सो
पडिमेहो तुच्छो ण होदि ति जाणाणल्लु णिरन्तरमगहण, मिहिरूणेण पडिमेहादो वदिरित्तेण

समाधान—क्योंकि, संग्रह (सामान्य) ओर असंग्रह (विशेष) को छोड़कर
किसी अन्य नयका नियमभूत कोई पदार्थ नहीं पाया जाता है ।

इस उक्त प्रकारके शास्त्र-समाधानको मनमें धारण करके सूत्रकारने ‘ओघसे
ओर आवेशसे’ ऐसा पद कहा है ।

शंका—एक ही निर्देश करना पर्याप्त था ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक निर्देशसे दोनों नयोंके अचलन्यन करनेवाले
जीवोंके उपकार करनेमें उपायका अभाव है ।

ओघमे मिध्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २ ॥

‘जैसा उदेन होता है, वैसा निवृत्त होता है’ इस न्यायके रक्षणार्थ ‘ओघसे’
यह पद कहा । मिध्यादृष्टि पदका निर्देश शेष गुणस्थानोंके प्रतिषेधने लिए है । ‘कितने
काल होता है’ इस पृच्छाका फल इस सूत्रकी प्रमाणनाका प्रतिपादन करना है ।

शंका—‘णाणाजीव’ इस प्रकारका यह एक वचनका निर्देश बहुतसे जीवोंमें
कैसे घटित होता है ?

समाधान—नाना जीवोंमें स्थित सामान्यरी विवक्षासे बहुतोंके लिए भी एक
एकके प्रयोगमें विरोध नहीं आता ।

‘अन्तर नहीं है’ अर्थात् मिध्यात्वपर्यायसे परिणत जीवोंका तीनों ही फालोंमें
व्युच्छेद, विच्छेद या अभाव नहीं होता है, यह अर्थ कहा गया समझना चाहिए । अन्तरके
प्रतिषेध करने पर यह प्रतिषेध तुच्छ अभावरूप नहीं होता है, किन्तु भागान्तरभावरूप
होता है, इस बातके जतलानेके लिए ‘निरन्तर’ पदका ग्रहण किया है । प्रतिषेधसे

१ प्रतिपु ‘अधि’ इति पाठः ।

२ सामान्येन तावत् मिध्यात्वेनान्जीवोपेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

३ प्रतिपु ‘अभावा’ इति पाठः ।

मिच्छादिद्विणो सव्यकालमच्छति चि उच्च होदि । अधरा पञ्जद्वियणयानलंनियजीगणु-
ग्गहणद्वं णत्थि अंतरमिदि पडिसेहयणं, दव्यद्वियणयानलंनियजीगणुग्गहद्वं णिरंतरमिदि
निहियण । एमो अत्यो उतरि सव्यत्थ उत्तव्यो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३ ॥

त जधा— एवो मिच्छादिद्वी सम्मामिच्छत्त-सम्मत्त-सजमामजम-संजमेसु उहुत्तो
परियद्विदो, परिणामपच्चएण मम्मत्तं गदो, सव्यलहुमतोमुहुत्तत्त सम्मत्तेण अच्छिय
मिच्छत्त गदो, लद्धमतोमुहुत्त मव्यजहण मिच्छत्तत्तर । एत्थ चोदगो भणदि— ज पढ-
मिच्छमिणं मिच्छत्त तं पुणो मम्मत्तुत्तरकाले ण होदि, पुव्वकाले उहुत्तस्स उत्तरकाले
पडत्तिरोहा । ण च त चे उत्तरकाले उप्पज्जइ, उप्पणस्स उप्पत्तिरोहा । तदो
अंतिह मिच्छत्त पढमिच्छ ण होदि चि अंतरस्म अभापो चेयेत्ति ? एत्थ परिहारो उच्चदे—
सच्चमेमदं जदि सुद्धो पज्जयणओ अनलंविज्जदि । किंतु णइगमणयमनलंनिय अतर-
व्यतिरिक्त होनेके कारण मिथ्यादृष्टि जीव सर्व काल रहते हैं, यह अर्थ कहा
गया है । अथवा, पर्यायार्थिक नयना अवलम्बन करनेवाले जीवोंके अनुग्रहके लिए
'अन्तर नहीं है' इस प्रकारका प्रतिषेधवचन और द्रव्यार्थिक नयना अवलम्बन करने
वाले जीवोंके अनुग्रहके लिये 'निरन्तर' इस प्रकारका विधिपरक वचन कहा गया है ।
यह अर्थ आगेके सभी सूत्रोंमें भी कहना चाहिए ।

एक जीवस्य अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३ ॥

जैसे—एक मिथ्यादृष्टि जीव, सम्यग्मिथ्यात्व, अतिरिक्तसम्यक्त्व, सयमासयम और
सयममें उहुत्तधार परिवर्तित होता हुआ परिणामोंके निमित्तसे सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ,
और वहा पर सर्वलघु अन्तर्मुहूर्तकाल तक सम्यक्त्वके साथ रहकर मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्व गुणस्थानका अन्तर प्राप्त
हो गया ।

शका—यहा पर शकाकार कहता है कि अन्तर करनेके पूर्व जो पहलेका
मिथ्यात्व था, वही पुन सम्यक्त्वके उत्तरकालमें नहीं होता है, क्योंकि, सम्यक्त्व
प्राप्तिके पूर्वकालमें वर्तमान मिथ्यात्वकी उत्तरकालमें, अर्थात् सम्यक्त्व छोड़नेके पश्चात्,
प्रवृत्ति होनेका विरोध है । तथा, वही मिथ्यात्व उत्तरकालमें भी उत्पन्न नहीं होता है,
क्योंकि, उत्पन्न हुई वस्तुके पुन उत्पन्न होनेका विरोध है । इसलिए सम्यक्त्व छूटनेके
पश्चात् होनेवाला अन्तिम मिथ्यात्व पहलेका मिथ्यात्व नहीं हो सकता है, इससे
अन्तरका अभाव ही सिद्ध होता है ?

समाधान—यहा उक्त शकाका परिहार करते हैं—उक्त कथन सत्य ही है, यदि
शुद्ध पर्यायार्थिक नयना अवलम्बन किया जाय । किंतु नेगमनयका अवलम्बन लेकर अन्तर-

१ एकजीव प्रति जघनेनात्तर्मुहूर्त । स मि, १, ८

२ प्रतिपु म प्रतिपु च 'पढमिच्छमिण' इति पाठ ।

पर्युष्णा कीरते, तस्म सामण्णमिमुहयनिसयचादो। तदो ण एस दोसो। त जहा—पढमतिम-
मिन्ठच्च पज्जाया अभिज्जा, मिच्छत्तक्कम्मोदयजादत्तेण अत्तागमं-पदत्थाणमसद्दहेण
एगजीवाहारत्तेण भेदाभाया। ण पुब्बुत्तरकालमेण ताण भेओ, तथा निवक्खाभाया।
तम्हा पुब्बुत्तरद्वासु अचिच्छण्णामरूपेण द्विदमिन्ठत्तस्म सामण्णाअलण्णेण एवन्त पत्तस्स
सम्मत्तपज्जओ अतर होदि। एस जत्थो मन्वत्थ पउज्जिदव्वो।

इकस्सेण वे छावट्टिसागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ४ ॥

एदस्म निदरिमणं—एकं तिरिक्खो मणुस्सो वा लतय-काणिट्ठरूपप्रासिपदेरेसु
चोइसमागरोयमाउट्टिदिएसु उप्पण्णो। एक् सागरोयम गमिय निदियसागरोयमादिसमए
सम्मत्त पडिअण्णो। तेरममागरोयमाणि तत्थ अचिउय मम्मत्तेण सह चुदो मणुसो जादो।
तत्थ मज्जम मज्जमामज्जम वा अणुपालिय मणुसाउएण्णरागीमसागरोयमाउट्टिदिएसु
आरणचुददेरेसु उअअण्णो। तत्तो चुदो मणुसो जादो। तत्थ सज्जममणुपालिय उअरिमगेवजे

प्ररूपणा की जा रहा है, क्योंकि, यह नैगमनय सामान्य तथा विशेष, इन दोनोंको विषय
करता है, इसलिये यह कोई दोष नहीं है। उसका स्पर्शिकरण इस प्रकार है—अतरकालके
पहलेका मिथ्यात्व और पीछेका मिथ्यात्व, ये दोनों पर्याय हैं, जो कि अभिन्न हैं, क्योंकि,
मिथ्यात्वकमके उदयमे उत्पन्न होनेके कारण, आत, आगम और पदार्थोंके अधिष्ठानकी अपेक्षा।
तथा एक ही जीव इव्यके आधार होनेसे उनमें कोई भेद नहीं है। और न पूर्वकाल तथा
उत्तरकालके भेदकी अपेक्षा भी उन दोनों पर्यायोंमें भेद है, क्योंकि, इस कालभेदकी यहा
विरक्षा नहीं की गई है। इसलिये अन्तरके पहले और पीछेके कालमें अविच्छिन्न स्वरूपसे
स्थित और सामान्य (इव्यार्थिकनय) के अवलम्बनसे एकत्वकी प्राप्त मिथ्यात्वका
सम्यक्त्व पर्याय अन्तर होता है, यह निश्चय हुआ। यही अर्थ आगे सर्वत्र योजित कर
लेना चाहिये।

मिथ्यात्वस्य उत्कृष्ट अन्तरं कुलं कम दो छापासठ सागरोयम कालं है ॥ ४ ॥

इसका दृष्टान्त—कोई एक तिर्यक् अयना मनुष्य चौदह सागरोयम आयुस्थिति
पाले लातय-कापिट्ठ वस्त्रवासी देवोंमें उत्पन्न हुआ। वहा एक सागरोयम काल वितारकर
दूसरे सागरोयमके भादि समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। तेरह सागरोयम काल वहा
पर रहकर सम्यक्त्वके साथ ही ध्युत हुआ और मनुष्य होगया। उस मनुष्यभवंमें
समयको, मयवा समयमासयमको अनुपालन कर इस मनुष्यभवसम्यग्धी आयुसे कम
प्रांस सागरोयम आयुकी स्थितिवाले आरण अव्युत्तकत्वके देवोंमें उत्पन्न हुआ। वहासे
ध्युत होकर पुन मनुष्य हुआ। इस मनुष्यभवमें समयको अनुपालन कर उपरिम

देवेषु मणुसाउणेण एकत्तीससागरोपमाउट्ठिदिणमु उअण्णो । अंतोमुहुत्तूणछाअट्ठि-
सागरोपमचरिमसमए परिणामपच्चएण सम्मामिच्छत्तं गदो । तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छिय
पुणो सम्मत्त पट्ठिअज्जिय निस्समिय चुदो मणुमो जादो । तत्थ संजम संजमासंजम वा
अणुपालिय मणुस्साउएण्णत्तीससागरोपमाउट्ठिदिणमुअज्जिय पुणो जहाकमेण मणुसाउ-
वेण्णत्तीसम-चउत्तीससागरोपमाउट्ठिदिणमु देवेषुअज्जिय अंतोमुहुत्तूणमेछाअट्ठिसागरो-
पमचरिमसमए मिच्छत्त गदो । लद्धमंतरं अंतोमुहुत्तूणमेछाअट्ठिसागरोपमाणि । एसो
उप्पत्तिकमो अउप्पणउप्पायणट्ठं उत्तो । परमत्थदो पुण जेण केण नि पयारेण छानट्ठी
पूरेदव्वा ।

सासाणसम्मामिच्छादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, गाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ५ ॥

तं जहा, सासणसम्मामिच्छिस्स ताउ उच्चदे- दो जीममादिं काऊण एगुत्तरकमेण
पलिदोअमस्म असंखेज्जिदिभागमेत्तत्रियप्पेण उअममसम्मामिच्छिणो उअसमसम्मत्तद्वाए
एगसमयमादिं काऊण जाव छाअलियावसेसाए आसाणं गदा । तेत्थियं पि काल सासण-
प्रवेयकमं मनुष्य आयुसे कम इकत्तीस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले अहमिन्द्र देवोंमें
उत्पन्न हुआ । वहा पर अन्तर्मुहूर्त कम छयासठ सागरोपम कालके चरम समयमें परि-
णामोंके निमित्तसे सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त हुआ । उस सम्यग्मिध्यात्वमें अन्तर्मुहूर्त काल
रहकर पुन सम्यक्त्वको प्राप्त होकर, विग्राम ले, च्युत हो, मनुष्य हो गया । उस मनुष्य-
भयमें सयमको अथवा सयमासयमको परिपालन कर, इस मनुष्यभवसम्यग्धी आयुसे
कम चौस सागरोपम आयुकी स्थितिवाले आनत प्राणत कल्पोंके देवोंमें उत्पन्न होकर
पुन यथाक्रमसे मनुष्यायुसे कम चाईस ओर चौबीस सागरोपमकी स्थितिवाले देवोंमें
उत्पन्न होकर, अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागरोपम कालके अन्तिम समयमें मिध्यात्वको
प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागरोपम कालप्रमाण अन्तर प्राप्त
हुआ । यह ऊपर बताया गया उत्पत्तिका क्रम अव्युत्पन्न जनोंके समझानेके लिए कहा है ।
परमार्थसे तो जिस किसी भी प्रकारसे छयासठ सागरोपम काल पूरा किया जा
सकता है ।

सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि जीमोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीमोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय होता है ॥ ५ ॥

जैसे, पहले सासादनसम्यग्दृष्टिका अन्तर कहते हैं— दो जीवोंको आदि करके
एक एक अधिकसे क्रमसे पल्योपमके जसप्यातवें भागमात्र विकल्पसे उपशमसम्यग्दृष्टि
जीव, उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समयको आदि करके अधिकसे अधिक छह आवली
कालके अवशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए । जितना काल अवशेष

१ सामादनसम्यग्दृष्टेस्तर नानाजीवापेक्षया जघनेनैव समय । ××× सम्यग्मिध्यादृष्टेस्तर नाना
जीवापेक्षया सामादनवद् । स ति १, ८

पुणो चरित्तमोहमुत्तममेदूण हेट्ठा ओयरिय आसाण गदस्स अतोमुहुत्तंतरं किण्ण परूविदं ?
ण, उत्तममसेदीदो ओदिण्णाणं सासणगमणाभावादो । तं पि कुदो णब्बदे ? एदम्हादो चेव
भूदणलीवयणादो ।

सम्मामिच्छादिद्विस्म उच्चदे—एक्को सम्मामिच्छादिद्वी परिणामपच्चएण मिच्छत्त
सम्मत्त ना पडिउण्णो अंतरिदो । अतोमुहुत्तेण भूओ सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमतर-
मंतोमुहुत्तं ।

उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठं देसूणं ॥ ८ ॥

ताउ सासणस्सुदाहरणं उच्चदे—एक्केण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि
कादूण उत्तममम्मत्त पडिउण्णवट्ठमसमए अणतो संमारो छिण्णो अद्धपोगलपरियट्ठमेत्तो
कदो । पुणो अंतोमुहुत्त सम्मत्तेणच्छिय आसाणं गदो (१) । मिच्छत्त पडिवज्जिय
अतरिदो अद्धपोगलपरियट्ठ मिच्छत्तेण परिभमिय अंतोमुहुत्ताउत्तमसेम ससारे उवसमसम्मत्त
पडिउण्णो एगममयाउत्तमए उत्तममम्मत्तद्धाए आसाण गदो । लद्धमंतर । भूओ मिच्छा-

उपशम करा ओर नीचे उतारकर, सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्त
प्रमाण अन्तर क्यों नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीसे उतरनेवाले जीवोंके सासादन गुण-
स्थानमें गमन करनेका उभाव है ।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—भूतवली आचार्यके इसी ध्वननसे जाना ।

अउ सम्यग्मिथ्याद्वि गुणस्थानका एक जीवकी अपेक्षा जउत्तय अन्तर कहते हैं—
एक सम्यग्मिथ्याद्वि जीव परिणामके निमित्तसे मिथ्यात्वको, अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त
हो अन्तरको प्राप्त हुआ ओर अन्तर्मुहूर्त कालके पश्चात् ही पुन सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो गया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥८॥

उनमेंसे पहले सासादन गुणस्थानका उदाहरण कहते हैं—एक अनादि मिथ्या-
द्वि जीवने अध प्रवृत्तादि तीनों करण करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम
समयमें अनन्त ससारको छिन्न कर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमान किया । पुन अन्तर्मुहूर्तकाल
सम्यक्त्वके साथ रहकर वह सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको प्राप्त
होकर अन्तरको प्राप्त हुआ ओर अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल मिथ्यात्वके साथ परिभ्रमणकर
ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर उमशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशम-
सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे सूत्रोक्त अन्तरकाल प्राप्त हो गया । पुन मिथ्याद्वि हुआ (२) । पुन वेदक-

पडिवज्जिय छात्रलियाउसेमाए उउमममम्मचद्वाए आमाणं गदो । लद्धमतर पल्लिउमस्स अमंसेज्जदिभागो । अतोमुहुत्तकालेण आसाणं क्रिण्ण णीदो ? ण, उउसममम्मचेण विणा आसाणगुणगहणाभागा । उवमममम्मच पि अतोमुहुत्तेण क्रिण्ण पडिवज्जेदो ? ण, उउ समसम्मादिद्वी मिच्छत्तं गतूणं सम्मत्त-सम्माभिच्छत्ताणि उव्वेल्लमाणो तेमिमतोमाद-कोडीमेत्तद्विदिं धादिय सागरोउमादो सागरोउमपुधत्तादो वा जाउ हेद्वा ण केदि ताव उवसमसम्मत्तगहणमभन्नाभागा । ताणं द्विदीओ अतोमुहुत्तेण धादिय सागरोउमादो सागरोउमपुधत्तादो वा हेद्वा क्रिण्ण केदि ? ण, पल्लिउमस्स अमंसेज्जदिभागमेत्तायामेण अतोमुहुत्तुक्कीरणकालेहि उव्वेल्लणसडएहि धादिज्जमाणाए सम्मत्त-सम्माभिच्छत्तद्विदिं पल्लिउमस्स अमंसेज्जदिभागमेत्तकालेण विणा सागरोउमस्स वा सागरोउमपुधत्तस्स वा हेद्वा पढणायुग्गत्तोदो । सासणपच्छायदमिच्छाद्विं सजम गेण्हानिय दसणतिपमुग्गसामिय

भागमात्र कालसे उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर, उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आगली काल अवशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हो गया । इस प्रकारसे पल्लोपमके असत्प्राप्तवै भागप्रमाण अन्तकाल उपलब्ध हो गया ।

शुक्रा—पल्लोपमके असत्प्राप्तवै भागप्रमाण कालमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सासादन गुणस्थानको क्यों नहीं प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके विना सासादन गुणस्थानके ग्रहण करनेका अभाव है ।

शुक्रा—वही जीव उपशमसम्यक्त्वको भी अन्तर्मुहूर्तकालके पश्चात् ही क्यों नहीं प्राप्त होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वद्वि जीव मिथ्यात्वको प्राप्त होकर, सम्यक्त्वप्रवृत्ति और सम्यग्मिथ्याप्रवृत्ति उद्भूतना करता हुआ, उनकी अन्त कोही प्रमाण स्थितिमें घात करके नागरोपमसे, अथवा सागरोपम पृथक्त्वसे जघतकनीच नहीं करता है, तब तब उपशमसम्यक्त्वका ग्रहण करना ही संभव नहीं है ।

शुक्रा—सम्यक्त्वप्रवृत्ति और सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिकी स्थितिओंको अन्तर्मुहूर्त कालमें घात करके सागरोपमसे, अथवा सागरोपमपृथक्त्व कालसे नीचे क्यों नहीं करता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पल्लोपमके असत्प्राप्तवै भागमात्र आयामके द्वारा अन्तर्मुहूर्त उत्तीर्णकालकाल उद्भूतनाडाकोसे घात कीजानेवाली सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिकी स्थितिका, पल्लोपमके असत्प्राप्तवै भागमात्र कालके विना सागरोपमके, अथवा सागरोपमपृथक्त्वके नीचे पतन नहीं हो सकता है ।

शुक्रा—सासादन गुणस्थानसे पीछे लगे हुए मिथ्याद्वि जीवको समयम ग्रहण कराकर और दर्शनमोहनीयनी तीन प्रवृत्तियोंका उपशमन कराकर, पुन चारित्र्यमोहना

पुणो चरित्तमोहमुत्तमसमेदूण हेट्ठा ओयरिय जासाणं गदस्स अतोमुहुत्तंतरं किण्ण परुत्तिदं ?
ण, उत्तमसमेदो ओदिण्णाणं सासणगमणाभावादो । तं पि कुदो णव्वदे ? एदम्हादो चेत्त
भूदन्लीयणादो ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एक्को सम्मामिच्छादिद्वी परिणामपच्चएण मिच्छत्त
सम्मत्तं वा पडिउण्णो अंतरिदो । अतोमुहुत्तेण भूओ सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमंतर-
मतोमुहुत्त ।

उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठं देसूणं ॥ ८ ॥

तात् सामणस्सुदाहरणं उच्चदे- एक्केण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि
कादूण उत्तमसम्मत्त पडिउण्णपद्धममए अणंतो संसारो छिण्णो अद्धपोगलपरियट्ठमेत्तो
कदो । पुणो अतोमुहुत्त सम्मत्तेणच्छिय आमाणं गदो (१) । मिच्छत्त पडिवज्जिय
अंतरिदो अद्धपोगलपरियट्ठ मिच्छत्तेण परिभमिय अतोमुहुत्तात्तसे ससारो उत्तमसम्मत्तं
पडिवण्णो एगममयात्तसेमाए उत्तमसम्मत्तद्वाए आसाण गदो । लद्धमंतर । भूओ मिच्छा-
उपशम कर ओर नीचे उतारकर, सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्त-
प्रमाण अन्तर क्यों नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमधेणीसे उतरनेवाले जीवोंके सासादन गुण-
स्थानमें गमन करनेका अभाव है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना ?

समाधान—भूतली आचार्यके इसी वचनसे जाना ।

अत्र सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका एक जीवकी अपेक्षा जगत्त्रय अन्तर कहते हैं-
एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंके निमित्तसे मिथ्यात्वको, अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त
हो अन्तरको प्राप्त हुआ और अन्तर्मुहूर्त कालके पश्चात् ही पुन सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त
हुआ । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो गया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥८॥

उनमेंसे पहले सासादन गुणस्थानका उदाहरण कहते हैं- एक अनादि मिथ्या-
दृष्टि जीवने अध प्रवृत्तादि तीनों करण करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम
समयमें अनन्त ससारको छिन्न कर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र किया । पुन अन्तर्मुहूर्तकाल
सम्यक्त्वके साथ रहकर वह सासादनसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको प्राप्त
होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल मिथ्यात्वके साथ परिभ्रमणकर
ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर उमशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशम
सम्यक्त्वके कालमें एक समय शेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे सूत्रोक्त अन्तरकाल प्राप्त हो गया । पुन मिथ्यादृष्टि हुआ (२) । पुन वेदक-

दिष्टी जादो (२) । वेदगमम्मत्त पडिवज्जिय (३) अणत्ताणुगिं निसजोडिय (४) दसणमोहणीय सरिय (५) अप्पमत्तो जादो (६) । तदो पमत्तापमत्तपरावत्तमहस्स कादूण (७) सखगमेदीपाओगाविसोदीए निमुज्झिऊण (८) अपुच्चरगगो (९) अणियट्ठिगगो (१०) सुहुमरगगो (११) खीणकमाजो (१२) सजोगिकेवली (१३) अजोगिकेवली (१४) होदूण मिदो जादो । एउ ममयाहियचोहमअतोमुहुत्तोहि उण मद्धपोगलपरियट्ठ मासणमम्मादिट्ठिस्स उक्कस्मत्तर होदि ।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्स उच्छेदे— एउकेण अणादियमिच्छादिट्ठिणा तिण्णि नि करणाणि कादूण उवत्तममम्मत्त गेण्हतेण गमिदमम्मत्तपढममए अणतो समारो छिदिदूण अद्ध पोगलपरियट्ठमेत्तो कदो । उउमममम्मत्तेण अतोमुहुत्तमन्ठिय (१) मम्मामिच्छत्त पडिण्णो (२) । मिच्छत्त गतूणतरिदो । जद्धपोगलपरियट्ठ परिभमिय अतोमुहुत्तावम ससारो उउमममम्मत्त पडिवण्णो । तत्थेउ अणत्ताणुगिं निमजोडय मम्मामिच्छत्त पडि वण्णो । लद्धमत्तर (३) । ततो वेदगमम्मत्त पडिवज्जिय (४) दसणमोहणीय खनेदूण (५) अप्पमत्तो जादो (६) । पुणो पमत्तापमत्तपरावत्तमहस्स करिय (७) सखगमेदीपाओगा-

सम्यक्त्वको प्राप्त होकर (३) अनन्तानुबन्धीरूपायका विसंयोजन कर (४) दर्शनमोह नीयना क्षपक (५) अप्रमत्तसयत्त हुआ (६) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानोंमें सहस्रो परावर्तनोंको करके (७) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध होकर (८) अपूर्वकरण क्षपक (९), अनिवृत्तिकरण क्षपक (१०), सूक्ष्मसारपराधिक क्षपक (११), क्षीणकपाप घीनराग छन्नस्थ (१२), संयोगिकेवली (१३) और अयोगिकेवली (१४) होकरके सिद्ध होगया । इस प्रकारसे एउ समय अधिउ चौदह अतमुहत्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन सासादनसम्यग्दृष्टिमा उत्कृष्ट अंतरकाल होता है ।

अउ सम्यग्मिग्यादृष्टि गुणस्थानमा एक जावनी अपेक्षा उत्कृष्ट अंतर कहते हैं— एक अनादि मिग्यादृष्टि जावने तीनों ही करण करके उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करते हुए सम्यक्त्व ग्रहण करनेक प्रथम समयमें अनन्त ससारछेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तन मात्र क्रिया । उपशमसम्यक्त्वके साथ अतमुहत्त रहकर वह (१) सम्यग्मिग्यात्वको प्राप्त हुआ (२) । पुन मिग्यात्वको प्राप्त हो अंतरको प्राप्त हो गया । पश्चात् अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल प्रमाण परिधमण कर ससारके अन्तमुहत्तप्रमाण अवशेष रहने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और यहापर ही अनन्तानुबन्धीरूपायकी विसंयोजना कर सम्यग्मिग्यात्वको प्राप्त हुआ इस प्रकारसे अंतर उपलब्ध हो गया (३) । तत्पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर (४) दर्शनमोहनीयना क्षपण करके (५) अप्रमत्तसयत्त हुआ (६) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यग्धी सहस्रो परावर्तनोंको करके (७) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध

मिसोहीए मिसुज्झिय (८) अपुञ्जसग्गो (९) अणियद्विसग्गो (१०) सुहुमखवग्गो (११) खीणकसाजो (१२) सजोगिकेवली (१३) अजोगिकेवली (१४) होदूण सिद्धि गदो। एदेहि चोदमजतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वयगलपरियद्व सम्मामिच्छुचुक्कस्मतर होदि ।

असजदसम्मादिद्विपहुडि जाव अप्पमत्तसंजदा ति अंतरं केव-
चिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥९॥

कुदो ? सव्वकालमेदाणमुत्तलभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १० ॥

एदस्म सुत्तस्स गुणद्वानपरिगाडीए अत्थो उच्चदे । तं जहा— एक्को अमंजद-
सम्मादिद्वी सजमासजम पडिग्गणो । अतोमुहुत्तमंतरिय भूओ अमजदसम्मादिद्वी जादो ।
लद्धमतरमतोमुहुत्त । सजदासजदस्म उच्चदे— एक्को सजदासजदो असंजदसम्मादिद्वि
मिच्छादिद्वि सजम वा पडिग्गणो । अतोमुहुत्तमंतरिय भूओ सजमासजम पडिग्गणो ।
लद्धमतोमुहुत्त जहण्णतर सजदासजदस्स । पमत्तसजदस्म उच्चदे— एगो पमत्तो अप्पमत्तो
होकर (८) अपूर्वकरग क्षपक (९) अनिवृत्तिररण क्षपक (१०) सूक्ष्मसान्प्राय क्षपक (११)
क्षीणकपाय (१२) सयोगिकेवली (१३) और अयोगिकेवली (१४) होकरके सिद्धपदको
प्राप्त हुआ । इन चोदह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम जन्मपुद्गलपरिवर्तन सम्यग्मिध्यात्वका उत्कृष्ट
अन्तरकाल होता है ।

अमयतमम्यग्दष्टि गुणस्थानको आदि लेकर अग्रमत्तसंयत गुणस्थान तकके प्रत्येक
गुणस्थानमेंती जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर
नहीं है, निरन्तर है ॥ ९ ॥

क्योंकि, सर्वकाल ही सूत्रेक गुणस्थानमेंती जीव पाये जाते ह ।

उक्त गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ॥१०॥

इस सूत्रका गुणस्थानकी परिपाटीसे अर्थ कहते ह । वह इस प्रकार है— एक
असंयतसम्यग्दष्टि जीव संयमासयमको प्राप्त हुआ । वहापर अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर
अन्तरको प्राप्त हो, पुन असंयतसम्यग्दष्टि होगया । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण
अन्तरकाल प्राप्त होगया ।

अत्र संयतासयतमा अन्तर कहते ह— एक संयतासयत जीव, असंयतसम्यग्दष्टि
गुणस्थानको, अथवा मिथ्यादष्टि गुणस्थानको, अथवा संयमको प्राप्त हुआ और अन्तर्मुहूर्त-
काल वहापर रह कर अन्तरको प्राप्त हो पुन संयमासयमको प्राप्त होगया । इस
प्रकारसे संयतासयतमा अन्तर्मुहूर्तकाल प्रमाण जगन्य अन्तर प्राप्त हुआ ।

१ अमयतमम्यग्दष्टिवाचप्रमत्ता तानां नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्तं । स मि १, ८

होदूण सव्वलहुं पुणो नि पमत्तो जादो । लद्धमतोमुहुत्त जहण्णतर पमत्तस्म । अप्पमत्तस्म उच्चदे- एगो अप्पमत्तो उअसममेटीमारुहिय पडिणियत्तो अप्पमत्तो जादो । लद्धमत जहण्णमप्पमत्तस्म । हेट्ठिमगुणेषु किण्ण अतराप्पिदो ? ण, उअसमसेठीसच्चगुणद्वान्णा द्वाणाहिंत्तो हेट्ठिमएगगुणद्वान्णाए सखेज्जगुणत्तादो ।

उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूणं ॥ ११ ॥

गुणद्वानपरिवाडीए उक्कस्सतरपरूपा कीरदे- एकमेण अणादियमिच्छादिट्ठिणा तिणि फरणाणि कादूण पढमसम्मत्त गेण्हतेण अणतो ससारो छिदिदूण गहिदसम्मत्त पढमसमए अद्धपोगलपरियट्ठमेत्तो रुदो । उअसमसम्मत्तेण अतोमुहुत्तमट्ठिय (१) छात्रलिपायसेसाए उअसमसम्मत्तद्वान्णा आसाण गत्तूणतरिदो । मि-उत्तेणद्धपोगलपरियट्ठ मभिय अपच्छिमे भो संजम सजमामजम या गत्तूण रुदररणिज्जो होदूण अंतोमुहुत्तमसेस

अत्र प्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक प्रमत्तसयत जीव, अप्रमत्तसयत होकर सर्वलघु कालके पश्चात् फिर भी प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकारसे प्रमत्तसयतका अन्तर्मुहूर्तकालप्रमाण जघन्य अन्तर प्राप्त हुआ ।

अत्र अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव उपशमश्रेणिपर चढ़कर पुन लंडा और अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तकाल प्रमाण जघन्य अन्तर अप्रमत्तसयतका उपलब्ध हुआ ।

शुक्रा—नीचेके असयतादि गुणस्थानोंमें भेजकर अप्रमत्तसयतका जघन्य अन्तर क्यों नहीं बताया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमश्रेणीके सभी गुणस्थानोंके कालोंसे प्रमत्तादि नीचेके एक गुणस्थानका काल भी सव्यातगुणा होता है ।

उक्त असयतादि चारों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है ॥ ११ ॥

अत्र गुणस्थान-परिपाटीसे उत्कृष्ट अन्तरकी प्ररूपणा करते हैं- एक अनादि मिथ्या दृष्टि जीवने तीनों करण करके प्रथमोपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करते हुए अनन्त ससार छोड़कर सम्यक्त्व ग्रहण करनेके प्रथम समयमें वह ससार अधपुद्गलपरिवर्तनमात्र किया पुन उपशमसम्यक्त्वे साथ अन्तर्मुहूर्तकाल रह कर (१) उपशमसम्यक्त्वेके कालमें छा आवलिया अवशेष रह जाने पर सासात्त गुणस्थानको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । पुन मिथ्यात्वके साथ अधपुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर अन्तिम भवमें सयमको अपना सयमासयमको प्राप्त होकर, दृतदृत्य वेदकसम्यक्त्वी होकर अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण संसारके अवशेष रह जाने पर परिणामोंके निमित्तसे असयतसम्यक्त्वा

संसारे परिणामपच्चएण असंजदसम्मादिट्ठी जादो । लद्धमतर (२) । पुणो अप्पमत्त-
भावेण सजमं पडिगज्जिय (३) पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्स कादूण (४) सखगमेडी-
पाओग्गानिसोहीए निसुज्झिय (५) अपुब्बो (६) अणियट्ठी (७) सुहुमो (८)
खीणो (९) सजोगी (१०) अजोगी (११) होदूण परिणिउदो । एवमेक्कारसेहि
अंतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोग्गलपरियट्ठमसजदसम्मादिट्ठीणमुक्कस्संतर होदि ।

सजदासजदस्म उच्चदे- एक्केण अणादियमिच्छादिट्ठिणा तिण्णि करणाणि
कादूण गहिदसम्मत्तपढमसमए सम्मत्तगुणेण अणतो संसारो छिण्णो अद्वपोग्गलपरियट्ठ-
मेचो कदो । सम्मत्तेण सह गहिदमजमासंजमेण अंतोमुहुत्तमच्छिय छागलियाअसेसाए
उअसमसम्मत्तद्वाए आसाण गदो (१) अतरिदो मिच्छत्तेण अद्वपोग्गलपरियट्ठं परिभामिय
अपच्छिमे भवे सामंजम सम्मत्त सजम वा पडिगज्जिय कदकरणिज्जो होदूण परिणाम-
पच्चएण सजमासजमं पडिगणो (२) । लद्धमतर । अप्पमत्तभावेण सजमं पडिगज्जिय (३)
पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्स कादूण (४) सखगमेडीपाओग्गानिसोहीए निसुज्झिय (५)
अपुब्बो (६) अणियट्ठी (७) सुहुमो (८) खीणकसाओ (९) सजोगी (१०)

होगया । इस प्रकार सूक्त अन्तर्काल प्राप्त हुआ (२) । पुन अप्रमत्त-
भावके साथ समयको प्राप्त होकर (३) प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी
सहस्रों परावर्तनोंको करके (४) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य विशुद्धिसे विशुद्ध
होकर (५) अपूर्वकरणसयत (६) अनिवृत्तिकरणसयत (७) सूक्ष्मसाम्परायसयत (८)
क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ (९) सयोगिकेवली (१०) और अयोगिकेवली (११) होकर
निर्वाणको प्राप्त हो गया । इस प्रकारसे इन ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरि-
वर्तनकाल असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

अअ सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने
तीनों करण करके सम्यक्त्वन ग्रहण करनेके प्रथम समयमें सम्यक्त्वगुणके द्वारा अनन्त
संसार छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण किया । पुन सम्यक्त्वके साथ ही ग्रहण किये
गये सयमासयमके साथ अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर, उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह
आवलिया अशेष रहजाने पर सासादनगुणस्थानको प्राप्त हो (१) अन्तरको प्राप्त हो
गया, और मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर अन्तिम भवमें असयम
सहित सम्यक्त्वको, अथवा समयको प्राप्त होकर कृतकृत्य वेदकसम्यक्त्वी हो, परि-
णामोंके निमित्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकारसे इस गुणस्थानका अन्तर
प्राप्त होगया । पुन अप्रमत्तभावके साथ समयको प्राप्त होकर (३) प्रमत्त अप्रमत्त
गुणस्थानसम्बन्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (४) क्षपकश्रेणीके योग्य विशुद्धिसे विशुद्ध
होकर (५) अपूर्वकरण (६) अनिवृत्तिकरण (७) सूक्ष्मसाम्पराय (८) क्षीणकपाय (९)

जोगी (११) होदूण पणिणिवुदो। एरमेवारेमेहि अतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोगलपरियद्व
कस्मत्तर सज्जमसंजदस्म होदि।

पमत्तस्स उच्चदे- एवेण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि करणाणि कादूण
उवसमसम्मत्त सज्जम च जुगग पडिग्गतेण अणतो ससारो छिदिओ, अद्वपोगलपरियद्व
मेत्तो कदो। अतोमुहुत्तमच्छिय (१) पमत्तो जादो (२)। आदी दिट्ठा। छात्रलिया
घसेसाए उरसमसम्मत्तद्वाए आमाण गतुगतिय मिच्छत्तेणद्वपोगलपरियद्व परियद्विप
अपच्छिमे भरे सासज्जमसम्मत्त सज्जमामंजम ग पडिवाज्जिय कदकरणिज्जो होऊण
अप्पमत्तमाणेण सचम पटिग्गिय पमत्तो जादो (३)। लद्धमत्तर। तदो खगसेदी
पाओग्गो अप्पमत्तो जादो (४)। पुणो अपुग्गो (५) अणियदी (६) सुहुमो (७)
खीणकमाओ (८) सजोगी (९) अजोगी (१०) होदूण णिव्वाण गदो। एर दसहि
अतोमुहुत्तेहि ऊणमद्वपोगलपरियद्व पमत्तस्सुवस्सत्तर होदि।

अप्पमत्तस्म उच्चदे- एवेण अणादियमिच्छादिद्विणा तिण्णि नि करणाणि करिय
उवसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगग पडिग्गणेण छेत्तूण अणतो ससारो अद्वपोगल

सयोगिकेवरी (१०) और अयोगिकेवरी (११) होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे
इन ग्यारह अन्तमुहुत्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल सयत्तासयत्ता उत्पन्न अन्तर
होता है।

अत्र प्रमत्तसयत्ता अन्तर कहते हैं- एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही
करण करक उपशमसम्यक्त्व और सयमको एक साथ प्राप्त होते हुए अनन्त ससार छेदकर
अर्धपुद्गलपरिवर्तनमान किया। पुन उस अवस्थामें अन्तमुहुत्त रह कर (१) प्रमत्तसयत्त
हुआ (२)। इस प्रकारसे यह अर्धपुद्गलपरिवर्तनकी आदि दृष्टिगोचर हुई। पुन उपशम
सम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशेष रहजाने पर सासादन गुणस्थानको जाकर
अन्तरको प्राप्त होकर मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल परिधमण कर अन्तिम
भवमें अमयमसहित सम्यक्त्वको, अथवा सयमासयमको प्राप्त होकर कृतकत्व वेदक
सम्यक्त्वों हो अप्रमत्तभावके साथ सयमको प्राप्त होकर प्रमत्तसयत्त हो गया (३)।
इस प्रकारसे इस गुणस्थानका अन्तर प्राप्त होगया। पश्चात् क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य
अप्रमत्तसयत्त हुआ (४)। पुन अपूवकरणसयत्त (५) अनिवृत्तिकरणसयत्त (६) सूक्ष्म
साम्परायसयत्त (७) खीणकपायवीतरागछद्म (८) सयोगिकेवरी (९) और अयोगि
केवरी (१०) होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ। इस प्रकारसे दस अन्तमुहुत्तोंसे कम अर्ध
पुद्गलपरिवर्तनकाल प्रमत्तसयत्तका उत्पन्न अन्तर होता है।

अथ अप्रमत्तसयत्ता अन्तर कहते हैं- एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही
करके उपशमसम्यक्त्वको और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त होकर
प्रद्वेष करने प्रथम समयमें ही अनन्त ससार छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तन मान

परियट्टमेतो पदममए कदो । तत्थतोमुहुत्तमच्छिय (१) पमत्तो जादो अंतरिदो मिच्छत्तेण अट्टपोगलपरियट्ट परियट्टिय अपच्छिमे भवे सम्मत्तं सज्जमामंजमं वा पडि-
वज्जिय सत्त कम्माणि स्रियि जप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । पमत्तापमत्तपरापत्त-
सहस्स काट्ठ (३) अप्पमत्तो जादो (४) । अपुव्वो (५) अणियट्ठी (६) सुट्ठमो (७)
खीणकामो (८) मज्जोगी (९) जजोगी (१०) होट्ठण णिव्वाण गदो । (एवं)
दसहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणमट्टपोगलपरियट्ट (अप्पमत्तस्सुक्कमतर होदि) ।

चटुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालदो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १२ ॥

अपुव्वम्म ताउ उच्चदे- मत्तट्ट जणा उहुआ वा अपुव्वकरणउत्सामगट्टाए
खीणाए अणियट्टिउत्सामगा ना अप्पमत्ता वा काल करिय देग जादा । एगसमय-
मंतरिदमपुव्वगुणट्टाण । तदो विदियममए अप्पमत्ता ना ओदरता अणियट्टिणो वा अपुव्व-
करणउत्सामगा जादा । लद्धमेगसमयमतर । एव चेउ अणियट्टिउत्सामगाणं सुट्ठम-
उत्सामगाणं उत्तंसंरुमायाण च जहण्णतरमेगममओ उच्चो ।

निया । उस अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें अन्तर्मुहूर्त रहकर (१) प्रमत्तसयत हुआ ओर
अन्तरको प्राप्त होकर मिथ्यात्वके साथ अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल परिचर्तन कर अन्तिम
भवमें सम्यक्त्व यथया सयभासयमको प्राप्त होकर दर्शनमोहकी तीन ओर अनन्तानुपधीकी
चार, इन सात प्रकृतियोंका क्षपण कर अप्रमत्तसयत हो गया (२) । इस प्रकार अप्रमत्त
सयतका अन्तरकाल उपलब्ध हुआ । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानमें सहस्रों परा-
पतनोंको करके (३) अप्रमत्तसयत हुआ (४) । पुन अपूर्वकरण (५) अनिवृत्तिकरण (६)
सूक्ष्मसाम्पराय (७) क्षीणरूपाय (८) सयोगिनेत्रली (९) चार जयोगिनेत्रली (१०)
होकर निर्माणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्तोंने मम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल
अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

उपशमश्रेणीके चारों उपशामकोका अन्तर कितने काल तक होता है ? नाना
जीर्णोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १२ ॥

उनमेंसे पहले अपूर्वकरण उपशामकका अन्तर रहते हैं- सात भाउ जन, अथवा
षट्ठसे जीउ, अपूर्वकरण गुणस्थानके उपशामककाल क्षीण हो जाने पर अनिवृत्तिकरण उप-
शामक अथवा अप्रमत्तसयत होकर तथा मरण करके देव हुए । इस प्रकार एक समयके
लिये अपूर्वकरण गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । तत्पश्चात् द्वितीय समयमें अप्रमत्त
सयत, अथवा उत्तरते हुए अनिवृत्तिकरण उपशामक जीउ, अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती
उपशामक होगए । इस प्रकार एक समय प्रमाण अन्तरकाल लब्ध होगया । इसी
प्रकारसे अनिवृत्तिकरण उपशामक, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक और उपशान्तकशाय उप-
शामकोंका एक समय प्रमाण जघन्य अन्तर कहना चाहिय ।

१ चतुर्णोपशामकानां नानाजीवोपेक्षया जघन्येनेक समय । स ति १, ८

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १३ ॥

त जघा- सत्तद्ध जणा बहुआ वा अपुब्बउत्तसामगा अणियट्ठित्तसामगा अप्प मत्ता वा काल करिय देना जादा । अतरिदमपुब्बगुणद्वान जाय उक्कस्सेण वासपुधत्त । तदो अदिक्कते वासपुधत्ते सत्तद्ध जणा बहुआ वा अप्पमत्ता अपुब्बकरणउत्तसामगा जादा । लद्धमुक्कस्सतर वासपुधत्त । एव चेव सेसतिण्हमुत्तसामगाण वासपुधत्ततर वत्तव्वं, विसेसाभारा ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १४ ॥

त जघा- एकको अपुब्बकरणो अणियट्ठित्तसामगो सुहुमउत्तसामगो उत्तमत किमाओ होदण पुणो वि सुहुमउत्तसामगो अणियट्ठित्तसामगो होदण अपुब्बउत्तसामगो जादो । लद्धमतर । एदाओ पच वि अद्दाओ एककद्ध कदे वि अतोमुहुत्तमेव होदि वि जहण्णतरमतोमुहुत्त होदि ।

एव चेव सेसतिण्हमुत्तसामगाणमेगजीवजहण्णतर वत्तव्व । णररि अणियट्ठि

उक्त चारों उपशामकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ १३ ॥

जैसे-सात आठ जन, अथवा गहुतसे अपूर्वकरण उपशामक जीव, अनिवृत्तिकरण उपशामक अथवा अप्रमत्तसयत हुए और वे मरण करके देय हुए । इस प्रकार यह अपूर्वकरण उपशामक गुणस्थान उत्कृष्टरूपसे धर्मपृथक्त्वके लिए अन्तरको प्राप्त होगया । तत्पश्चात् धर्मपृथक्त्वकालके ध्यतीत होनेपर सात आठ जन, अथवा गहुतसे अप्रमत्तसयत जीव, अपूर्वकरण उपशामक हुए । इस प्रकार धर्मपृथक्त्व प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होगया । इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणादि तीनों उपशामकोंका अन्तर धर्मपृथक्त्व प्रमाण कहना चाहिए, क्योंकि, अपूर्वकरण उपशामकके अन्तरसे तीनों उपशामकोंके अन्तरमें कोई विशेषता नहीं है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४ ॥

जैसे-एक अपूर्वकरण उपशामक जीव, अनिवृत्ति उपशामक, सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक और उपशान्तकपाय उपशामक होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक और अनिवृत्तिकरण उपशामक होकर अपूर्वकरण उपशामक होगया । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तकाल प्रमाण जघन्य अन्तर उपलब्ध हुआ । ये अनिवृत्तिकरणसे लगाकर पुन अपूर्वकरण उपशामक होनेके पूर्व तकके पाचों ही गुणस्थानोंके कालोंसे एकत्र करने पर भी यह बात अन्तर्मुहूर्त ही होता है, इसलिए जघन्य अन्तर भी अन्तर्मुहूर्त ही होता है । इसी प्रकार दोष तीनों उपशामकोंका एक जीवसम्बन्धी जघन्य अन्तर कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि अनिवृत्तिकरण उपशामकके सूक्ष्मसाम्परायिक

उवसामगस्त दो सुहुमद्वाओ एगा उवसंतकसायद्वा च जहण्णंतरं होदि । सुहुमउव-
सामगस्त उवसंतकसायद्वा एक्का चेव जहण्णंतर होदि । उवसंतकसायस्त पुण हेद्वा
उवसंतकसायमोदरिय सुहुमसापराओ अणियट्ठिकरणो अपुव्वकरणो अप्पमत्तो होदण
पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्मं करिय अप्पमत्तो अपुव्वो अणियट्ठी सुहुमो होदण पुणो उवसत-
कसायगुणद्वाण पडिवण्णस्त णमद्वासमूहमेत्तमतोमुहुत्तमत र होदि ।

उवकस्सेण अद्वपोग्गलपरियट्ठं देसूणं ॥ १५ ॥

अपुव्वस्त ताव उच्चदे- एक्केण अणादियमिच्छादिट्ठिणा तिण्णि करणाणि
करिय उवसमसम्मत्त सजम च अक्कमेण पडिवण्णपढमसमए अणंतससार छिंदिय
अद्वपोग्गलपरियट्ठमेत्त कट्ठेण अप्पमत्तद्वा अतोमुहुत्तमेत्ता अणुपालिदा (१) । तदो
पमत्तो जादो (२) । वेदगसम्मत्तगुणमिय (३) पमत्तापमत्तपरावत्तसहस्म कादण (४)
उवसमसेदीपाओगो अप्पमत्तो जादो (५) । अपुव्वो (६) अणियट्ठी (७) सुहुमो (८)
उवसतरुमायो (९) पुणो सुहुमो (१०) अणियट्ठी (११) अपुव्वकरणो जादो (१२) ।

सम्यग्धी दो अन्तर्मुहूर्तकाल आर उपशान्तकपायसम्यग्धी एक अन्तर्मुहूर्तकाल, ये तीनों
मिलाकर जघन्य अन्तर होता है । सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकके उपशान्तकपाय-
सम्यग्धी एक अन्तर्मुहूर्तकाल ही जघन्य अन्तर होता है । किन्तु उपशान्तकपाय उप-
शामकका उपशान्तरूपायसे नीचे उतरकर सूक्ष्मसाम्पराय (१) अनिवृत्तिकरण (२)
अपूर्वकरण (३) और अप्रमत्तसयत (४) होकर, प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यग्धी
सहस्रों परावर्तनोंको करके (५) पुन अप्रमत्त (६) अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)
और सूक्ष्मसाम्परायिक होकर (९) पुन उपशान्तरूपाय गुणस्थानको प्राप्त हुए जीवके
नौ अद्वाओंका सम्मिलित प्रमाण अन्तर्मुहूर्तकाल अन्तर होता है ।

उक्त चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्ध-
पुद्गलपरिवर्तन काल है ॥ १५ ॥

इनमेंसे पहले एक जीवकी अपेक्षा अपूर्वकरण गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तर कहते
हैं- एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीवने तीनों ही करण करके उपशमसम्यग्त्व और सयमको
एक साथ प्राप्त होनेके प्रथम समयमें ही अनन्त ससारको छेदकर अर्धपुद्गलपरिवर्तनमात्र
करके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अप्रमत्तसयतके कालका अनुपालन किया (१) । पीछे प्रमत्तसयत
हुआ (२) । पुन वेदकसम्यग्त्वको प्राप्त कर (३) सहस्रों प्रमत्त अप्रमत्त परावर्तनोंको
करके (४) उपशमश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत होगया (५) । पुन अपूर्वकरण (६) अनि-
वृत्तिकरण (७) सूक्ष्मसाम्पराय (८) उपशान्तरूपाय (९), पुन सूक्ष्मसाम्पराय (१०)
अनिवृत्तिकरण (११) और पुन अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती होगया (१२) । पश्चात् नीचे

१ उत्कर्षेणार्धपुद्गलपरिवर्तो देशोन । स मि १, ८

२ प्रतियु 'सुवसायिय' इति पाठ ।

हेह्ना पडिय अंतरिदो अहपोगलपरियट्ट पणियट्टिदूण अपच्छिमे भये दमणत्तिग तविय
अपुच्छुसमामगो जाणे (१३) । लद्धमत । तदो जणियट्टी (१४) सुद्धमो (१५)
उत्तमतत्ताओ (१६) जादो । पुणो पडिणियत्तो सुद्धमो (१७) अणियट्टी (१८)
अपुच्छो (१९) अप्पमतो (२०) पमतो (२१) पृणो अप्पमतो (२२) अपुच्छ
समो (२३) अणियट्टी (२४) सुद्धमो (२५) गीणसगाओ (२६) मनोगी (२७)
अत्तागी (२८) होदूण णिदुदो । एत्तमद्वारिम्महि अतोमुद्धत्तेहि उत्तमद्वपोगलपरि
यट्टमपुच्छरुणस्सुत्तस्मत्तर होदि । एत्त तिष्ठमुत्तमामगण । एत्तरि परिपाटीए छत्तीम
चत्तीम वारीम अतोमुद्धत्तेहि उत्तमद्वपोगलपरियट्ट तिष्ठमुत्तस्मत्तर होदि ।

चदुहं सवग-अजोगिकेवलीणमंतर केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १६ ॥

त जहा- मत्तट्ट जणा अट्टत्तमद वा अपुच्छरुणसगा एक्कस्मिं चैव समए
सव्हे अणियट्टिसगा जादा । एगसमयमंतरिदमपुत्तगुणद्वान । त्रिदियममए मत्तट्ट
जणा अट्टत्तमद वा अप्पमतो अपुच्छरुणसगा जादा । लद्धमतमेगसमओ । एत्त

गिरर अन्तरको प्राप्त हुआ और अधपुट्टपरिचयनसंग प्रमाण परिवर्तन करके अन्तिम
अधमं दशनमोहनीयता तीनों प्रतियोंका क्षपण करके अपूर्वकरण उपशामक हुआ (१३) ।
इस प्रकार अन्तरका उपलब्ध होगया । पुन अनिवृत्तिकरण (१४) सूक्ष्मसाध
रायिक (१५) और उपशान्तस्वाय उपशामक हागया (१६) । पुन लौटकर सूक्ष्मसाध
रायिक (१७) अनिवृत्तिकरण (१८) अपूर्वकरण (१९) अग्रमत्तसयत (२०) प्रमत्तसयत (२१)
पुन अग्रमत्तसयत (२२) अपूर्वकरण अग्र (२३) अनिवृत्तिकरण क्षपक (२४) सूक्ष्मसाध
रायिक क्षपक (२५) क्षीणस्वाय क्षपक (२६) सयागिकेवली (२७) और अयोगिकेवली (२८)
होकर निर्वाणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अट्टाहम अन्तमुहनीयमे वम अधपुट्टपरिचयन
काल अपूर्वकरणका उत्पष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकारसे तीना उपशामकोंका अन्तर
जानना चाहिये । किन्तु विशेष बात यह है कि परिपाटीवमसे अनिवृत्तिकरण उप
शामकके छत्तीस, सूक्ष्मसाधस्वाय उपशामकके चौबीस और उपशान्तस्वायके बाहस
अन्तमुहनीयमे वम अधपुट्टपरिचयनकाल तीनों उपशामकोंका उत्पष्ट अन्तर होता है ।

चात्ता क्षपक और अयोगिकेवलीका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जघन्यसे एक समय होता है ॥ १६ ॥

जन्म— सात आठ जन, अधया अधिकसे अधिक एत सौ आठ अपूर्वकरण क्षपक
एत ही समयमें समे सब अनिवृत्तिअपन हांगये । इस प्रकार एक समयके लिए अपूर्व
करण गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । द्वितीय समयमें सात आठ जन, अधया एक
सौ आठ अग्रमत्तसयत एक साथ अपूर्वकरण क्षपक हुए । इस प्रकारसे अपूर्वकरण क्षपकका
एक समय प्रमाण अन्तरका उपलब्ध हागया । इसी प्रकारसे शेष गुणस्थानोंका भी

१ चतुर्णा क्षपणसमयागिकेवलीना च नानाजीवापेक्षया जघन्येनैक समय । ॥ ति १, ८

मेसगुणद्व्याणाण पि' अंतरमेगसमयो वत्तव्वो ।

उक्कस्सेण छम्मासं ॥ १७ ॥

त जधा- सत्तद्व जणा अट्टुत्तरसदं वा अपुव्वरुणखगगा अणियद्विसगगा जादा ।
अंतरिदमपुव्वखगगुणद्व्याणं उक्कस्सेण जाय छम्मामा त्ति । तदो सत्तद्व जणा अट्टुत्तरसद
वा अप्पमत्ता अपुव्वरुणगा जादा । लद्ध छम्मासुक्कस्मंतर । एय मेसगुणद्व्याणाण पि
छम्मासुक्कस्मंतर वत्तव्व ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १८ ॥

कुदो ? खगगाण पदणाभागा ।

सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालदो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १९ ॥

कुदो ? सजोगिकेनिलिनिरिदकालाभागा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २० ॥

अन्तरकाल एक समय प्रमाण कहना चाहिए ।

चारों क्षपक आर अयोगिकेनिलीका नाना जीमोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तरकाल
छह मास है ॥ १७ ॥

जैसे— सात आठ जन, अथवा एक सो आठ अपूर्वकरणक्षपक जीव अनिवृत्ति-
करण क्षपक हुए । अत अपूर्वकरणक्षपक गुणस्थान उत्कर्षसे छह मासके लिए अन्तरको
प्राप्त होगया । तत्पश्चात् सात आठ जन, अथवा एक सो आठ अप्रमत्तसयत जीव अपूर्व-
करणक्षपक हुए । इस प्रकारसे छह मास उत्कृष्ट अन्तरकाल उपलब्ध होगया । इसी
प्रकारसे शेष गुणस्थानोंका भी छह मासका उत्कृष्ट अन्तरकाल कहना चाहिए ।

एक जीमकी अपेक्षा उक्त चारों क्षपकोंका आर अयोगिकेनिलीका अन्तर नहीं
होता है, निरन्तर है ॥ १८ ॥

क्योंकि, क्षपक श्रेणीवाले जीवोंके पतनका अभाव है ।

सजोगिकेनिलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीमोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं होता है, निरन्तर है ॥ १९ ॥

क्योंकि, सजोगिकेनिली जिनसे विरहित कालका अभाव है ।

उक्त जीमोंका एक जीमकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २० ॥

१ प्रतिपु ' हि ' इति पाठ ।

२ उत्कर्षेण पण्मासा । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

४ सजोगिकेनिलीना नानाजीमापेक्षया एगजीवापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स सि २, ८

हुदो ? सजोगीणमजोगीमारेण परिणदाण पुणो सजोगीमारेण परिणमणाभावा ।

एग्गोपाणुगमो समत्तो ।

आदेसेण गदियाणुवादेण गिरयगदीए णेरइएसु मिच्छादिद्वि
असंजदसम्मादिद्वीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुव
णत्थि अतर, गिरंतरं ॥ २१ ॥

हुदो ? मिच्छादिद्वि अमजदसम्मादिद्वीहि परिहिदपुठरीण सव्वदमणुवलाभा ।

एगजीवं पडुव्व जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २२ ॥

मिच्छादिद्विस्म उचदे- एको मिच्छादिद्वी दिट्ठमग्गो परिणामपच्चएण सम्मा
मिच्छत्त वा मम्मत्त वा पडिवाजिय मव्वजहण्णमतोमुहुत्तमच्छिय पुणो मिच्छादिद्वी
जादो । लद्धमतोमुहुत्तमत्तर । मम्मादिद्वि पि मिच्छत्त णेद्दण सव्वजहण्णेणतोमुहुत्तेण
मम्मत्त पडिवाजिय अमजदसम्मादिद्विस्म जहण्णतर वत्तव्व ।

पर्याप्त, अयोगिकवलीरूपसे परिणत हुए सयोगिकवलीरूपोंका पुन सयोगी
केवलीरूपसे परिणमन नहीं होता है ।

इस प्रकारसे जोधानुगम समाप्त हुआ ।

आदेशरी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादमे नरकगतिमें, नारकियोंमें मिथ्यावादी
और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २१ ॥

पर्याप्त, मिथ्यादृष्टि और असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंसे रहित रत्नप्रभादि पृथिविया
किसी भी कालमें नहीं पायी जाती है ।

एक जीवरी अपेक्षा उक्त दोनों गुणस्थानोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २२ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि का जघन्य अन्तर कहते हैं- देखा है मागको निलसे
देखा एक मिथ्यादृष्टि जीव परिणामोंसे निमित्तसे सम्यग्मिथ्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको
प्राप्त होकर, अन्तर्मुहूर्तकाल रहकर, पुन मिथ्यादृष्टि होगया । इस
प्रकारसे अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तरकाल लब्ध हुआ । इसी प्रकार किसी एक
असयतसम्यग्दृष्टि नारकीको मिथ्यात्व गुणस्थानमें ले जाकर सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्तकाल
द्वारा पुन सम्यक्त्वका प्राप्त करार असयतसम्यग्दृष्टि जीवका जघन्य अन्तर
फहना चाहिए ।

१ विद्वान् कश्चुत्तरे जलमयी नारमणां कृपल पृथिवीसु मिथ्यादृष्टवसयतसम्यग्दृष्टयोर्नानाजीवितरूप
नास्त्यन्तरं । मि १, ६

२ पञ्चीर प्रति अथ कर्त्तव्यम् । ॥ १ ॥

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि' ॥ २३ ॥

त जहा—मिच्छादिद्विस्म उक्कस्मंतरं वुचंते। एक्को तिरिक्खो मणुसो वा अट्ठासीम-
सतरुम्मिओ अघो सत्तमीए पुट्ठीए गेरइएसु उअण्णो उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१)
विस्सतो (२) निसुद्धो (३) वेदगमम्मत्त पडिअज्जिय अंतरिदो थोअममेमे आउए
मिच्छत्त गदो (४)। लद्धमंतरं। तिरिक्खाउअ वधिय (५) विस्समिय (६) उअट्ठिदो।
एअ छहि अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि मिच्छत्तुअस्मत्तर होदि।

असंजदमम्मादिद्विस्म उक्कस्मत्तर वुचंते—एक्को तिरिक्खो मणुस्सो वा अट्ठासीम-
सतरुम्मिओ मिच्छादिद्वि अघो सत्तमीए पुट्ठीए गेरइएसु उअण्णो। छहि पज्जत्तीहि
पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) निसुद्धो (३) वेदगमम्मत्त पडिअण्णो (४) सकिलिद्धो
मिच्छत्त गंतूणतरिदो। अअमाणे तिरिक्खाउअ वधिय अतोमुहुत्त विस्समिय निसुद्धो
होदूण उअमममम्मत्त पडिअण्णो (५)। लद्धमंतरं। भूओ मिच्छत्त गतूणव्वट्ठिदो (६)।
एअ छहि अंतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तीसं सागरोवमाणि असंजदमम्मादिद्वि-उक्कस्मत्तर होदि।

मिथ्यादृष्टि और असंयतमम्यग्दृष्टि नारकियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस
सागरोपम है ॥ २३ ॥

जैसे, पहले मिथ्यादृष्टि नारकीका उत्कृष्ट अन्तर रहते हैं— मोह कर्मकी अट्ठाईस
प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक तिर्यंच अथवा मनुष्य, नीचे सातवीं पृथिवीके नार-
कियोंमें उत्पन्न हुआ, और छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१), विश्राम ले (२), विशुद्ध
हो (३), वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर आयुके थोड़े अवशेष रहने पर अन्तरको प्राप्त हो
मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४)। इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ। पुन तिर्यंच आयुको
बाधकर (५), विश्राम लेकर (६) निकला। इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस
सागरोपम काल मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर है।

अब असंयतसम्यग्दृष्टि नारकीका उत्कृष्ट अन्तर रहते हैं— मोह कर्मकी अट्ठाईस
कर्मप्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक तिर्यंच, अथवा मनुष्य मिथ्यादृष्टि जीव नीचे सातवीं
पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ, और छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१) विश्राम
लेकर (२) विशुद्ध होकर (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४)। पुन साहिष्ट हो
मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ। आयुके अन्तमें तिर्यंचायु बाधकर पुन
अन्तर्मुहूर्त विश्राम करके विशुद्ध होकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५)। इस
प्रकार इस गुणस्थानका अन्तर लब्ध हुआ। पुन मिथ्यात्वको जानकर नरकसे निकला।
इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम काल असंयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट
अन्तर होता है।

सासणसम्मादिद्वि-सम्मामिच्छादिद्विणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४ ॥

त जहा— जित्यगदीए द्विदसासणसम्मामिच्छादिद्विणो सम्मामिच्छादिद्विणो च मन्वे
गुणतरं गदा । दो वि गुणद्वाराणि एगसमयमतरिदाणि । पुणो निदियमए के वि
उपसमसम्मामिच्छादिद्विणो आसाण गदा, मिच्छादिद्विणो असंजटमम्मामिच्छादिद्विणो च सम्मा
मिच्छत्त पडिउणा । लद्धमतर दोण्ह गुणद्वाराणमेगसमओ ।

उक्कस्सेण पलिदोमस्स असस्सेज्जदिभागो ॥ २५ ॥

त जहा— जित्यगदीए द्विदसासणसम्मामिच्छादिद्विणो सम्मामिच्छादिद्विणो च सन्वे
अण्णगुण गदा । दोण्ह वि गुणद्वाराणि अतरिदाणि । उक्कस्सेण पलिदोमस्स असस्सेज्जदि
भागमेत्तो दोण्ह गुणद्वाराणमतगन्तो होदि । पुणो तेत्थियमेत्तकाले उद्विक्ते अप्पण्णो
करणीभूदगुणद्वारेहिंत्तो दोण्ह गुणद्वाराण मभवे जादे लद्धमुक्कस्मतर पलिदोमस्स
असस्सेज्जदिभागो ।

सामादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि नारकियोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीनोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर होता है ॥ २४ ॥

जैसे— नरकगतिमें स्थित सामादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि सभी
जाय अन्य गुणस्थानको प्राप्त हुए, और दोनों ही गुणस्थान एक समयके लिए
अंतरको प्राप्त होगये । पुन द्वितीय समयमें कितने ही उपशमसम्यग्दष्टि नारकी जाय
सामादन गुणस्थानको प्राप्त हुए और मिध्यादष्टि तथा असत्यतसम्यग्दष्टि नारकी जीव
सम्यग्मिध्यात्त्व गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार दोनों ही गुणस्थानोंका अन्तर एक
समय प्रमाण लब्ध होगया ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमके असंख्यातनें भाग है ॥ २५ ॥

जैसे— नरकगतिमें स्थित सामादनसम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि, सभी जीव
अन्य गुणस्थानको प्राप्त हुए और दोनों ही गुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगये
इन दोनों गुणस्थानोंका अंतरकाल उत्पन्नसे पल्लोपमके असंख्यातनें भागमात्र होता है
पुन उतना पाठ्यनीत होनेपर अपने अपने कारणभूत गुणस्थानोंसे उक्त दोनों
गुणस्थानोंके समय होजानेपर पल्लोपमका असंख्यातवा भागप्रमाण उत्कृष्ट अन्त
लब्ध होगया ।

१ सामादनसम्यग्दष्टिसम्यग्मिध्यादष्टिदोनानाजीवोंकेअपेक्षा जघन्यतः समय । स ति १, ८

२ उत्कृष्टेण पल्लोपमापस्थयमाणा । स ति १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ २६ ॥

त जहा— 'जहा उद्देशो तथा णिद्देशो' चि णायादो सासणस्स पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, मम्मामिच्छाद्विस्स अतोमुहुत्त जहण्णतर होदि । दोण्ह णिदरिसण— एक्को णेरइओ अणादियमिच्छादिद्वी उपसमसम्मत्तप्पाओग्गसादियमिच्छादिद्वी वा तिणिण करणाणि कादूण उपसमसम्मत्त पडिउण्णो । उपसमसम्मत्तेण केत्तिर्यं हि कालमच्छिय आसाणं गतूण मिच्छत्त गदो अतरिदो । पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालेण उव्वेलणसडएहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तद्विदीओ सागरोपमपुधत्तादो हेट्ठा करिय पुणो तिणिण करणाणि कादूण उपसमसम्मत्त पडिउज्जिय उपसमसम्मत्तद्वाए छावलियाउसेसाए आसाण गदो । लद्धमत्तरं पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । एक्को सम्मामिच्छादिद्वी मिच्छत्त सम्मत्त ना गतूणंतोमुहुत्तमतरीय पुणो सम्मामिच्छत्त पडिउण्णो । लद्धमंतोमुहुत्त-मत्तरं सम्मामिच्छादिद्विस्स ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका जघन्य अन्तर एक जीवकी अपेक्षा पल्योपमका अमर्यातवा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६ ॥

जैसे— जैसा उद्देश होता है, उसी प्रकारका निर्देश होता है, इस न्यायके अनुसार सासादनसम्यग्दृष्टिका जघन्य अन्तर पल्योपमका असप्यातवा भाग, और सम्यग्मिथ्यादृष्टिका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

अब क्रमशः सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि, इन दोनों गुणस्थानोंके अन्तरका उद्घाटन करते हैं— एक अनादि मिथ्यादृष्टि नारकी जीव अथवा उपशमसम्यक्त्वके प्रायोग्य सादि मिथ्यादृष्टि जीव, तीनों करणोंको करके उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और उपशमसम्यक्त्वके साथ मिलने ही काल रहकर पुनः सासादन गुणस्थानको जाकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तरको प्राप्त होकर पल्योपमके असप्यातव्य भागमान कालसे उठेलना-काढनासे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंकी स्थितियोंको सागरोपमपृथक्त्वेसे नीचे अर्थात् कम करके पुनः तीनों करण करके और उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त करके उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आयली काल अवशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पल्योपमके असप्यातव्य भाग प्रमाण अन्तरकाल उपलब्ध होगया । एक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त होकर और वहा पर अन्तर्मुहूर्तका अन्तर देकर पुनः सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर लब्ध होगया ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि देसूसाणि ॥ २७ ॥

त जघा- एको सादिओ अणादिओ वा मिच्छादिद्वी सत्तमपुढणीणरइएसु उ वण्णो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) उवसमसम्मत्त पडिवण्णो (४) आमाण गत्तूण मिच्छत्त गदो अतरिदो । अणमाणे तिरिकखाउअ रांता विसुद्धो होदण उवसमसम्मत्त पडिवण्णो । उवसमसम्मत्तद्वाए एगममयारगेमाए आण गदो । लद्धमतर । तदो मिच्छत्त गत्तूण अतोमुहुत्तमच्छिय (५) उरुद्धिदो । एव एव अतोमुहुत्तेहि समयहिहहि उणाणि तेनीम सागरोवमाणि मासणुवस्मंतर होदि ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स उचदे- एक्को तिरिकखो मणुसो या अट्ठावीससन्नमिद सत्तमपुढणीणरइएसु उवण्णो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) सम्मामिच्छत्त पडिवण्णो (४) । पुणो सम्मत्त मिच्छत्त वा देसूणतेत्तीसाउट्ठिदिमतरिय मिच्छत्तेणाउअ अधिय विस्समिय सम्मामिच्छत्त गग (५) तदो मिच्छत्त गत्तूण अतोमुहुत्तमच्छिय (६) उरुद्धिदो । छहि अतोमुहुत्तेहि तेत्तीस सागरोवमाणि सम्मामिच्छत्तुक्कस्मतर होदि ।

मम्यग्निध्यादृष्टिका उक्त अन्तर हुउ कम तेतीस सागरोपम काल है ।

जैसे- एक सादि अथवा अनादि मिध्यादृष्टि जीव सातवीं पृथिवी में उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) । पुन सासादन गुणस्थानमें जाकर मिध्यात्वको अन्तरको प्राप्त हुआ । आयुके अन्तमें तिर्यक् आयुको बाधकर विशुद्ध हो कत्वको प्राप्त हुआ । पुन उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रहने वन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ । पुन अन्तर्मुहूर्त रह (५) निकला । इस प्रकार समवाधिक पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे सागरोपमकाल सासादन गुणस्थानका उत्पद्य अन्तर है ।

अथ मम्यग्निध्यादृष्टिका उत्पद्य अन्तर कहने ह- मोहकमयी सत्ता रखनेवाला एक तिर्यक् अथवा मनुष्य सातवीं पृथिवी में नास्तिकियोंमें छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) हुआ (४) । पुन सम्यक्त्वको अथवा मिध्यात्वको जाकर देशोन तेनीम आयुस्थितिको अन्तररूपसे प्रताक मिध्यात्वके द्वारा आयुको बाधकर सम्यग्निध्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । पश्चात् मिध्यात्वका प्राप्त होकर अन्तर्मुहूर्त निकला । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपमकाल उत्पद्य अन्तर होता है ।

पढमादि जाव सत्तमीए पुढवीए गेरइएसु मिच्छादिट्ठि-असंजद-
सम्मादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि
अंतरं, णिरंतरं ॥ २८ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठिणिरिहिदसत्तमपुढवीणेरइयाणं सब्बकाल-
मणुरलंभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठि असंजदसम्मादिट्ठि अण्णगुण णेदूण सब्बजहण्णेण अतो-
मुहुत्तकालेण पुणो त चेव गुणं पडिबज्जानिदे अतोमुहुत्तमेत्तंतरुलंभा ।

उक्कस्सेण सागरोवमं तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेत्तीसं
सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३० ॥

एत्थ तिण्णि-आदीसु सागरोवमसहो पादंक्क संनघणिज्जो । 'जहा उद्देशो तहा
णिद्देशो' ति णायादो पढमीए पुढवीए देसूणमेग सागरोवम, निदियाए देसूणतिण्णि
सागरोवमाणि, तदियाए देसूणसत्तसागरोवमाणि, चउत्थीए देसूणदससागरोवमाणि,

प्रथम पृथिवीमे लेकर मातरी पृथिवी तरुके नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि और अस-
यतमम्यगृष्टि जीनोंका अन्तर कितने काल है ? नाना जीनोंकी अपेक्षा कोई अन्तर नहीं
है, निरन्तर है ॥ २८ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि ओर असयतसम्यगृष्टियोंसे रहित, सातों पृथिवियोंमें नार-
कियोंका सर्वकाल अभाव है ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीनकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि ओर असयतसम्यगृष्टि, इन दोनोंको ही अन्य गुणस्थानमें
ले जाकर सर्वजघन्य अन्तर्मुहूर्त कालसे पुन उसी गुणस्थानमें पहुचाने पर अन्तर्मुहूर्त
मान कालका अन्तर पाया जाता है ।

उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीनकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर देशोन एक, तीन,
सात, दश, सत्तरह, गार्हस और तेत्तीस सागरोपम काल है ॥ ३० ॥

यहा पर तीन आदि सख्याओंमें सागरोपम शब्द प्रत्येक पर सम्बन्धित करना
चाहिए । जैसा उद्देश होता है, वैसा निर्देश होता है, इस न्यायसे प्रथम पृथिवीमें देशोन
एक सागरोपम, द्वितीय पृथिवीमें देशोन तीन सागरोपम, तीसरी पृथिवीमें देशोन सात
सागरोपम, चौथीमें देशोन दश सागरोपम, पाचवींमें देशोन सत्तरह सागरोपम, छठीमें

सासणसग्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३१ ॥

एदस्स अत्थो सुगमो ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ३२ ॥

जधा णिरओघम्हि पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागपरूणा कदा, तहा एत्थ
पि कादव्वा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ३३ ॥

एदं पि सुत्त सुगम चेय, णिरओघम्हि परूभिदत्तादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमं तिण्णि सत्त दस सत्तारस वावीस तेत्तीसं
सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३४ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे- सत्तमपुट्ठीसासणसग्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा-

उक्त सातों ही पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि नारकि-
योंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय
है ॥ ३१ ॥

इस सूत्रका अर्थ सुगम है ।

उक्त पृथिवियोंमें ही उक्त गुणस्थानोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातवें
भाग है ॥ ३२ ॥

जिस प्रकार नारकियोंके ओघ अन्तरवर्णनमें पल्योपमके असंख्यातवें भागकी
प्ररूपणा की है, उसी प्रकार यहा पर भी करना चाहिए ।

उक्त गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमका
जसरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३ ॥

यह सूत्र भी सरल ही है, क्योंकि, नारकियोंके ओघ अन्तरवर्णनमें प्ररूपित
किया जा चुका है ।

सातों ही पृथिवियोंमें उक्त दोनों गुणस्थानोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अंतर
क्रमशः देशोंन एक, तीन, सात, दश, सत्तरह, बाईस और तेत्तीस सागरोपम है ॥ ३४ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहने पर- सातवीं पृथिवीके सासादन सम्यग्दृष्टि ओर सम्य

दिद्वीण गिरओपुक्कस्मभगो, सत्तमपुटमिं चेउमस्सिदूण तत्थेदेसिमुक्कस्मपक्खणादे।
 पदमादिउपुदरीमानणाणुप्फुस्मे मण्णमाणे- एक्को तिरिक्खो मणुस्सो वा पदमादिउपु
 पुदरीसु उवण्णो। छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) तस्मिन्तो (२) तिसुद्वो (३)
 उरसममम्मत्त पडिउज्जिऊण आसाण गदो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो। सग-त्तगुक्कस्म
 द्विदीओ अण्डिय अण्माणे उरसमसम्मत्त पडिउण्णो उरसममम्मत्तद्वाए एगसमया
 सेमाए सासण गतूण्णवद्विदो। एउ समयाहियच्चदुहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाओ सग
 सगुक्कस्मद्विदीओ सासणाणुप्फुस्सत्त होदि।

एदेमिं सम्मामिच्छादिद्वीण उच्चदे- एक्को अट्टाणीसत्तकम्मिओ अप्पिदणेर
 इएसु उरउण्णो छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) तस्मिन्तो (२) तिसुद्वो (३) सम्मा
 मिच्छत्त पडिउण्णो (४) मिच्छत्त सम्मत्त वा गतूणतरिदो। सगद्विदिमच्छिय सम्मा
 मिच्छत्त पडिउण्णो (५)। लद्धमत्त। मिच्छत्त सम्मत्त वा गतूण उव्वद्विदो (६)। छहि

मिध्याहृष्टि नारकियोंका उत्पन्न अन्तर नारकसामान्यके उत्पन्न अन्तरके समान है, क्योंकि,
 धोषवर्णनमें सातवीं पृथिवीका जाग्रत लेकर ही इन दोनों गुणस्थानोंकी उत्पन्न अन्तर
 प्ररूपणा का गर है। प्रथमादि छह पृथिवियोंके सामादन सम्यग्दृष्टि जीयाना उत्पन्न अन्तर
 कहने पर-एक तिर्यच अथवा मनुष्य प्रथमादि छह पृथिवियोंमें उत्पन्न हुआ। छहों पर्याप्ति
 योंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विगुद हो (३) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर
 सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ (४)। फिर मिध्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त होगया।
 पुन अपनी अपनी पृथिवियोंकी उत्पन्न स्थिति प्रमाण रहकर आयुके अन्तमें उपशमसम्य
 क्त्वको प्राप्त हुआ। उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रह जाने पर सासादन
 गुणस्थानको प्राप्त होकर निकला। इस प्रकार एक समयमें अधिग चार अन्तमुहूर्तोंसे
 कम अपनी अपनी पृथिवीकी उत्पन्न स्थिति उस उस पृथिवीके सासादनसम्यग्दृष्टियोंका
 उत्पन्न अन्तर होता है।

अथ इहा पृथिवियोंके सम्यग्मिध्याहृष्टि नारकियोंका उत्पन्न अन्तर कहते हैं-
 मोहकर्मकी बद्धाहस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक तिर्यच अथवा मनुष्य विच
 क्षित पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ। छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम
 ले (२) विगुद हो (३) सम्यग्मिध्यान्त्रको प्राप्त हुआ (४)। पुन मिध्यात्वको अथवा
 सम्यक्त्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ, और जिस गुणस्थानको गया उसमें अपनी
 आयुस्थितिप्रमाण रहकर सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त हुआ (५)। इस प्रकार अन्तरकाल प्राप्त
 होगया। पुन मिध्यात्वको अथवा सम्यक्त्वको प्राप्त होकर निकला (६)। इन छहों

अंतोमुहुत्तेहि ऊणाओ मग-सगुम्कस्सट्ठिदीओ सम्मामिच्छत्तुम्कस्मंतर होदि । सव्व-
गदीहितो सम्मामिच्छादिट्ठिणिस्मरणम्भो वुच्चदे । त जहा— जो जीओ सम्मादिट्ठी होदूण
आउअ वंधिय मम्मामिच्छत्त पट्ठिज्जदि, मो सम्मत्तेणेण णिप्पिददि । अह मिच्छादिट्ठी
होदूण आउअ वंधिय जो सम्मामिच्छत्तं पट्ठिज्जदि, सो मिच्छत्तेणेण णिप्पिददि ।
कधमेदं णव्वदे ? आइरियण्णरागदुग्गदेसादो ।

तिरिखगदीए तिरिखेसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ३५ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६ ॥

कुदो ? तिरिखमिच्छादिट्ठिमण्णगुण णेदूण सव्वजहण्णेण कालेण पुणो तस्सेण
गुणस्स तस्मि ढोइदे अंतोमुहुत्ततरुलभा ।

अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी पृथिवीकी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण नारकी सम्यग्मिथ्या
दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

अब सर्व गतियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके निरुलनेका श्रम कहते हैं । यह इस
प्रकार है— जो जीव सम्यग्दृष्टि होकर और आयुको बाधकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होता
है, यह सम्यक्स्थके साथ ही उस गतिसे निरुलता है । अथवा, जो मिथ्यादृष्टि होकर
और आयुको बाधकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होता है, वह मिथ्यात्वके साथ ही
निरुलता है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्यपरम्परागत उपदेशसे जाना जाता है ।

तिर्येच गतिमें, तिर्येचोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ ३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

तिर्येच मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ ३६ ॥

फ्योंकि, तिर्येच मिथ्यादृष्टि जीवको अन्य गुणस्थानमें ले जाकर सर्वजघन्य कालसे
पुन उसी गुणस्थानमें लौटा ले जानेपर अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर प्राप्त होता है ।

१ सम्म वा मिच्छ वा पट्ठिवज्जिय मरुदे भियमण ॥ सम्मत्तमिच्छयणिणमेत्त जहि आउग पुरा वद ।
तहि मरण मरणतसमुत्थादो वि य ण मित्तस्मि ॥ गो जा २३, २४

२ निर्यगतो निर्या मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । ॥ ति १, ८

३ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

उक्कस्सेण तिण्णि पल्लिदोवमाणि देसूणाणि ॥ ३७ ॥

णिदरिण- एको तिरिक्खो मणुस्सो वा अट्ठाणीससत्तकम्मिओ तिपल्लिदोवमाउ
द्विदिण्णु कुक्कुड-मस्सकटादिण्णु उररण्णो, वे मासे गम्मे अट्ठिण्णु णिस्सतो ।

एत्थ वे उवदेसा । त जहा- तिरिक्खेसु वेमास-मुहुत्तपुधत्तस्सुअरि सम्मत्त
सजमामजम च जीरो पडिज्जदि । मणुमेसु गम्मादिअट्ठस्सेसु अंतोमुहुत्तन्महिण्णु
सम्मत्त सजम सजमामजम च पडिज्जदि चि । एमा दक्खिणपडिअत्ती । दमिण्ण
उज्जुअ आइरिपरंपरागदमिदि एयद्धो । तिरिक्खेसु तिण्णिपक्ख-तिण्णिदिवस-अतामुहुत्त-
स्सुअरि सम्मत्त सजमासजम च पडिज्जदि । मणुमेसु अट्ठस्साणमुअरि सम्मत्त संजम
सजमासजम च पडिज्जदि ति । एसा उत्तरपडिअत्ती । उत्तरमणुज्जुअ आइरिपरंपराए
णागदमिदि एयद्धो ।

पुणो मुहुत्तपुधत्तेण विसुद्धो वेदगसम्मत्त पडिअण्णो । अरसाणे आउअ रंधिय
मिच्छत्त गदो । पुणो सम्मत्त पडिअज्जिय काल काट्ठण सोहम्मीसाणदेसेसु उररण्णो ।
आदिछेहि मुहुत्तपुधत्तन्महिण्णु वेमासेहि अरसाणे उरलद्ध-वेजतोमुहुत्तेहि य ऊणाणि तिण्णि

तियंच मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन
पल्लोपम है ॥ ३७ ॥

इसका उदाहरण- मोहरमकी अट्ठाइन प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक तियंच
अथवा मनुष्य तीन पल्लोपमकी आयुस्थितिवाले कुम्हट मकैट आदिमें उत्पन्न हुआ और
दो मास गर्भमें रहकर निम्नला ।

इस विषयमें वे उपदेश हैं । वे इस प्रकार हैं- तियचोंमें उत्पन्न हुआ जीव,
दो मास और मुहुत्त-पुधत्तसे ऊपर सम्यक्त्व और सयमासयमको प्राप्त करता है ।
मनुष्योंमें गर्भकालसे प्रारम्भकर, अन्तमुहुत्तसे अधिक आठ वर्षोंके ध्येतांत हो जाने
पर सम्यक्त्व, सयम और सयमामयमको प्राप्त होता है । यह रंधिय प्रतिपत्ति है ।
दक्षिण, अजु और आचार्यपरम्परागत, ये तीनों शब्द एकाग्र ह । तियचोंमें उत्पन्न हुआ
जीव तीन पक्ष, तीन दिवस और अन्तमुहुत्तसे ऊपर सम्यक्त्व और सयमासयमको प्राप्त
होता है । मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ जीव आठ वर्षोंके ऊपर सम्यक्त्व, सयम और सयमा
सयमको प्राप्त होता है । यह उत्तर प्रतिपत्ति है । उत्तर, अजु और आचार्यपरम्परासे
अनागत, ये तीनों एकार्यवाची हैं ।

पुन मुहूर्तपुधत्तसे विशुद्ध होकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पश्चात् अपर
आयुके अन्तमें आयुको वाधकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । पुन सम्यक्त्वको प्राप्त हो
काल करके सौधमवेदान देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आदिके मुहुत्तपुधत्तसे
अधिक दो मासोंमें और आयुके अवसानमें उपलब्ध दो अन्तमुहुत्तोंसे कम तीन

पलिदोममाणि मिच्छत्तुकस्मतरं होदि ।

सासणसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव सजदासंजदा ति ओघं ॥ ३८ ॥

कुदो ? ओघचदुगुणट्ठाणणाणेगजीय-जहण्णुकस्मंतरकालेहिंतो तिरिक्खगादिचदु-
गुणट्ठाणणाणेगजीय-जहण्णुकस्मंतरकालाण भेदाभावा । त जहा- सासणसम्मादिट्ठीण
णाणाजीय पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्मेण पलिदोमस्म असखेज्जदिभागो ।

एव अतरमाहप्पजाणानणद्धमप्पावहुग उच्चदे- सवत्थोना सामणमम्मादिट्ठि-
रासी । तस्सेन कालो णाणाजीयगदो अमखेज्जगुणो । तस्सेन अतरममखेज्जगुणं । एदमप्पा-
वहुग ओघादिमच्चमग्गणासु सासणाणं पउजिदव्वं ।

एगजीय पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्म असखेज्जदिभागो । एदस्स
कालस्स साहणउअमो उच्चदे । त जहा- तसेसु अच्छिदूण जेण सम्मत्त-सम्मा-
मिच्छत्ताणि उव्वेल्लिदाणि मो सागरोअमपुवत्तेण सम्मत्त-मम्माभिच्छत्तट्ठिदिसत्त-
कस्मेण उअसममम्मत्त पडिउज्जदि । एदम्हादो उअरिमासु ट्ठिठासु जदि सम्मत्त
गेण्हदि, तो णिच्छएण वेदगमम्मत्तमेअ गेण्हदि । अघ एअंदिएसु जेण सम्मत्त-
पत्थोअमकाल मिअ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर होता हे ।

तिर्यचोमं सासादनमम्यग्दष्टिसे लेकर सयतासंयत गुणस्थान तरुका अन्तर ओघने
समान है ॥ ३८ ॥

फ्योंकि, जोघने इन चार गुणस्थानोंसम्बन्धी नाना ओर एक जीवके जघन्य ओर
उत्कृष्ट अन्तरकालोंसे तिर्यचगतिसम्बन्धी इन्हीं चार गुणस्थानोंसम्बन्धी नाना ओर एक
जीवके जघन्य ओर उत्कृष्ट अन्तरकालोंका कोई भेद नहीं हे । वह इस प्रकार हे- सासा-
दनमम्यग्दष्टि जीवोंका अन्तर नाना जीवोंकी ओपक्षा जघन्यसे एक समय ओर उत्कर्षसे
पत्थोअमका असव्यातया भाग हे ।

यहापर अन्तरके माहात्म्यको बतलानेके लिए अल्पग्रहुत्व कहते हैं- सासादन-
सम्यग्दष्टिराशि सअने कम है । नानाजीवगत उसीका काल असव्यातगुणा है । ओर
उसीका अन्तर, कालसे असव्यातगुणा हे । यह अल्पग्रहुत्व ओघादि सभी मार्गणाओंमें
सासादनमम्यग्दष्टियोंका कहना चाहिए ।

सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंका अन्तर एक जीवकी ओपक्षा जघन्यसे पत्थोअमका
असव्यातया भाग है । इस कालके साधक उपदेशको कहते ह । वह इस प्रकार
है- अस जीवोंमें रहकर जिसने सम्यक्त्त ओर सम्यग्मिथ्यात्व, इन दो प्रकृ-
तियोंका उद्वेलन किया हे, वह जीव सम्यक्त्त ओर सम्यग्मिथ्यात्वकी स्थितिके सत्त्वरूप
सागरोअमपृथक्त्वके पश्चात् उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होता हे । यदि इससे ऊपरकी
स्थिति रहनेपर सम्यक्त्वको ग्रहण करता है, तो निश्चयसे वेदकसम्यक्त्वको ही प्राप्त
होता है । ओर पथेन्द्रियोंमें जा करके जिसने सम्यक्त्त ओर सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना

सम्मामिच्छताणि उन्वेल्लिदाणि, सो पलिदोमम्म अमरेज्जदिभागोणूणमागो वममेत्ते सम्मत्त-सम्मामिच्छताण हिंसितकम्मं सेसे तसेसुअज्जिय उमममम्मत्त पडिबज्जदि । एदाहि हिदीहि ऊणसेसकम्महिदिउन्वेल्लणकालो जेण पलिदोमम्म असखेज्जदिभागो तेण सासणेगजीरजहणत्तर पि पलिदोमम्मत्त असखेज्जदिभागमेत्त होदि ।

उक्त्सेण अद्दपोगलपरियड्ड देवण । णरि रिमेमो एत्थ अत्थि तं भणिस्सामो- एको तिरिक्खो अणादियमिच्छादिद्वी तिण्णि करणाणि करिय सम्मत्तं पडिण्णपडममप एसाण गदा संसारमणत्त छिंदिय पोगलपरियड्ड कालेण उमममम्मत्त पडिण्णो आसाण गदा मिच्छत्त गतूणत्तरिय (१) अद्दपोगलपरियड्ड परिममिय दुच्चरिमे मये पंचिदियतिरिक्खेसु उवराज्जिय मणुसेसु आउअ वधिय तिण्णि करणाणि करिय उमममम्मत्त पडिण्णो । उवसमसम्मत्तद्वाए मणुमगदिपाओमाआरलियासखेज्जदिभागान्सेसाए आसाण गदा । लद्धमत । आरलियाए अमरेज्जदिभागमेत्तसामणद्धमच्छिय मदो मणुसो जादो सत्त मासे गग्गे अन्धिदण्ण णिक्खत्तो सत्त वस्साणि अंतोमुहुत्तमभियपचमामे च गमेदण (२) वेदगसम्मत्त पडिण्णो (३) अणत्ताणुवधी रिसजोडिय (४) दसणमोहणीय रानिय (५) अपमत्तो (६) पमत्तो (७) पुणो अपमत्तो (८) पुणो अपुवरादिछहि अंतोमुहुत्तेहि

की है, यह पत्योपमके असख्यातवें भागसे कम सागरोपमकालमात्र सम्यक्त्य और सम्यग्मिध्यात्वका स्थितिसत्त्व अवशेष रहनेपर इस जीवोंमें उत्पन्न होकर उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त होता है । इन स्थितिओंसे कम शेष फलस्थिति-उद्वेलनकाल चूकि पत्योपमके असख्यातवें भाग है, इसलिए सासादन गुणस्थानका एकजीवसम्यग्धी जघन्य अन्तर भी पत्योपमके असख्यातवें भागमात्र ही होता है ।

सासादन गुणस्थानका एक जीवसम्यग्धी उत्पन्न अन्तर देशोन अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । पर यहां जो विशेष बात है, उसे कहते हैं- अनादि मिध्या इष्टि एक तिर्यंच तीनों करणोंको करके सम्यक्स्वरों प्राप्त होनेके प्रथम समयमें घनमत्त ससारको छेदकर और अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण करके उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त हुआ और सासादन गुणस्थानको गया । पुन मिध्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर (१) अर्धपुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण करके द्विचरम भवमें पंचे द्विप तिर्यचोंमें उत्पन्न होकर और मनुष्योंमें बायुको वाधकर, तीनों करणोंको करके उपशमसम्यक्त्यको प्राप्त हुआ । पुन उपशमसम्यक्त्यके कालमें मनुष्यगतिके योग्य आत्र लोंके असख्यातवें भागमात्र कालके अवशेष रहनेपर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे उक्त अन्तर लघु हो गया । आबलीके असख्यातवें भागमात्र काल सासादन गुणस्थानमें रहकर मर और मनुष्य होगया । यहांपर सात मास गर्भमें रहकर निकला गया सात वष और अन्तर्मुहूर्तसे अधिक पांच मास वितारकर (२) वेदक सम्यक्त्यको प्राप्त हुआ (३) पुन अनन्तानुगन्धीकपायका विम्ययोजन करके (४) दर्शन मोहनीयका क्षयकर (५) अपमत्त (६) प्रमत्त (७) पुन अपमत्त (८) हो, पुन अपूर्व

(१४) णिव्वाणं गदो । एणं चोदसअंतोमुहुत्तेहि आवलियाए असंखेज्जदिभागेण अन्महिण्हि अट्टमस्मेहि य ऊणमद्वपोग्गलपरियट्टमतरं होदि । एत्थुअवज्जतो अत्थो वुच्चदे । तं जधा- सामण पडिउण्णविदियसमए जदि मरदि, तो णियमेण देगदीए उअवज्जदि । एव जाअ आवलियाए अमखेज्जदिभागो देगदिपाओग्गो कालो होदि । तदो उववि मणुमगदिपाओग्गो आमलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तो कालो होदि । एव सण्णिपंचिदिय-तिरिक्ख-असण्णिपंचिदियतिरिक्ख-चउरिंदिय-तेइदिय-चेइदिय-एइदियपाओग्गो होदि । एसो णियमो सवत्थ सामणगुण पडिउज्जमाणाण ।

सम्मामिच्छादिद्विस्स णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्मेण पलि-दोरमस्स अमखेज्जदिभागो । एत्थ दच्च-कालंतरअप्पाअहुगस्स सासणभंगो । एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्त, उक्कस्मेण अद्वपोग्गलपरियट्ट देसण । णवरि एत्थ विसेसो उच्चदे- एकओ तिरिक्खो अणादियमिच्छादिद्वी तिण्णि करणाणि काऊण सम्मत्त पडि-वण्णपढमममए अद्वपोग्गलपरियट्टमेत्त ममारं काऊण पढमसम्मत्तं पडिवण्णो सम्मा-मिच्छत्त गदो (१) मिच्छत्तं गत्तण (२) अद्वपोग्गलपरियट्टं परियट्टिदूण दुचरिमभवे

करणादि छह गुणस्थानोंसम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्तोंसे (१४) निर्वाणको प्राप्त हुआ । इस प्रकार चौदह अन्तर्मुहूर्तोंसे तथा आवलीके असख्यातवें भागसे अधिक आठ वर्षोंसे कम अर्धपुट्टलपरिवर्तन सासादन सम्यग्दृष्टि गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तरकाल होता है ।

अब यहापर उपयुक्त होनेवाला अर्थ कहते हैं । यह इस प्रकार है- सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेके छितीय समयमें यदि वह जीव मरता है तो नियमसे देवगतिमें उत्पन्न होता है । इस प्रकार आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण काल देवगतिमें उत्पन्न होनेके योग्य होता है । उसके ऊपर मनुष्यगतिके योग्य काल आवलीके असख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकारसे आगे आगे सत्री पचेन्द्रिय तिर्यच, असत्री पचेन्द्रिय तिर्यच, चतुरिन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और एकैन्द्रियोंमें उत्पन्न होने योग्य होता है । यह नियम सर्वत्र सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेवालोंका जानना चाहिये ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण अंतर है । यहा पर द्रव्य, काल और अन्तर सम्यग्धी अल्पद्रुत्य सासादनगुणस्थानके समान है । इसी गुणस्थानका अन्तर एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे देशोन अर्धपुट्टलपरिवर्तन काल है । केवल यहा जो विशेषता है उसे कहते हैं- अनादि मिथ्यादृष्टि एक तिर्यच तीनों करणोंको करके सम्यक्त्वके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें अर्धपुट्टलपरिवर्तनमात्र सासारकी स्थितिको करके प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ और सम्यग्मिथ्यात्वको गया (१) फिर मिथ्यात्वको जाकर (२) अर्धपुट्टलपरिवर्तनप्रमाण परिभ्रमण करके द्विचरम भवमें पचेन्द्रिय तिर्यचोंमें

पचिदियतिरिक्तेषु उपपञ्जिय मणुमाउअं पचिय जममाणे उअममममत्त पडियन्निअ
सम्मामिच्छत्त गदो (३) । लद्धमत्तरं । तदो भिन्नुत्त गदो (४) मणुमेसुअण्णो । उअो
सामणभगो । एअ सत्तारमअतोमुहुत्तन्महिअ-जहुअम्मेहि उअमद्वपोग्गलपरियद्व सम्म-
मिच्छत्तुक्कस्मत्तर हेदि ।

अमनदसम्मादिद्विस्म णाणानीअं पडुच्च णत्थि अतर, एअजीअ पडुच्च जहुण्णेअ
अतोमुहुत्तं, उअरुस्सेण अद्वपोग्गलपरियद्व देसूण । णत्थि रिमेमो उअच्चे-एअ
अणादियमिच्छादिद्वो तिण्णि क्कणाणि सउअ पठमममत्त पडियण्णो (१) उअम
सम्मत्तद्वाए आरलियाअमेमाए आसाण गत्तूणत्तरिदो । अद्वपोग्गलपरियद्व पत्रियद्विअ
हुअरिमभे पचिदियतिरिक्तेषु उपपण्णो । मणुमेसु वामपुअत्ताउअ वचिय उअममममत्त
पडियण्णो । तदो आरलियाए अमरेअज्जिभागमेत्ताए वा एअ गत्तूण समउअआरलिय
मेत्ताए वा उअममममत्तद्वाए मेमाए आमाण गत्तूण मणुमगदिपाओममहि मण
मणुसो जाने (२) । उअरि सामणभेमो । एअ पण्णारमेहि अतोमुहुत्तेहि जहुअरिपअ
वस्सेहि उअमद्वपोग्गलपरियद्व सम्मत्तुक्कस्मत्तर हेदि ।

उत्पन्न होकर मनुष्य आयुको राअकर अतमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर समय
मिध्यात्वको गया (३) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ । पुन मिध्यात्वको गया (४) और
मरकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । इससे पथात्का कथन सासादनसम्यग्दृष्टिके समान ही
है । इस प्रकार सत्तरह अन्तमुहूर्तोंसे अधिन आठ वर्षोंमें कम अधपुद्गलपरिवर्तनका
सम्यग्मिध्यात्वका उत्पन्न अन्तर होता है ।

असपत्तसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नही है, एक जीवकी अपेक्षा
अधन्यसे अतमुहूर्त और उत्कर्षसे देशोन अधपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण अन्तरफाल है । केवल
जो विशेषता है वह कही जाती है- एक अनाविमिध्यादृष्टि जीव तीनों ही करणोंको
करने प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) और उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह
आरलिया अवशेष रह जाने पर सासादन गुणस्थानको जाकर अन्तरको प्राप्त होगया ।
पथात् अधपुद्गलपरिवर्तन काल परिवर्तित होकर द्विचरम भवमें पचिद्विय त्रियच्चोमें
उत्पन्न हुआ । पुन मनुष्योंमें वषष्ठ्यस्त्वकी आयुको वाअकर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ । पाछे आरलिया असम्यक्त्वके भागमार कालके, जववा यहासे लगाकर एअ सम
कम छह आरलिया कालप्रमाण तक, उपशमसम्यक्त्वके कालमें अवशेष रह जानेपर सास
दन गुणस्थानको जाकर मनुष्यगतिके योग्य कालमें मरा और मनुष्य हुआ (२) । इस
ऊपर सासादनके समान कथन जानना चाहिए । इस प्रकार पद्वह अतमुहूर्तोंसे अधि
आठ वर्षोंमें कम अधपुद्गलपरिवर्तनफाल समयतसम्यग्दृष्टिना उत्पन्न अन्तर होता है ।

मुगममेद मुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ४० ॥

कुदे ? तिण्ह पच्चिदियतिरिक्खाण तिण्णि मिच्छादिट्ठिजीवे दिट्ठममे सम्मतं
येदूण सच्चजहणकालेण पुणो मिच्छत्ते गण्हादिदे अतोमुहुत्तकालउलभा ।

उक्कस्सेण तिण्णि पल्लिदोवमाणि देमूणाणि ॥ ४१ ॥

त जथा- तिण्णि तिरिक्खा मणुसा या जट्टाणीससत्तकम्मिया तिपल्लिदोवमाड
ट्ठिदिदमु पच्चिदियतिरिक्खातिगह्मकूड मक्कडादिणसु उतरण्णा, ये मासे गम्भं अलिदूण
णिक्खता, मुहुत्तपुवत्तेण त्रिमुद्दा वेदगमम्मत्त पडिण्णा अत्रमाणे आउअ वधिय
मिच्छत्त गत्ता । लद्धमत्तर । भूओ सम्मत पटिरज्जिय कालं कत्तिय मोधम्मसाणदेवेसु
उतरण्णा । एव येअतामुद्दत्तेहि मुहुत्तपुवत्तम्महिय येमावेहि य ऊणाणि तिण्णि पल्लिदोव
माणि तिण्ह मिच्छादिट्ठिणमुक्कस्सत्तर होदि ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मा मिच्छादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ ४२ ॥

यद्द सून सुगम है ।

उक्त जीवोंमें एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ४० ॥

क्योंकि, तीनों ही प्रकारके पंचेन्द्रिय तिर्यचोंके तीन मिथ्यादृष्टि दृष्टमाणी
जीवोंको अनन्ततत्त्वपञ्च गुणरूपानमें ले जाकर सर्वजघन्यकालसे पुन मिथ्यात्वके
ग्रहण करने पर अन्तर्मुहूर्तकालप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तीनों ही प्रकारके मिथ्यादृष्टि तिर्यचोंका अन्तर कुछ कम तीन पक्षोपम
प्रमाण है ॥ ४१ ॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाले तीन तिर्यच अथवा
मनुष्य, तीन पक्षोपमकी आयुर्दिशितियाले पंचेन्द्रिय तिर्यच त्रिक कुम्भक, मर्न्द आदिमें
उत्पन्न हुए वन्ते मास्य गर्भमें रहकर निकट और मुहूर्तपृथक्त्वसे विशुद्ध होकर वेदक
सम्यक्त्वको प्राप्त हुए और आयुके अन्तमें आगामी आयुको बाधकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुए ।
इस प्रकारसे अन्तर प्राप्त हुआ । पुन सम्यक्त्वको प्राप्त कर और धरण करके सोधर्म-ईशान
देवोंमें उत्पन्न हुए । इस प्रकार इन दो अन्तर्मुहूर्तोंसे ओर मुहूर्तपृथक्त्वसे अधिक दो
मासोंसे कम तीन पक्षोपमकाल तीनों जातिवाले तिर्यच मिथ्यादृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर
होता है ।

उक्त तीनों प्रकारके तिर्यच मामात्रसम्यग्दृष्टि और भम्पमिथ्यादृष्टियोंका
अन्तर मिलने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय होता है ॥ ४२ ॥

१ प्रतिगु 'सम्यक्त्व' इति पाठ ।

त जहा— पंचिंदियतिरिखतिगसासणमम्मादिट्ठिपनाहो केत्तिर्यं पि काल णिरंतर-
मागढो । पुणो सचेसु मासणेसु मिच्छत्त पडिउण्णेसु एगममय सासणगुणिरहो होदूण
विदियसमए उउसमसम्मादिट्ठिजीरेसु मामण पडिउण्णेसु लद्धमेगममयमतर । एउ चेउ
तिरिखतिगसम्मामिच्छादिट्ठिण पि वत्तव्वं ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ४३ ॥

तं जहा— पंचिंदियतिरिखतिगसासणमम्मादिट्ठि-मम्मामिच्छादिट्ठिजीरेसु सचेसु
अण्णगुण गदेसु दोण्हं गुणट्ठाणाण पंचिंदियतिरिखतिगएसु उक्कस्सेण पलिदोवमस्स
असंखेज्जदिभागमेत्ततर होदूण पुणो दोण्ह गुणट्ठाणाण सभमे जादे लद्धमतर होदि ।

**एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ४४ ॥**

पंचिंदियतिरिखतिगसासणाण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, सम्मामिच्छा-
दिट्ठिण अतोमुहुत्तमेगजीउजहण्णतर होदि । सेस सुगम ।

“”

जेने— पचेन्द्रिय तिर्यंच त्रिक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवोंका प्रवाह कितने ही काल
तक निरन्तर आया । पुन सभी सासादन जीवोंके मिथ्यात्वको प्राप्त हो जानेपर एक
समयके लिए सासादन गुणस्थानका विरह होकर द्वितीय समयमें उपशमसम्यग्दृष्टि
जीवोंके सासादन गुणस्थानको प्राप्त होनेपर एक समय प्रमाण अन्तरकाल प्राप्त
होगया । इसी प्रकार तीनों ही जातिवाले तिर्यंच सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका भी अन्तर
कहना चाहिये ।

उक्त तीनों प्रकारके तिर्यंच सासादन और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी
अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असंख्यातों भागप्रमाण है ॥ ४३ ॥

जैसे— तीनों ही जातिवाले पचेन्द्रिय तिर्यंच सासादनसम्यग्दृष्टि जोर सम्य
ग्मिथ्यादृष्टि सभी जीवोंके अन्य गुणस्थानको चले जानेपर इन दोनों गुणस्थानोंका
पचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिकमें उत्कर्षसे पल्योपमके असंख्यातों भागमात्र अन्तर होकर पुन
दोनों गुणस्थानोंके समथ हो जानेपर उक्त अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमके अमर्यातों भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ४४ ॥

पचेन्द्रिय तिर्यंचत्रिक सासादनसम्यग्दृष्टियोंका पल्योपमके असंख्यातों भाग
और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर्मुहूर्तप्रमाण एक जीवका जघन्य अन्तर होता है । शेष
सुगम है ।

उक्कस्सेण तिणि पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्भाहि
याणि ॥ ४५ ॥

एत्थ तार पचिदियतिरिस्सुमामणाण उच्चदे । त जहा- एस्सो मणुमो णेरडो
देवो वा एगसमयापसेसाण मामणाद्वाए पचिदियतिरिस्सेमु उग्रणो । तत्थ पचा
णउदिपुव्वकोडिअम्भाहियतिणि पलिदोवमाणि गमिय अग्गमाणे (उग्रसममम्मत्त घेत्तण)
एगसमयापसेमे आउए आमाणा गणे काल करिय देवो जादे । एउ दुममउणमगद्धिदी
सासणुक्कस्मत्तर होदि ।

सम्मामिच्छादिद्वीणमुच्चदे - एक्को मणुमो अट्ठासीमसत्तम्मिजो सण्णिपत्तिं
दियतिरिस्सुसम्भुच्छिम्मपज्जत्तएमु उग्रणो छहि पज्जचीहि पज्जत्तपदो (१) निस्सतो
(२) निमुद्धो (३) मम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (४) अत्तरिय पचाणउदिपुव्वकोडिअं
परिमिय तिपलिदोवमिस्सु उग्रज्जिय अग्गमाणे पढमसम्मत्त घेत्तण सम्मामिच्छत्त
गणे । लद्धमत्तर (५) । सम्मत्त वा मिच्छत्त वा जेण गुणेण आउअ उद्ध त पडिउज्जिय
(६) देवेसु उग्रणो । छहि अतोमुहत्तेहि ऊणा मगद्धिदी उरुस्मत्तर होदि । एउ पचि

उक्त दोनों गुणस्थानगतों तीनों प्रकारके तिर्यचोंका अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे
अधिक तीन पल्योपम है ॥ ४५ ॥

इनमेंसे पहले पचेन्द्रिय तिर्यच सासादनसम्भ्यगृह्यिका अन्तर कहते हैं । जैसे-
कोई एक मनुष्य, नारसी अथवा देव सासादन गुणस्थानसे कालमें एक समय अवशेष
रह जानेपर पचेन्द्रिय तिर्यचोंमें उत्पन्न हुआ । उनमें पचानवे पूर्वकोटिकालसे अधिक तीन
पल्योपम शिताकर अतमें (उपशमसम्भ्यस्त्व ग्रहण करके) आयुके एक समय अवशेष रह
जाने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त हुआ और मरण करके देव उत्पन्न हुआ । इस
प्रकार दो समय कम अपनी स्थिति सासादन गुणस्थानका उत्पष्ट अन्तर होता है ।

अत्र तिर्यचयिज सम्भ्यग्मिथ्यादृष्टिर्वाका अन्तर कहते हैं- मोहकमकी अट्ठाईस प्रवृत्ति
योंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक मनुष्य, सभी पचेन्द्रिय तिर्यच सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकोंमें
उत्पन्न हुआ और छहों पर्याप्तियोंमें पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्भ्य
ग्मिथ्यात्वका प्राप्त हुआ (४) तथा अन्तरसे प्राप्त होकर पचानवे पूर्वकोटि कालप्रमाण
उहाँ तिर्यचोंमें परिश्रमण करने तीन पल्योपमकी आयुवाले तिर्यचोंमें उत्पन्न होकर आर
अतमें प्रथम सम्भ्यस्त्वको ग्रहण करके सम्भ्यग्मिथ्यात्वकी गया । इस प्रकार अन्तर प्राप्त
हुआ (५) । पीछे निम्न गुणस्थानसे आयु बाची थी उसी सम्भ्यस्त्व अथवा मिथ्यात्व
गुणस्थानको प्राप्त होकर (६) दोनोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी
स्थिति ही इस गुणस्थानका उत्पष्ट अन्तर है । इसी प्रकार पचेन्द्रिय तिर्यच पर्याप्तकोंका

दियतिरिक्खपज्जत्ताण । णवरि सत्तेतालीसपुब्बकोडीओ तिणिण पलिदोममाणि च पुब्बुत्त-
दोममयछंअंतोमुहुत्तेहि य ऊणाणि उक्कस्मत्तर होदि । एवं जोणिणीसु मि । णवरि सम्मा-
मिच्छादिद्विउक्कस्समिह अत्थि मिमसो । उच्चदे- एक्को णेरइओ देवो वा मणुसो वा
अट्टाणीससत्तम्मिओ पंचिंदियतिरिक्खजोणिणिकुम्भुड-मक्कडेसु उअण्णो वे मासे गम्भे
अच्छिय णिक्खसतो मुहुत्तपुथत्तेण मिसुद्धो सम्मामिच्छत्त पडिअण्णो । पण्णारस पुक्क-
कोडीओ परिभमिय कुरेसु उअण्णो । सम्मत्तेण वा मिच्छत्तेण वा अच्छिय अअसाणे
सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमंतर । जेण गुणेण आउअ नद्ध, तेणेअ गुणेण मदो देवो
जादो । दोहि अतोमुहुत्तेहि मुहुत्तपुथत्ताहिय-वेमामेहि य ऊणाणि पुब्बकोडिपुथत्तम्महिय-
तिणिण पलिदोममाणि उक्कस्सत्तर होदि । सम्मुच्छिमेषुप्पाडय सम्मामिच्छत्त किण्ण
पडिअज्जाग्गिदो ? ण, तत्थ इत्थिपेदाभावा । सम्मुच्छिमेसु इत्थि-पुरिसपेदा किमट्ठ ण
होति ? सहाअदो चेय ।

असजदसम्मादिट्ठिणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ४६ ॥

उत्कृष्ट अन्तर जानना चाहिए । विशेषता यह है कि सतालीस पूर्वकोटिया और पूर्वोक्त
दो समय और छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पल्योपमकाल इनका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।
इसी प्रकार योनिमतियोंका भी अन्तर जानना चाहिए । केवल उनके सम्यग्मिथ्यादृष्टि-
सम्बन्धी उत्कृष्ट अन्तरमें विशेषता है, उसे कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी
सत्ता रखनेवाला एक नारकी, देव अथवा मनुष्य, पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमती कुक्कुट,
मकट आदिमें उत्पन्न हुआ, दो मास गर्भमें रहकर निकला व मुहूर्तपृथक्त्वसे विशुद्ध
होकर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । (पश्चात् मिथ्यात्वमें जाकर) पन्द्रह पूर्वकोटि-
कालप्रमाण परिभ्रमण करके देवकुट, उत्तरकुट, इन दो भोगभूमियोंमें उत्पन्न हुआ । यहा
सम्यक्त्व अथवा मिथ्यात्वके साथ रहकर आयुके अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ ।
इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया । पश्चात् जिस गुणस्थानसे आयुको थाधा था उसी
गुणस्थानसे मरकर देव हुआ । इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्त और मुहूर्तपृथक्त्वसे अधिक दो
मासोंसे हीन पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक तीन पल्योपमकाल उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

शंका—सम्मुच्छिम तिर्यंचोंमें उत्पन्न करार पुन सम्यग्मिथ्यात्वको क्यों नहीं
प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्मुच्छिम जीवोंमें स्त्रीवेदका अभाव है ।

शंका—सम्मुच्छिम जीवोंमें स्त्रीवेद और पुरुषवेद क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान—स्वभावसे ही नहीं होते हैं ।

उक्त तीनों अगम्यतमम्यगृष्टि तिर्यंचोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ४६ ॥

१ प्रतिशु ' छ ' इति पाठो नास्ति ।

कुदो ? पंचिदियतिरिस्सपतिगसजदासजदस्स दिट्ठमग्गस्स अण्णगुण गतूण अद्द
हरकालेण पुणरागदस्स अतोमुद्दत्ततरुणलभा ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ५१ ॥

तत्थ ताव पंचिदियतिरिस्सपतिगसजदामजदाण उच्चदे । तं जहा- एवो अट्ठारीस
सत्तकम्मिओ सण्णिपंचिदियतिरिस्सपत्तमुच्चिमपज्जत्तएसु उररण्णो छहि पज्जत्त
पज्जत्तपदो (१) निस्संतो (२) भिमुद्धो (३) वेदगमम्मत्त मजमामजम च जुगज पांड
वण्णो (४) संकिलिट्ठो भिच्छत्त गतूणंतरिय छण्णउदिपुव्वकोडीओ परिभमिय अपक्खिण
पुव्वकोडीए भिच्छत्तेण सम्मत्तेण ना सोहम्मादिमु जाउअ नधिय अतोमुद्दत्तारमेण जीवि
सजमासजम पडिवण्णो (५) काल करिय देवो जादो । पचहि अतोमुद्दत्तेहि ऊमाओ
छण्णउदिपुव्वकोडीओ उक्कस्सत्तर जाद ।

पंचिदियतिरिस्सपत्तएसु एअं चेअ । जगरि अट्ठेनालीसपुव्वकोडीओ चि
भाणिदव्व । पंचिदियतिरिस्सपत्तोजोणिणीसु मि एअ चेअ । जगरि नैड निमेओ अविअ
भाणिम्मामो । त जहा- एकओ अट्ठारीससत्तकम्मिओ पंचिदियतिरिस्सपत्तोजोणिणीसु उक्कस्सो

पर्योकि, देखा है मार्गको जिहाने, ऐसे तीनों प्रकारके पचेन्द्रिय तिर्यंच सयता
सयतके अन्य गुणस्थानको जानर अतिस्सपत्तस्स पुन उसी गुणस्थानमें जान पर
अन्तर्मुहूर्तप्रमाण काल पाया जाता है ।

उन्हीं तीनों प्रकारके तिर्यंच सयतासयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटि
पृथक् है ॥ ५१ ॥

इनमेंसे पहले पचेन्द्रिय तिर्यंच सयतासयतोंका अन्तर कहते हैं । जैसे-मोह
कर्मकी अट्ठारिस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक जीव सभी पचेन्द्रिय तिर्यंच सम्पूर्ण
पर्याप्ततामें उत्पन्न हुआ, व छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विमुद्ध
हो (३) वेदगमम्मत्त और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (४) तथा सक्रिय हा
मिध्यात्मको जाकर और अन्तरको प्राप्त हो छषाध्वे पूर्वकोटिप्रमाण परिभ्रमण कर
अन्तिम पूर्वकोटिमें मिध्यात्म अववा सम्यक्त्वके साथ सौधर्मादि कर्त्योंकी आयुको वाधकर
व जीवनके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जाने पर सयमासयमको प्राप्त हुआ (५) और मरण
कर देव हुआ । इस प्रकार पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे हीन छषाध्वे पूर्वकोटिया पचेन्द्रिय तिर्यंच
सयतासयतोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

पचेन्द्रिय तिर्यंच पर्याप्ततामें भी इसी प्रकार अन्तर होता है । विशेषता यह है कि
इनके अट्ठारिस पूर्वकोटिप्रमाण अन्तरकाल रहना चाहिये । पचेन्द्रिय तिर्यंच योनि
मतिपोंमें भी इसी प्रकार अन्तर होता है । केवल कुछ विशेषता है उसे कहते हैं । जैसे
मोहकर्मकी अट्ठारिस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक जीव पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमतिपों

वे मासे गम्भे अचिञ्चय णिकरतो मुहुत्तपुवत्तेण विसुद्धो वेदगसम्मत्त सजमासंजम च जुगवं पडिण्णो (१) । संकिल्लित्थो मिच्छत्तं गंतूणतरिय सोलसपुव्वकोडीओ परिभमिय देवाउअं रधिय अतोमुहुत्तामसेसे जीणिए मजमासंजम पडिण्णो (२) । लद्धमंतर । मदो देवो जादो । बेहि अतोमुहुत्तेहि मुहुत्तपुव्वत्तव्भहिय-वेमासेहि य ऊणाओ सोलहपुव्व-कोडीओ उरुरस्सतर होदि ।

पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ५२ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण खुदाभवग्गहणं ॥ ५३ ॥

हुदो ? पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तयस्म अण्णोसु अपज्जत्तएसु खुदाभवग्गहणाउ-
ट्ठिदीएसु उअग्गिजिय पडिणियत्तिय आगदस्म खुदाभवग्गहणमेत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ५४ ॥

हुदो ? पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तयस्म अणप्पिदजीप्पेसु उप्पज्जिय आगलियाए

उत्पन्न हुआ व दो मास गर्भमें रहकर निकला, मुहूर्तपृथक्त्वसे विशुद्ध होकर, घेदकसंभ्य-
क्त्वको और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन सहिष्ट हो मिथ्यात्वको
जाकर, अन्तरको प्राप्त हो, सोलह पूर्वकोटिप्रमाण परिभ्रमण कर और देवायु राधकर
जीघनके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अवगेष रहनेपर सयमासयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकार
अन्तर प्राप्त हुआ । पश्चात् मरकर देव हुआ । इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्तों और मुहूर्तपृथक्त्वसे
अधिक दो माससे हीन सोलह पूर्वकोटिया पचेन्द्रिय तियच योनिमतियोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीनोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ५२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यपर्याप्तकोंका एक जीनकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्षुद्रभय-
ग्रहणप्रमाण है ॥ ५३ ॥

क्योंकि, पचेन्द्रिय तियच लब्ध्यपर्याप्तकोंका क्षुद्रभवग्रहणप्रमाण आयुस्थितिवाले
अन्य अपर्याप्तक जीवोंमें उत्पन्न होकर और लोटकर आये हुए जीवका क्षुद्रभवग्रहण-
प्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

पंचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यपर्याप्तकोंका एक जीनकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अनन्त-
कालप्रमाण अमरयात पुद्गलपरितर्न है ॥ ५४ ॥

क्योंकि, पचेन्द्रिय तिर्यच लब्ध्यपर्याप्तकोंके अविनाशित जीनोंमें उत्पन्न होकर आव

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमतरं केवचिर कालादो
हेदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ६० ॥

कुदो ? तिग्गिहमणुसेसु ट्ठिडसासणसम्मामिच्छादिट्ठिगुणपरिणदजीनेसु
अण्णगुण गदेसु गुणतरस्स जहण्णेण एगसमयदसणादो ।

उत्तस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ॥ ६१ ॥

कुदो ? सासणसम्मामिच्छादिट्ठिगुणद्वारेहि णिणा तिग्गिहमणुसाण
पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागमेत्तकालमज्झाणदसणादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ६२ ॥

सासणस्स जहण्णतर पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागो । कुदो ? एत्तिएण कालेण
णिणा पदममम्मत्तगहणपाओग्गाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तट्ठिदीण सागरोपमपुधत्तादो
हेट्ठिमाए उप्पत्तीए अभावा । सम्मामिच्छादिट्ठिस्स अतोमुहुत्त जहण्णतर, अण्णगुण

उक्त तीनों प्रकारके मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ ६० ॥

क्योंकि, तीनों ही प्रकारके मनुष्योंमें स्थित सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्य
ग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें परिणत सभी जीवोंके अथ गुणस्थानको चले जानेपर इन गुण
स्थानोंका अन्तर जघन्यसे एक समय देखा जाता है ।

उक्त मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असरयातवें भागप्रमाण है ॥ ६१ ॥

क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके बिना तीनों ही
प्रकारके मनुष्योंके पल्योपमके असरयातवें भागमान काल तक अस्थान देखा जाता है ।

उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमशः
पल्योपमका असरयातवें भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६२ ॥

सासादन गुणस्थानका जघन्य अन्तर पल्योपमका असरयातवें भाग है, क्योंकि,
इतने कालके बिना प्रथमसम्यक्त्वके ग्रहण करने योग्य सागरोपमपृथक्त्वसे नीचे
होनेवाली सम्यक्त्वप्रवृत्ति तथा सम्यग्मिथ्यात्वप्रवृत्तिरी स्थितिकी उत्पत्तिका अभाव
है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिका जघन्य अन्तर अतमुहूर्त होता है, क्योंकि, उसका अन्य गुणस्थानको

१ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिवातानाजीवपक्षया सामान्यवत् । स मि १, ८

२ दृष्टीने प्रति जघन्य पल्योपमस्येकमागोन्तमुहूर्तः । स मि १, ८

गंतूण अंतोमुहुत्तेण पुणरागमुत्तमा ।

उक्कस्सेण तिणिण पलिदोवमाणि पुव्वकोडिपुधत्तेणव्वभहियाणि

॥ ६३ ॥

मणुससासणसम्मादिट्ठीण ताव उच्चदे- एक्को तिरिक्खो देवो णेरुओ वा सासणद्वाए एगो समओ अत्थि चि मणुमो जादो । निदियसमए मिच्छत्त गंतूण अंतरिय सत्तेतालीसपुव्वकोडिअव्वभहियतिणिण पलिदोवमाणि भमिय पच्छा उत्तमसम्मर्च गदो । तग्धि एगो समओ अत्थि चि मासणं गंतूण मदो देवो जादो । दुत्तमऊणा मणुसुक्कस्स-ट्ठीदीं सासणुक्कस्सतरं जाद ।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्स उच्चदे- एक्को अट्ठासीसत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगदो मणुसेसु उववण्णो । गव्वभादिअट्ठवस्सेसु गदेसु निसुद्धो सम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (१) । मिच्छत्त गदो सत्तेतालीसपुव्वकोडीओ गमेदूण तिपलिदोवमिएसु मणुसेसु उववण्णो आउअ वंधिय अवसाणे सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमतर (२) । तदो मिच्छत्त-सम्मत्ताणं जेण आउअ वद्ध तं गुण गंतूण मदो देवो जादो (३) । एवं तीहि अंतोमुहुत्तेहि अट्ठवस्सेहि जाकर अन्तर्मुहूर्तसे पुन आगमन पाया जाता है ।

उक्त मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिर्पृथक्त्वसे अधिक तीन पल्योपम-काल है ॥ ६३ ॥

पहले मनुष्य सासादनसम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक तिर्यंच, देव अथवा नारकी जीव सासादन गुणस्थानके कालमें एक समय अवशेष रहने पर मनुष्य हुआ । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर संतालीस पूर्व-कोटियोंसे अधिक तीन पल्योपमकाल परिभ्रमणकर पीछे उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । उस उपशमसम्यक्त्वके कालमें एक समय अवशेष रहनेपर सासादन गुणस्थानको जाकर मरा और देव होगया । इस प्रकार दो समय कम मनुष्यकी उत्कृष्ट स्थिति सासादन गुणस्थानका उत्कृष्ट अन्तर होगया ।

अथ मनुष्यसम्यग्मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव अन्य गतिसे जाकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि लेकर आठ वर्षोंके व्यतीत होने पर विशुद्ध हो सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ, संतालीस पूर्वकोटियां विताकर, तीन पल्योपमकी स्थिति-वाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आयुको वाधकर अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे अन्तर लब्ध हुआ (२) । तत्पश्चात् मिथ्यात्व और सम्यक्त्वमेंसे जिसके द्वारा आयु बाधो थी, उन्हीं गुणस्थानको जाकर मरा और देव होगया (३) । इस प्रकार तीन

१ उत्तराणु श्रीणि पल्योपमानि पुव्वकोटीपुधत्तैरव्वभिरानि । स पि १, ८

२ प्रतिपु ' दुत्तमऊणाणमणुसुक्कट्ठीदी ' इति पाठ ।

य उणा सगद्धिदी सम्माभिन्नुत्तुक्कस्मत्तर ।

एय मणुमपज्जत्त-मणुमिणीण पि । यत्तरि मणुमपज्जत्तेसु तेरीम पुव्वकोट्टीओ,
मणुसिणीसु मत्त पुव्वकोट्टीओ तिसु पल्लिदोवमेसु अहियाओ चि वत्तव्व ।

असजदसम्मादिट्ठीणमत्तर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव
पडुच्च णत्थि अंतरं, णित्तरं ॥ ६४ ॥

सुगममेद मुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ६५ ॥

कुटो ? तिविहमणुसेसु द्विदअमजदसम्मादिट्ठिसस अण्णगुणं गतूणत्तरिय पडिणिय
चिय अतोमुहुत्तेण आगमणुत्तलभा ।

उक्कस्सेण तिण्णि पल्लिदोवमाणि पुव्वकोट्टिपुधत्तेणअहियाणि
॥ ६६ ॥

मणुमअसजदसम्मादिट्ठीण तात्त उच्चदे- एक्को अट्ठासीमसत्तकम्मिओ अण्णगदीदो

अन्तर्मुहूर्त और आठ चर्यासे कम अपनी स्थिति सम्यग्मिध्यात्प्रका उत्कृष्ट अन्तर है ।

इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेष
यात यह है कि मनुष्यपर्याप्तनोंमें तैर्वास पुव्वकोट्टिया और तीन पल्लोपमना अन्तर
कहना चाहिए । और मनुष्यनियोंमें ग्रात पुव्वकोट्टिया तीन पल्लोपमनोंमें अधिक
कहना चाहिए ।

अमयतमस्यगृष्टि मनुष्यत्रिकका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंका
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ६४ ॥

यह सत्य सुगम है ।

एक जीवकी अपेक्षा मनुष्यत्रिकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६५ ॥

फर्यात्ति, तीन प्रकारके मनुष्योंमें स्थित अमयतमस्यगृष्टिका अन्य गुणस्थानको
जाकर अन्तरको प्राप्त हो और लौटकर अन्तर्मुहूर्तसे आगमन पाया जाता है ।

असपतमस्यगृष्टि मनुष्यत्रिकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोट्टिर्पृथक्त्वसे अधिक
तीन पल्लोपम है ॥ ६६ ॥

इनमेंसे पहले मनुष्य अमयतमस्यगृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- अट्ठाईस मोह

१ अमयतमस्यगृष्टिनानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरं । स सि १, ८

२ एकजीवापमया अमयतमस्यगृष्टि । स सि १, ८

३ उत्तराय ऋणि पल्लोपमानि पूर्वकोट्टिर्पृथक्त्वस्यधिकानि । स सि १, ८

आगदो मणुमेसु उअण्णो । गव्मादिअट्ठस्मेसु गदेसु तिसुद्धो वेदगसम्मत्तं पडिअण्णो (१) ।
मिच्छत्तं गंतूणतरिय मत्तेचालीसपुव्वकोडीओ गमेदूण तिपल्लिदोअमिएसु उअण्णो । तदो
वद्दाउओ संतो उअसमसम्मत्त पडिअण्णो (२) । उअममम्मत्तद्वाए छ आअलियाअसेसाए
सामण गंतूण मदो देवो जादो । अट्ठस्मेहि नेहि अतोमुहुत्तेहि ऊणा सगट्ठिदी असजद-
सम्मादिट्ठिण उअरुस्मत्तरं होदि । एअ मणुमपज्जत्त-मणुमिणीणं पि । णअरि तेवीस-सत्त-
पुव्वकोडीओ तिपल्लिदोअमेसु अहियाओ त्ति उच्चं ।

सजदासजदप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ६७ ॥

सुगमेदं सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ६८ ॥

कुदो ? तिपिहमणुसेसु ट्ठिट्ठिगुणद्वाणजीअस्स अण्णगुण गंतूणतरिय पुणो अतो-
मुहुत्तेण पोरणगुणस्मागमुअलमा ।

प्रकृतियोंकी सत्तानाला कोई एक जीव अन्यगतिसे आया ओर मनुष्यामें उत्पन्न हुआ ।
पुन गर्भमें जादि लेकर आठ वर्षके वीतनेपर त्रिशुद्ध हो वेदरुसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वमें जाकर अन्तरको प्राप्त हो सतालीस पूर्वकोटिया धिताकर
तीन पल्योपमनाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । तत्पश्चात् आयुको यावत्ता हुआ उपशमसम्य-
त्वको प्राप्त हुआ (२) । उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह जात्रलिया अशेष रहनेपर
सासादन गुणस्थानको जाकर मरा ओर देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष ओर दो अन्त-
र्मुहूर्तोंने कम अपनी स्थिति असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर है ।

इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त ओर मनुष्यनियोंका भी अन्तर कहना चाहिए । विशेष
धात यह है कि मनुष्यपर्याप्त असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर तेइस पूर्वकोटिया तीन
पल्योपममें अधिक तथा मनुष्यनियोंमें सात पूर्वकोटिया तीन पल्योपममें अधिक होती है,
ऐसा कहना चाहिए ।

मयतासयतामें लेकर अप्रमत्तमयतां तकके मनुष्यत्रिकोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ६७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अप्रमत्त अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ६८ ॥

पर्याप्त, तीन प्रकारके मनुष्योंमें स्थित सयतासयतादि तीन गुणस्थानधर्ती
जीवका अन्य गुणस्थानको जाकर अन्तरको प्राप्त होकर ओर पुन लोटकर अन्तर्मुहूर्त
द्वारा पुराने गुणस्थानका होना पाया जाता है ।

१ सयतामयतप्रमत्तप्रमत्तानां नानानावापेक्षया नास्त्वन्तरम् । म वि १, ८

२ एकजीव प्रति जघनेनात्तर्मुहूर्त । म वि १, ८

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ६९ ॥

मणुसमजदासजदाण ताउ उच्चे- एक्को अट्ठासीससत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगतूण मणुसेसु उअण्णो । अट्ठास्सिओ जादो वेदगमम्मत्त मजमासनम च ममग पडिअण्णो (१) । मिच्छत्त गतूणतरिय अट्ठेदालीसपुव्वकोडीओ परिभमिय अण्णो देवाउअ वधिय सजमासजम पडिअण्णो । लद्धमत्तर (२) । मदो देवो जादो । एव अट्ठास्सेहि वे-अतोमुट्ठत्तेहि य उण्णोओ अट्ठेदालीसपुव्वकोडीओ सजदासजदुव्वस्मत्तर हादि ।

पमत्तस्स उअरुस्मत्तर उच्चे- एक्को अट्ठासीससत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगतूण मणुसेसु उअण्णो । गण्भादिअट्ठास्सेहि वेदगमम्मत्त सजम च पडिअण्णो अप्पमत्तो (१) पमत्तो होइण (२) मिच्छत्त गतूणतरिय अट्ठेदालीसपुव्वकोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वकोडीए बद्धाउओ सतो अप्पमत्तो होइण पमत्तो जादो । लद्धमत्तर (३) । मदो देवो जादो । तिण्णिअंतोमुट्ठत्तव्वहिय अट्ठास्सेणूण अट्ठेदालीसपुव्वकोडीओ पमत्तुक्कस्सत्तर होदि ।

उक्त तीनों गुणस्थानगले मनुष्यत्रिकोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्त्व है ॥ ६९ ॥

इनमेंसे पहले मनुष्य सत्यतासयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अयगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो आठ वर्षका हुआ । और वेदकसम्भक्त्य तथा सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अट्ठेदालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर आयुके अन्तमें देवायुको बाधकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । इस प्रकारसे उक्त अन्तर लब्ध हुआ (२) । पुन मरा और देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और दो अतर्मुहूर्तोंस कम अट्ठेदालीस पूर्वकोटिया सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है

अथ प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अयगतिसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । पुन गभको भादि लेकर आठ वर्षमें वेदकसम्भक्त्य और सयमको प्राप्त हुआ । पश्चात् वह अप्रमत्तसयत (१) प्रमत्तसयत होकर (२) मिथ्यात्वमें जाकर और अन्तरको प्राप्त होकर, अट्ठेदालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटिमें बद्धायुक्त होता हुआ अप्रमत्तसयत होकर पुन प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकारसे अन्तर लब्ध होगया (३) । पश्चात् मरा और देव होगया । इस प्रकार तीन अतर्मुहूर्तोंमें अधिक आठ वर्षसे कम अट्ठेदालीस पूर्वकोटिया प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

अप्पमत्तस्म उक्कस्सतर उच्चदे- एक्को अट्ठासीससत्तकम्मिओ अण्णगदीदो आगंतूण मणुसेसु उप्पज्जिय गव्मादिअट्ठास्सिओ जादो । सम्मत्त अप्पमत्तगुणं च जुगमं पडिग्गो (१) । पमत्तो होदूअंतरिदो अट्ठेतालीसपुव्वफोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वफोडीए वद्धदेवाउओ भंतो अप्पमत्तो जादो । लद्धमंतरं (२) । तदो पमत्तो होदूण (३) मदो देवो जादो । तीहि अंतोमुहुचेहि अब्भहियअट्ठवस्सेहि ऊणाओ अट्ठेतालीस-पुव्वफोडीओ उक्कस्सतर । पज्जत्त-मणुमिणीसु एव चेव । णरि पज्जत्तेसु चउवीस-पुव्वफोडीओ. मणुसिणीसु अट्ठपुव्वफोडीओ चि वत्तव्वं ।

चट्ठहमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ ७० ॥

कुदो ? ति विहमणुस्साणं चउच्चिहउउसामगेहि णिणा एगममयाअट्ठाणुअलंभा ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ७१ ॥

कुदो ? ति विहमणुस्साण चउच्चिहउउसामगेहि णिणा उक्कस्सेण वासपुधत्तावट्ठाणु-वलंभादो ।

अत्र अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्ता रखनेवाला कोई एक जीव अन्य गतिसे जाकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भको आदि लेकर आठ वर्षका हुआ और सम्यक्त्त तथा अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१)। पुनः प्रमत्तसयत हो अन्तरको प्राप्त हुआ और अबतालीस पूर्वकोटिया परिभ्रमण कर अन्तिम पूर्वकोटिमें देवायुको बाधता हुआ अप्रमत्तसयत होगया। इस प्रकारसे अन्तर प्राप्त हुआ (२)। तत्पश्चात् प्रमत्तसयत होकर (३) मरा और देव होगया। ऐसे तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षोंसे कम अबतालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है।

पर्याप्त मनुष्यनियोंमें इसी प्रकारका अन्तर होता है। विशेष बात यह है कि इन पर्याप्तमनुष्योंके चौबीस पूर्वकोटि और मनुष्यनियोंमें आठ पूर्वकोटिकालप्रमाण अन्तर रहना चाहिए।

चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ७० ॥

फ्योंकि, तीनों ही प्रकारके मनुष्योंका चारों प्रकारके उपशामकोंके बिना एक समय अवस्थान पाया जाता है।

चारों उपशामकोंका उत्कर्षसे वर्षपृथक्त्त अन्तर है ॥ ७१ ॥

फ्योंकि, तीनों प्रकारके मनुष्योंका चारों प्रकारके उपशामकोंके बिना उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्त रहनेवाला पाया जाता है।

णमहि अट्ठहि अतोमुट्ठेहि एगममयाहियअट्ठमस्मेहि य ऊणाओ अट्ठेदालीमपुच्च-
कोटीओ उक्कस्मतर होदि ति वत्तव्य । पज्जत्त-मणुमिणीसु एव चेत्त । णमरि पज्जत्तेसु
चउत्तमिं पुच्चकोटीओ, मणुमिणीसु अट्ठ पुच्चकोटीओ ति वत्तव्य ।

चटुहं खवा अजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७४ ॥

कुठो ? एदेसु गुणद्वानेसु अण्णगुण णिवुट्ठिं च गदेसु एदेमिमेगममयमेत्त-
जहण्णतरुवलभा ।

उक्कस्सेण छम्मासं, वासपुधत्तं ॥ ७५ ॥

मणुस-मणुमपज्जत्ताणं छमासमतर होदि । मणुमिणीसु तामपुधत्तमतर होदि ।
जहाससाए विणा रुधमेद णव्वदे ? गुम्हदेमादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णित्तरं ॥ ७६ ॥

कुठो ? भूओ जागमणाभावा । णित्तराणिदेसो किमिदं पुच्चदे ? णिगयमतर जम्हा
होता है । किन्तु उनमें तमज दश, नो और आठ अन्तर्मुहूर्तोंसे और एक समय अधिक
आठ वर्षोंमें कम अब्दालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा कहना चाहिए ।
मनुष्यपर्याप्तोंमें या मनुष्यनियोंमें भी ऐसा ही अन्तर होता है । विशेषता यह है कि
पर्याप्तोंमें चौबीस पूर्वकोटियों और मनुष्यनियोंमें आठ पूर्वकोटियोंके कालप्रमाण अन्तर
कहना चाहिए ।

चारों अपरु और अयोगिकेवलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जवन्यमे एक समय है ॥ ७४ ॥

क्योंकि, इन गुणस्थानोंके जीवोंसे चारों अपरुके अन्य गुणस्थानोंमें तथा अयो-
गिकेवलियोंके निवृत्तिके चल जानेपर एक समयमात्र जगन्त्य अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर, उह माम और त्र्यष्टयस्य होता है ॥ ७५ ॥

मनुष्य और मनुष्यपर्याप्त अपरु वा अयोगिकेवलियोंका उत्कृष्ट अन्तर उह मास
प्रमाण है । मनुष्यनियोंमें त्र्यष्टयस्यप्रमाण अन्तर होता है ।

शक्रा—सूत्रमें यथासस्य पदके विना यह बात कैसे जानी जाती है ?

समाधान—शुक्रके उपदेशसे ।

चारों अपरुओंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ७६ ॥

क्योंकि चारों अपरु और अयोगिकेवलियोंके पुन आगमनका अभाव है ।

शक्रा—सूत्रमें निरन्तर पदका निर्देश किस स्थिति है ?

समाधान—निरन्तर गया है अन्तर जिस गुणस्थानमें, उस गुणस्थानको निरन्तर

१ शेषार्थो ध्यातव्यः । २ वि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ७२ ॥

सुगममेदं सुच, ओघमिह उचत्तादो ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ॥ ७३ ॥

मणुस्माण ताव उच्चदे- एकको अट्टाग्रीसमतकम्मिओ मणुमेसु उअण्णो गभादि
अट्टास्मेहि मम्मत्त मज्जम च समगं पडिअण्णो (१) । पमत्तापमत्तमजदट्टाणे सादामाद
अधपरागत्तिमहस्स कादण (२) दसणमोहणीयमुअमामिय (३) उअसमसेटीपाओम
अप्पमत्तो जादो (४) । अपुव्वो (५) अणियट्ठी (६) सुहुमो (७) उअमतो (८)
सुहुमो (९) अणियट्ठी (१०) अपुव्वो (११) अपमत्तो होदूणतरिदो । अट्टेतालीस
पुव्वकोडीओ परिभमिय अपच्छिमाए पुव्वकोडीए बद्धदेनाउओ सम्मत्त मज्जम च पडि
अजिय दसणमोहणीयमुअमामिय उअसममेटीपाओममिओहिए तिसुज्झिय अपमत्तो होदूण
अपुव्वो जादो । लद्धमत्तर । तदो णिहा पयलाण अधोच्छेदपद्धममए काल गदो दवो
जादो । अट्टास्मेहि एककारमअतोमुहुत्तेहि य अपुव्वद्वए मत्तमभागेण च उणाओ
अट्टेतालीसपुव्वकोडीओ उअकस्मत्तर होदि । एअ चेअ तिण्णमुअसामगाण । णअरि दमहि

उक्त गुणव्यानाका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ७२ ॥

यह सत्र सुगम है, क्योंकि, ओघमें कहा जा चुका है ।

चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उक्त अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व है ॥ ७३ ॥

इनमेंसे पहल मनुष्य सामान्य उपशामकोंका अन्तर करते हैं-मोहकमरी अट्टास
प्रवृत्तियोंका सत्ता रत्नचाला कोई एक जीव मनुष्यामें उत्पन्न हुआ, और गर्भको
आवि लेकर बाढ़ बपने सम्यक्तर जोर सयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । प्रमत्त और
अप्रमत्तसयत गुणद्वयमें साता ओर जसाता वेदनीयके यध परायतेन सहस्रोको
करके (२) दानमोहनीयका उपशाम करके (३) उपशामश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत
हुआ (४) । पुन अपूर्णकरण (५) अनितृप्तिकरण (६) सूक्ष्मसाम्पराय (७) उपशात
कपाय (८) सूक्ष्मसाम्पराय (९) अनितृप्तिकरण (१०) अपूर्णकरण (११) ओर अप्रमत्त
सयत हो अन्तरको प्राप्त होकर अट्टालीस पूर्वकोटियों तत्र परिभ्रमण कर अन्तिम
पूर्वकोटिमें देवायुको याध कर सम्यक्त्व और सयमको युगपत् प्राप्त होकर दर्शन
मोहनीयका उपशामकर उपशामश्रेणीके योग्य त्रिगुदिस त्रिगुज होना हुआ अप्रमत्तसयत
होकर अपूर्णकरणसयत हुआ । इस प्रकारसे अन्तर उपलब्ध होगया । तत्पश्चात् निद्रा
और प्रचलने उध विच्छेदके प्रथम समयमें सात्रको प्राप्त हो देव हुआ । इस प्रकार
चाठ घण और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे तत्र अपूर्णकरणके सप्तम भागसे कम अट्टालीस
पूर्वकोटिकाल उत्पन्न अन्तर होता है । इसी प्रकारसे शेष तीन उपशामकोंका भी अन्तर

१ एकजीव प्रति जन्मैकान्त्यपुहर्त । स मि १, ८

२ उत्तयेण पूर्वकोटिपृथक्त्वानि । स मि १, ८

णरहि अट्ठहि अतोपुट्ठेहि एगसमयाहियअट्ठस्मेहि य ऊणाओ अट्ठेढालीसपुव्व-
कोडीओ उक्कस्सतर होदि त्ति वत्तव्वं । पज्जत्त-मणुसिणीसु एवं चेत्त । णररि पज्जत्तेसु
चउत्तासि पुव्वकोडीओ, मणुसिणीसु अट्ठ पुव्वकोडीओ त्ति वत्तव्व ।

चट्ठण्हं खवा अजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७४ ॥

कुदो ? एदेसु गुणट्ठाणेसु अण्णगुणं णिवुदिं च गदेसु एदेमिमेगममयमेत्त-
जहण्णतरुलभा ।

उक्कस्सेण छम्मासं, वासपुधत्तं ॥ ७५ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्ताणं छमासमतर होदि । मणुसिणीसु वासपुधत्तमतर होदि ।
जहामरूपाए णिणा कधमेद णरूदे ? गुरूदेसादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ॥ ७६ ॥

कुदो ? भूओ आगमणाभावा । णिरतराण्हिसो किमट्ठ पुच्चदे ? णिगयमतर जम्हा
होता है । किन्तु उनमें क्रमशः दश, नौ ओर आठ अन्तर्मुहूर्तोंसे ओर एक समय अधिक
आठ वर्षोंसे कम अष्टतालीस पूर्वकोटिया उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा कहना चाहिए ।
मनुष्यपर्याप्तोंमें या मनुष्यनियोंमें भी ऐसा ही अन्तर होता है । विशेषतः यह है कि
पर्याप्तोंमें चौबीस पूर्वकोटियों ओर मनुष्यनियोंमें आठ पूर्वकोटियोंके कालप्रमाण अन्तर
कहना चाहिए ।

चारों अपक और अयोगिकेनलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जन्म्यमे एक समय है ॥ ७४ ॥

पर्योकि, इन गुणस्थानोंके जीवोंसे चारों क्षपकोंके अथ गुणस्थानोंमें तथा अयो-
गिकेनलीके निर्वृत्तिनो चले जानेपर एक समयमान जन्म्य अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर, छह मास और वर्षश्वत्स होता है ॥ ७५ ॥

मनुष्य और मनुष्यपर्याप्तक श्वपक या अयोगिकेनलियोंका उत्कृष्ट अन्तर छह मास-
प्रमाण है । मनुष्यनियोंमें वर्षश्वत्सप्रमाण अन्तर होता है ।

शका—मृगमें यथास्वरय पदके णिना यह बात कैसे जानी जाती है ?

समाधान—गुरुके उपदेशसे ।

चारों क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ७६ ॥

पर्योकि, चारों क्षपक और अयोगिकेनलीके पुन आगमनका अभाव है ।

शका—सृग्में निरन्तर पदका निदश किस लिपि है ?

समाधान—निरन्तर गया है अन्तर जिस गुणस्थानसे, उस गुणस्थानको निरन्तर

१ शेषाणां सामान्यवत् । स. नि. १, ८

गुणद्वानादो त गुणद्वान् गिरतरमिदि पिहिमुहेण दच्चाट्टियणपावलंविमिस्माण पडिमह
परुणणह ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ७७ ॥

णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, गिरतरमिन्चेटेण भेदाभावा ।

मणुसअपज्जत्ताणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ७८ ॥

किमिदमेदस्म एम्महतस्म गमिस्म अतर होदि ? एसो सहाओ एदस्म । ण च
सहाणे जुत्तिमादस्म परेसो अत्थि, मिण्णमिमायादो ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ७९ ॥

सुगममेद सुच ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण खुदाभवग्गहणं ॥ ८० ॥

कुदो ? अणप्पिदअपज्जत्तएमु उप्पज्जिअ अइदहरकालेण आगदस्स खुदाभव
ग्गहणमेत्तत्तत्तल्लमा ।

कहते हैं। इस प्रकार विधिमुखसे द्रव्यार्थिकनयके अवलम्बन करनेवाले शिष्योंके प्रतिपक्ष
प्ररूपण करनेके लिए 'निरन्तर' इस पदका निर्देश स्वयं किया गया है ।

सजोगिकेवलीका अन्तर औघके समान है ॥ ७७ ॥

क्योंकि, आद्यमें घणित नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है, इस प्रकारसे इस प्ररूपणमें कोई भेद नहीं है ।

मनुष्य लक्ष्यपर्याप्तकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अधन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ७८ ॥

शंका—इस इतनी महान् राशिना अन्तर किस लिए होता है ?

समाधान—यह तो रागियोंना स्वभाव ही है । और स्वभावमें युक्तिवादका
प्रवेश है नहीं, क्योंकि, उसका विषय भिन्न है ।

मनुष्य लक्ष्यपर्याप्तकोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमके असंग्रयातन भाग है ॥ ७९ ॥

यह स्व सुगम है ।

एक जीवकी अपेक्षा लक्ष्यपर्याप्तक मनुष्योंका अधन्य अन्तर क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण
है ॥ ८० ॥

क्योंकि, अशिवभित लक्ष्यपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर अति एककालसे पुन
लक्ष्यपर्याप्तकोंमें आए हुए जीवके क्षुद्रभयग्रहणप्रमाण अन्तर पाया

उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ८१ ॥

कुदो ? मणुसअपज्जत्तस्म एडदिय गढस्म आमलियाए असखेज्जदिभागमेत्त-
पोग्गलपरियट्ठी परियट्ठिदूण पडिणियत्तिय आगढस्स मुत्तुत्ततरुलंभा ।

एदं गदिं पडुच्च अंतरं ॥ ८२ ॥

मिस्माणमत्तरसभयपदुप्पायणट्ठमेढ सुत्त ।

गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ८३ ॥

उभयदो जहण्णुकस्मेण णाणेगजीवेहि या णत्थि अतरमिदि बुत्त होदि । कुदो ?
मग्गणमच्छदिय गुणत्तरग्गहणाभाया ।

देवगदीए देवेषु मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ८४ ॥

सुगममेढ सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ८५ ॥

उक्त लब्धपर्याप्तक मनुष्योंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकालात्मक असरयात्
पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ॥ ८१ ॥

मर्यादित, फलैन्द्रियोंमें गये हुए लब्धपर्याप्त मनुष्यका आवर्त्तके असरयात्तवै
भागमान पुद्गलपरिवर्तन परिभ्रमण कर पुन लोटकर आये हुए जीवके सूत्रोक्त उत्कृष्ट
अन्तर पाया जाता है ।

यह अन्तर गतिकी अपेक्षा कहा है ॥ ८२ ॥

यह सूत्र शिष्योंको अन्तरकी सभावना उत्पलानेके लिए कहा गया है ।

गुणस्थानकी अपेक्षा तो दोनों प्रकारमें भी अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ८३ ॥

उभयत अर्थात् जघन्य ओर उत्कृष्टसे, अथवा नाना जीव ओर एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, यह अर्थ कहा गया समझना चाहिए । क्योंकि, मार्गणाको छोड़े
बिना लब्धपर्याप्तक जीवोंके अन्य गुणस्थानका ग्रहण हो नहीं सकता ।

देवगतित्तं, देवोंमें भिव्यादृष्टि और अमयत्तसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ८४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त भिव्यादृष्टि और अनयत्तसम्यग्दृष्टि देवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य
अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ८५ ॥

१ देवगता देवाना भिव्यादृष्टयत्तसम्यग्दृष्टो नानाभावोपेक्षया नास्त्यतरम् । स सि १, ८

२ एगजीवं प्रोते जघयेनात्तर्मुहूर्तं । स सि १, ८

कुदो ? मिच्छादिद्वि-अमनदमम्मादिद्वीण दिद्वमग्गाण देवाणं गुणतर गतूण जह
हरकालेण पडिणियत्तिय आगदाण जतोमुहुत्तअतकरलभा ।

उक्कस्सेण एक्कत्तीस सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ८६ ॥

मिच्छादिद्विस्म नाम उच्चदे- एवो दव्वलिगी अट्टाणीसमतकम्मिओ उरारिम
गेवज्जेसु उररण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३)
वेदगमम्मत्त पडिण्णो । एक्कत्तीस सागरोवमाणि सम्भत्तेणत्तिय अरमाणि मिच्छ
गदो । लद्धमत (४) । चुदो मणुमो जाओ । चदुहि जंतोमुहुत्तेहि ऊगाणि एक्कत्तीस
सागरोवमाणि उररस्सत्तर होदि ।

अमज्जदमम्मादिद्विस्म उच्चदे- एक्को दव्वलिगी अट्टाणीसमतकम्मिओ उरारिम
गेवज्जेसु उररण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३)
वेदगमम्मत्त पडिण्णो (४) मिच्छत्त गतूणत्तिय एक्कत्तीस सागरोवमाणि अचिच्छदू
आउअ नाधिय सम्भत्त पडिण्णो । लद्धमत (५) । पचहि जंतोमुहुत्तेहि ऊगाणि एक्
त्तीस सागरोवमाणि जसज्जदमम्मादिद्विस्म उक्कस्सत्तर होदि ।

क्योंकि, जिहोंन पहले अन्य गुणस्थानोंमें जाने जानेसे अन्य गुणस्थानोंका माग
देता ऐसे मिथ्यादष्टि और असयतसम्यग्दष्टि देवोंका अन्य गुणस्थानको जाकर भति
स्वस्वगालसे प्रतिनिष्ठ हाकर आवे हुए जीवोंने अन्तमुहत्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त मिथ्यादष्टि और असयतसम्यग्दष्टि देवोंका उन्कट अन्तर बुद्ध कम
इकतीस सागरोपमकालप्रमाण है ॥ ८६ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादष्टि देवका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्ति
योंके मत्तवाला एक उज्ज्वलिगी साधु उपरिम श्रेयैयनोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंमें
पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विमुक्त हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इकतीस
सागरोपमकाल सम्यक्त्वने साथ विनाकर आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस
प्रकारसे अन्तर लब्ध हुआ (४) । पश्चात् वहाम न्युत्त हो मनुष्य हुआ । इस प्रकार चार
अन्तमुहत्तोंसे कम इकतीस सागरोपमकाल मिथ्यादष्टि देवका उन्कट अन्तर होता है ।

अर असयतसम्यग्दष्टि देवका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंके
सत्तवाला कोई एक द्रव्यजिगी साधु उपरिम श्रेयैयनोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंमें
पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विमुक्त हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
पश्चात् मिथ्यात्वका जाकर अन्तरको प्राप्त हो इकतीस सागरोपम रहकर और आयुको
नाधर, पुन सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तमुहत्तोंसे कम इकतीस सागरोपमकाल असय
होना है ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालदो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ८७ ॥

कुदो ? दोण्ह पि मातरासीण णिरउमेसेण अण्णगुणं गदाणं एगसमयंतरुलंभा ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ॥ ८८ ॥

कुदो ? एदामिं दोण्ह रामीण मातराण णिरउमेसेण अण्णगुणं गदाण उक्कस्सेण
पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागमेत्ते अंतरं पडि पिरोहाभावा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ८९ ॥

सासणसम्मादिट्ठिस्म पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो अतर, सम्मामिच्छादिट्ठिस्स
अतोमुहुत्त । सेस सुगम, उहुसो परुणित्तादो ।

सासादनमम्यग्दष्टि और सम्यग्मिध्यादष्टि देवोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ८७ ॥

क्योंकि, इन दोनों ही सान्तर राशियोंका निरवशेषरूपसे अन्य गुणस्थानको
गये हुए जीवोंके एक समयप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमका असख्यातवा भाग है ॥ ८८ ॥

क्योंकि, इन दोनों सान्तर राशियोंके सामस्त्यरूपसे अन्य गुणस्थानको छेले
जानेपर उत्तरार्धसे पल्योपमके असख्यातवें भागमान कालमें अन्तरके प्रति कोई विरोध
नहीं है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमशः पल्योपमका असं-
ख्यातवा भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ८९ ॥

सासादनसम्यग्दष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण है
और सम्यग्मिध्यादष्टिका उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । शेष सूत्रार्थ सुगम है, क्योंकि,
पहले बहुतवार प्ररूपण किया जा चुका है ।

१ सासादनमम्यग्दष्टिसम्यग्मिध्यादष्टियोनानाजीवोपेक्षया सामान्यतर । स सि

२ परजीव प्रति जघन्य पल्योपमाणव्येगमागोऽन्तर्मुहूर्तम् । स सि १, ८

एगमजन्ममादिद्विम्भ वि । णवमि पचाहि अतोमुहुचेहि उणउक्कस्मद्विदीओ
अंतर होदि ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्वीणं सत्थाणोघं ॥ ९४ ॥

हुदो ? णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्मेण पलिदोवमस्स अमं
खेज्जणिभागो, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स अमरोज्जदिभागो, अतोमुहुच,
उक्कस्मेण रेहि ममएहि छहि अतोमुहुचेहि उणाओ उक्कस्मद्विदीओ अतरमिच्चेणहि
भेदाभावा । णवमि सग सगुक्कस्मद्विदीओ देवणाओ उक्कस्मंतगमिदि एत्थ वत्तच्च,
सत्थाणोघण्णाणुत्तरादी ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेसु मिच्छादिद्वि-असंजद
सम्मादिद्वीणमत्तर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि
अतर, णिरतर ॥ ९५ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ॥ ९६ ॥

इसा प्रसारसे असपतसम्यग्दृष्टि देवोंका भी अन्तर जानना चाहिये । विशेष
यात यह है कि उनके पांच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

उक्त रसगोंके सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि देवोंका अन्तर स्वस्थान
ओपके समान है ॥ ९४ ॥

क्योंकि, जाला जीवोंकी अपेक्षा जघ-यसे पर नमय, उत्कर्षसे पल्योपमका
असत्प्रातया भाग अन्तर है एक जीवकी अपेक्षा जघ-यसे पल्योपमका असत्प्रातया
भाग और अतर्मुहूर्त अन्तर है, उत्कर्षसे दो नमय ओरछह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट
स्थितिप्रमाण अन्तर है, इत्यादि रूपसे ओपके अन्तरम इनके अन्तरमें भेदका अभाव
है । विशेष यात यह है कि अपनी अपनी कुछ कम उत्कृष्ट स्थितिया ही यहां पर उत्कृष्ट
अन्तर है ऐसा कहना चाहिये । क्योंकि, अन्यथा सूत्रमें कहा गया स्वस्थान ओप
अन्तर यन नहीं सकता ।

आनतरूपमे लेसर नम्रप्रमेयकयिमानवामी देवोंमें मिथ्यादृष्टि और असपत-
सम्यग्दृष्टियोंका अन्तर स्निने साल होता है ? अपेक्षा अन्तर नहीं है ।
निरन्तर है ॥ ९५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवरी

कुदो ? तेरसभुणद्धिदमिच्छादिद्धि-सम्मादिद्धीणं दिट्ठमग्गाणमण्णगुण गतूण लहु-
मागदाणमतोमुहुत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण वीसं वावीस तेवीसं चउवीसं पणवीसं छव्वीसं सत्ता-
वीसं अट्ठावीसं ऊणत्तीस तीस एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि
॥ ९७ ॥

मिच्छादिद्धिस्स उच्चदे- एक्को दव्वलिगी मणुसो अप्पिददेसेसु उअण्णो । उहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअग्जिय अतरिदो ।
अप्पप्पणो उक्कस्साउट्ठिदीओ अणुपालिय अणमाणे मिच्छत्त गदो (४) । चदुहि अतो-
मुहुत्तेहि ऊणाओ अप्पप्पणो उक्कस्साउट्ठिदीओ मिच्छादिद्धिस्स उक्कस्सतर होदि ।

असजदसम्मादिद्धिस्स उच्चदे- एक्को दव्वलिगी वहुक्कस्साउओ अप्पिददेसेसु
उअण्णो । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदग-
सम्मत्त पडिअणो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अप्पप्पणो उक्कस्साउट्ठिदियमणु-
पालिय सम्मत्त गतूण (५) मदो मणुसो जादो । पचहि अतोमुहुत्तेहि उणउक्कस्स-
द्धिदिमेत्त लद्धमंतर ।

पर्याप्त, आनत प्राणत आदि तेरह भुजनोंमें रहनेवाले दृष्टमार्गी मिथ्यादृष्टि
और असयतसम्यग्दृष्टि देवोंका अथ गुणस्थानको जाकर पुन शीघ्रतासे आनेवाले उन
जीवोंके अतर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तेरह भुजनोंमें रहनेवाले देवोंका उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः देशोन वीस, बाईस
तेईस, चौबीस, पचीस, छवीस, सत्ताईस, अट्ठाईस, उनतीस, तीस और इकतीस
सागरोपम कालप्रमाण होता है ॥ ९७ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक द्रव्यलिङ्गी मनुष्य
विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर अतरको प्राप्त हुआ और अपनी अपनी उत्कृष्ट
आयुस्थितिको अनुपालन कर जीवनके अन्तमें मिथ्यात्वको गया (४) । इन चार
अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उक्त मिथ्यादृष्टि देवोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

अथ असयतसम्यग्दृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- बाधी है देवोंमें उत्कृष्ट
आयुको जिसने, ऐसा एक द्रव्यलिङ्गी साधु विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुस्थितिको
अनुपालन कर सम्यक्त्वको जाकर (५) मरा और मनुष्य हुआ । इस प्रकार इन पांच
अतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर लघ हुआ ।

एवमसंजदमम्मादिद्विस्म मि । णरि पचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणउक्कस्मद्विगीआ अतर होदि ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्मा मिच्छादिद्वीणं सत्थाणोघ ॥ ९४ ॥

कुदो ? णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कम्मेण पलिदोअमस्म अस रेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोअमस्म अमसेअदिभागो, अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण वेहि ममएहि ठहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाओ उक्कस्मद्विदीओ अतरमिच्चएहि भेदाभारा । णरि मग मगुररुस्माद्विदीओ देखणाओ उक्कस्संतगमिदि एत्थ वत्तच्च, सत्थाणोघण्णहाणुअत्तीदो ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवसु मिच्छादिद्वि-असजद सम्मादिद्वीणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ ९५ ॥

सुगममेद सुत्तं ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ९६ ॥

इसी प्रकारसे असपतमम्यगद्वि देवोंका भी अन्तर जानना चाहिये । विशेष बात यह है कि उनके पांच अंतर्मुहूर्तोंमें कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

उक्त स्रगोंके मामादनमम्यगद्वि और सम्यग्मिच्छाद्वि देवोंका अन्तर स्वस्थान ओषके समान है ॥ ९४ ॥

फ्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय, उत्कर्षसे पल्लोपमका असंख्यातया भाग अंतर है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे पल्लोपमका असंख्यातया भाग और अंतर्मुहूर्त अन्तर है, उत्कृष्टसे दो समय और छह अंतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट है । विशेष बात यह है कि अपनी अपनी कुछ कम उत्कृष्ट स्थितिया ही यहा पर उत्कृष्ट अन्तर है ऐसा कहना चाहिये, फ्योंकि, अन्यत्र सूत्रमें कहा गया स्वस्थान ओष अंतर वन नहीं स्रता ।

आनतम्लप्पे लेकर नग्रायेरुभिमानवासी देवोंमें मिच्छाद्वि और असपत सम्यग्द्वियोंका अन्तर नितन काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ९५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अंतर्मुहूर्त है ॥ ९६ ॥

कुदो ! तेरसभुण्णट्ठिदमिच्छादिट्ठि-सम्मादिट्ठीणं दिट्ठमग्गाणमण्णगुण गतूण लहु-
मागदानमतोमुहुत्तंतरुलभा ।

उक्कस्सेण वीसं चावीस तेवीसं चउवीसं पणवीसं छव्वीसं सत्ता-
वीसं अट्ठावीसं ऊणत्तीस तीस एक्कत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि
॥ ९७ ॥

मिच्छादिट्ठिस्म उच्यते- एकको द्रव्यलिङ्गी मणुसो अप्पिददेनेसु उग्रण्णो । छहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तपदो (१) त्रिस्मंतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिग्गजिय अतरिदो ।
अप्पप्पणो उक्कस्माउट्ठिदीओ जणुपालिय अग्रमाणे मिच्छत्त गदो (४) । चट्ठहि अतो-
मुहुत्तेहि ऊणाओ । अप्पप्पणो उक्कस्माउट्ठिदीओ मिच्छादिट्ठिस्म उक्कस्सतर होदि ।

असज्जदमम्मादिट्ठिस्म उच्यते- एको द्रव्यलिङ्गी उक्कस्माउओ अप्पिददेनेसु
उग्रण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तपदो (१) त्रिस्मंतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदग-
सम्मत्त पडिग्गणो (४) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अप्पप्पणो उक्कस्माउट्ठिदियमणु-
पालिय सम्मत्त गतूण (५) मदो मणुसो जादो । पंचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणउक्कस्म-
ट्ठिदिमेत्त लद्धमतर ।

पर्याप्तिक, आनत प्राणत आदि तेरह भुजनोंमें रहनेवाले दृष्टमार्गी मिथ्यादृष्टि
आर असत्यतत्त्वमयदृष्टि देवोंका अथ गुणस्थानको जाकर पुन शीघ्रतासे आनेवाले उन
जीवोंके अतर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त तेरह भुजनोंमें रहनेवाले देवोंका उत्कृष्ट अन्तर क्रमशः देशोन धीम, धार्डिम
तेर्दम, चौवीम, पचीम, छट्ठीम, मत्तार्डिम, अट्ठार्डिम, उनतीम, तीस और इक्कीम
सागरोपम कालप्रमाण होता है ॥ ९७ ॥

इनमेंसे पहले मिथ्यादृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक द्रव्यलिङ्गी मनुष्य
विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अपनी अपनी उत्कृष्ट
आयुस्थितिको अनुपालन कर जीवनके अन्तमें मिथ्यात्वको गया (४) । इन चार
अन्तमुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण उक्त मिथ्यादृष्टि देवोंका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

अथ असत्यतत्त्वमयदृष्टि देवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- बाघों हैं देवोंमें उत्कृष्ट
आयुको जिसने, ऐसा एक द्रव्यलिङ्गी साधु विवक्षित देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) ।
पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी अपनी उत्कृष्ट आयुस्थितिको
अनुपालन कर सम्यक्त्वको जाकर (५) मरा और मनुष्य हुआ । इस प्रकार इन पांच
अतर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर लब्ध हुआ ।

सासणसम्मादिद्वि-सम्माभिच्छादिद्वीणं सत्थाणमोघं ॥ ९८ ॥

कुदो ? णाणजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्मेण पल्लिदोमम्म असखेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण (पल्लिदोमम्मस) अमखेज्जदिभागो, अतो मुहुत्त, उक्कस्मेण वेहि समणहि अतोमुहुत्तेहि उणाओ अप्पप्पणो उमम्मस्माद्विदोओ अतर होदि, ष्देहि भेदामारा ।

अणुदिसादि जाव सच्चद्विसिद्धिविमाणवासियदेवेषु असंजद सम्मादिद्वीणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च (णत्थि) अंतरं, णिरंतर ॥ ९९ ॥

सुगममेद सुत्तं ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतर ॥ १०० ॥

एगगुणत्तादो अणुगुणगमणाभारा ।

एन गदिमागणा समत्ता ।

उक्त आनतादि तेरह भुवनरासी मासादनसम्पगद्वि और सम्यग्मिध्याद्वि देवोंका अन्तर स्वस्थान ओघके समान है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंका अपेक्षा जघन्यसे एक समय, उत्कृष्टसे परवोपमके असंख्यानवें भागप्रमाण अन्तर है, एक जाघकी अपेक्षा जघन्यसे परवोपमका असंख्यातवा भाग और अतमुहूर्त है, उत्कृष्टसे दो समय और अतमुहूर्त कम अपनी अपना उन्मृष्ट स्थितिप्रमाण अन्तर होता है, इस प्रकार ओघके साथ इनका कोई भेद नहीं है ।

अनुदिसादी आदि लेकर सर्वार्थमिद्धि विमानरासी देवोंमें असंयतसम्पगद्वि देवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ९९ ॥

यह सब सुगम है ।

उक्त देवोंमें एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १०० ॥

उक्त अनुदिसा आदि देवोंमें एक ही असंयतगुणस्थान होनेसे अन्य गुणस्थानमें जानेका अभाव है ।

इस प्रकार गतिमार्गणा समान्य हैं ।

इंदियाणुवादेण एइंदियाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १०१ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण खुद्दाभवग्गहणं ॥ १०२ ॥ “

कुदो ? एइदियस्स तसकाइयापज्जत्तएस्स उप्पज्जिय सब्बलहुएण कालेण एणो
एइदियमागदस्स खुद्दाभवग्गहणमेत्तत्तरुलभा ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोटिपुधत्तेणब्भहि-
याणि ॥ १०३ ॥

तं जहा— एइदिओ तमकाइएस्स उव्वज्जिय अतरिदो पुव्वकोटीपुधत्तेणब्भहि-
वेमागरोवमसहस्समेत्त तसट्ठिट्ठिं परिभमिय एइंदिय गदो । लद्धमेइंदियाणमुक्कस्सतर तस-
ट्ठिदिमेत्त । देवमिच्छादिट्ठिमइदिएस्स पवेसिय असंखेज्जपोग्गलपरियट्ठी तत्थ भमाडिम
पच्छा देवेषुप्पाइय देवाणमतर किण्ण परुत्तिद ? ण, णिरुद्धदेवगदिमग्गणाए अभाउप्पमंगा ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादमे एकेन्द्रियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १०१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एक जीवकी अपेक्षा एकेन्द्रियोंका जघन्य अन्तर क्षुद्रमवग्रहणप्रमाण है ॥ १०२ ॥

क्योंकि, एकेन्द्रियके त्रसकायिक अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर सर्वलघु कालसे
पुन एकेन्द्रियपर्यायको प्राप्त हुए जीवके क्षुद्रमवग्रहणप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

एकेन्द्रियोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अतर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो
हजार सागरोपम है ॥ १०३ ॥

जैसे— कोई एक एकेन्द्रिय जीव त्रसकायिनोंमें उत्पन्न होकर अन्तरको प्राप्त हुआ
और पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक दो हजार सागरोपमप्रमित त्रसकाय स्थितिप्रमाण परि-
भ्रमण कर पुन एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार एकेन्द्रियोंका उत्कृष्ट अन्तर त्रस-
स्थितिप्रमाण लब्ध हुआ ।

शुका—देव मिथ्यादृष्टियोंको एकेन्द्रियोंमें प्रवेश करा, असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन
उनमें परिभ्रमण कराके पीछे देवोंमें उत्पन्न कराकर देवोंका अन्तर क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा करनेपर प्ररूपणा की जानेवाली देवगति

१ इंदियावुरादन एवेन्द्रियाणां नानाजवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

२ एगजीवपेक्षया जघन्येन क्षुद्रमवग्रहणम् । स सि १, ८

३ उत्तरेण द्वे सागरोपमसहस्रे पूर्वकोटीपृथक्चैरभ्यधिके । स सि १, ८

सासणसम्मादिद्वि सम्मामिच्छादिद्वीण सत्थाणमोघ ॥ ९८ ॥

कुदो ? णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लोपमस्स असखेज्जदिभागो, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण (पल्लोपमस्स) असखेज्जदिभागो, अतो-
मुदुच्च, उक्कस्सेण पेहि समएहि अतोमुदुचेहि ऊणाओ अप्पप्पणो उक्कस्साद्धिदीओ
अतर होदि, एदेहि भेदाभावा ।

अणुदिसादि जाव सन्वद्वसिद्धिविमाणवासियदेवेसु असंजद
सम्मादिद्वीणमतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च (णत्थि)
अंतरं, णिरतर ॥ ९९ ॥

सुगममेद सुच ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १०० ॥

एगगुणत्तादो अणुगुणगमणाभावा ।

एव गतिमगणा समात्ता ।

उक्त आनतादि तेरह भुवनवासी मासादनसम्पन्नादि और सम्पन्निध्याद्यदि
देवोंका अन्तर स्थान ओघके समान है ॥ ९८ ॥

क्योंकि, ज्ञाना जीवोंका अपेक्षा जघनसे एक समय, उत्कर्षसे पल्लोपमके अस-
प्यातये भागप्रमाण अतर है, एक जानकी अपेक्षा जघनसे पल्लोपमका असप्यातया
भाग और अन्तर्मुह्य है, उत्कर्षसे दो समय और अन्तर्मुह्य कम अपनी अपना उत्कर्ष
स्थितिप्रमाण अतर होता है इस प्रकार ओघके साथ इनका कोई भेद नहीं है ।

अनुदिशने जादि लेकर सर्वावसिद्धि विमाननामी देवोंमें असयतमसम्पन्नादि
देवोंका अन्तर कितने काल होता है ? ज्ञाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निगन्तर है ॥ ९९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त देवोंमें एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर है ॥ १०० ॥

उक्त अनुदिश आदि श्रवणोंमें एक ही असयतगुणस्थान होनेसे अन्य गुणस्थानमें
जानेका अभाव है ।

इस प्रकार गतिमागणा समाप्त हुई ।

त जहा- णय हि निगलिंदिया एंडदियाएइंदिएसु उप्पज्जिय आपलियाए असंखे-
ज्जदिभागमेत्तपोग्गलपरियट्ठे परियट्ठिय पुणो णयसु निगलिंदिएसु उप्पण्णा । लद्धमेत्तर
असंखेज्जपोग्गलपरियट्ठमेत्त ।

पचिदिय-पंचिदियपज्जत्तएसु मिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ११४ ॥

कुदो ? णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त,
उक्कस्सेण ये छागट्ठिसागरोपमाणि जतोमुहुत्तेण ऊणाणि इच्चेएण भेदाभावा ।

**सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ११५ ॥**

दोगुणट्ठाणजीरेसु सव्वेसु अण्णगुण गट्ठेसु दोण्ह गुणट्ठाणाणं एगसमयविरहु-
धलभा ।

उक्कस्सेण पालिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ११६ ॥

कुदो ? सातररासित्तादो । उहुगमतर किण्ण होदि ? सभावा ।

जैसे- नयाँ प्रकारके विकलेन्द्रिय जीव, एकेन्द्रिय या अनेकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर
आवलीके असख्यातवें भागमान पुद्गलपरिवर्तन कालतक परिभ्रमण कर पुन नयाँ
प्रकारके विकलेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए । इस प्रकारसे असख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण उत्कृष्ट
अन्तर प्राप्त हुआ ।

**पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ११४ ॥**

फ्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे
अन्तर्मुहूर्त और उत्कर्षसे अन्तर्मुहूर्त कम दो छयासठ सागरोपमकाल अन्तर है, इस
प्रकार ओघकी अपेक्षा इनमें कोई भेद नहीं है ।

उक्त दोनों प्रकारके पचेन्द्रिय सासादनमभ्यगृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ ११५ ॥

उक्त दोनों गुणस्थानोंके सभी जीवोंके अन्य गुणस्थानको चले जाने पर दोनों
गुणस्थानोंका एक समय विरह पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमके जसरयातवें भागप्रमाण है ॥ ११६ ॥

फ्योंकि, ये दोनों सान्तर राशिया हैं ।

शका—इनका पल्लोपमके असख्यातवें भागसे अधिक अतर फ्यों नहीं होता ।

समाधान—स्वभावसे ही अधिक अन्तर नहीं होता है ।

१ पचेन्द्रियेण मिथ्यादृष्टे सामान्यवत् । स सि १, ८

२ सामादनमभ्यगृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टोनानाजीवोपेक्षया सामाश्वत् । स सि १, ८,

तं जहा-एकको मुहुमेइदिओ पज्जत्तो अपज्जत्तो च चादेरेइदिण्णु उरग्गो ।
तसकाइण्णु चादेरेइदिण्णु च असरेज्जामसेज्जा ओमप्पिणि-उस्सप्पिणीपमाणमगुल्लस
असरेज्जदिभाग परिभमिय पुणो तिसु मुहुमेइदिण्णु आगतूण उरग्गो । लद्धमत
चादेरेइदियतममाइयाणमुक्कस्सट्ठिदी ।

वीइदिय तीइदिय-चदुरिदिय-तस्सेव पज्जत्त अपज्जत्ताणमतं
केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ १११ ॥

सुगमपेद सुत्त ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण खुद्दामवग्गहणं ॥ ११२ ॥

हुदो ? अणप्पिदअपज्जत्तण्णु उप्पज्जिन्य सच्चत्थोमेण कालेण पुणो णत्तु रिग
लिदिण्णु आगतूण उप्पण्णस्स रुद्धाभग्गहणमेत्तत्तुरुत्तमा ।

उक्कस्सेण अणत्तकालमसखेज्जपोग्गलपरियट्ठं ॥ ११३ ॥

जैसे- एक सूक्ष्म एकेन्द्रियपर्याप्तक, अथवा लब्धपर्याप्तक जीव चादर एकेन्द्रि
योंमें उत्पन्न हुआ । यह ब्रह्मायिकोंमें, और चादर एकेन्द्रियोंमें अगुल्लके असंख्यातव्यं भाग
भक्तप्रातासंख्यात उत्सपिणी और अउत्सपिणी कालप्रमाण परिभ्रमण कर पुन उक्त
तीनों प्रकारके सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें आकर उत्पन्न हुआ । इस प्रकार चादर एकेन्द्रियों
और ब्रह्मायिकोंकी उत्पत्ति स्थितिप्रमाण सूक्ष्मविक्रमा उत्कृष्ट अन्तर उपलब्ध हुआ ।

द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और उन्हींके पर्याप्तक तथा लब्धपर्याप्तक
जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निगन्तर
है ॥ १११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त द्वीन्द्रियादि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अथवा अन्तर क्षुद्रभग्गहण-
प्रमाण है ॥ ११२ ॥

क्योंकि, अविवक्षित लब्धपर्याप्तकोंमें उत्पन्न होकर सर्वस्तोक कालसे पुन नौ
प्रकारके पिन्हेन्द्रियोंमें आकर उत्पन्न होनेवाले जीवके क्षुद्रभग्गहणमात्र अन्तरकाल
पाया जाता है ।

उन्हीं पिन्हेन्द्रियोंका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकालात्मक असंख्यात पुद्गलपरिवर्तन
है ॥ ११३ ॥

१ विचन्द्रियाणां नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । ॥ सि १, ८

२ एतन्जीवापेक्षया अप्येन क्षुद्रभग्गहणम् । स सि १, ८

३ उत्तरपान्त कालो-मत्स्याया पुद्गलपरिवर्तना । स सि १, ८

सम्माभिच्छादिद्विस्स उच्चदे- एकको जीरो एइदियद्विद्विमच्छिदो असण्णि-
पचिदिएसु उअण्णो । पचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विमुदो (३)
मअण्णसिय वाणपेतरेसु आउअ वविय (४) विस्समिय (५) देसेसु उअण्णो । छहि
पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विमुदो (८) उअसममम्मत्त पडिअण्णो
(९) सम्माभिच्छत्त गदो (१०) । मिच्छत्त गतूणतरिय सगट्ठिदिं परिभमिय अंतोमुहुत्तान-
सेसे सम्माभिच्छत्त गदो (११) । लद्धमतर । मिच्छत्तं गंतूण (१२) एइदिएसु उअ-
ण्णो । वारमेहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणसगट्ठिदी सम्माभिच्छत्तुकरुस्सतर ।

‘जहा उद्देसो तहा णिद्देसो’ चि णायादो पचिदियद्विदी पुव्वकोडिपुधत्तेणग्ग्माहिय-
सागरोवममहस्समेत्ता, पज्जत्ताण सागरोअमसदपुधत्तमेत्ता चि उत्तव्वं ।

असंजदसम्मादिद्विष्णुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ११९ ॥

सुगममेद सुत्त ।

अत्र सम्यग्मिथ्यादृष्टि पचेन्द्रिय जीवका उत्तृष्ट अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रियकी
स्थितिमें स्थित एक जीव असह्यो पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । मनके विना शेष पाचों
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) भवनवासी या धान-
व्यंतरोंमें आयुको वाधकर (४) विश्राम ले (५) देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे
पर्याप्त हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हो (९)
सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (१०) । पुन मिथ्यात्वको जाकर और अन्तरको प्राप्त हो
अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर आयुके अन्तर्मुहूर्तकाल अवशेष रह जाने पर सम्य-
ग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (११) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् मिथ्यात्वको
जाकर (१२) एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । ऐसे इन गारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम स्वस्थिति
सम्यग्मिथ्यात्वका उत्तृष्ट अन्तर है ।

‘जैसा उद्देश होता है, उसीके अनुसार निर्देश होता है,’ इस न्यायसे पचेन्द्रिय
सामान्यकी स्थिति पूर्वकोटीपृथक्त्वसे अधिक एक हजार सागरोपमप्रमाण होती है,
और पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंकी स्थिति शतपृथक्त्वमागरोपमप्रमाण होती है, ऐसा कहना
चाहिए ।

असंयतसम्यग्दृष्टिमे लेकर अप्रमत्तमयत गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थानर्तों
जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ११९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अतोमुहुत्तं ॥ ११७ ॥

सुगममेदं सुत्तं, बहुसो उत्तत्तादो ।

उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणव्भहियाणि
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ ११८ ॥

मामणस्म तां उच्यते— एस्को अणत्तकालममरेज्जलोगमेत्तं या एड्ढिएसु द्विगे
असाण्णिपच्चिदिएसु आमत्तूण उगग्गणो । पंचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२)
विसुद्धो (३) भरणरामिय-वाणरंतरेसु आउअ बधिय (४) विस्मतो (५) कमेण काल
रुत्तिय भरणरामिय-वाणरंतरदेसेसुप्पण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) विस्मतो (७)
विसुद्धो (८) उगममममत्त पडिग्गणो (९) सामणं गदो । आदी दिट्ठा । मिच्छत्त
गत्तणंतरिय सगट्ठिदं परियट्ठियामाणे सासणं गदो । लद्धमत्तर । तदो धारणाओगमाव
लियाए असरेज्जदिभागमन्डिय काल करिय धारणाएसु उगग्गणो जागलियाए असरे
ज्जदिभागेण णरहि अतोमुहुत्तेहि ऊभिया मगट्ठिदी अतर ।

उक्त जीर्णोका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्लोपमके अस्-
रयातरे भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ११७ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, घटत वार कहा गया है ।

उक्त दोनों गुणस्थानरती पचेन्द्रियाका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्त्वमे अधिक
एक हजार सागरोपम काल है, तथा पचेन्द्रिय पर्याप्तकोका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपम
शतपृथक्त्व है ॥ ११८ ॥

इनमेंसे पहले सासादनसम्यग्दृष्टि का अन्तर कहते हैं— अनन्तकाल या असंख्यात
लोकमात्र काल तक एकेन्द्रियोंमें रहा हुआ कोई एक जीव अस्सी पचेन्द्रियोंमें आकर
उत्पन्न हुआ । पार्श्वी पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३)
भरणरामी या धान-यत्तरोंमें आयुको राधकर (४) विधाम ले (५) प्रमसे भरण कर
विश्राम ले (६) विशुद्ध हो (७) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (८) । पुन सासादन
गुणस्थानको प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस गुणस्थानका प्रारम्भ दृष्ट हुआ । पश्चात् मिथ्या
त्वको जानर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिवर्तित होकर आयुके अन्तमें
सासादन गुणस्थानको गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् स्थावरकायके
योग्य आगल्लि असंख्यातमें भरणप्रमाण काल तक उनमें रह कर, भरण करके स्थावर
कायिकोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आवलीके असंख्यातमें भाग और नौ अन्तर्मुहूर्तोंसे
कम अपनी स्थिति ही इनका उत्कृष्ट अन्तर है ।

१ पञ्चजीव प्रति जघनेन पल्लोपमासख्येयमागो-तपुहूर्तश्च । स ति १, ८

२ उक्तद्वेय माणोपमसद्वय पूर्वकोटीपृथक्त्वव्यभिक्त्वं । स ति १, ८

ऊणिया सगड्ढिदी लद्धमुक्कस्सतर । मागरोउममदपुवत्तं देसूणमिदि वत्तव्वं ? ण, पंचि-
दियपज्जत्तड्ढिदीए देसूणाए णि मागरोउममदपुवत्तत्तादो । तं पि ऊध णव्वदे ? सुत्ते
देसूणउयणाभारादो । मण्णिमम्मूच्छिमपंचिदिणमुप्पाइय सम्मत्त गेण्हानिय मिच्छत्तेण
किण्णातरादिदो ? ण, तत्थ पढममम्मत्तगहणाभागा । वेदगसम्मत्त किण्ण पडिवज्जादिदो ?
ण, एडिणसु दीहद्धमगड्ढिदस्स उव्वेच्छिदमम्मत्त सम्माभिच्छत्तस्स तदुप्पायणे संभवाभागा ।

संजदामंजदस्म बुच्चदे—एक्को एंडियडिदिमच्छिदो सण्णिपंचिदियपज्जत्तएसु
उयण्णो तिण्णिपक्ख-तिण्णिदिउस-अंतोमुहुत्तेहि (१) पढममम्मत्त संजमासजमं च
जुगं पडिउण्णो (२) छागलियाओ पढममम्मत्तद्वाए अत्थि चि आसाणं गतूणंतदिदो ।
मिच्छत्तं गतूण सगड्ढिदिं परिभमिय अपण्ठिमे पंचिदियभमे सम्मत्त धेत्तूण दसणमोहणीय

उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

शंका—पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंका जो सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर
यताया है, उसमें 'देशोन' ऐसा पद और कहना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पचेन्द्रिय पर्याप्तकी देशोन स्थिति भी सागरोपम
शतपृथक्त्वप्रमाण ही होती है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, सूत्रमें 'देशोन' इस वचनका अभाव है ।

शंका—सही सम्मूच्छिम पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न कराकर और सम्यक्त्वको ग्रहण
कराकर मिथ्यात्वके द्वारा अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सही सम्मूच्छिम पचेन्द्रियोंमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वके
ग्रहण करनेका अभाव है ।

शंका—वेदकसम्यक्त्वको क्यों नहीं प्राप्त कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पचेन्द्रियोंमें दीर्घ काल तक रहनेवाले और उठेलना
की है सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिनी जिसने, ऐसे जीवके वेदकसम्यक्त्वका
उत्पन्न कराना समय नहीं है ।

सयतासयतना उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं—एकेन्द्रियकी स्थितिको प्राप्त एक
जीव, सही पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । तीन पक्ष, तीन दिक्क और अन्त
मुहत्तंसे (१) प्रथमोपशमसम्यक्त्वको तथा सयतासयतनको युगपत् प्राप्त हुआ (२) । प्रथ
मापशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको प्राप्त
कर अन्तरको प्राप्त हुआ । मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिश्रमण करके
अन्तिम पचेन्द्रिय भयम सम्यक्त्वको ग्रहण कर दर्शनमोहनीयका क्षय कर और ससारके

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १२० ॥

कुदो ? एदेसिमण्णगुण गत्तूण सच्चदहरेण कालेण पडिणियत्तिय अप्पप्पणा गुण मागदाणमेतोमुहुत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्भियाणि,
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १२१ ॥

असजदसम्मादिद्विस्म उच्चदे- एको एइदियद्विदिमच्छिदो असण्णिपचिदियसम्भु
च्छिमपज्जत्तएस्स उअण्णो । पचहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुदो
(३) भवणरासिय-वाणत्तेरदेसेसु आउअ वधिय (४) विस्समिय (५) मदो देवेषु
उअण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विसुदो (८) उवसममम्मत्त
पडियण्णो (९) । उअसमसम्मत्तद्वाए छागलियाओ अत्थि ति आसाण गदो अत्तिदो
मिच्छत्त गत्तूण सगद्धिदिं परिममिय अत्ते उअसमसम्मत्त पडियण्णो (१०) । पुणो मासण गत्ते
आगलियाए असरोज्जदिभाग कालमच्छिदूण थाअरकाएस्सु उअण्णो । दसहि अतोमुहुत्तेहि

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १२० ॥

पर्याप्त, इन असयतादि चार गुणस्थानयतीं जीवोंका अन्य गुणस्थानको जाकर
सयलपु कालसे लौटकर अपने अपने गुणस्थानको आये हुआके अन्तर्मुहूर्तमात्र अन्तर
पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटीपृथक्त्वासे अधिक सहस्र सागरोपम तथा
शतपृथक् सागरोपम है ॥ १२१ ॥

इनमेंसे पहले असयतसम्यग्दृष्टिका अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रिय भवस्थितिको
प्राप्त कोर एक जीव, असङ्गी पचेन्द्रिय सम्पूर्णितम पर्याप्तियोंमें उत्पन्न हुआ । पावों पर्या
प्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) भजनघासी या घानव्य तर देवोंमें
भायुको बाधर (४) विश्राम ले (५) मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे
पर्याप्त हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) ।
उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवालिआ अवशेष रहने पर सासादन गुणस्थानको गया
और अन्तरको प्राप्त हुआ । पछे मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें
उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१०) । पुन सासादन गुणस्थानको गया और वहापर
भायुकी असम्यगानव भागप्रमाण काल तक रहकर स्थावरकायिनीमें उत्पन्न हुआ । इस
प्रकार इन दस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाणकाल उक्त असयतसम्यग्दृष्टिका

१ एगजीवं शनि जघनेनाउरुहत्त । स वि १, ८

२ उत्तरेण सागरोपमसहस्र पूर्वकोटीपृथक्त्वोपपिक्कम् । स वि १, ८.

अप्पमत्तस्म उच्चदे- एको एइदियट्टिदिमन्निउदो मणुसेसु उग्रण्णो गम्भादिअट्ट-
वस्माणमुगिर उग्रमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगं पडिण्णो । आदो दिट्ठा (१) । अत-
रिदो अपच्छिमे पंचिदियभेय मणुस्सेसु उग्रण्णो । टंमणमोहणीय खणिय अतोमुहुत्तायसे
ससोर त्रिसुद्धो अप्पमत्तो जादो (२) । तदो पमत्तो (३) अप्पमत्तो (४) । उग्रि छ
अतोमुहुत्ता । एमट्टयस्मेहि दमहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया पंचिदियट्टिदी उम्हस्सतर ।

चटुण्हमुवसामगाणं पाणाजीवं पडि ओघं ॥ १२२ ॥

हुदो ? जहण्णेण एगममओ, उम्हस्सेण सासपुधत्तमिन्चेएहि ओगादो भेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ १२३ ॥

तिण्हमुवसामगाणमुगिर चट्टिय हेट्ठा ओडिण्णे जहण्णमतर होदि । उग्रमत्तक्रमायस्स
हेट्ठा ओदरिय पुणो मवजहण्णेण कालेण उग्रमत्तक्रमायत्त पडिण्णे जहण्णमतर होदि ।

**उक्कस्सेण सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणवमहियाणि,
सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १२४ ॥**

अग्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रियकी स्थितिमें स्थित एक जीव
मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भादि जाट वयोंमें ऊपर उपशमसम्यक्त्व तथा अग्रमत्तगुण-
स्थानको युगपत् प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस गुणज्ञानका आरम्भ दिखाई दिया । पश्चात्
अंतरको प्राप्त हो अन्तिम पंचेन्द्रिय भवमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । दशनमोहनीयका
क्षय कर ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहने पर त्रिशुद्ध हो अग्रमत्तसयत हुआ (२) । पश्चात्
प्रमत्तसयत (३) अग्रमत्तसयत (४) हुआ । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त मिलाने पर आठ
वर्ष और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पंचेन्द्रियकी स्थिति अग्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

चारों उपशमकोंका अन्तर नाना जीवोंकी अपेक्षा जोधके समान है ॥ १२२ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे वर्षपृथक्त्व,
इस प्रकार ओघसे इनमें कोई भेद नहीं है ।

चारों उपशमकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १२३ ॥

अपूर्वकरणसयत आदि तीनों उपशमकोंका ऊपर चढकर नीचे उतरनेपर
जघन्य अन्तर होता है । किन्तु उपशान्तरुपायका नीचे उतरकर पुन सर्वजघन्य कालसे
उपशान्तरुपायको प्राप्त होनेपर जघन्य अन्तर होना है ।

चारों उपशमकोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वसे अधिक सागरोपमसहस्र
और सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ १२४ ॥

१ चटुण्णमुपशमगां नानाजीवापेक्षया मामावकम् । स वि १, ८

२ एगजीवं प्रति जघयेनातर्मुहूर्तं । स वि १, ८

३ उत्कर्षेण सागरोपमसहस्र पूर्वकोटिपृथक्त्वमित्यविस्म । स वि १, ८.

सुरिय अतोमुहुत्तावसेमे मयारे मजमामजम च पटिणणो (३) अप्पमत्तो (४)। पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६)। उरि छ मुहुत्ता। तिणिपमसेहि तिणिण्डियसेहि यारमत्ता मुहुत्तेहि य ऊणिया मगद्धिदी लद्ध मजदामनदानमुनरुस्मंतर। एड्डिएसु निण उप्पात्ता। लद्धमतरं करिय उरि मिज्झणसालादो मिच्छच्च गतूण एड्डिएसु आउअ वपिय त पुप्पज्जणसालो मसेज्जगुणो चि एड्डिएसु ण उप्पाट्टिदो। उरिमाणं पि एरमेर कारण वत्तच्च।

पमत्तस्म पुच्छे—एकको एड्डियड्डिदिमन्डिदो मणुसेसु उररणो। गम्मादिअद्ध वस्मेहि उरयममम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगउ पडिणणो (१) पमत्तो जादो (२)। हेड्डा पडिण्णतरिणे सगद्धिदि परिभमिय अपन्डिमे भये मणुमो जादो। दसणमोहणीय सूरिय अतोमुहुत्तावसेमे समारे अप्पमत्तो हेड्डा पमत्तो जादो (३)। लद्धमतर। भूओ अप्प मत्तो (४) उरि छ अतोमुहुत्ता। अड्डहि उस्मेहि दमहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया मग द्विती पमत्तस्सुक्कस्मंतर लद्ध।

अतमुहुत्तप्रमाण अत्रोप रहने पर मयमामयमरो प्राप्त हुआ (३)। पश्चात् अप्रमत्त सयत (४) प्रमत्तसयत (५) अप्रमत्तसयत (६) हुआ। इनमें अपूषकरणविस्मय भी ऊपर छह मुहूर्तों को मिलाकर तीन पक्ष, तान त्रियस और चारह अतमुहूर्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाण सयतासयतोंका उत्पद्य अन्तर है।

शस्त्री—उक्त जीवों के ऐन्द्रियोंमें क्यों नहा उत्पन्न कराया ?

समाधान—सयतासयतका जन्म लब्ध होनेके पश्चात् ऊपर सिद्ध होने तकके कालमें मिथ्यात्वसे जाकर ऐन्द्रियोंमें आयुसे वाधकर उनमें उत्पन्न होनेका काल सज्यातगुणा है, इसलिये ऐन्द्रियोंमें नहा उत्पन्न कराया। इसी प्रकार प्रमत्तादि उपरितन गुणरूपानर्ती जात्रोंके भी यहा कारण रहना चाहिए।

प्रमत्तसयतका उत्पद्य - तब कहते हैं—ऐन्द्रियस्थितिको प्राप्त एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भादि आठ वर्षोंमें उपशमस्मयन और अप्रमत्तगुणस्थानसे एक साथ प्राप्त हुआ (१)। पश्चात् प्रमत्तसयत हुआ (२)। पीछे नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हा अपनी स्थितिप्रमाण परिधमण कर अन्तिम भयमें मनुष्य हुआ। दर्शनमोहनायका सपर अतमुहुत्तका सत्कारके अवशिष्ट रहने पर अप्रमत्तसयत होकर पुन प्रमत्तसयत हुआ (३)। इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ। पुन अप्रमत्तसयत (४) हुआ। इनमें ऊपरके छह अतमुहुत्त मिलाकर आठ पक्ष और दश अतमुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति प्रमत्तसयतका उत्पद्य अन्तर प्राप्त होता है।

चटुण्हं खवा अजोगिकेवली ओघं ॥ १२५ ॥

णाणाजीरं पडुच्च जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्सेण छम्मासा; एगजीरं पडुच्च
णत्थि अतरं, णिरतरमिन्चेएहि ओघादो भेदाभावा ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ १२६ ॥

कुदो ? णाणेगजीरं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरमिन्चेदेण ओघादो भेदाभावा ।

पंचिदियअपज्जत्ताणं वेइंदियअपज्जत्ताणं भगो ॥ १२७ ॥

णाणाजीरं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं, एगजीरं पडुच्च जहण्णेण सुद्धाभग्गहण,
उक्कस्सेण अणत्ताकालममरेज्जपेगगलपरियट्टमिच्चेएहि पेइंदियअपज्जत्तेहिंतो पंचिदिय-
अपज्जत्ताणं भेदाभावा ।

एदमिदियं पडुच्च अतरं ॥ १२८ ॥

गुण पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १२९ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एदमिदियमग्गणा समत्ता ।

चारों क्षपक और जयोगिकेनलीका अन्तर ओघके समान है ॥ १२५ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय ओर उत्कर्षसे छह मास अन्तर है,
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, इस प्रकार ओघप्ररूपणासे कोई
भेद नहीं है ।

संयोगिकेनलीका अन्तर ओघके समान है ॥ १२६ ॥

क्योंकि, नाना जीव ओर एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, इस
प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंका अन्तर द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके समान है ॥ १२७ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे
क्षुद्रमद्यग्रहणप्रमाण ओर उत्कर्षसे अनन्तकालात्मक असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण अन्तर
होता है, इस प्रकार द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंसे पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तकोंके अन्तरमें
कोई भेद नहीं है ।

यह गतिकी अपेक्षा अन्तर कहा है ॥ १२८ ॥

गुणस्थानकी अपेक्षा दोनों ही प्रकारसे अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १२९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार इन्द्रियमार्गणा समाप्त हुई ।

१ शेषाणां सामा योक्तम् । स ति १, ८

२ एदमिदिय प्रत्यतरमुत्तम् । स ति १, ८

३ गुण प्रत्युभयतोऽपि नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

एकको एइंदियडिदिमच्छिदो मणुसेसु उतरण्णो । गमादिअट्टवस्सेहि निरु
 उवसमसम्मत्तमपमत्तगुण च जुगउ पडिउण्णो अतोमुहुत्तेण (१) वेदगमम्मत्त पढा। ओ
 अतोमुहुत्तेण (२) अणत्ताणुअर्धी विसनोजिय (३) मिस्ममिय (४) दमणमाहणीअपुअण
 (५) पमत्तापमत्तपरात्तसहस्म कादण (६) उरममसेदीपाओममअपमत्तो नाता (७)।
 अपुअणो (८) अणियड्डी (९) मुहुमो (१०) उरसतो (११) मुहुमो (१२) अणियड्डी (१३)
 अपुअणो (१४)। हेहा ओदग्दिण पंचिदियड्दिदि परिभमिय पच्छिमे भरे मणुमेसु उतरणे।
 दमणमोहणीय रात्रिय अतोमुहुत्तागमेमे ससारे मिसुद्धो अप्पमत्तो जादो। पुण पमत्त
 पमत्तपरात्तसहस्म कादण उरममसेदीपाओममअपमत्तो हेदण अपुअणउरमपण
 जादो। लद्धमत्त (१५)। तदो अणियड्डी (१६) मुहुमो (१७) उरमत्तरमाओ (१८)
 मुहुमो (१९) अणियड्डी (२०) अपुअणो (२१) अप्पमनो (२२) पमत्ता (२३)
 अप्पमत्तो (२४)। उररि छ अतोमुहुत्ता। एअ अट्टहि वस्सेहि तसहि अतोमुहुत्ता
 उणिया सगड्ढिदी अपुअणकस्संतर। एअ चेअ तिण्डमुवसामगाण वत्तअ। एअरि अट्टावीअ
 छन्दीस चदुनीसअतोमुहुत्तेहि अन्महियअट्टअस्सणा सगड्ढिदी अतर होदि।

पंचेन्द्रिय स्थितिमें स्थित एक जीव, मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। गमादि आठ वर्षोंमें
 निशुद्ध हो उपशमनस्यक्त्यको ओर अग्रमत्तगुणस्थानको युगवत् प्राप्त होता हुआ अन्त
 मुहुत्तसे (१) वेदकसम्यक्त्यको प्राप्त हुआ। पश्चात् अन्तर्मुहुत्तसे (२) अन्त ताउरणी
 कषायचतुष्कका मिसयोजन करने (३) विश्राम ले (४) दर्शनमोहनीयका उपशम कर (५)
 प्रमत्त अग्रमत्तगुणस्थानसम्यग्धी परायर्तन सहस्रोंका करके (६) उपशमश्रेणीके प्राप्य
 अग्रमत्तसयत हुआ (७)। पश्चात् अपूर्वकरणसयत (८) अनिवृत्तिकरणसयत (९) सूक्ष्म
 साम्परायसयत (१०) उपशान्तकषाय (११) सूक्ष्मसाम्पराय (१२) अनिवृत्तिरण
 सयत (१३) अपूर्वकरणसयत (१४) हो, नीचे उतरकर पंचेन्द्रियकी स्थितिप्रमाण परी
 भ्रमणकर अन्तिम भयमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् दर्शनमोहनीयका क्षयकर
 मसारके अन्तर्मुहुत्तमात्र अवशेष रहनेपर निशुद्ध हो अग्रमत्तसयत हुआ। पुन प्रमत्त
 अग्रमत्तपरात्तन सहस्रोंको करके उपशमश्रेणीके योग्य अग्रमत्तसयत होकर अपूर्वकरण
 उपशमक हुआ। इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (१५)। पश्चात् अनिवृत्तिकरणसयत (१६)
 सूक्ष्मसाम्परायसयत (१७) उपशान्तरूपाय (१८) सूक्ष्मसाम्परायसयत (१९) अनिवृत्ति
 करणसयत (२०) अपूर्वकरणसयत (२१) अग्रमत्तसयत (२२) प्रमत्तसयत (२३)
 और अग्रमत्तसयत हुआ (२४)। इसके ऊपर क्षयकश्रेणीसम्यग्धी उह अन्तर्मुहुत्त
 होते हैं। इस प्रकार तीस अन्तर्मुहुत्त और आठ वर्षोंमें कम पंचेन्द्रियस्थितिप्रमाण
 अपूर्वकरणका उत्पन्न अन्तर होना है। इसी प्रकारसे शेष तीनों उपशमकोंका भी अन्तर
 करना चाहिये। विशेष यात यह है कि उनके क्रमशः अट्टाहस छन्दीस और चौनीस
 अन्तर्मुहुत्तोंसे अधिक आठ वर्ष कम पंचेन्द्रिय स्थितिप्रमाण अन्तर होता है।

एगजीवं पडुच्च जहणणेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४४ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भंहि-
याणि, वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ १४५ ॥

असंजदमम्मादिद्विस्स उच्चदे- एको एइदियद्विदिमच्छिदो असण्णिपचिदियसम्भु-
च्छिउमपज्जत्तएसु उववण्णो । पचहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो
(३) भण्णससिय-याणंतेरेसेसु आउअ वधिय (४) विस्मतो (५) कालं करिय
भण्णससिएसु याणंतेरेसु वा देसेसु उववण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६)
विस्मतो (७) विसुद्धो (८) उवमसम्मत्त पडिवण्णो (९) । उवसमसम्मत्तद्वाए
छागलियाससेसाए आसाण गदो । अतरिदो मिच्छत्तं गतूण सगट्ठिदि परिभमिय अंते
उवमसम्मत्त पडिवण्णो (१०) । लद्धमत्तर । पुणो मासण गदो आगलियाए असंखे-
ज्जादिभागं कालमच्छिदूण एइदिएसु उववण्णो । ढसहि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया तमत्तस-
पज्जत्तद्विदी उक्कस्संतर ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त असंयतादि चारों गुणस्थानर्तों त्रस और त्रसपर्याप्त जीवोंका उत्कृष्ट
अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वमे अधिक दो महत्तमागरोपम और कुछ कम दो महत्त सागरोपम
है ॥ १४५ ॥

इनमेंसे पहले त्रस और त्रसपर्याप्तक असंयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर कहते
हैं- एकेन्द्रियस्थितिको प्राप्त कोई एक जीव असंखी पचेन्द्रिय सम्भूच्छिउम पर्याप्तक
जीवोंमें उत्पन्न हुआ । पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध
हो (३) भवनयासी या धानव्यन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विधाम ले (५)
काल कर भवनयामी या धानव्यन्तर देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त
हो (६) विधाम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) ।
उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अशेष रहने पर साम्मादनगुणस्थानको गया
और अन्तरको प्राप्त हो मिथ्यात्तमें जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें
उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१०) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन सासादन-
गुणस्थानको जाकर यहा आवलीके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहकर एकेन्द्रियोंमें
उत्पन्न हुआ । इस प्रकार इन दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम त्रस और त्रसपर्याप्तककी उत्कृष्ट
स्थिति उन्हींके असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

१ उक्कस्से वे सागरोपमसहस्से पूर्वकोटिपृथक्त्वमेधिके । त मि १, ८.

थावरकाएसु उपपण्णो । आपलियाए अमखेज्जदिभागेण णमहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया तसकाइयत्तसकाइयपज्जनचट्ठिदी अतर होदि ।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्स उच्चदे- एक्को एइदियट्ठिदिमच्छिय जीवो अमणि पचिदिएसु उपपण्णो । पचहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) निमुद्धो (३) भरणवासिय वाणपेतदेवेसु आउअ वधिय (४) निस्समिय (५) पुच्चुत्तदेनेसु उववण्णो । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (६) निस्सतो (७) निमुद्धो (८) उवसमसम्मत्त पडिवण्णो (९) । सम्मामिच्छत्त गदो (१०) । मिच्छत्त गतूणंतरिदो सगट्ठिदि परिममिय अतोमुहुत्त ससाए तमत्तमपज्जचट्ठिदीए सम्मामिच्छत्त गदो । लद्धमतर (११) । मिच्छत्त गणूण (१२) एइदिएसु उपपण्णो । वारमअतोमुहुत्तेहि ऊणिया तस तसपज्जनचट्ठिदी उक्क स्सतर होदि ।

असजदसम्मादिट्ठिणहुडि जाव अप्पमत्तसजदाणमतर केवचि कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतर ॥ १४३ ॥
सुगममेद ।

तक रह कर मरा और स्थावरकायिकोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार आधर्माके असत्त्वात्वे भाग और नी अन्तर्मुहूर्तोंसे कम प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तकोंकी स्थितिप्रमाण अन्तर होता है ।

प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तक सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अन्तर कहते हैं- एकेन्द्रिय जीवोंकी स्थितिमें प्राप्त कोई एक जीव अससी एवेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । पाव पर्याप्तियोंसे पयाप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) भयनवासी या घानव्यन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विश्राम ले (५) पूर्वोक्त देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विश्राम ले (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (९) । पश्चात् सम्यग्मिथ्यात्वको गया (१०) । पुन मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तकोंकी स्थितिमें अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जानेपर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (११) । पीछे मिथ्यात्वको जाकर (१२) एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार इन बारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम प्रस और प्रसपर्याप्तकोंकी स्थिति ही उक्त दोनों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका उत्पन्न अन्तर होता है ।

अमपतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानसे लेकर अप्रमत्तसयत तक प्रसकायिक और प्रसकायिकपर्याप्तक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १४३ ॥
यह सूत्र सुगम है ।

सत्रिय अप्पमत्तो होदण पमत्तो जादो (३) लद्धमंतरं । भूओ अप्पमत्तो (४) । उरि छ अतोमुहुत्ता । एवं अट्टहि वस्सेहि दसहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणा तस-तमपज्जत्तट्ठिदी उक्कस्सतर ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकको थापरट्ठिदिमच्छिदो मणुमेसु उरगणो गन्मादिअट्ट-वस्सेण उरसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगग पडिगणो (१) । अंतरिदो सगट्ठिदिं परिभ-मिय पच्छिमे भये मणुसो जादो । सम्मत्त पडिगणो दसणमोहणीयं खत्रिय अतोमुहुत्ता-वसेसे संसारे विमुद्धो अप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । तदो पमत्तो (३) अप्पमत्तो (४) । उरि छ अतोमुहुत्ता । एवमट्टहि वस्सेहि दसहि अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया तस-तसपज्जत्तट्ठिदी उक्कस्सतर ।

चटुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ १४६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १४७ ॥

क्षय करके अग्रमत्तसयत हो प्रमत्तसयत हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । पुन अग्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्त और आठ वर्षोंसे कम ब्रस और ब्रसपर्याप्तकाली उत्कृष्ट स्थिति ही उन प्रमत्त-सयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

ब्रसकायिक और ब्रसकायिकपर्याप्त अग्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- स्थावरकायकी स्थितिमें विद्यमान कोई एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भको आदि ले आठ वर्षसे उपशमसम्यक्त्व और अग्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिध्रमणकर अन्तिम भयमें मनुष्य हुआ । सम्यक्त्वको प्राप्त कर पुन दर्शनमोहनीयका क्षय कर संसारके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जानेपर विमुक्त हो अग्रमत्तसयत हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । तत्पश्चात् प्रमत्तसयत (३) और अग्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणी-सम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम ब्रस और ब्रसपर्याप्तकाली उत्कृष्ट स्थिति ही उन अग्रमत्तसयत जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर है ।

त्रसकायिक और त्रसकायिकपर्याप्त चारों उपशमकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

चारों उपशमकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १४७ ॥

१ चटुर्णामुपशमकानां नानाजीवपेक्षया सामान्यवत् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८.

संज्ञासजदस्त उच्चदे- एकको एइदियद्विदिमच्छिदो सणिपंचिदियपज्जत्तएणु
उपपण्णो । असणिमम्मच्छिमपज्जत्तएणु किण्ण उप्पादिदो ? ण, तत्थ मज्जामानम
ग्गहणाभावा । तिणिपक्ख-तिणिदिनसेहि अंतोमुट्ठेण य पढममम्मत्त सज्जामानम
च जुगुर पडिण्णो (१) । पढमसम्मत्तद्वाए छानलियाओ अत्थि त्ति सासण गदो ।
अंतरिदो मिच्छत्त गत्तूण सगट्ठिदिं परिममिय पच्छिमे तमभेये सम्मत्तं घेत्तूण दत्तण
मोहणीय खमिय अतोमुट्ठत्तासेसे ससार मज्जमासजम पडिण्णो (३) । लद्धमत्त ।
अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) । उगुरि रणगसेट्ठिदि छ मुट्ठो ।
एव वारसजतोमुट्ठत्ताहिय-जेट्ठतालीसदिनसेहि ऊणिया तम-तमपज्जत्तद्विदी सज्जा
सज्जदुक्कम्मत्तर ।

पमत्तस्स उच्चदे- एकको एइदियद्विदिमच्छिदो मणुमेसु उपपण्णो । गम्मादिअद्द
वस्सेण उवममसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगुर पडिण्णो (१) पमत्तो (२) हेट्ठा परिवदिप
अतरिदो । सगट्ठिदिं परिममिय अपच्छिमे भेये सम्मादिट्ठो मणुमो जादो । दमणमोहणीय

ब्रह्म और ब्रह्मपर्याप्तक सयतासयतका उत्पद्य अन्तर कहते हैं- एवेन्द्रिय
जीवोंकी स्थितिमें स्थित कोई एक जीव मणी एवेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ ।

श्रुती-उक्त जीवको असङ्गी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया ?

समाधान-नहीं, क्योंकि, उनमें सयमासयमके ग्रहण करनेका अभाव है ।

पुन उत्पन्न होनेके पश्चात् तीन पक्ष, तीन दिवस और अतमुहूर्तसे प्रथमो
पशमसम्यक्त्य और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । प्रथमोपशमसम्यक्त्यके
कालमें छह आयुषिया शेष रहने पर सासादनगुणस्थानको गया और अन्तरको प्राप्त हो
मिथ्यात्वमें जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अन्तिम ब्रह्मभवमें सम्यक्त्यको
ग्रहणकर और दशममोहनीयका क्षय कर अतमुहूर्तप्रमाण ससारके अघटिष्ट रहने पर
सयमासयमको प्राप्त हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् अप्रमत्तसयत (४)
प्रमत्तसयत (५) और अप्रमत्तसयत (६) हुआ । इनमें क्षपणधेणीसम्यन्धी ऊपरके छह
अन्तमुहूर्त और मिलये । इस प्रकार गारह अतमुहूर्तोंस अधिक अष्टतालीस दिनोंसे कम
ब्रह्म और ब्रह्मपर्याप्तकोंकी उत्पद्य स्थिति ही उन सयतासयत जीवोंका उत्पद्य अन्तर है ।

प्रसन्नचित्त और प्रसन्नचित्तपर्याप्त प्रमत्तसयतका उत्पद्य अन्तर कहते हैं-
एवेन्द्रिय स्थितिको प्राप्त कोई एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और गर्भको आदि ले
आठ वर्षके पश्चात् उपशमसम्यक्त्य और अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) ।
पश्चात् प्रमत्तसयत हो (२) नीचे गिर कर अन्तरको प्राप्त हुआ । अपनी उत्पद्य स्थिति
प्रमाण परिभ्रमण करके अन्तिम भवमें सम्यग्दृष्टि मनुष्य हुआ । पुन दर्शनमोहनीयका

एदं कायं पडुच्च अंतरं । गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि अंतरं,
णिरंतरं ॥ १५२ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एउ कायमगणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण पंचमणजोगि-पचवचिजोगीसु कायजोगि-ओरा-
लियकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-पमत्त-
अप्पमत्तसंजद-सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेग-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १५३ ॥

कुदो ? अप्पिदंजोगसहिदअप्पिदगुणट्ठाणाण सव्वकाल सभरादो । कधमेग-
जीमामेज्ज अतराभासो ? ण ताउ जोगतरगमणेणतर सभरादि, मग्गणाए णिणामापत्तीदो ।
ण च अण्णगुणगमणेण अतर सभरादि, गुणतर गट्ठस्स जीमस्स जोगतरगमणेण णिणा
पुणो आगमणाभासादो । तम्हा एगजीमस्स णि णत्थि चेउ अतरं ।

यह अन्तर कायकी अपेक्षा कहा है । गुणस्थानकी अपेक्षा दोनों ही प्रकारसे
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई ।

योगमार्गणाके अनुवादमे पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और
औदारिककाययोगियोंमें, मिथ्यादृष्टि, जसयतमभ्यगृष्टि, सयतासंयत, प्रमत्तसयत, अप्र-
मत्तसयत और सयोगिकेप्रलियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीमोंकी और
एक जीमकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५३ ॥

क्योंकि, सूत्रोक्त विवक्षित योगोंमें सहित विवक्षित गुणस्थान सर्वकाल सभर हैं ।

शंका—एक जीमकी अपेक्षा अन्तरका अभाव कैसे कहा ?

समाधान—सूत्रोक्त गुणस्थानोंमें न तो अन्य योगमें गमनद्वारा अन्तर सम्भव है,
क्योंकि, ऐसा मानने पर विवक्षित मार्गणाके विनाशकी आपत्ति आती है । ओर न अन्य
गुणस्थानमें जानेसे भी अन्तर सम्भव है, क्योंकि, दूसरे गुणस्थानको गये हुए जीवके
अन्य योगको प्राप्त हुए बिना पुन आगमनका अभाव है । इसलिये सूत्रमें बताया गये
जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं होता है ।

१ योगानुवादेन कायवाद्धानसयोगिनां मिथ्यादृष्टयसयतसम्यग्दृष्टिसयतामयतप्रमत्ताप्रमत्तयोगिनेवृत्तिनां
नानाजीवपेक्षया एकजीवपेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८ २ प्रतिशु 'अपगद' इति पाठ ।

सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १५४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ १५५ ॥

हुदो ? दोण्ह रासीण सातरत्तादो । सातरत्ते नि अहियमंतर किण्ण होदि ?
महारत्ते ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं ॥ १५६ ॥

हुदो ? गुण-जोगतरगमणेहि तदसभ्भा ।

चदुण्हमुवसामगाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघं ॥ १५७ ॥

हुदो ? जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण वासपुधत्तमिच्चेएहि ओघादो भेदामाना ।

उक्त योगशाले भासादनसम्यग्दृष्टि और सम्पग्मिध्यादृष्टियोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १५४ ॥

यह स्व सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमके असर-पातयें भाग है ॥ १५५ ॥

क्योंकि, ये दोनों ही राशिया सातर हैं ।

शङ्का—राशियोंके सातर रहने पर भी अधिक अन्तर क्यों नहीं होता है ?

समाधान—स्वभावसे ही अधिक अन्तर नहीं होता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५६ ॥

क्योंकि, अन्य गुणस्थानों और अन्य योगोंमें गमनद्वारा उनका अन्तर असम्भव है ।

उक्त योगशाले चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १५७ ॥

क्योंकि, जघन्यसे एक समय और उत्कर्षसे वर्णपृथक्त्व अन्तर है, इस प्रकार
ओघके अन्तरसे इनके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

१ सागादनसम्यग्दृष्टिमपिग्यादृष्टोनानाजीवपेक्षया सामान्यत् । स वि १, ८

२ एगजीव प्रति नास्वन्तरत् । स वि, १, ८

३ चदुपादुपशमकानां नानाजीवपक्षया सामान्यत् । स वि १, ८

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ १५८ ॥

जोग गुणंतरगमणेण तदसंभवा । एगजोगपरिणमणकालादो गुणकालो सखेअगुणो
त्ति कध णव्वदे ? एगजीवस्स अतराभापपदुप्पायणमुत्तादो ।

चटुण्हं खवाणमोघं' ॥ १५९ ॥

णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं, उक्कस्सेण छम्मासं; एगजीव पडुच्च
णत्थि अंतरमिच्चेदेहि भेदाभावा ।

ओरालियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणेगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ १६० ॥

तम्हि जोग-गुणंतरसंक्रुतीए अभावादो ।

सासणसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघं ॥ १६१ ॥

एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १५८ ॥

क्योंकि, अन्य योग और अन्य गुणस्थानमें गमनद्वारा उनका अन्तर असंभव है ।

शंका—एक योगके परिणमन कालसे गुणस्थानका काल सव्यातगुणा है, यह
कैसे जाना जाता है ?

समाधान—एक जीवके अन्तरका अभाव घटानेवाले सूत्रसे जाना जाता है कि
एक योगके परिवर्तन-कालसे गुणस्थानका काल सव्यातगुणा है ।

उक्त योगकाले चारों क्षणोंका अन्तर ओघके समान है ॥ १५९ ॥

नाना जीवोंकी अपेक्षा अचान्यसे एक समय, उत्कर्षसे छह मास अन्तर है, तथा
एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, इस प्रकार ओघसे अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६० ॥

क्योंकि, औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें योग और गुणस्थानके परिवर्तनका
अभाव है ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सासादनसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ १६१ ॥

कुदो ? जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पलिदोमस्स अससेज्जदिभागो, इच्चेदेहि ओघादो भेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १६२ ॥

कुदो ? तत्थ जोगतरमणामावा । गुणतर गदस्स पि पडिणिपत्तिप सामणगुणेण तम्हि चेय जोगे परिणमणाभावा ।

असजदसम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ १६३ ॥

कुदो ? देय णेरइय-मणुमअसजदमम्मादिट्ठीण मणुमेमु उप्पत्तीए णिणा मणुम-असनसम्मादिट्ठीण तिरिस्सेसु उप्पत्तीए णिणा एगसमय अमजदमम्मादिट्ठिनिरहिद-ओरालियमिस्सकायजोगस्स मभरादो ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ १६४ ॥

तिरिस्स-मणुस्सेसु नामपुधत्तमेत्तकालमसजदमम्मादिट्ठीणमुवरादाभावा ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ १६५ ॥

क्योंकि, जघन्यसे एक समय, जोर उत्कर्षसे पत्त्योपमका असत्यातया भाग अतर है, इस प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

उक्त जीर्णोंका एक जीर्णोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६२ ॥

क्योंकि, औदारिकमिश्रणाययोगकी अवस्थामें अन्य योगमें गमनका अभाव है । तथा अन्य गुणस्थानको गये हुए भी जीवके लौटकर सासादनगुणस्थानमें साथ उसी ही योगमें परिणमनका अभाव है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी असयतमम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीर्णोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १६३ ॥

क्योंकि, देय, भारकी ओर मनुष्य असयतसम्यग्दृष्टियोंका मनुष्योंमें उत्पत्तिसे विना, तथा मनुष्य असयतसम्यग्दृष्टियोंका तिर्यचोंमें उत्पत्तिसे विना असयतसम्यग्दृष्टियोंसे रहित औदारिकमिश्रणाययोगका एक समयप्रमाण काल सम्भव है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी असयतमम्यग्दृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर उपपृथक्त्वप्रमाण है ॥ १६४ ॥

क्योंकि, तिर्यच ओर मनुष्योंमें उपपृथक्त्वप्रमाण कालतर असयतसम्यग्दृष्टियोंका उत्पाद नहीं होता है ।

औदारिकमिश्रणाययोगी असयतमम्यग्दृष्टियोंका एक जीर्णोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १६५ ॥

तस्मिं तस्स गुण-जोगतरसंक्रुतीए अभावा ।

सजोगिकेवलीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ १६६ ॥

कुदो ? कनाडपज्जायगिरिहिदकेउलीणमेगममओउलभा ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १६७ ॥

कनाडपज्जाएण पिणा केउलीण वासपुधत्तच्छणमभमादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १६८ ॥

कुदो ? जोगतरसंगंतूण ओरालियमिस्सकायजोगे चेउ द्विदस्स अतरासंभमा ।

वेउव्वियकायजोगीसु चदुट्ठाणीणं मणजोगिभंगो ॥ १६९ ॥

कुदो ? णाणेगजीउ पडुच्च अतराभाणेण माधम्मादो ।

वेउव्वियमिस्सकायजोगीसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १७० ॥

फ्योकि, औदारिकमिश्रकाययोगी असयतसम्यग्दृष्टि जीवमें उक्त गुणस्थान और
औदारिकमिश्रकाययोगके परिवर्तनका अभाव है ।

औदारिकमिश्रकाययोगी सयोगिकेउली जिनोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १६६ ॥

फ्योकि, कपाटपर्यायसे रहित केउली जिनोंका एक समय अन्तर पाया जाता है ।
औदारिकमिश्रकाययोगी केउली जिनोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर
वर्षपृथक्त्व है ॥ १६७ ॥

फ्योकि, कपाटपर्यायके बिना केउली जिनोंका वर्षपृथक्त्व तक रहना सम्भव है ।
औदारिकमिश्रकाययोगी केउली जिनोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है ॥ १६८ ॥

फ्योकि, अन्य योगको नहीं प्राप्त होकर औदारिकमिश्रकाययोगमें ही स्थित
केउलीके अन्तरका होना असम्भव है ।

वैकल्पिककाययोगियोंमें आदिके चारों गुणस्थानगती जीवोंका अन्तर मनो-
योगियोंके समान है ॥ १६९ ॥

फ्योकि, नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेमें दोनोंमें
समानता है ।

वैकल्पिकमिश्रकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमें एक समय अन्तर है, ॥ १७० ॥

त जहा- वेदव्ययमिस्मकायजोगिमिच्छादिद्विणो सव्ये वेदव्ययकायजोग गदा ।
एगममय वेदव्ययमिस्मकायजोगो मिच्छादिद्वीहि त्रिहिदो दिद्वो । त्रिदियममण सचद्व
जणा वेदव्ययमिस्मकायजोगे दिद्वो । लद्धमेगसमयमतर ।

उक्कस्सेण वारस मुहुत्त ॥ १७१ ॥

त जधा- वेदव्ययमिस्मकायजोगिमिच्छादिद्वीसु सव्येसु वेदव्ययकायजोग गदेसु वारस-
मुहुत्तमेतमतरिय पुणो सचद्वजगेसु वेदव्ययमिस्मकायजोग पडिउण्णोसु वारसमुहुत्ततर
होदि ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतरं ॥ १७२ ॥

तत्थ जोग-गुणतरगमणाभावा ।

सासणसम्मादिद्वि-असंजदसम्मादिद्वीण ओरालियमिस्सभंगो ॥ १७३ ॥

हुदो? सामणमम्मादिद्वीण णाणाजीव पडुच्च जहणुक्कस्सेण एगसमय, पलिदो-
वमस्स असजेज्जदिभागो तेहि, एगजीव पडुच्च णत्थि अतर तेण, असजदसम्मादिद्वीण

जैसे- सभी वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीव वैत्रियिन्काययोगको प्राप्त
हुए । इस प्रकार एक समय वैत्रियिन्मिश्रकाययोग, मिथ्यादृष्टि जीवोंसे रहित दिखाई
दिया । द्वितीय समयमें सात आठ जीव वैत्रियिन्मिश्रकाययोगमें दृष्टिगोचर हुए । इस
प्रकार एक समय अंतर उपलब्ध हुआ ।

वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर
धारह मुहूर्त है ॥ १७१ ॥

जैसे- सभी वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टि जीवोंसे वैत्रियिन्काययोगको
प्राप्त हो जाने पर धारह मुहूर्तप्रमाण अंतर होकर पुन सात आठ जीवोंके वैत्रियिन्
मिश्रकाययोगको प्राप्त होने पर धारह मुहूर्तप्रमाण अंतर होता है ।

वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंका एक जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है ॥ १७२ ॥

क्योंकि, उन वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी मिथ्यादृष्टियोंके अन्य योग और अन्य
गुणस्वरूपमें गमनका अभाव है ।

वैत्रियिन्मिश्रकाययोगी सासादनमभ्यस्यदृष्टि और असयत्तमभ्यस्यदृष्टि जीवोंका
अन्तर औदारिसमिश्रकाययोगियोंके समान है ॥ १७३ ॥

क्योंकि, सासादनसभ्यस्यदृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा अधन्य और उत्कृष्ट
अन्तर प्रमदा एक समय और पत्योपमका असत्प्राप्तता भाग है इनसे, एक
१ अथवा 'महिदि', आध्या 'मायाचेदि', अथवा 'मायादि' इति पाठ ।

णाणाजीव पडुच्च जहणुक्कस्सगयएगममय-मासपुधत्तरेण^१, एगजीव पडुच्च अंतरा-
भावेण च तदो भेदाभावा ।

आहारकायजोगीसु आहारमिस्सकायजोगीसु पमत्तसंजदाण-
मंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं
॥ १७४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ १७५ ॥

एदं पि सुगममेव ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १७६ ॥

तस्मि जोग-गुणतरग्गहणाभावा ।

कम्मइयकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि-सासणसम्मादिट्ठि-असंजद-
सम्मादिट्ठि-सजोगिकेवलीणं ओरालियमिस्सभंगो ॥ १७७ ॥

जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है इससे, असंयतसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा
जघन्य एक समय और उत्कृष्ट मासपृथक्त्व अन्तर होनेसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा
अन्तरका अभाव होनेसे इन वैभ्रियिकमिश्रकाययोगी सासादन और असंयतसम्यग्दृष्टियोंके
अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयतोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ १७४ ॥
यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर उपपृथक्त्व है ॥ १७५ ॥

यह सूत्र भी सुगम ही है ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयतोंका एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १७६ ॥

क्योंकि, आहारककाययोग या आहारकमिश्रकाययोगमें अन्य योग या अन्य
गुणस्थानके ग्रहण करनेका अभाव है ।

कार्मणकाययोगियोंमें मिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि और
सयोगिकेवलियोंका अन्तर औदारिकमिश्रकाययोगियोंके समान है ॥ १७७ ॥

मिच्छादिद्विषिणाणां जीव पटुच्च अतराभावेण, सामान्यममादिद्विषिणाणां जीव-
गवयसमय पलिदोमामलेज्जदिभागतरेहि, एगजीवगयअतराभावेण, अमनदममा-
दिद्विषिणाणां जीवगवयसमयमाम-पुधत्तरेहि, एगजीवगयअतराभावेण, सनोगिकेयलि-
णाणां जीवगवयसमय-वासपुधत्तेहि, एगजीवगयअतराभावेण च दोष्ट ममाणत्तुवलमा ।

एव जोगमग्गणा समता ।

वेदानुवादेण इत्थिवेदेसु मिच्छादिद्विषिणमंतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीव पटुच्च णत्थि अतर, णितर' ॥ १७८ ॥

सुगममेदं सुत्त ।

एगजीवं पटुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त' ॥ १७९ ॥

हुत्तो ? इत्थिवेदमिच्छादिद्विषिणा दिद्विमग्गस्स अण्णगुणं गतूणं पडिणियत्थियं लहु
मिच्छत्तं पडिण्णस्म अतोमुहुत्तं नरुलमा ।

उक्कस्सेण पणवण्णं पलिदोवमाणि देसूणाणि' ॥ १८० ॥

अथोति, मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीव और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव
होनेसे, साक्षादनसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवगत जघन्य एक समय और उत्तृष्ट पल्लो
पक्षके अस्तित्वतापे भागप्रमाण अन्तरसे, तथा एक जीवगत अन्तरके अभावसे, अस्तित्व
सम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवगत जघन्य अन्तर एक समय और उत्तृष्ट अन्तर भास
पृथक्त्वमे, तथा एक जीवगत अन्तरका अभाव होनेसे, सयोगिकेयलियोंका नाना
जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय जो उत्तृष्ट वर्षपृथक्त्व अन्तरसे, तथा एक जीवगत
अन्तरका अभाव होनेसे जोदात्मिमिश्रणयोगी और कर्मणकाययोगी, इन दोनोंके
समानता पाइ जाती है ।

इस प्रकार योगमागणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणके अनुवादसे स्त्रीवेदियोंमें मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १७८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १७९ ॥

अथोति, दृष्टमार्गा स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंके अथ गुणस्वरूपको जानने और
कौटुम्बिक शीघ्र ही मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर अन्तर्मुहूर्त अन्तर पाया जाता है ।

स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्तृष्ट अन्तर कुछ कम
पचन पल्लोपम है ॥ १८० ॥

१ वेदानुवादेण जीववेदु मिथ्यादृष्टीर्नानाजीवापेक्षा नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

२ एगजीवं प्रति जघन्यमात्रमुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्तर्येण पचपचाश्लक्ष्ण्येसमानि देशानि । स ति १, ८

त जहा- एको पुरिसपेदो णउसपेदो वा अट्ठासीसमोहमतकम्मिओ पणवण्ण-
पलिदोयमाउट्ठिदिदेसीसु' उअण्णो । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२)
विमुदो (३) पेदगसम्मत्त पडिअण्णो अतरिदो अग्गामे आउअं गधिय मिच्छत्त गदो ।
लद्धमंतरं (४) । सम्मत्तेण उद्धाउअचादो सम्मत्तेण गिगदो (५) मणुसो जादो ।
पंचहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणाणि पणवण्ण पलिदोयमाणि उअरुस्सतर होदि । छप्पुद्धविणेरइएसु
सोहम्मादिदेसु च सम्माइट्ठी वद्धाउओ पुअ मिच्छत्तेण विस्मारिदो । एत्थ पुण
पणवण्णपलिदोयमाउट्ठिदिदेसीसु तहा ण विस्मारिदो । एत्थ कारण जाणिय उत्तव ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ' ॥ १८१ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्त' ॥ १८२ ॥

जैसे- मोहनीयकमकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक पुरुषवेदी, अथवा
नपुंसकवेदी जीव, पचवन पल्योपमकी आयुस्थितिवाली देवियोंमें उत्पन्न हुआ । छहों
पर्यायियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वकी प्राप्त होकर
अन्तरको प्राप्त हुआ और आयुके अन्तमें आगामी भयकी आयुको याधकर मिथ्यात्वको
प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया (४) । सम्यक्त्वके साथ आयुके याधनेसे
सम्यक्त्वके साथ ही निकला (५) और मनुष्य हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे
कम पचवन पल्योपम स्त्रीवेदी मिथ्यादृष्टिका उत्पन्न अन्तर हाता है ।

पहले ओषप्ररूपणामें छह पृथिवियोंके नारकियों तथा सोचमोदि देवोंमें बद्धा-
युक्त सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वके द्वारा निकाला या । किन्तु यहा पचवन पल्योपमकी
आयुस्थितिवाली देवियोंमें उस प्रकारसे नहीं निकाला । यहापर इसका कारण जानकर
कहना चाहिए ।

स्त्रीवेदी सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा ओघके समान अन्तर है ॥ १८१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः, पल्योपमका अमरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ १८२ ॥

१ प्रतिपु 'देवसु' इति पठ ।

२ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टीनानाजावापेक्षया सामा-पक्व । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघनेन पल्योपमासरयेयमागो-अन्तर्मुहूर्तश्च । स सि १, ८

एद पि सुत्त गुग्ममेव ।

उक्त्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८३ ॥

त जहा- एको अण्णवेदद्विदिमच्छिदो सासणद्वाए एगो समओ अत्थि त्ति इत्थिपेदेसु उअण्णो एगसमय सामणगुणेण दिट्ठो । त्तिदिममए मिच्छत्त गतूणतरिदो । त्थीपेदद्विदि परिभमिय अउसाणे त्थीपेदद्विदीए एगसमयाउसेमाए सामणं गदो । लद्धमत्तर । मदो वेदत्तर गदो । वेहि समणहि ऊणय पलिदोअममदपुधत्तमत्तर लद्ध ।

सम्मामिच्छादिदिम्म उच्छेदे- एको अट्ठासीममोहमतकम्मिओ अण्णवेदो देसीसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) तिसुदो (३) सम्मा- मिच्छत्त पडिअण्णो (४) मिच्छत्त गंतूणतरिदो । त्थीपेदद्विदि परिभमिय अते सम्मा- मिच्छत्त गदो (५) । लद्धमत्तर । जेण गुणेण आउअ यद्धं त्ति गुण पडिअज्जिय अण्णवेदे उअण्णो (६) । एअ छहि अंतोसुहुत्तेहि ऊणिपा त्थीपेदद्विदी सम्मामिच्छत्तुक्त्सेत्तर होदि ।

यह सूत्र भी सुगम ही है ।

स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवनी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर पत्न्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८३ ॥

जैसे अन्य वेदकी स्थितिको प्राप्त कोई एक जीव सासादनगुणस्थानके कालमें एक समय अश्लेष रहने पर स्त्रीवेदियोंमें उत्पन्न हुआ और एक समय सासादनगुण स्थानके साथ दिखाई दिया । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको जाकर अंतरको प्राप्त हुआ । स्त्रीवेदकी स्थितिप्रमाण परिश्रमण करके अन्तमें स्त्रीवेदकी स्थितिमें एक समय अवशेष रहने पर सासादनगुणस्थानको गया । इस प्रकार अंतर लब्ध हुआ । पुन मरा और अन्य वेदको प्राप्त होगया । इस प्रकार दो समयोंसे कम पत्न्योपमशतपृथक्त्वकाल स्त्रीवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अंतर प्राप्त हुआ ।

अत्र सम्यग्मिथ्यादृष्टि स्त्रीवेदी जीवका उत्कृष्ट अंतर कहते हैं- मोहनीयकमकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ताजाला कोई एक अन्य वेदी जीव वेदियोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विनुरु हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अंतरको प्राप्त हुआ । स्त्रीवेदकी स्थिति प्रमाण परिश्रमणकर अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लब्ध हो गया । पाँचे जिस गुणस्थानसे आयुको बाधा था, उसी गुणस्थानको प्राप्त होकर अन्य तीनोंमें उत्पन्न हुआ (६) । इस प्रकार छह अन्तमुहूर्तोंसे कम स्त्रीवेदकी स्थिति सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं
गलादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ १८४ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १८५ ॥

कुदो ? अण्णगुणं गतूण पडिणियत्तिय त चेअ गुणमागदाणमंतोमुहुत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८६ ॥

अमंजडसम्मादिट्ठिस्स उच्चदे । त जहा—एक्को अट्ठागीममत्तकम्मिओ देवैसु
उत्तण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयो (१) विस्मतो (२) विसुद्धो (३) वेदग-
त्तमत्त पडिण्णो (४) मिच्छत्त गदो अतरिदो त्थीगेदिट्ठिदि परिभमिय अते उत्तम-
त्तमत्तं पडिण्णो (५) । लद्धमतर । छागलियाणमेसे पडमसम्मत्तकाले सामणं गतूण
मदो वेदंतर गदो । पचहि अंतोमुहुत्तेहि उणय पलिदोवममदपुधत्तमतर होदि । देव्खण-

अमयत्तसम्यग्दष्टिसे लेकर अग्रमत्तसयत्त गुणस्थान तरु प्रत्येक गुणस्थानती
स्त्रीगेदियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है,
निरन्तर है ॥ १८४ ॥

यह सून सुगम है ।

उक्त गुणस्थानगले स्त्रीगेदियोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ १८५ ॥

पर्याप्ति, अन्य गुणस्थानको जाकर और लौटकर उसी ही गुणस्थानको आये हुए
जीवोंका अन्तर्मुहूर्त अतः पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८६ ॥

इनमेंसे पहले खविदी असयत्तसम्यग्दष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहकी
अट्ठाईस कर्मप्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्ति-
योंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विनुद्ध हो (३) वेदरुसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो, खविदकी स्थितिप्रमाण
परिभ्रमणकर अन्तर्में उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अन्तर लब्ध
हुआ । प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशेष रहने पर सासादनगुण
स्थानको जाकर मरा और अन्य वेदको गया । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पल्यो-
पमशतपृथक्त्वप्रमाण अन्तर होता है ।

१ अमयत्तसम्यग्दष्ट्यावप्रप्रत्तान्ता नानाजीवाणमया नास्य तत्त्वं । स सि १, ८

२ एक्कीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उत्सर्पेण पल्योपमशतपृथक्त्वम् । स सि १, ८

वयण मुत्ते रिण्ण कदं ? य, पुधचणिहेसेणेय तस्म अवगमादो ।

सजदासजदस्स उच्चदे—एक्को अट्ठासीसमोहसतकम्मिओ अण्णोदो त्थीनेदु
उत्तरण्णो पे मासे गभे अच्छिदूण णिक्खनो दिग्गमपुधत्तेण त्रिमुद्धो वेदगसम्मत्त सज्जा
सज्जम च जुगग पडिण्णो (१) । मिच्छत्त गत्तूणतदिदो त्थीनेदद्विदि परिभमिय अंत
पद्धमम्मत्त देमसज्जम च जुगग पडिण्णो (२) । आमाण गंतूण मदो देवो जादो । वेदि
मुद्धत्तेहि दिवसपुधत्ताहिय-पेमासेहि य उणा त्थीनेदद्विदी उक्कस्सतर होदि ।

पमत्तम्म उच्चदे—एक्को अट्ठासीसमोहमतकम्मिओ अण्णोदो त्थीनेदमपुमसु
उत्तरण्णो । गम्भादिअट्ठारिसओ वेदगमम्मत्तमपमत्तगुण च जुगग पडिण्णो (१) ।
पुणो पमत्तो जादो (२) । मिच्छत्त गत्तूणतदिदो त्थीनेदद्विदि परिभमिय पमत्तो जादो ।
लद्धमत्त (३) । मदो देवो जादो । अट्ठम्महेहि तीहि अंतोमुद्धत्तेहि ऊणिया त्थीनेदद्विदी
लद्धमुक्कस्सतर । एमपमत्तस्स पि उक्कस्सतर भाणिद्वय, निमसाभावा ।

श्रुति—स्त्रमें 'देशोन' वेत्ता वचन क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'पृथग्व्य' इस पदके निर्देशसे ही उस देशोनताका
ज्ञान हो जाता है ।

स्त्रावेदा सयतासयत जीवता उत्तृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहनीयकर्मकी अट्ठाईस
प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव, स्त्रावेदियोंमें उत्पन्न हुआ । दो मास
गर्भमें रह कर निकला और दिवसपृथक्त्वसे विगुह हो वेदकसम्यक्त्व और सयमा
सयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पश्चात् मिथ्यात्वको जानकर अन्तरको प्राप्त हो स्त्री
वेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अन्तमें प्रथमोपशमसम्यक्त्व और देशसयमको एक
साथ प्राप्त हुआ (२) । पुन सासाधन गुणस्थानको जानकर मरा और देव होगया । इस
प्रकार दो मुहूर्त और दिवसपृथक्त्वसे अधिक द्वा माससे कम स्त्रावेदकी स्थिति स्त्रावेदी
सयतासयतका उत्तृष्ट अन्तर होता है ।

स्त्रावेदी प्रमत्तसयतता उत्तृष्ट अन्तर कहते हैं— मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी
सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव, स्त्रावेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आवि
लेकर आठ वर्षका हो वेदकसम्यक्त्व और अप्रमत्त गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१)
पुन प्रमत्तसयत हुआ (२) । पश्चात् मिथ्यात्वको जानकर अन्तरको प्राप्त हो स्त्रावेदकी
स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (३)
पश्चात् मरा और देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और तीन अन्तमुहूर्तोंसे कम स्त्रावेदकी
स्थितिप्रमाण उत्तृष्ट अन्तर लब्ध हुआ ।

इसी प्रकारसे स्त्रावेदी अप्रमत्तसयतका भी उत्तृष्ट अन्तर कहना चाहिये
क्योंकि, उसमें कोई विशेषता नहीं है ।

दोहमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणजीवं
पडुच्च जहणुक्कस्समोघं ॥ १८७ ॥

कुदो ? एगममय-वासपुधत्तरेहि ओघादो भेदाभावा ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ १८८ ॥

सुगममेदं ।

उक्कस्सेण पलिदोवमसदपुधत्तं ॥ १८९ ॥

त जहा—एकओ अण्णोयेदो अट्ठासीसमोहसतकम्मिओ त्थीयेदमणुसेसुवण्णो । अट्ठ-
वम्मिओ सम्मत्त सजम च जुगग पडिण्णो (१) । अणताणुवधी तिसजोडय (२)
दसणमोहणीयसुवसामिय (३) अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) अपुब्बो
(७) अणियट्ठी (८) सुहुमो (९) उवमत्तो (१०) भूओ पटिणियत्तो सुहुमो (११)
अणियट्ठी (१२) अपुब्बो (१३) हेट्ठा पडिदूणंतरिदो त्थीयेदडिदि भमिय अग्गमाणे
सजम पडियज्जिय कदकरणिज्जो होदूण अपुब्बुसामगो जादो । लद्धमतरं । तदो णिहा-

स्त्रीवेदी अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों उपशामकोंका अन्तर कितने
काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर ओघके
समान है ॥ १८७ ॥

क्योंकि, जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है, इनकी अपेक्षा
ओघके इनमें कोई भेद नहीं है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १८८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पत्योपमशतपृथक्त्व है ॥ १८९ ॥

जैसे—मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्य वेदी जीव,
स्त्रीवेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आठ वर्षका होकर सम्यक्तर और सयमको एक साथ
प्राप्ति हुआ (१) । पश्चात् अनन्तानुवन्धी कषायका तिसयोजन कर (२) दर्शनमोहनीयका
उपशाम कर (३) अप्रमत्तसयत (४) प्रमत्तसयत (५) अप्रमत्तसयत (६) अपूर्वकरण (७)
अनिवृत्तिकरण (८) सूक्ष्मसाम्पराय (९) और उपशान्तकषाय (१०) होकर पुन
प्रतिनिवृत्त हो सूक्ष्मसाम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) और अपूर्वकरणसयत हो (१३)
नीच गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ और स्त्रीवेदीकी स्थितिप्रमाण परिध्रमण कर अन्तमें
सयमको प्राप्त हो वृत्तव्ययेदक होकर अपूर्वकरण उपशामक हुआ । इस प्रकार

१ इयोरपवमसयानानाजीवापेक्षया सामायवत् । स ति १, ८

२ एगजीव प्रति जघयेनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्कर्षण पत्योपमशतपृथक्त्वम् । स ति १, ८

ययलाण वधे वो-च्छिणो मदो देनो जादो । अद्व-स्सेहि तेरमतोमुहुत्तेहि य अपुव्वरुणद्वाए
सत्तमभागेण च उणिया सगद्धिदी अतर । अणियद्धिस्म पि एअ चेअ । णअरि वारम
अतोमुहुत्ता एगममओ च वत्तव्यो ।

दोण्ह खवाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च
जहण्णेण एगसमय' ॥ १९० ॥

सुगममेद ।

उकस्सेण वासपुधत्तं ॥ १९१ ॥

अप्पमत्तत्थीमेदाण वामपुधत्तेण णिणा अण्णस्म अतरस्म अनुअलभादो ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ १९२ ॥

सुगममेद ।

पुरिसवेदएसु मिच्छादिट्ठी ओघ' ॥ १९३ ॥

अन्तर ल-थ हुआ । पाछे निद्रा और प्रचलाके वध विच्छेद हो जाने पर मरा ओर देख
होगया । इस प्रकार आठ वर्ष और तेरह अन्तर्मुहूर्तोंमें, तथा अपूर्णकरण कालके सातवें
भागसे ही अपनी स्थितिप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर है । अनिवृत्तिकरण उपशामरुका भी इसी
प्रकारसे अन्तर होता है । विशेष बात यह है कि उनके तेरह अन्तर्मुहूर्तोंके स्थानपर बारह
अन्तर्मुहूर्त और एक समय कम कहना चाहिए ।

स्त्रीदेवी अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों क्षपणोंका अन्तर नितने काल
होता है ? नाना जीर्णोक्ती अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ १९० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

स्त्रीदेवी अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण क्षपणोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व
है ॥ १९१ ॥

क्योंकि, अप्रमत्तसयत स्त्रीदेवियोंका वर्षपृथक्त्वके अतिरिक्त अन्य अन्तर नहीं
पाया जाता है ।

एक जीमदी अपेक्षा उक्त दोनों गुणस्थानर्ती जीर्णोक्ता अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ १९२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पुरुषदेवियोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके समान है ॥ १९३ ॥

१ इयो क्षपणानानाजीवापत्तया जघन्यमेक समयः । स सि १, ८

२ उत्तरायेण वर्षपृथक्त्वम् । स सि १, ८

३ पुरुजीव प्रति नास्त्यतरम् । स सि, १, ८

४ पुनरेव विष्णोऽष्टे सामाश्वत् । स सि १, ८

कुदो? णाणाजीवं पडुच्च अंतराभाणेण, एगजीअगिसयअतोमुहुत्त-देसणनेच्छानट्टि-
सागरोपमत्तेरहि य तदो भेदाभागा ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ १९४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ १९५ ॥

एदं पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ १९६ ॥

एदं पि सुगेहं ।

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ १९७ ॥

त जहा—एकको अण्णपेदो उगमममम्मादिट्ठी सासण गतूण सासणद्धाए एगो
समओ अत्थि त्ति पुरिस्रोदो जादो । सासणगुणेण एगसमय दिट्ठो, निदियसमए मिच्छत्त

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट कुछ कम दो द्ययासठ सागरोपम अन्तरकी अपेक्षा
योगमिथ्यादृष्टिके अन्तरसे पुरुषवेदी मिथ्यादृष्टियोंके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

पुरुषवेदी सामादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ १९४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमका असरयातना भाग है ॥ १९५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

पुरुषवेदी सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा
जघन्य अन्तर क्रमशः पल्लोपमका असरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ १९६ ॥

यह सूत्र भी सुबोध है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ १९७ ॥

जैसे—अन्य वेदवाला एक उपशमसम्यग्दृष्टि जीव, सासादन गुणस्थानमें जाकर,
सासादन गुणस्थानके कालमें एक समय अवाशिष्ट रहने पर पुरुषवेदी होगया और
सासादन गुणस्थानके साथ एक समय दृष्टिगोचर हुआ । द्वितीय समयमें मिथ्यात्वको

१ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टीनाजीवोपेक्षया सामायवत् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येन पल्लोपसामख्यमागोऽन्तर्मुहूर्तः । स मि १, ८

३ उत्तरादेण सागरोपमशतपृथक्त्वम् । स मि १, ८

गतृणतरिदो पुरिमरेद्विदिं भमिय अगमाणे उगमसम्मच धेत्तुण सामण पडिण्णो ।
त्रिदियममए मदे देसेसु उगण्णो ॥ एउ पि समऊगमागरोउममदपुवत्तमुककस्मतर होदि ।

मम्मामिच्छादिद्विस्म उच्चदे- एवको अट्टापीससत्तकम्मिओ अण्णोदेो देवेसु
उगण्णो । छदि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) पिस्मतो (२) मिसुद्वो (३) मम्मामि-
च्छत्त पडिण्णो (४) मिच्छत्त गतृणतरिदो मगद्विदिं परिभमिय अते सम्मामिच्छत्त
गदो (५) । लद्धमतर । अण्णगुण गतृण (६) अण्णोदे उगण्णो । छदि अतोमुहुत्तेहि
ऊग मागरोउमसदपुवत्तमुककस्मतर होदि ।

असजदसम्मादिद्विप्पहुडि जाव अप्पमत्तसजदाणमंतर केवचिर
कालादो हेदि गागाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरत्तर' ॥ १९८ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ॥ १९९ ॥

एद पि सुगम ।

जागर अंतरको प्राप्त हुआ । पुरुषवेदकी स्थितिप्रमाण परिधमण करके आयुके अन्तमें
उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण कर साक्षात्त गुणस्थानको प्राप्त हुआ । पश्चात् द्वितीय
समयमें मरा ओर देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार उक्त जीवोंका दो समय कम सागरोपम
शतपृथक्त्व अंतर होता है ।

पुरुषवेदी सम्यग्मिध्यादष्टि जीवका उत्पत्ति अंतर कहते हैं- मोहकमकी
अट्टाईस प्रतियोंकी सत्तागता फोड़ एक अन्य वेदी जीव, देवोंमें उत्पन्न हुआ, छहों
पयाप्तियोंमें पयाप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यग्मिध्यात्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् मिध्यात्त्वको जागर अंतरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परि-
धमण करके अतमें सम्यग्मिध्यात्त्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लप्थ होगया ।
तत्पश्चात् अन्य गुणस्थानको जाकर (६) अन्य वेदमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार छह
अतमुहुत्तोंस कम सागरोपमशतपृथक्त्व पुरुषवेदी सम्यग्मिध्यादष्टि जीवका उत्पत्ति
अंतर होता है ।

अमयतमम्यग्दष्टिमे लेकर प्रमत्तमयत गुणस्थान तक पुरुषवेदी जीवोंका अन्तर
मिनने काल होता है । नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ १९८ ॥

यह छत्र सुगम है ।

उक्त गुणस्थानस्ती जीवोंका जयन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ १९९ ॥

यह स्त्र भी सुगम है ।

१ अथयमम्यग्दष्टिपयमगावानी नानाजीवापेक्षया नास्त्यतस् । त मि १, ८

२ पुरुषाव प्रति जयन्यनान्तमुहूर्त । त मि १, ८

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्तं ॥ २०० ॥

अमजदसम्मादिट्ठिस्म उच्चदे- एकको अट्ठापीससत्तम्मिओ अण्णोदेो देवेसु उअण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) रिस्सतो (२) निमुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिअण्णो (४) । मिच्छत्त गत्तूणतरिदो सगट्ठिदिं भमिय अंते उअममम्मत्त पडिअण्णो (५) । छाअलियाअमेमे उअसममम्मत्तकाले जासाण गत्तूण मदो देवेसु उअण्णो । पंचहि अंतोमुहुत्तेहि ऊण सागरोअमसदपुधत्तमतर होदि ।

मंजदामजदस्म वुच्चदे- एकको अण्णोदेो पुरिमोदेसु उअण्णो । वे मासे गव्भे अन्निउद्दूण णिक्खतो दिअसपुअत्तेण उअमममम्मत्त सजमामजम च जुअं पडिअण्णो । उअमममम्मत्तद्वाए छाअलियाओ अत्थि चि सामण गदो (१) मिच्छत्त गत्तूण पुरिमोदे-ट्ठिदिं परिभमिय अंते मणुमेसु उअण्णो । कट्ठकरणिज्जो होद्दूण संजमामजम पडिअण्णो (२) । लद्धमतर । तदो अप्पमत्तो (३) पमत्तो (४) अप्पमत्तो (५) । उअरि छ अंतोमुहुत्ता । एअ नेहि मांमेहि तीहि दिअसेहि एक्कारमेहि अंतोमुहुत्तेहि य ऊणा पुरिस-वेदट्ठिदी उक्कस्समतर होदि । किं कारण अतरे लद्धे मिच्छत्त गेद्दूण अण्णोदेसु ण

असंयतादि चार गुणस्थानवर्ती पुरुषवेदियोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशत-पृथक्त्व है ॥ २०० ॥

असंयतसम्यग्दृष्टि पुरुषवेदी जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहजर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्ताजाला कोई एक अन्य वेदी जीव देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विध्वामले (२) विशुद्ध हो (३) वेदजन्मस्यस्त्रको प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) । उपशमसम्यक्त्वने कालमें छह आअलिया अअशेष रहने पर सासादनको जाकर मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम सागरोपमशतपृथक्त्व पुरुषवेदी असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर होता है ।

संयतासंयत पुरुषवेदी जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- कोई एक अय वेदी जीव पुरुषवेदियोंमें उत्पन्न हुआ । दो मास गर्भमें रहकर निकलता हुआ दिवस पृथक्त्वसे उपशमसम्यक्त्व और संयमासंयमको एक साथ प्राप्त हुआ । जब उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया रहों तब सामादनगुणस्थानको प्राप्त हो (१) मिथ्यात्वको जाकर पुरुषवेदकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और वृत्तव्यवेदक होकर संयमासंयमको प्राप्त हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पश्चात् अप्रमत्त संयत (३) प्रमत्तसंयत (४) और अप्रमत्तसंयत हुआ (५) । इनमें ऊपरके गुणस्थानों-सम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार दो मास, तीन दिन और ग्यारह अन्तर्-मुहूर्तोंसे कम पुरुषवेदकी स्थिति ही पुरुषवेदी संयतासंयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

ज्ञाना-अन्तर प्राप्त हो जानेपर पुन मिथ्यात्वको ले जाकर अय वेदियोंमें

उष्पादिदो ? ण एम दोसो, जेण कालेण मिच्छत्त गतूण आउअ वधिय अण्णरेदेसु उग्रज्जनिदि, सो कालो मिज्झणकालादो सखेज्जगुणो त्ति कट्ठु अण्णपाइदत्तादो । उग्ररिहण्ण पि एद चेय कारण उत्तव्व । पमत्त अप्पमत्तमनदाण पच्चिदियपज्जत्तभगो । णरि रिमेम जाणिय वत्तव्व ।

दोण्हमुवसामगाणमंतर केवचिर कालादो हेदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ' ॥ २०१ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त' ॥ २०२ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण सागरोवमसदपुधत्त' ॥ २०३ ॥

उत्पन्न नहीं कराया, इसका क्या कारण है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, जिस कालसे मिथ्यात्वकी जागर और आयुकी घाघरर अन्य घेदियोंमें उत्पन्न होता है, यह काल सिद्ध होनेवाले कालसे सख्यातगुणा है, इस अपेक्षासे उसे मिथ्यात्वमें ले जाकर पुन अन्य घेदियोंमें नहीं उत्पन्न कराया ।

ऊपरके गुणस्थानोंमें भी यही कारण कहना चाहिए । पुरपवेदी प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतोंका भी अन्तर पचेन्द्रिय पर्याप्तोंके समान है । केवल इनमें जो विशेषता है उसे जानकर कहना चाहिए ।

पुरुषवेदी अपूर्णकरण और अनिष्टात्तिकरण, इन दो उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा इन दोनों गुणस्थानोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २०१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २०२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सागरोपमशतपृथक्त्व है ॥ २०३ ॥

१ इयारूपसमक्यानानाजापेक्षया सामा यवत् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघनेनान्तप्रहृत । स ति १, ८

३ उत्तरेण सागरोपमशतपृथक्त्वम् । स ति १, ८

त जहा-एक्को अट्ठारीससत्तकम्मिओ अण्णपेदो पुरिमपेदमणुसेसु उववण्णो अट्ठारिस्सिओ जादो । सम्मत्त संजमं च जुगमं पडिण्णो (१) । अण्णताणुगधिं तिसजोइय (२) दसणमोहणीयमुत्तामिय (३) अप्पमत्तो (४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) अपुच्चो (७) अणियट्ठी (८) सुट्ठुमो (९) उगमतक्काओ (१०) पडिणियत्तो सुट्ठुमो (११) अणियट्ठी (१२) अपुच्चो (१३) हेट्ठा परियट्ठिय अंतरिदो । सागरो-वममदपुत्त परिभमिय कटक्काणिज्जो होदूण सजम पडिणज्जिय अपुच्चो जादो । लद्धमंतरं । उररि पचिंदियभगो । एवमट्ठमस्मेहि एगूणतीसअतोमुट्ठुत्तेहि य ऊणा सगट्ठिदी अतर होदि । अणियट्ठिस्म पि एव चेय वत्तव्व । गगरि अट्ठवस्मेहि सत्तारीसअतो-मुट्ठुत्तेहि य ऊण सागरोपमसदपुवत्तमतर होदि ।

दोण्हं खवाणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २०४ ॥

सुगममेद ।

जेसे- मोहकर्मकी अट्ठारिस्स प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक अन्यवेदी जीव पुरपवेदी मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर सम्यक्त्व और सयमको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अनन्तानुगन्धीका विसंयोजन कर (२) दर्शनमोहनीयका उपशमन कर (३) अप्रमत्तसयन (४) प्रमत्तसयन (५) अप्रमत्तसयन (६) अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८) सूक्ष्मसाम्पराय (९) उपशान्तकृपाय (१०) पुन लौटकर सूक्ष्म-साम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) अपूर्वकरण (१३) होता हुआ नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ । सागरोपमशतपृथक्त्वप्रमाण परिश्रमण कर कृतकृत्यपेदकसम्यक्त्वी होकर सयमको प्राप्त कर अपूर्वकरणसयन हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । इसके ऊपर का कथन पचेन्द्रियोंके समान है । इस प्रकार आठ वर्ष और उनतीस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थितिप्रमाण पुरपवेदी अपूर्वकरण उपशामकका उत्कृष्ट अन्तर होता है । अनिवृत्तिकरण उपशामकका भी इसी प्रकारसे अन्तर कहना चाहिए । विशेष बात यह है कि आठ वर्ष और सत्तारिस्स अन्तर्मुहूर्तोंसे कम सागरोपमशतपृथक्त्व इनका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

पुरपवेदी अपूर्वकरणमयत और अनिवृत्तिकरणमयत, इन दोनों क्षयकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २०४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्कस्सेण वासं सादिरेयं ॥ २०५ ॥

त जहा- पुरिसयेदेण अपुब्बगुण पडिगुणा सव्वे जीवा उग्गरिमगुण गदा ।
अतरिदमपुब्बगुणद्वयान । पुणो छमामेसु अटिक्कतेसु सव्वे इत्थियेदेण चेत्तं सव्वं
सेदिमास्सदा । पुणो चत्तादि वा पच मा मामे अतरिदूण समगसेदि चटमाणा णजुमप
वेदोएण चट्टिदा । पुणो पि एक्क दो मामे अतरिदूण इत्थियेदेण चट्टिदा । एव सत्तेज
वारमित्थि-णजुमपयेदोदएण चेत्तं समगसेदि चट्टागिय पच्छा पुरिसयेदोदएण समगसेदि
चट्टिदे नाम सादिरेयमत्तर होदि । कुदो ? गिरत्तर छम्मा मत्तरस्स जसमग्गो । एग्गभि-
यट्ठिस्स पि वत्तव्व । केसु पि सुत्तपोत्थएसु पुरिसयेदस्सत्तर छम्मासा ।

एगजीव पडुच्च गत्थि अत्तर, गिरत्तरं ॥ २०६ ॥

कुदो ? समग्गण पडिगियचीए जसमग्ग ।

**णउसयवेदएसु मिच्छादिट्ठीणमत्तर केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीव पडुच्च गत्थि अत्तरं, गिरत्तरं ॥ २०७ ॥**

उक्त दोना क्षपकोशा उत्कृष्ट अन्तर माधिक एक र्थ है ॥ २०५ ॥

जैसे- पुरुषवेदके द्वारा अपूर्वस्मरणक्षपण गुणस्थानको प्राप्त हुए सभी जीव
ऊपरसे गुणस्थानोंको चले गए और अपूर्वस्मरणगुणस्थान अन्तरको प्राप्त होगया । पुन
छह मास व्यतीत हो जाने पर सभी जीव स्मृतिवेदके द्वारा ही क्षपणश्रेणी पर आरुढ़ हुए ।
पुन चार या पांच मासका अन्तर करके नपुंसकवेदके उदयसे कुछ जीव क्षपणश्रेणीपर
चढ़े । पुन एक दो मास अन्तरकर कुछ जीव स्मृतिवेदके द्वारा क्षपणश्रेणीपर चढ़े । इस
प्रकार सत्यात चार स्मृतिवेद और नपुंसकवेदके उदयसे ही क्षपणश्रेणीपर चढ़ा करके पीछे
पुरुषवेदके उदयसे क्षपणश्रेणी चढ़नेपर माधिक यथप्रमाण अन्तर हो जाता है, क्योंकि,
निरन्तर छह मासके अन्तरसे अधिक अन्तर होना असम्भव है । इसी प्रकार पुरुषवेदी
अनिवृत्तिकरणक्षपणका भी अन्तर कहना चाहिये । कितनी ही सूत्रपौयियोंमें पुरुषवेदका
उत्कृष्ट अन्तर छह मास पाया जाता है ।

दोनों क्षपकोशा एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २०६ ॥

क्योंकि, क्षपकोशा पुन लौटना असम्भव है ।

नपुंसकपौयियोंमें मिश्राद्यष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २०७ ॥

१ उत्कृष्ट मयमा सात्तरि । स सि १ ८ २ एगजीव गति नास्त्यतरम् । स सि १, ८

३ 'पुम्बकवदु मिच्छादिट्ठीणमत्तराणां नास्त्यतरम् । स सि १, ८

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २०८ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि^१ ॥ २०९ ॥

स जथा- एक्को मिच्छादिद्वी अट्ठासीससत्तकम्मिओ सत्तमपुट्ठीए उगवण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) विस्मतो (२) विमुद्धो (३) सम्मत्त पडिवज्जिय अत्तरिदो । अत्ताणे मिच्छत्त गत्तूण (४) आउअं उधिय (५) विस्समिय (६) मदो तिरिक्खो जादो । एअं छहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाणि तेत्तीस सागरोवमाणि उक्कस्संतर होदि ।

सासणसम्मादिट्ठिपहुडि जाव अणियट्ठिउवसामिदो ति मूलोघं^२
॥ २१० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एक जीनकी अपेक्षा नपुमकपेदी मिथ्यादृष्टियोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २०८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

एक जीनकी अपेक्षा नपुमकपेदी मिथ्यादृष्टियोंका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरोपम है ॥ २०९ ॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तागाला कोई एर मिथ्यादृष्टि जीघ सातवीं पृथिवीमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) निशुद्ध हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । आयुको अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त होकर (४) आयुको बाध (५) विधाम ले (६) मरा ओर तिर्यक् हुआ । इस प्रकार छह अन्तर्मुहूर्तोंमें कम तेतीस सागरोपमकाल नपुमकपेदी मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

सामादनमम्यग्दष्टिमे लेकर अनितृत्तिकरण उपशामक गुणस्थान तक नपुमकपेदी जीनोंका अन्तर मूलोघके समान है ॥ २१० ॥

^१ एक्कीअं अणि जघयेनात्तमुहुत्त । स वि १, ८

^२ उत्तरपणं अणमिच्छमाणापेसमाणि देशेनानि । स वि १, ८

^३ सामादनमम्यग्दष्टिनिवृत्त्युपशममात्तानां मामापोनम् । स वि १, ८.

बुद्धो ? सामणमम्मादिद्विस्म णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लिनेमस्स असंखेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोमस्स असंखेज्जदिभागो, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । सम्मामिच्छादिद्विस्म णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण पल्लिदोमस्स असंखेज्जदिभागो, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । असज्जदग्गम्मादिद्विस्म णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । सत्तदासज्जदस्म णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । पमत्तस्म णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । अप्पमत्तस्म णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । अपुब्बकरणस्म णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगममओ, उक्कस्सेण सत्तपुत्त, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अद्धपोगलपरियट्ठ देसूण । एगमणियद्विस्स मि चि । एदेमिमेदेहि ओघादो भेदाभावा ।

क्योंकि, नपुंसकवेदी सासादनसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अतएव एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमना असंख्यातया भाग है। एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर पल्लोपमना अमरयातया भाग और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यादृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमना असंख्यातया भाग है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अतमुद्भूत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। असंयतसम्यग्दृष्टिना नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अतमुद्भूत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। स्वयतासंयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अतमुद्भूत और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। प्रमत्तसंयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अतमुद्भूत और उत्कर्षसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अप्रमत्तसंयतका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, एक जीवकी अपेक्षा जघन्यसे अतमुद्भूत और उत्कर्षसे कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अपूवकरणका अपेक्षा जघन्यसे अतमुद्भूत और उत्कर्षसे वषपृथक्त्व, तथा एक जीवकी इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणका भी अन्तर जानना चाहिए। इन उक्त जीवोंका उक्त जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरोंकी अपेक्षा ओघसे कोई भेद नही है।

दोण्हं खवाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ २११ ॥

सुगममेदं सुच ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २१२ ॥

कुदो ? अप्पसत्थेदत्तादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २१३ ॥

सुगममेदं ।

अवगदवेदएसु अणियट्ठिउवसम-सुहुमउवसमाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २१४ ॥

सुगममेदं ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २१५ ॥

कुदो ? उनसामगत्तादो ।

नपुसकमेदी अपूर्णकरणसयत्त और अनिवृत्तिकरणसयत्त, इन दोनों क्षपकोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त दोनों नपुसकमेदी क्षपकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २१२ ॥

फ्योंकि, यह अप्रशस्त घेद है (और अप्रशस्त घेदमे क्षपकधेणी चढ़नेवाले जीव
बहुत नहीं होते) ।

उक्त दोनों नपुसकमेदी क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २१३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अपगतवेदियोंमें अनिवृत्तिकरण उपशामक और सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर
है ॥ २१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त दोनों अपगतवेदी उपशामकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २१५ ॥

फ्योंकि, ये दोनों उपशामक गुणस्थान हैं (और ओघमें उपशामकोंका इतना
ही उत्कृष्ट अन्तर घटलाया गया है) ।

१ इया क्षपक्यो खिन्दवत् । त सि १, ८

२ अपगतवेदेषु अनिवृत्तिवारोपशमसूक्ष्मसाम्परायोपशमकगोर्नानाजीवापेक्षया सामा योक्तम् । त सि १, ८

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २१६ ॥

कुदो ? उतरि चडिय हेडा ओदिण्णस्स अतोमुहुत्ततरुलभा ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ २१७ ॥

सुगममेद ।

उवसंतकसायवीदरागल्लदुमत्थाणमंतरं केवचिर कालादो होदि,
णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ॥ २१८ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २१९ ॥

कुदो ? एगसारसुगसमेदिं चडिय ओट्टरिदूण हेडा पडिय अतरिदे उक्कस्सेण
उरसमेदीए वामपुधत्ततरुलभा ।

उक्त दोनों उपशामकोंका एक जीरकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २१६ ॥

फ्योंकि, ऊपर चढ़कर नीचे उतरनेवाले जीरके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया
जाता है ।

उक्त दोनों उपशामकोंका एक जीरकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २१७ ॥

यह सून सुगम है ।

उपशान्तरूपायवीतरागल्लदुमत्थाका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीरोंकी
अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २१८ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उपशान्तरूपायवीतरागल्लदुमत्थाका नाना जीरोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व
है ॥ २१९ ॥

फ्योंकि, एकबार उपशामधेणीपर चढ़कर तथा उतर नीचे गिरकर उत्तरसे
उपशामधेणीका वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

१ एगजीव अति जघन्यपुष्टं चातमुहूर्त । स मि १, ८

२ उपशान्तरूपाय नानाजीरोंकी अपेक्षा सामान्यवत् । स मि १, ८

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २२० ॥

उपरि उपमतरुसायस्स चडणाभागा । हेट्ठा षडिदे वि अगगवेदत्तणेण चेय
उपसंतगुणट्ठाणपडिउज्जणे मभमाभागा ।

अणियट्ठिखवा सुहुमखवा खीणकसायवीदरागछट्टुमत्था अजोगि-
केवली ओघं ॥ २२१ ॥

कुटो ? अगगवेदत्त षडि उहयत्थ अत्थविसेसाभागा ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ २२२ ॥

सुगममेदं ।

एग वेदमगणा समात्ता ।

कसायाणुवादेण कोधकसाइ-माणकसाइ-मायकसाइ-लोहकसाईसु
मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयउवसमा खवा ति मणजोगि-
भंगो ॥ २२३ ॥

उपशान्तरूपायका एग जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २२० ॥

क्याकि, उपशान्तरूपायवीतरागके ऊपर चढनेका अभाव है । तथा नीचे गिरने
पर भी अपगतवेदरूपसे ही उपशान्तरूपाय गुणस्थानको प्राप्त होना सम्भव नहीं है ।

अपगतवेदियोंमें अनिवृत्तिकरणक्षपक, सूक्ष्मसाम्परायक्षपक, क्षीणकपायवीतराग-
छन्नस्थ और अयोगिकेवली जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २२१ ॥

क्योंकि, अपगतवेदत्वके प्रति ओघग्ररूपणा ओर वेदमार्गणाकी प्ररूपणा, इन
दोनोंमें कोई अर्थकी विशेषता नहीं है ।

सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २२२ ॥

यह खून सुगम है ।

इस प्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई ।

रूपायमार्गणाके अनुवादसे क्रोधरूपायी, मानरूपायी, मायारूपायी और लोभ-
कपायियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक और क्षपक तक प्रत्येक
गुणस्थानवर्ती जीवोंका अन्तर मनोयोगियोंके समान है ॥ २२३ ॥

१ एगजीवं प्रति नास्त्यतस् ॥ स वि १, ८

२ खेपाणां सामाययन् । ति १, ८

३ रूपायानुवादेन कोवमानमायालोमरूपायाणां मिथ्यादृष्ट्यावनिवृत्त्युपशमनान्ताना मनोयोगिवत् । द्वयो
क्षपकयोर्नानाजीवपेक्षया उघयेनेन समय । उरूपण मवन्तर सातिरेक । केवललोमस्थ सूक्ष्मसाम्परायोपशमनस्य
नामाजीवपेक्षया सामा यवत् । एगजीवं प्रति नास्त्यतस् । क्षपकस्य तस्य मामान्यवत् । स वि १, ८

मिच्छादिद्वि-अमज्जदमम्मादिद्वि-सज्जदासज्ज-पमत्त-अप्पमत्तसनडाणं मण-
जोगिमंगो होदु, णाणेगनीय पडि अंतराभायेण साधम्मादो । सामणमम्मादिद्वि मम्मा
मिच्छादिद्वीण मणनोगिभगो होदु णाम, णाणाजीवजहण्णुक्कस्म एगसमय पलितेवमम्
अमसेज्जनिभार्गतेरहि, एगजीय पडि अंतराभायेण च साधम्मादो । तिण्हमुमामभा
पि मणनोगिभगो होदु णाम, णाणाजीवजहण्णुक्कस्मेण एगसमयगामपुधत्ततेरहि, एग
जीवस्मत्तराभायेण च साधम्मादो । किंतु तिण्ह खणण मणजोगिभगो ण घडे । इदा !
मणनोगस्सेय कमायाण उम्मासातराभाया । त हि कथ णवदे ? अप्पिदकमायवदिरिवादि
तिदि कमाएहि एग दु ति-सज्जोगरुमेण खणगमेहि चढमाणार्णं बहुनतरुलभा ? ण एम
दोसां, ओषेण महप्पिदमणजोगिभगण्णहाणुररत्तीदो । चदुण्ह कमायाणमुक्कस्मत्तरास्म
उम्मासमेत्तस्सेय मिदीदो । ण पाहुडसुत्तेण विपहिचारो, तस्स भिण्णोउदेसत्तादो ।

शुभा—मिथ्यादृष्टि, असत्यतन्मयदृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और भ्रम
मत्तमयतोंका अन्तर भेदे ही मनोयोगियोंके समान रहा आये, क्योंकि, नाना जाति और
एक जायकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है । सासादनसम्यग्दृष्टि
और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका भी अन्तर मनोयोगियोंके समान रहा आये, क्योंकि, नाना
जायोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय और उत्तरे अन्तर पल्लोपमके असत्यानव
भागी भेदका, तथा एक जायकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है ।
तीनों उपनामकोंका भी अन्तर मनोयोगियोंके समान रहा आये, क्योंकि, नाना जीवोंके
जघन्य और उत्तरे अन्तर प्रमत्त एक समय और चर्यपृथक्कालमें, तथा एक जायकी
अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता पाई जाती है । किंतु तीनों क्षयकोंका अन्तर
मनोयोगियोंके समान घटित नहीं होता है, क्योंकि, मनोयोगियोंके समान क्षयकोंका अन्तर
अन्तर छह मात्र नहीं पाया जाता है ?

प्रतिशुभा—यह कैसे जाना जाता है ?

प्रतिममाधान—विशिक्षित कथायसे व्यतिरिक्त दोष तीन कथायोंके द्वारा एक,
दो और तीन शर्योगके प्रयत्न क्षयक्षेत्रोंपर चढ़नवाले जीवोंका बहुत अन्तर पाया
जाता है ?

तृतीयाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, ओषके साथ विशिक्षित मनोयोगियोंके
समान क्षय अन्तरका अन्तर नहीं मक्ता है, तथा चारों कथायोंका उत्तरे अन्तर छह
मात्र मात्र ही गिना जाता है । ऐसा माननेपर पाहुडसूत्रके साथ व्यभिचार भा नहीं
जाता है, क्योंकि, उसका उपेक्षा सिद्ध है ।

अरुसाईसु उवसंतकसायवीदरागछदुमत्थाणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २२४ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २२५ ॥

उमममेदिमिसयत्तादो ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ॥ २२६ ॥

हेट्ठा ओदरिय अरुमायत्ताणिणामेण पुणो उममत्तपज्जाएण परिणमणाभावा ।

सीणकसायवीदरागछदुमत्था अजोगिकेवली ओधं ॥ २२७ ॥

सजोगिकेवली ओधं ॥ २२८ ॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ उमायमग्गणा समत्ता ।

अरुपायियोंमें उपशान्तरूपायनीतरागछदुमत्थाका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २२४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २२५ ॥

क्योंकि, यह गुणस्थान उपशमश्रेणीका विषयभूत है (और उपशमकोंका उत्कृष्ट
अन्तर इतना ही बतलाया गया है) ।

उपशान्तरूपायनीतरागछदुमत्थाका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २२६ ॥

क्योंकि, नीचे उतरकर अरुपायताका विनाश हृण विना पुन उपशातपर्यायके
परिणमनका अभाव है ।

अरुपायी जीवोंमें क्षीणरूपायनीतरागछदुमत्था और अयोगिकेवली जिनोंका अन्तर
ओघके समान है ॥ २२७ ॥

सयोगिकेवली जिनोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २२८ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार कपायमार्गणा समाप्त हुई ।

१ अरुपाययु उपशातरूपायस्य नानाजीवापेक्षया सामाययत् । स मि १, ८

२ एज्जीव इति नास्त्यतस्य । स मि, १, ८

३ शेषाणां त्रयाणां सामाययत् । स मि १, ८

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि सुदअण्णाणि विभंगणाणीसु
मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च णत्थि
अंतर, णिरंतर' ॥ २२९ ॥

अच्छिण्णपमाहत्तादो गुणमकूतीए अभायादो ।

सासणसम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघ' ॥ २३० ॥

हुदो ? जहण्णुक्कस्सेण एगसमय पलिटोअमामरेअदिभागेहि साधम्मादो ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं' ॥ २३१ ॥

हुदो ? णाणतरगमणे मग्गणणिणामादो ।

आभिणिबोहिय-सुद-ओहिणाणीसु असजदसम्मादिट्ठीणमतर
केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं
॥ २३२ ॥

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्पज्ञानी, श्रुतज्ञानी और विभगज्ञानी जीवोंमें
मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी और एक जीवकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २२९ ॥

क्योंकि, इन तीनों अज्ञानवाले मिथ्यादृष्टियोंका अधिकिष्ठ प्रवाह होनेसे गुण
स्थानके परिवर्तनका अभाव है ।

तीनों अज्ञानवाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २३० ॥

क्योंकि, जघन्य अन्तर एक समय और उत्तम अन्तर पक्ष्योपमके अन्तरवाला
भागकी अपेक्षा समानता है ।

तीनों अज्ञानवाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है
निरन्तर है ॥ २३१ ॥

क्योंकि, प्ररूपणा क्रिय जानेवाले ज्ञानोंसे भिन्न ज्ञानोंको प्राप्त होने पर विभग
मार्गणाका विनाश हो जाता है ।

आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान और अरधिज्ञानवालोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंका
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३२ ॥

१ कानुवादेण मलज्ञानश्रुतज्ञानविभगज्ञानेषु मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया एक जीवापेक्षया अन्तरं । स ति १, ८ २ सासादनसम्यग्दृष्टेनानाजीवापेक्षया सामायकम् । स ति १, ८

३ एतन्नाम अग्नि नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

४ आभिनिबोधिकश्रुतज्ञानविभगज्ञानेषु असयतसम्यग्दृष्टेनानाजीवापेक्षया आस्त्यन्तरम् । स ति १, ८

कुदो ? सब्बकालमविच्छिण्णपपाहत्तादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २३३ ॥

तं जहा- एको असजदसम्मादिट्ठी सजमासजम पडिण्णो । तत्थ सब्बलहुमतो-
मुहुत्तमच्छिय पुणो मि असंजदसम्मादिट्ठी जादो । लद्धमतोमुहुत्तमतं ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ २३४ ॥

तं जहा- जो कोई जीवो अट्टारीमसंतकम्मिओ पुव्वकोडाउट्टिदिसणिसम्मच्छिम-
पज्जत्तएसु उअण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) निसुद्धो (३)
वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) अतोमुहुत्तेण निसुद्धो संजमासजम गत्तं तरिदो । पुव्व-
कोडिकाल सजमासजममणुपालिदूण मदो देवो जादो । लद्ध चदुहि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया
पुव्वकोडी अतर ।

ओधिणाणिसजदसम्मादिट्ठिस्स उच्चदे- एको अट्टारीससंतकम्मिओ सणि-
सम्मच्छिमपज्जत्तएसु उअण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२)
निसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) । तदो अतोमुहुत्तेण ओधिणाणी जादो ।

पर्याकि, तीनों ज्ञानवाले असयतसम्यग्दृष्टियोंका सर्वकाल अविच्छिन्न प्रवाह
रहता है ।

तीनों ज्ञानवाले असयतसम्यग्दृष्टियोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर
अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३३ ॥

जैसे- एक असयतसम्यग्दृष्टि जीव समयमासयमको प्राप्त हुआ । वहां पर सर्व
लघु अन्तर्मुहूर्त काल रह करके फिर भी असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार अन्त
र्मुहूर्तप्रमाण अन्तर लघु हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥ २३४ ॥

मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई जीव पूर्वकोटीकी आयुस्थिति-
वाले सभी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१)
विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) और अन्तर्मुहूर्तसे
विशुद्ध हो समयमासयमको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ । पूर्वकोटीकालप्रमाण
सयमासयमको परिपालन कर मरा और देव हुआ । इस प्रकार चार अन्तर्मुहूर्तोंसे कम
पूर्वकोटीप्रमाण मति श्रुतज्ञानी असयतसम्यग्दृष्टिका अन्तर लघु हुआ ।

अवधिज्ञानी असयतसम्यग्दृष्टिका अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृति-
योंकी सत्तावाला कोई एक जीव सभी सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । छहों
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पश्चात् अन्तर्मुहूर्तसे अवधिज्ञानी होगया । अन्तर्मुहूर्त अवधिज्ञानके साथ रह

१ एकजीव प्रति जघनेनान्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उत्तरें पूर्वकोटी देवोना । स सि १, ८

अतोमुहुत्तमच्छिप (५) संजमामजम पटिरण्णो । पुच्चकोटि मंजमामनममणुपालि
मदो देवो जादो । पचहि अतोमुहुत्तेहि उणिया पुच्चकोटी लद्धमतर ।

सजदासजदाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च
णत्थि अतर, णिरतर' ॥ २३५ ॥

सुगममेव ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त' ॥ २३६ ॥

एद पि सुगम, ओपादो ण्दस्म भेदाभागा ।

उक्कस्सेण छावट्टिसागरोवमाणि सादिरेयाणि' ॥ २३७ ॥

त जहा- एको अट्टारीममतकम्मिओ मणुसेसु उग्रण्णो । अट्टवस्मिओ मनमा
संजमं वेदगमम्मत्त च जुगार पटिरण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण सजम गत्तणतरिय सनमण
पुच्चकोटि गमिय अणुत्तरदेनेसु तेत्तीमाठट्टिदिण्णसु उग्रण्णा (३३) । तणे चुदो पुच्च
कोडाउगंसु मणुमेसु उग्रण्णो । उग्रय पट्टीमिय सजममणुपालिय पुणो ममठ्ठणतेत्तीम

कर (५) सयमासयमरो प्राप्त हुआ । पूर्वकोटीप्रमाण सयमासयमको परिपालनकर म
और देव होगया । इस प्रकार पाच अतमुहुत्तमे कम पूर्वकोटीकालप्रमाण अन्त
लब्ध हुआ ।

मतिज्ञानादि तीनों ज्ञानगाले सयतामयताका अन्तर कितने काल होता है
नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि, ओघप्रकल्पणाले इसका कोई भेद नहीं है ।

तीनों ज्ञानगाले सयतामयताका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर सा
व्यामठ सागरोपम है ॥ २३७ ॥

जैसे- मोहकमकी अट्टाइस प्रकृतियोंकी सत्तावाला एक जीव मनुष्योंमें
हुआ । आठ वर्षका होकर सयमासयम और वेदरसस्यम्भको एक साथ प्राप्त हुआ
पुन अन्तमुहुत्तमे सयमरो प्राप्त करके अन्तरको प्राप्त हो, सयमके साथ पूर्वकोटी
काल गिता कर तेतीस सागरोपमकी आयुस्वित्तिगाले अनुत्तरविमानवासी देवोंमें
हुआ (३३) । वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । तत्र क्ष
सम्पत्त्वको धारणकर और सयमरो परिपालनकर पुन एक समय कम

१ सयमासयम नानाजीवोपेक्षया नात्यन्तम् । स सि १, ८

२ एगजीवं प्रति जघन्यनातमुहुत्त । स सि १, ८

३ उग्रयेण पट्टिदिण्णसु सादिरेयाणि । स सि १, ८

सागरोपमाउडिदिएसु देसेसु उवण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउगेसु मणुसेसु उवण्णो । दीहकालमच्छिदूण मजमामजम पडिण्णो (२) । लद्धमतर । तदो सजम पडिण्णो (३) । पमत्तापमत्तपगगत्तमहस्म कादूण (४) । खगसेठीपाओग्गाअप्पमत्तो जादो (५) । उपरि उ अतोमुहुत्ता । एमड्डुप्पसेहि एकारमअतोमुहुत्तेहि य ऊणियाहि तीहि पुव्व-कोडीहि मादिरेयाणि छात्रडिमागरोपमाणि उक्कस्सतरं । एवमोहिणाणिसजदासजदस्स रि । णरि आभिणिरोहियणाणस्म आदीदो अतोमुहुत्तेण आदिं कादूण अतरानिय मारसअतोमुहुत्तेहि समहियअड्डुप्पस्सण-तीहि पुव्वकोडीहि सादिरेयाणि छात्रडिसागरोपमाणि चि वत्तवर् ।

एद उक्खाण ण भदयं, अप्पतरपरवणादो । तदो दीहतरड्डुमग्गा परवणा कीरदे । एक्को अट्ठापीसमंतकम्मिओ मणिगसम्मुच्छिमपज्जत्तएसु उवण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयो (१) त्रिस्सतो (२) त्रिसुद्धो (३) वेदगमम्मत्त सजमासंजम च समगं पडिण्णो । अतोमुहुत्तमच्छिउय (४) असजदमम्माडिद्वी जादो । पुव्वकोडिं गमिय

सागरोपमनी आयुस्थितिजाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा दीर्घकाल तक रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ (१) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् सयमको प्राप्त हुआ (२) और प्रमत्त अप्रमत्त-गुणस्थानसम्यग्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (३) क्षपकश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणीसम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्त मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पूर्वकोटियोंसे अधिक दयासठ सागरोपम तीनों धानवाले सयतासयतोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

इसी प्रकारसे अवधिज्ञानी सयतासयतका भी उत्कृष्ट अन्तर जानना चाहिए । विशेष बात यह है कि आभिनिबोधिकगानोंके आदिके अन्तर्मुहूर्तसे प्रारम्भ करने अन्तरको प्राप्त कराने ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे अधिक आठ वर्षसे कम तीन पूर्वकोटियोंसे साधिक दयासठ सागरोपमकाल अन्तर होता है, ऐसा रहना चाहिए ।

शंका—उपर्युक्त व्याख्यान ठीक नहीं है, क्योंकि, इस प्रकार अल्प अन्तरकी प्ररूपणा होती है । अतः दीर्घ अन्तरके लिए अन्य प्ररूपणा की जाती है— मोहसर्मकी अट्टारिज प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव, सभी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) त्रिधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदक-सम्पत्त्यको और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ । सयमासयमके साथ अन्तर्मुहूर्त रहकर (४) असयतसम्यग्दृष्टि होगया । पुनः पूर्वकोटीकाल वितारक तेरह सागरो

लतप-काविद्वेदेसु तेरससागरोपमाउद्विदिषु उग्रण्णो (१३) । तदो चुदो पुञ्च कोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो । तत्थ सजममणुपालिय वानीममागरोपमाउद्विदिषु देवेसु उग्रण्णो । (२२) । तदो चुदो पुञ्चकोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो । तत्थ मजममणु पालिय खइय पट्ठिय एक्कचीससागरोपमाउद्विदिषु देवेसु उग्रण्णो (३१) । तदो चुदो पुञ्चकोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो अंतोमुहुत्ताग्नेमे संसारे सजमामजम गदो । लद्धमत्तर (५) । विसुद्धो अप्पमत्तो जादो (६) । पमत्तापमत्तपराउत्तसहस्स कादूण (७) रउगसेठीपाओग अप्पमत्तो जादो (८) । उग्रि छ अतोमुहुत्ता । एवं चोदमेहि अंतोमुहुत्तेहि उगाचदुपुञ्च कोडीहि सादिरैयाणि छाउद्विसागरोपमाणि उरुस्समत्तर । एवमोधिगाणिसजजामजदस्स पि अतर वत्तव । णग्रि आभिणिबोहियणाणस्म आदिदो अतोमुहुत्तेण आदि कादूण अंतरा वेदव्वो । पुणो पण्णारमहि अतोमुहुत्तेहि उगाणि चदुहि पुञ्चकोडीहि सादिरैयाणि छाउद्वि सागरोपमाणि उपादेदव्वानि ? णेद घडदे, सण्णिमम्मच्छिमपज्जत्तएसु सजमासजमस्सेव ओहिणाणुरसममम्मत्ताण समगभावादो । त कथ णग्गदे ? ' पचिदिषु उवसामेतो

पमकी आयुषाले एतव फापिष्ठ देवोंमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् वहासे ज्युत हो पूर्व कोटीकी आयुषाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा पर सयमको परिपालन कर बाईस सागरोपमकी आयुस्वितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ (२२) । वहासे ज्युत होकर पूर्वकोटीकी आयुषाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहा पर सयमको परिपालन कर और क्षायिक सम्यक्त्वकी धारणकर इकतीस सागरोपमकी आयुस्वितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ (३१) । तत्पश्चात् वहासे ज्युत होकर पूजकोटीकी आयुषाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और सत्सारेके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रह जानेपर सयमासयमको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (५) । पश्चात् विद्युत् हो अग्रमत्तसयत हुआ (६) । पुनः प्रमत्त अग्रमत्तगुणस्थान सम्यग्धी सहस्रों परावर्तनोंको करके (७) क्षपकध्रेणीके योग्य अग्रमत्तसयत हुआ (८) । इनमें ऊपरके क्षपकध्रेणीसम्यग्धी छह अन्तर्मुहूर्त और मिलाय । इस प्रकार चौदह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चार पूर्वकोटियोंसे साधिक छयामठ सागरोपम उत्पन्न अन्तर होता है । इसी प्रकारसे अवधिज्ञानी सयतासयतता भी उत्पन्न अन्तर कहना चाहिये । विशेष बात यह है कि आभिनिबोधिज्ञानके आदिके अन्तर्मुहूर्तसे आदि करके अन्तरको प्राप्त कराना चाहिये । पुनः पद्वद अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चार पूर्वकोटियोंसे साधिक छयामठ सागरोपम उत्पन्न करना चाहिये ?

समाधान—उपर्युक्त शक्योंमें बतलाया गया यह अन्तरकाल घटित नहीं होता है, क्योंकि, सभी सम्मूर्च्छिम पर्याप्ततामें सयमासयमके समान अवधिज्ञान और उपशम सम्यक्त्वकी समवसाका अभाव है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है कि सभी सम्मूर्च्छिम पर्याप्तक जीवोंमें अवधिज्ञान और उपशमसम्यक्त्वका अभाव है ?

गम्भोऽवकृतिएसु उवसामेदि, णो सम्मुच्छिमेसु' ति चूलियासुत्तादो । ओहिणाणाभावो कुदो णव्वदे ? सम्मुच्छिमेसु ओहिणाणमुप्पाइय अतरपरूणयआइरियाणमणुवलंभा । भग्दु णाम सणिसम्मुच्छिमेसु ओहिणाणाभावो, कहमोघम्मि उत्ताणमाभिणिवोहिय-सुदणाणाण तेसु संभयताणमेवेदमतर ण उच्चदे ? ण, तत्थुप्पण्णाणमेवनिहंतरासभवादो । त कुदो णव्वदे ? तहा अवक्खाणादो । अहवा जाणिय वत्तव्वं । गम्भोऽवकृतिएसु गमिद-अट्टेतालीम (-पुव्वकोडि-) वस्सेसु ओहिणाणमुप्पादिय किण्ण अंतराभिदो ? ण, तत्थ नि ओहिणाणमभयं परूणयंतवक्खाणाइरियाणमभावादो ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २३८ ॥

समाधान—'पचेन्निद्रयोंमें दर्शनमोहका उपशमन करता हुआ गम्भोत्पन्न जीवोंमें ही उपशमन करता है, सम्मूर्च्छिमाँमें नहीं,' इस प्रकारके चूलिकासूत्रसे जाना जाता है ।

शंका—सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें अवधिज्ञानका अभाव कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, अवधिज्ञानको उत्पन्न कराके अन्तरके प्ररूपण करनेवाले आचार्योंका अभाव है । अर्थात् किसी भी आचार्यने इस प्रकार अन्तरकी प्ररूपणा नहीं की ।

शंका—सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें अवधिज्ञानका अभाव भले ही रहा भाये, किंतु ओघप्ररूपणामें कहे गये, और सही सम्मूर्च्छिम जीवोंमें सम्भव आभिनिबोधिक-ज्ञान और श्रुतज्ञानका ही यह अन्तर है, ऐसा क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें उत्पन्न होनेवाले जीवोंके इस प्रकार अन्तर सम्भव नहीं है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, इस प्रकारका व्याख्यान नहीं पाया जाता है । अथवा, जान करके इसका व्याख्यान करना चाहिए ।

शंका—गम्भोत्पन्न जीवोंमें ध्यतीत की गई अट्टतालीस पूर्वकोटी ययोंमें अवधि-ज्ञान उत्पन्न करके अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उनमें भी अवधिज्ञानकी सम्भवताको प्ररूपण करने-वाले व्याख्यानाचार्योंका अभाव है ।

तीनों ज्ञानवाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २३८ ॥

सुगममेव ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २३९ ॥

त जहा— एगजीवपमत्तसज्जदा अप्पिदण्णाणेण सह अण्णगुण गतूण पुणो पल्लट्टिय
सच्चजहण्णेण कालेण त चेत्त गुणमागदा । लद्धमतोमुहुत्त जहण्णतर ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ २४० ॥

त जहा— एक्को एगमत्तो अप्पमत्तो (१) अपुब्बो (२) अणियट्ठी (३)
सुहुमो (४) उगमत्तो (५) होट्ठण पुणो पि सुहुमो (६) अणियट्ठी (७) अपुब्बो (८)
अप्पमत्तो जादो (९) । पट्ठासण काल गदो समउणतेत्तीससागरोवमाउट्ठिएसु
देवेषु उगमण्णो । तत्तो चुदो पुब्बकोडाउएसु मणुस्सेसु उगमण्णो । अतोमुहुत्तागमेसे
जीविए एगमत्तो जादो (१) । लद्धमत । तदो अप्पमत्तो (२) । उगिर छ अतोमुहुत्ता ।
अंतरस्स अन्नतरिमेषु नगसु अतोमुहुत्तेसु बाहिरिहअट्ठअतोमुहुत्तेसु सोहिदेसु एगो
अतोमुहुत्तो अचिट्ठे । तेत्तीस सागरोवमाणि एगेणतोमुहुत्तेण अन्नहियपुब्बकोडीए

यह सूत्र सुगम है ।

तीनों ज्ञानमाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर
अन्तर्मुहूर्त है ॥ २३९ ॥

जैसे— प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत जीव विवक्षित ज्ञानके साथ अन्य गुण
स्थानको जाकर और पुन पलटकर सर्वजघन्य कालसे उसी ही गुणस्थानको आये ।
इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर मायिक तेत्तीस सागरोपम
है ॥ २४० ॥

जैसे— कोई एक प्रमत्तसयत जीव, अप्रमत्तसयत (१) अपूर्वकरण (२) अनिष्टि
करण (३) मूढसाम्पराय (४) और उपशान्तरूपाय हो करने (५) फिर भी सूक्ष्मसाम्प
राय (६) अनिष्टिकरण (७) अपूर्वकरण (८) और अप्रमत्तसयत हुआ (९) । तथा गुणस्थानको
बालक्षय हो जानेसे मरणको प्राप्त हो एक समय कम तेत्तीस सागरोपमकी आयुस्थिति
घाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । पश्चात् वहासे न्युत हो पूवकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न
हुआ और जीवनके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अशिश्ट रहने पर प्रमत्तसयत हुआ (१) । इस
प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पश्चात् अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इनमें ऊपरने छह अन्त
मुहूर्त और मिलाये । अतरे मीतरी नौ अन्तर्मुहूर्तोंमेंसे बाहरी आठ अन्तर्मुहूर्तोंने घटा देने
पर एक अन्तर्मुहूर्त अशिश्ट रहता है । एसे एक अन्तर्मुहूर्तसे अधिक पूर्वकोटीसे साधिक

१ एगजीव एणि तथयेनत्तमुहुत्त । म पि १, ८

२ उत्तराण वयधिरुत्तागतामाणि सानिरयाणि । म पि १, ८

मादिरियाणि उक्कस्मत्तरं । एउ विमेमजोएदूण उच्च । विमेमे जोडज्जमाणे अंतरम्भतरादो अप्पमत्तद्वाओ तामि अतर-वाहिरिया एकका खगमेटीपाओग्गअप्पमत्तद्वा तथेगद्वादो दुगुणा सरिमा चि अण्णेदव्या । पुणो जतरम्भतराओ छ उयमामगद्वाओ अत्थि, तामि वाहिरिल्लएमु अमिद्धमत्तसु अतोमुहुत्तेसु तिण्णि खगद्वाओ अण्णेदव्या । एम्किस्से उयमतद्वाए एगखगद्वाद्धं विमोहिदे जसिद्धेहि अद्धुद्धतोमुहुत्तेहि ऊणियाए पुव्वकोडीए सादिरियाणि तेत्तीम सागरोपमाणि जतर होदि । ओधिणाणिपमत्तमंजदमप्पमत्तादिगुण णेदूण अंतराणिय पुव्व उ उक्कस्मत्तर वत्तव्व, णत्थि एत्थ विमेमो ।

अप्पमत्तस्म उच्चदे- एकको जप्पमत्तो जपुव्वो (१) अणियड्डी (२) सुहुमो (३) उयमतो (४) होदूण पुणो वि सुहुमो (५) अणियड्डी (६) अपुव्वो होदूण (७) काल गदो ममउणतेत्तीमसागरोपमाउट्ठिण्णसु टेरेसु उयण्णो । ततो चुदो पुव्वकोडाउएमु मणुमेसु उयण्णो । जतोमुहुत्तायमेमे सगोरे अप्पमत्तो जादो । लद्धमत्तर (१) । तदो पमत्तो (२) जप्पमत्तो (३) । उरि छ जतोमुहुत्ता । अतरस्म अम्भतरिमाओ छ उय-सामगद्वाओ अत्थि, तामि अतरवाहिरिल्लाओ तिण्णि खगद्वाओ अण्णेदव्या । अतर-

तेतीस सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इस प्रकारसे यह अन्तर विशेषको नहीं जोड़ करके कहा है । विशेषके जोड़े जानि पर अन्तरके आभ्यन्तरसे अप्रमत्तसयतका काल और उनसे अन्तरका बाहिरी एक अपरश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयतका काल होता है । उनमेंसे एक गुणस्थानके कालसे दुगुणा सप्तशकाल निकाल देना चाहिए । पुन अन्तरके आभ्यन्तर छह उपशामकाल होते ह । उनसे बाहिरी अग्रशिष्ट सात अन्तर्मुहूर्तोंसे तीन क्षपक गुणस्थानोंवाले अपरकाल निकाल देना चाहिए । एक उपशान्तकालमेंसे एक क्षपकालका बाधा भाग घटा देनेपर अग्रशिष्ट सात तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटीसे सात्रिक तेतीस सागरोपमकालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । अग्रधिग्रानी प्रमत्तसयतको अप्रमत्त आदि गुणस्थानमें ले जाकर बार अन्तरको प्राप्त कराने पूर्वके समान ही उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए, इनमें ओर कोई विशेषता नहीं है ।

तीनों क्षान्त्याले अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते ह- एक अप्रमत्तसयत, अपूर्वकरण (१) अनित्यत्तिरण (२) सूक्ष्मसाम्पराय (३) उपशान्तरूपाय (४) हो करके फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (५) अनित्यत्तिरण (६) ओर अपूर्वकरण हो कर (७) मरणको प्राप्त हुआ और एक समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । उधाने च्युत होकर पूर्वकोटिनी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । ससारके अन्तर्मुहूर्त अग्रशेष रह जाने पर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (१) । पश्चात् प्रमत्तसयत (२) अप्रमत्तसयत हुआ (३) । इनमें क्षपकश्रेणीसम्बन्धी ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त मिलाये । अन्तरके आभ्यन्तर उपशामकसम्बन्धी छह काल होते ह । उनके अन्तरसे बाहिरी तीन क्षपकाल कम कर देना चाहिए । अन्तरके आभ्यन्तरवाले उपशान्त

अन्तरिमा ए उपसत्तद्वा ए अन्तर-बाहिरस्यगद्वा ए अद्वयमणेद्वय । अगसिद्वेहि अद्वयद्वयो
मुहृत्तेहि ऊणपुच्यमोडी ए सादिरियाणि तेचीम सागरोपमाणि उक्कस्मत्त होदि । मग्गि
पग्गि अन्तरस्स भारमत्त अतोमुहृत्तेमु अन्तर-बाहिरस्यगद्वा ए अतोमुहृत्तेमु मोहिद्वेसु अग्गमा व
अतोमुहृत्ता । एदेहि ऊणाण पुच्यमोडी ए सादिरियाणि तेचीम सागरोपमाणि उक्कस्मत्त
होदि । एवमोहिणाणिणो नि वच्च, निसेमामाया ।

चदुण्हमुवसामगाणमन्तरं केवचिरं कालादो होदि, गाणाजीवं
पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४१ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २४२ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहृत्ते ॥ २४३ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण छावट्ठि सागरोवमाणि सादिरियाणि ॥ २४४ ॥

बालमंसे अन्तरसे बाहिरी क्षपन्नालका आधा काल निम्नालता चाहिय । अयसिष्ट एवं
हुए साधे पाव अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटीसे साधिक तेतीस सागरोपम उत्कृष्ट अन्तर
होता है । सत्तस पक्षमें अन्तरके भीतरी सात अन्तर्मुहूर्तोंसे अन्तरके बाहिरी नौ अन्त
र्मुहूर्तोंमेंसे छटा देने पर अवशेष दो अन्तर्मुहूर्त रहते हैं । इनसे कम पूर्वकोटीसे साधिक
तेतीस सागरोपमप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकारसे अधिगानीका भी अन्तर
बहना चाहिय, नयानि, उसमें कोई विरोधता नही है ।

तीनों ज्ञानशाले चारा उपग्रामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २४१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्त है ॥ २४२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २४३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक ज्यासठ सागरोपम
है ॥ २४४ ॥

१ चदुणागपञ्चकानां नानाजातसंख्या मामा यवत् । स वि १, ८

२ एगजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

३ उत्कर्षेण उत्कृष्टसागरोपमाणि सान्निरेयाणि । स वि १, ८

त जहा- एकओ अट्टागीससंतरुम्मिओ पुव्वसोडाउअमणुसेसु उअण्णो । अट्ट-
वस्सिओ वेदगमम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगअ पडिअण्णो (१) । तदो पमत्तापमत्तपराअत्त-
सहस्स कादूण (२) उअसममेटीपाओग्गमिसोहीए मिसुद्वो (३) अपुव्वो (४) अणि-
यट्ठी (५) सुहुमो (६) उवसतो (७) पुणो मि सुहुमो (८) अणियट्ठी (९)
अपुव्वो (१०) होदूण हेट्ठा पडिय अतरिदो । देमूणपुव्वसोडिं मजममणुपालेदूण मदो
तेचीमसागरोअमाउट्ठिदिएसु देअसु उअण्णो । तदो चुदो पुव्वसोडाउएसु मणुसेसु उअ-
वण्णो । रइय पट्ठमिय संजम कादूण काल गदो तेचीसमागरोअमाउट्ठिदिएसु देअसु उअ-
वण्णो । तदो चुदो पुव्वसोडाउओ मणुसो जादो सजम पडिअण्णो । अतोमुहुत्ताअसेसे
संसारे अपुव्वो जादो । लद्धमतर (११) । अणियट्ठी (१२) सुहुमो (१३) उअसंतो
(१४) भूओ सुहुमो (१५) अणियट्ठी (१६) अपुव्वो (१७) अप्पमत्तो (१८)
पमत्तो (१९) अप्पमत्तो (२०) । उअरि छ अतोमुहुत्ता । अट्ठहि वस्मेहि छव्वीसतो-
मुहुत्तेहि य उणा तीहि पुव्वसोडीहि सादिरेयाणि छानड्ढिमागरोअमाणि उअकस्सतर होदि ।
अथअ चत्तारि पुव्वसोडीओ तेअस-वागीअ-एअकचीससागरोअमाउट्ठिदिदेअसु उप्पाइय

जैसे- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला कोई एक जीव पूर्वकोटीकी
आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर वेदकसम्यक्त्व और अग्रमत्त-
गुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । तत्पश्चात् प्रमत्त जोर अग्रमत्तगुणस्थान-
सम्यग्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (२) उपशान्तश्रेणीके प्रायोग्य विनुद्धिसे विनुद्ध
होता हुआ (३) अपूर्वकरण (४) अनितृत्तिकरण (५) सूक्ष्मसाम्पराय (६) उपशान्त-
कषाय (७) होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (८) अनितृत्तिकरण (९) अपूर्वकरण (१०)
होकर तथा नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ । कुछ कम पूर्वकोटीकालप्रमाण
सयमको परिपालन कर मरा और तेतीस सागरोपम आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ ।
पश्चात् च्युत होकर पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और धार्मिकसम्यक्त्वकी
धारण कर और सयम वारण करके मरणको प्राप्त हो तेतीस सागरोपमकी आयुस्थिति-
वाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत होकर पूर्वकोटी आयुवाला मनुष्य हुआ और
पयासमय सयमको प्राप्त हुआ । पुन ससारके अन्तर्मुहूर्त अशेष रह जाने पर अतृ-
करणगुणज्ञानवर्ती हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (११) । पश्चात् अनितृत्ति-
करण (१२) सूक्ष्मसाम्पराय (१३) उपशान्तकषाय (१४) होकर पुन सूक्ष्मसाम्पराय (१५)
अनितृत्तिकरण (१६) अपूर्वकरण (१७) अग्रमत्तसयत (१८) प्रमत्तसयत हुआ (१९) ।
पुन अग्रमत्तसयत हुआ (२०) । इनमें ऊपरके क्षपकश्रेणीसम्यग्धी और भी उ-
र्मुहूर्त मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और छव्वीस अन्तर्मुहूर्तोंसे कम तीन पूर्वकोटीके
साधक दयासठ सागरोपम उत्कृष्ट अन्तर होता है । अथवा, तेअस, वाईस औ-
इअस

वत्तच्चाजो । एत चेत् तिण्हमुत्तमामगाण । णवरि चट्ठीम वारीम गीम अतोमुहुत्ता
ऊणा वादच्चा । एतमोहिणाणीण पि वत्तच्च, मिममाभागा ।

चट्ठुण्ह सवगाणमोघं । णवरि विसेसो ओधिणाणीसु समाण
वासपुधत्तं ॥ २४५ ॥

कृदो ? ओधिणाणीण पाण्णं मममाभागा ।

मणपज्जवणाणीसु पमत्त-अप्पमत्तसज्जाणमतरं केवचिरं कालोदो
होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरत्तरं ॥ २४६ ॥
सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ २४७ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ २४८ ॥

सागरोपम आयुष्मि स्थितिगाले देवोंमें उपर करकर मनुष्यभयसम्बन्धी चार पूर्वकीटिया
कहना चाहिये । इसी प्रकारसे दोष तीन उपशामकोंका भी अन्तर कहना चाहिये । विशेष
बात यह है कि अनिर्वाच्यकरणके चौबीस अन्तमुहूर्त, सूक्ष्मसाम्परायने पाईस अन्तमुहूर्त
और उपशान्तकथायन गीम अन्तमुहूर्त कम कहना चाहिये । इसी प्रकारसे उपशामक
अग्निज्ञानियोंका भा अन्तर कहना चाहिये, क्योंकि, उसमें भी कोई विशेषता नहा है ।

तीनों ज्ञानराले चागें अपकोंका अन्तर जोघके समान है । विशेष बात यह है
कि अग्निज्ञानियोंमें क्षपकोंका अन्तर पर्ययस्वरूप है ॥ २४५ ॥

क्योंकि, अग्निज्ञानियोंके प्राय होनेका अभाव है ।

मन पर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्त और अप्रमत्त मयतोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाता जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहा है, निग्नर है ॥ २४६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जवन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है ॥ २४७ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है ॥ २४८ ॥

१ चट्ठुणा क्षपका सामायवत् । किन्तु अग्निज्ञानिषु नानाजीवापेक्षया जययनेक समय, उत्तमप
क्षपयवत् । एतजीव प्रति नास्त्यनम् । स मि १, ८

२ प्रतिषु उप्पाण्ण ' इति पाठ ।

३ मन पर्ययज्ञानिषु प्रमत्ताप्रमत्तस्यतयोनाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

४ एतजीव प्रति जययस्य कृष्टं चातमुहूर्त । स मि १, ८

तं जहा—एकको पमत्तो मणपञ्जराणी अप्पमत्तो होदुण उतरि चट्ठिय हेट्ठा ओदरिदुण पमत्तो जादो । लद्धमतर । अप्पमत्तस्स उच्चदे—एकको अप्पमत्तो मणपञ्जराणी पमत्तो होदुणतरिय सव्वचिरेण कालेण अप्पमत्तो जादो । लद्धमतर । उअसमसेट्ठि चट्ठाप्रिय किण्णंतराविदो ? ण, उअसमसेट्ठिमव्वद्वाहिंतो पमत्तद्धा एक्का चेअ मसेज्जगुणा त्ति गुरूदेमादो ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २४९ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २५० ॥

एद पि सुगमं ।

—

जैसे—एक मन पर्ययज्ञानी प्रमत्तसयत जीअ अप्रमत्तसयत हो ऊपर चढकर ओर नीचे उतर कर प्रमत्तसयत हो गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयतका अन्तर रुहते ह—एक मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयत जीअ प्रमत्तसयत होकर अन्तरको प्राप्त हो अति दीर्घकालसे अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

शंका—मन पर्ययज्ञानी अप्रमत्तसयतको उपशमधेणी पर चढाकर पुन अन्तरको प्राप्त क्यों नहीं कराया ?

ममाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमधेणीसम्यन्धी सभी अर्थात् चार चढनेके ओर तीन उतरनेके, इन सब गुणस्थानोंसम्यन्धी कालोंसे अकेले प्रमत्तसयतका काल ही सप्त्यातगुणा होता है, ऐसा गुरुका उपदेश है ।

मन पर्ययज्ञानी चारों उपशमकोका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीओंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीओंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्तर है ॥ २५० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

.. ..

१ चदुण्हमुपशमराणां नानाजीवापेक्षया साप्तायवत् । स वि १, ६,

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २५१ ॥

सुगममेदं ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूणं ॥ २५२ ॥

त जहा- एकको पुव्वकोडाउएमु मणुमेसु उग्रण्णो अतोमुहुत्तमहियअट्टमस्मेहि मज्जम पडिण्णो (१) । पमत्तापमत्तसज्जदट्टाणे मादामादनधपरात्तमहस्म कादूण (२) तिसुद्धो मणपज्जणणी जादो (३) । उग्रममेटीपाओग्गअप्पमत्तो होदूण सेडीमुग्गदो (४) । अपुग्गो (५) अणियट्ठी (६) सुद्धो (७) उग्रमत्तो (८) पुणो नि सुद्धो (९) अणियट्ठी (१०) जपुग्गो (११) पमत्तापमत्तमनदट्टाणे (१२) पुव्वकोडि मच्छिदूण अणुदिसादिसु आउअ गधिदूण अतोमुहुत्ताममे जीविण तिसुद्धो अपु उग्रसामगो जादो । णिदा पयलाण उग्रोच्छिण्णे काल गदो देवो जादो । अट्टमस्मेहि घागमअतो मुहुत्तेहि य ऊणिपा पुव्वकोडी उक्कस्मत्तरं । एउ तिण्टमुग्रमामगाणं । णरि जहाक्रमेण दस णर अट्ट अतोमुहुत्ता समओ य पुव्वकोडीदो ऊणा त्ति वचच्य ।

मन पर्ययज्ञानी चागें उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त है ॥ २५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥ २५२ ॥

जैसे- कोई एक जीव पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और अन्तर्मुहूर्तसे अधिक आठ वर्षके द्वारा समयको प्राप्त हुआ (१) । पुन प्रमत्त अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें जाता और अमाताप्रवृत्तियोंके सहस्रों वर्ष परित्यक्तोंको करके (२) विमुक्त हो मन पर्ययज्ञानी हुआ (३) । पश्चात् उपशमभ्रंशके योग्य अप्रमत्तसयत होकर भ्रंशको प्राप्त हुआ (४) । तब अपूर्वकरण (५) अनिरुक्तिकरण (६) सूक्ष्मसाम्पराय (७) उपशमतरुपाय (८) पुनरपि सूक्ष्मसाम्पराय (९) अनिरुक्तिकरण (१०) अपूर्वकरण (११) होकर प्रमत्त और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें (१२) पूर्वकोटीकाल तक रहकर अनुदिश आदि विमानवासी दयोंमें आयुको राधरर जीवनेके अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहने पर विमुक्त हो अपूर्वकरण उपशामर हुआ । पुन निद्रा तथा प्रचला, इन दो प्रवृत्तियोंके बीच विच्छेद हो जाने पर मरणको प्राप्त हो दब हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और बारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटी कालप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार शेष तीन मन पर्ययज्ञानी उपशामकोंका भी अन्तर होता है । विशेषता यह है कि उनके यथाक्रमसे दश नौ और आठ अन्तर्मुहूर्त तथा एक समय पूर्वकोटीसे कम कहना चाहिये ।

१ एगजीवं प्रति जपयेनात्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उत्तर्यण पुव्वगी देखना । स सि १, ८

चटुण्हं खवगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
जहण्णेण एगसमयं ॥ २५३ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २५४ ॥

कुदो ? मणपज्जग्गणाणं सयमसेदिं चट्टमाणाण पउर संभत्ताभात्ता ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २५५ ॥

एद पि सुगम ।

केवलणाणीसु सजोगिकेवली ओघं ॥ २५६ ॥

णाणेगजीवअतराभाणेण सावम्मादो ।

अजोगिकेवली ओघं ॥ २५७ ॥

सुगममेद सुत्त ।

एन णाणमग्गणा समत्ता ।

मनःपर्ययज्ञानी चारों क्षपकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा जग्न्यसे एक समय अन्तर है ॥ २५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथग्भूत है ॥ २५४ ॥

क्योंकि, मन पर्ययज्ञानके साथ क्षपरुध्रेणीपर चढ़नेवाले जीवोंका प्रचुरतासे
होना समय नहीं है ।

मनःपर्ययज्ञानी चारों क्षपकोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ २५५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

केवलज्ञानी जीवोंमें सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २५६ ॥

क्योंकि, नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे समानता है ।

अयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ २५७ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

संजमाणुवादेण संजदेसु पमत्तसजदप्पहुडि जाव उवसंतकसाय
वीदरागछुदुमत्था त्ति मणपज्जवणाणिमगो ॥ २५८ ॥

पमत्तापमत्तमजदाण णाणाजीव पडुच्च णत्थि जतर, णिरतर, एगजीव पडुच्च
जहणुनरुस्सेण अतोमुहुत्त । चदुण्हमुत्तममगाण णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमओ,
उत्तरुस्सेण वासपुधत्त, एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्करुस्सेण देवणपुत्तरोही
अतरमिटि तदो त्रिसेमाभावा ।

चदुण्हं सवा अजोगिकेवली ओघ ॥ २५९ ॥

सुगम ।

सजोगिकेवली ओघ ॥ २६० ॥

एद पि सुगम ।

सामाड्य छेदोवट्ठावणसुद्धिसजदेसु पमत्तापमत्तसजदाणमतर केव-
चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतर' ॥ २६१ ॥
गयत्थ ।

सयममार्गणाके अनुमादसे सयतोंमें प्रमत्तसयतोंको आदि लेकर उपशान्तकषाय-
वीतरागछद्मत्थ तत्त सयतोंका अन्तर मन पर्ययनानियोंके समान है ॥ २५८ ॥

प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है,
एक जीवकी अपेक्षा अर्धय और उत्तर अतर अतर्मुहते है । चारों उपशान्तकोंका नाना
जीवोंकी अपेक्षा अर्धय अतर एक समय और उत्तर अतर अतर्मुहते है । एक जीवकी
अपेक्षा अर्धयले अतर्मुहते और उत्तर कुछ कम पूर्वकोटीप्रमाण अन्तर है, इसलिए
उससे यहापर कोई विशेषता नहीं है ।

चारों अपक और अयोगिकेवली सयतोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २५९ ॥

यह सय सुगम है ।

सयोगिकेवली सयतोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २६० ॥

यह सय भी सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्त तथा अप्रमत्त सयतोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २६१ ॥

इस सूत्रका अर्थ पहले कहा जा चुका है ।

१. सयमाणुवादिन सामायिकछेदोपरवापनशुद्धिसयतेषु प्रमत्ताप्रमत्तयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् ।
तत्ति १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६२ ॥

त जहा- पमत्तो अप्पमत्तगुणं गतूण सव्वजहण्णेण कालेण पुणो पमत्तो जादो । लद्धमतर । एमप्पमत्तस्म वि वत्तव्य ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६३ ॥

तं जहा- एक्को पमत्तो अप्पमत्तो होदूण चिरकालमच्छिय पमत्तो जादो । लद्धमतरं । अप्पमत्तस्म उच्चदे- एक्को अप्पमत्तो पमत्तो होदूण सव्वचिरमंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पमत्तो जादो । लद्धमंतर ।

दोणहुमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २६४ ॥

अजगयत्थ ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ २६५ ॥

सुगममेद ।

उक्त समयतोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६२ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तगुणस्थानको जाकर सर्वजघन्य कालसे पुन प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । इसी प्रकार अप्रमत्तसयतका भी अंतर कहना चाहिये ।

उक्त समयतोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६३ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत होकर और दीर्घ अन्तर्मुहूर्तकाल तक रह करके प्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव प्रमत्तसयत हो करके सत्रसे बड़े अन्तर्मुहूर्तकाल तक रहकर अप्रमत्तसयत होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अपूर्वरूप और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ २६४ ॥

इस सूत्रका अर्थ ज्ञात है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २६५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ एगजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

२ द्वयोस्वपमकयोर्नानाजीवोपेक्षया सामायकत्वं । स ति १, ८

णरि समयाहियणअतोमुहुत्ता ऊणा कादव्या ।

दोण्हं खवाणमोधं ॥ २६८ ॥

सुगममेदं ।

परिहारसुद्धिसंजदेसु पमत्तापमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २६९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७० ॥

त जहा- एकको पमत्तो परिहारसुद्धिसंजदो अपमत्तो होदूण सच्चलहु पमत्तो
जादो । लद्धमतरं । एवमप्यमत्तस्म पि पमत्तगुणेण अतराणिय वत्तव्य ।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७१ ॥

एदस्सत्थो जघा जहण्णस्स उत्तो, तथा वत्तव्वो । णरि सच्चचिरेण कालेण
पल्लङ्गावेदव्वो ।

इनका अन्तर एक समय अधिक नो अन्तर्मुहूर्त कम करना चाहिए ।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों
क्षपणोंका नाना और एक जीनकी अपेक्षा जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर ओघके समान
है ॥ २६८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं प्रमत्त और अप्रमत्त संयतोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीयोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २६९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीयोंका एक जीनकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २७० ॥

जैसे- परिहारशुद्धिसंयमवाला कोई एक प्रमत्तसंयत जीव अप्रमत्तसंयत होकर
सर्गलघु कालसे प्रमत्तसंयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हो गया । इसी प्रकार
परिहारशुद्धिसंयमी अप्रमत्तसंयतको भी प्रमत्तगुणस्थानके द्वारा अन्तरको प्राप्त कराकर
अन्तर कहना चाहिए ।

उक्त जीयोंका एक जीनकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २७१ ॥

इस सूत्रका अर्थ जैसा जघन्य अन्तर बतलाते हुए कहा है, उसी प्रकारसे कहना
चाहिए । विशेषता यह है कि इसे यहां पर सर्व दीर्घकालसे पलटाना चाहिए ।

१ द्वयो क्षपण्यो सामायवत् । स वि १, ८

२ परिहारशुद्धिसंयतेषु प्रमत्ताप्रमत्तयोर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स वि १, ८,

३ एकजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स वि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २६६ ॥

त जहा- एक्को ओदरमाणो अपुब्बो अप्पमत्तो पमत्तो पुणो अप्पमत्तो होदूण अपुब्बो जादो। लद्धमत्तर। एमणियट्ठिस्म मि। णरि पच अंतोमुहुत्ता जहण्णत्तर होदि।

उक्कस्सेण पुब्बकोडी देसूण ॥ २६७ ॥

त जहा- एक्को पुब्बकोडाउएसु मणुसेसु उग्रण्णो। अट्ठवस्साणमुवरि संनम पडिक्खणो (१)। पमत्तापमत्तसजदट्ठाणे सादामादनधपरागत्तिसहस्स कादूण (२) उग्रसममेडीपाओगाअप्पमत्तो (३) अपुब्बो (४) अणियट्ठी (५) सुहुमो (६) उग्रसंतो (७) पुणो नि सुहुमो (८) अणियट्ठी (९) अपुब्बो (१०) हेट्ठा पडिय अतगिदो। पमत्तापमत्तसजदट्ठाणे पुब्बकोडिमच्छिदूण अणुदिसादिसु आउअ वधिय अंतोमुहुत्तावसेमे जीविए अपुब्बुवसामगो जादो। णिहा पयलाण वधे वोच्छिण्णे काल गदो देवो जादो। अट्ठहि वसेहि एक्कारसअंतोमुहुत्तेहि य ऊणिया पुब्बकोडी अत्तर। एवमणियट्ठिस्म मि।

सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी दोनों उपशामकोंका एक जीनकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २६६ ॥

जैसे- उपशामध्रेणीसे उतरनेवाला एक अपूर्वकरणसयत, अग्रमत्तसयत व प्रमत्त सयत होकर पुन अग्रमत्तसयत हो अपूर्वकरणसयत होगया। इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ। इसी प्रकार अनिवृत्तिकरणसयतका भी अन्तर कहना चाहिए। विशेषता यह है कि इनके पांच अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर होना है।

उक्त जीवोंका एक जीनकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥ २६७ ॥

जैसे- कोई एक जीव पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और आठ वर्षके पश्चात् सयमको प्राप्त हुआ (१)। पुन प्रमत्त और अग्रमत्तसयत गुणस्थानमें सात्ता और असातामेदमीयके सहस्रों वध परावर्तनोंको करके (२) उपशामध्रेणीके योग्य अग्रमत्तसयत हुआ (३)। पश्चात् अपूर्वकरण (४) अनिवृत्तिकरण (५) सूक्ष्मसाम्पराय (६) उपशातकाय (७) होकर फिर भी सूक्ष्मसाम्पराय (८) अनिवृत्तिकरण (९) अपूर्वकरण (१०) हो नीचे गिरकर अन्तरको प्राप्त हुआ। प्रमत्त और अग्रमत्तसयत गुण स्थानमें पूर्वकोटी काल तक रहकर अनुदिश आदि विमानोंमें आयुको बाधकर जीवनके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अवशिष्ट रहनेपर अपूर्वकरण उपशामक हुआ और निद्रा तथा प्रचल प्रवृत्तियोंके वधमे व्युत्थित होनेपर मरणको प्राप्त हो देव हुआ। इस प्रकार आठ व और ग्यारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटीप्रमाण सामायिक और छेदोपस्थापनासयम अपूर्वकरण उपशामकका उत्कृष्ट अन्तर होता है। इसी प्रकार सामायिक और छेदोपस्थापनासयमी अनिवृत्तिकरण उपशामकका भी उत्कृष्ट अन्तर है। विशेषता यह है कि

१ पूर्वकोटी प्रति जघन्यलब्धहूर्त। स सि १, ८ २ उत्तर्वेण पूर्वकोटी दोहोना। स सि १,

कुदो ? अरुमायाण जहान्सादसजमेण विणा अण्णमजमाभाया ।

संजदासंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २७७ ॥

कुदो ? गुणतरग्गहणे मग्गणाविणात्मा, गुणतरग्गहणेण विणा अतरकरणे उपायाभाया ।

असंजदेसु मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ २७८ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठिप्पयाहरोच्छेदाभाया ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २७९ ॥

कुदो ? गुणतर गतूणतरिय अविण्हवसजमेण जहण्णकालेण पट्टट्ठिय मिच्छत्तं
पडिअण्णस्म अतोमुहुत्ततरुणभा ।

क्योंकि, अरुपायी जीवोंके यथाप्यातसयमके बिना अन्य सयमका अभाव है ।

सयतासयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना और एक जीवकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७७ ॥

क्योंकि, अपने गुणस्थानको छोड़कर अन्य गुणस्थानके ग्रहण करने पर मार्ग-
णाका विनाश होता है आर अन्य गुणस्थानको ग्रहण किये बिना अन्तर करनेका कोई
उपाय नहीं है ।

असयतोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७८ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि जीवोंके प्रवाहका कभी विच्छेद नहीं होता ।

असयमी मिथ्यादृष्टि जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ २७९ ॥

क्योंकि, अन्य गुणस्थानको जाकर ओर अन्तरको प्राप्त होकर असयमभावके
नहीं नष्ट होनेके साथ ही जघन्य कालसे पलटकर मिथ्यात्मको प्राप्त हुए जीवके अन्त-
र्मुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

१ संयतासयतस्य नानाजावापेक्षया एकजीवापेक्षया च नात्यतम् । ॥ मि १, ८

२ असयतेषु मिथ्यादृष्टेनानाजीवापेक्षया नात्यतम् । स मि १, ८

३ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइयउवसमाणमंतर केव-
चिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ २७२ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ २७३ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरत्तरं ॥ २७४ ॥

हुदो ? अधिगदमजमाणिणामेण अतरारणे उवायाभावा ।

खवाणमोघं ॥ २७५ ॥

हुदो ? णाणाजीरगदजहण्णुक्कस्सेगममय छम्मामेहि एगजीरस्सतराभावेण य
साधम्मादो ।

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु अकसाइभगो ॥ २७६ ॥

सूक्ष्ममाम्परायशुद्धिसंयत्तोंमें सूक्ष्ममाम्पराय उपशामकोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यमे एक समय अन्तर है ॥ २७२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ २७३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २७४ ॥

क्योंकि, प्राप्त किये गये समयके त्रिमास हुए बिना अन्तरको प्राप्त होनेके
उपायका अभाव है ।

सूक्ष्ममाम्परायसयमी क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २७५ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर छह
मासके साथ, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे ओघके भाव समानता
पार्ने जाती है ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसंयत्तोंमें चारों गुणस्थानोंके सयमी जीवोंका अन्तर
अरुपायी जीवोंके समान है ॥ २७६ ॥

१ सूक्ष्ममाम्परायशुद्धिसंयत्तस्य नानाजीवोपेक्षया सामान्यत्वं । स ति १, ८

२ एकजीवं मति नाभ्यतरं । स ति, १, ८

३ अ मतो ' अतरारणो उवाया ' आ चण्वो ' अतरारणो उवाया ' इति पाठ ।

४ वर्येव क्षपराय सामान्यत्वं । स ति १, ८

५ यथाख्याते अन्यायवत् । स ति १, ८

असजदसम्मादिट्टिस्स उक्कस्संतर णादमरि^१ मदमेहापिज्जाणुगहट्ठ परूमेओ-
एवको अणादियमिच्छादिट्ठी तिण्णि रि करणाणि कादूण अद्वपोगलपरियट्ठादिसमए
पढमसम्मत्त पडिवण्णो (१) । उअसमसम्मत्तद्वाए छाअलियाओ अत्थि त्ति सासण गदो ।
अत्तरिदो अद्वपोगलपरियट्ठ परियट्ठिदूण अपच्छिमे भग्गहणे असजदसम्मादिट्ठी जादो ।
लद्धमतर (२) । तदो अणंताणुअधी विमज्जोअय (३) निस्सतो (४) दसणमोह खनिय
(५) निस्सतो (६) अप्पमत्तो जादो (७) । पमत्तापमत्तपराअत्तमहस्स कादूण (८)
खगसेदीपाओग्गअप्पमत्तो जादो (९) । उअरि छ अंतोमुहुत्ता । एवं पण्णारसेहि अंतो-
मुहुत्तेहि अणमद्वपोगलपरियट्ठमसजदसम्मादिट्टिस्स उक्कस्सतर ।

एअ सजममग्गणा समत्ता ।

दंसणाणुवादेण चक्षुदंसणीसु मिच्छादिट्ठीणमोधं ॥ २८२ ॥

कुदो ? णाणार्जीवे^१ पडुच्च अतराभाणेण, एगजीअगयअंतोमुहुत्तमेत्तजहण्णंतरेण

असयत्तसम्यग्दष्टिका उत्कृष्ट अन्तर यद्यपि ज्ञात हे, तथापि मद्बुद्धि जनौके अनु-
ग्रहार्थ प्ररूपण करते हैं- एक अनादि मिथ्यादष्टि जीव तीनों करणोंको करके अर्धपुद्गल
परिवर्तनके आदि समयमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (१) । उपशमसम्यक्त्वके
कालमें छह आचलिया अचशिष्ट रहने पर सासादनगुणस्थानको प्राप्त हुआ । पश्चात्
अन्तरको प्राप्त हो अर्धपुद्गलपरिवर्तन तक परिवर्तन करके अन्तिम भयमें असयत्तसम्य-
ग्दष्टि हुआ । इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया (२) । तत्पश्चात् अन्तानुबन्धीकी त्रिसंयोजना
करके (३) विश्राम ले (४) दर्शनमोहनीयका क्षय करके (५) विश्राम ले (६) अप्रमत्त
सयत्त हुआ (७) । पुन प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्यग्धी सहस्रों परिवर्तनोंको
करके (८) क्षपकश्रेणीके प्रायोग्य अप्रमत्तसयत्त हुआ (९) । इनमें ऊपरके छह अन्त
सुहृत् और मिलाये । इस प्रकार पन्द्रह अन्तमुहूर्तोंसे कम अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल असयत्त-
सम्यग्दष्टिका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुयादसे चक्षुदर्शनी जीवोंमें मिथ्यादष्टियोंका अन्तर ओघके
समान है ॥ २८२ ॥

फ्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, तथा एक जीवगत

१ प्रतिपु 'णादमदि' इति पाठ ।

२ प्रतिपु 'पमत्तो' इति पाठ ।

३ दर्शनानुवादेन चक्षुदर्शनिषु मिथ्यादष्टे सामान्यत् । स सि १, ८

४ अ प्रतो 'जीवेसु' इति पाठ ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि' ॥ २८० ॥

॥ जहा— एक्को अट्टारीममोहसतकम्मिओ मिच्छादिट्ठी सत्तमाए पुढनीए उव
वण्णो । छहि पज्जत्तीहि पज्जचयदो (१) विस्मंतो (२) विमुद्धो (३) सम्मत्त
पटिगज्जय अतरिदो अतोमुहुत्तामसेसे जीणिण मिच्छच्च गदो (४) । लद्धमत्तरं ।
तिरिक्खोउअ वयिय (५) विस्ममिय (६) मदो तिरिक्खो जादो । छहि अतोमुहुत्तेहि
ऊणाणि तेत्तीम सागरोवमाणि मिच्छत्तुक्कस्सत्तर ।

सासणसम्मादिट्ठि—सम्मामिच्छादिट्ठि—असजदसम्मादिट्ठीणमोय'

॥ २८१ ॥

कुदो ? सामण्यसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठीण णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण एग
समजो, पल्लिदोमस्स अमरोज्जदिभागो, एगजीन पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोमस्स असत्ते-
ज्जदिभागो, अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण अट्टपोगलपरियट्ठ देसूण । असजदसम्मादिट्ठीसु
णाणाजीन पडुच्च गत्ति अतर, गिरत्तर, एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त, उक्कस्सेण
अट्टपोगलपरियट्ठ देसूणमिच्छदेहि तदो भेदाभावा ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरोपम
है ॥ २८० ॥

जैसे— मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव सातवीं
पृथिवीमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध
हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ और जीवनके अन्तर्मुहूर्त काल
प्रमाण अत्रोप रहने पर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) । इस प्रकार अन्तर लक्ष होगया ।
पाँडे तिर्यंच आयुको बाधकर (५) विश्राम से (६) सर और तिर्यंच हुआ । इस प्रकार
छह अतर्मुहूर्तोंमें कम तेतीस सागरोपमकाल मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

असयमी सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और अमयत्तसम्यग्दृष्टि जीवोंका
अन्तर ओघसे ममान है ॥ २८१ ॥

क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा
जघनसे एक समय और पत्थोपमका असत्वात्तवा भाग अन्तर है। एक जीवकी अपेक्षा
जघनसे पत्थोपमका असत्वात्तवा भाग और अतर्मुहूर्त अन्तर है । तथा उत्कृष्ट अन्तर
कुछ कम यधपुटलपरिवर्तनकाल है । असयत्तसम्यग्दृष्टियोंमें नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है। एक जीवकी अपेक्षा जघन अतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर
कुछ कम अर्धपुटलपरिवर्तन है। इस प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

१ उत्तरेण त्रयस्त्रिंशसागरोपमाणि दंडोनाणि । म नि १, ८

२ छेपाणी त्रयाणां सामायवत् । य वि १, ८

आउअ ऱधिय (४) विस्सतो (५) देसेसु उअण्णो। छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विसुद्धो (८) उअममसम्मत्त पडिअण्णो (९) मामणं गदो। मिच्छत्त गतूणतरिय चक्षुदसणिट्ठिदिं परिभमिय अमणो सासग गदो। लद्धमतर। अचक्षु-
दंसणिपाओगमालियाए अमखेज्जदिभागमच्छिदूण मदो अचक्षुदसणी जादो। एवं णअहि अतोमुहुत्तेहि आअलियाए अमखेज्जदिभागेण य ऊणिया चक्षुदसणिट्ठिदी सामणुक्कस्संतर।

सम्मामिच्छादिट्ठिस्म उच्चदे- एको अचक्षुदसणिट्ठिदिमच्छिदो अमणिपंचि-
दिएसु उअण्णो। पचहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विस्सतो (२) विसुद्धो (३) भणअसिय-वाणवेंतरदेसेसु आउअ ऱधिय (४) विस्सतो (५) देसेसु उअण्णो। छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (६) विस्सतो (७) विसुद्धो (८) उअममसम्मत्त पडिअण्णो (९) सम्मामिच्छत्त गदो (१०)। मिच्छत्त गतूणतरिदो चक्षुदसणिट्ठिदिं परिभमिय अमणो सम्मामिच्छत्त गदो (११)। लद्धमतर। मिच्छत्त गतूण (१२) अचक्षु-
दंसणीसु उअण्णो। एअ वारमअतोमुहुत्तेहि ऊणिया चक्षुदसणिट्ठिदी उक्कस्संतर।

देवोंमें उत्पन्न हुआ। उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विशुद्ध हो (७) उपशमसम्यन्तको प्राप्त हुआ (९)। पश्चात् सासादनगुणस्थानको गया। पुन मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो चक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अन्तमें सासादनगुणस्थानको प्राप्त हुआ। इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया। पुन अचक्षु-
दर्शनीके उध प्रायोग्य आवलीके असप्यातवें भागप्रमाण काल रह कर मरा और अचक्षु-
दर्शनी होगया। इस प्रकार नौ अन्तर्मुहूर्तोंसे और आवलीके असप्यातवें भागसे दस चक्षुदर्शनीकी स्थिति चक्षुदर्शनी सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर है।

चक्षुदर्शनी सम्यग्मिथ्यादृष्टिका अन्तर रहते ह- अचक्षुदर्शनीकी स्थितिसे प्राप्त हुआ पर जीव असली पचेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुआ। पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विशुद्ध हो (२) विशुद्ध हो (३) भवनवासी या घानअन्तर देवोंमें आयुको बाधकर (४) विशुद्ध हो (५) मरा और देवोंमें उत्पन्न हुआ। उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (६) विशुद्ध हो (७) विशुद्ध हो (८) उपशमसम्यन्तको प्राप्त हुआ (९)। पश्चात् सम्य-
ग्मिथ्यात्वको गया (१०) और मिथ्यात्वको प्राप्त होकर अन्तरको प्राप्त हुआ। चक्षु-
दर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (११)। इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया। पुन मिथ्यात्वको जाकर (१२) अचक्षुदर्शनीयोंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार बारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चक्षुदर्शनीकी स्थिति चक्षुदर्शनी सम्य-
ग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर है।

देवूण-चे आरुडिसागरोरममेत्तउरुस्मंतरेण य तदो भेदाभाया ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्पामिच्छादिट्ठीणमत्तरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ' ॥ २८३ ॥

कुदा ? णाणाजीगयएगममय-पलिदोरमामरोज्जटिभागजहणुक्कस्मतरहि
माधसुपलभा ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहत्तं ॥ २८४ ॥

सुगममैद ।

उक्त्स्सेण वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ २८५ ॥

त जहा- एको भमिदअचसुदमणद्धिदिओ अमण्णिपच्चिदिण्णु उपगण्णो। पचहि
पज्जवीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुद्धो (३) मयणसामिय माणणैतरदेनेसु

अतमुर्तमान जघय अन्तर होनेसे जोर कुछ कम दो छयासठ सागरोपमप्रमाण उत्पन्न
अन्तर होनेकी अपेक्षा ओघसे कोई भेद नहीं है।

चतुर्दशी सासादनमभ्युदये और सम्पत्ति प्राप्ति का अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीर्णोपेक्षा अन्तर औषध से समान है ॥ २८३ ॥

क्योंकि, नाना जोरगत अधः अतर पर समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्योपमना
असल्यातवा भाग है, इस प्रकार इन दोनोंनी अपेक्षा ओघने साथ समानता पाई
जाती है।

उक्त जीरोस एक जीरकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्योपमशः
अमरयातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ २८४ ॥

यह सून सुगम है ।

उक्त जीर्णमा एक जीर्णमपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम है ॥ २८५ ॥

जैसे- अक्षुद्रदर्शनकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण म्रिया हुआ कोई एक जीव असही पचेद्रियों उत्पन्न हुआ। पाचों पर्यातियोंसे पर्यात हो (१) त्रिधाम ले (२) विपुद्र हो (३) मयनवासी या यानज्यन्तर देवाँमें आयुको वाचन्तर (४) त्रिधाम ले (५)

चक्रबुदसणिद्विदिं भमिय अत्रमाणे उपमसम्मत्तं पडिण्णो (१०) । लद्धमंतरं । पुणो सासण गदो अचक्रबुदसणीसु उवण्णो । दसहि अतोमुट्टचेहि ऊणिया सगद्धिदी असंजद-सम्मादिट्ठीणमुक्कस्संतरं ।

मज्झिमासजदस्म उच्चदे । तं जहा—एकको अचक्रबुदसणिद्विदिमच्छिदो गम्भो-वक्कतियपचिंदियपज्जत्तएसु उवण्णो । मण्णिपचिंदियसम्मच्छिमपज्जत्तएसु किण्ण उप्पा-दिदो ? ण, सम्मुच्छिमेसु पढमसम्मत्तुप्पत्तीए असमज्झादो । ण च अमरेज्जलोगमणंतं या कालमचक्रबुदमणीसु परिभमियाण वेदगसम्मत्तगहण समज्झि, पिरोहा । ण च थोर-कालमच्छिदो चक्रबुदसणिद्विदीए समाणणक्कमा । तिणिण पक्कत्त तिणिण दिवस अंतो-मुहुत्तेण य पढमसम्मत्तं सज्जमासंजम च जुगत्त पडिण्णो (२) । पढमसम्मत्तद्वाए छागलियाओ अत्थि ति सामण गदो । अतरिदो मिच्छत्त गंतूण सगद्धिदिं परिभमिय अपच्छिमे भये कट्ठरणिज्जो होदूण सज्जमासजम पडिवण्णो (३) । लद्धमंतरं । अप्पमत्तो

हुआ । पुन मिथ्यात्वको जाकर चक्रबुददर्शनकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अन्तमें उपशम-सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन सासादनको गया और अचक्रबुददर्शनी जीवोंमें उत्पन्न हुआ । इस प्रकार दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति चक्रबुददर्शनी असयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका उत्पन्न अन्तर होता है ।

चक्रबुददर्शनी सयतासयतका उत्पन्न अन्तर कहते हैं । जैसे—अचक्रबुददर्शनकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव गर्भोपक्रान्तिक पचेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ ।

शुद्धा—उक्त जीवको सही पचेन्द्रिय सम्मूच्छिम पर्याप्तकोंमें क्यों नहीं उत्पन्न कराया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्मूच्छिम जीवोंमें प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति असम्भव है । तथा असख्यात लोकप्रमाण या अनन्तकाल तक अचक्रबुददर्शनीयोंमें परिभ्रमण किये हुए जीवोंके वेदकसम्यक्त्वका ग्रहण करना सम्भव नहीं है, क्योंकि, ऐसे जीवोंके सम्यक्त्वोत्पत्तिका विरोध है । और न अल्पकाल तक रहा हुआ जीव चक्रबुददर्शनकी स्थितिके समाप्त करनेमें समर्थ है ।

पुन यह जीव तीन पक्ष, तीन दिवस और अन्तर्मुहूर्तसे प्रथमोपशमसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (२) । प्रथमोपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आवलिया अवशिष्ट रह जाने पर सासादनको प्राप्त हुआ । पुन अन्तरको प्राप्त हो मिथ्यात्वको जाकर अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तिम भवमें कृतवृत्त्यवेदक होकर सयमासयमको प्राप्त हुआ (३) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पुन अप्रमत्तसयत (४)

असंजदसम्मोदिद्विण्हुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरत्तरं ॥ २८६ ॥
सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २८७ ॥

कुतो ? एदेसिं सन्नेमिं पि अण्णगुण गंतूण जहण्णकालेण अप्पिदगुण गदाणमतो-
मुहुत्ततरुणलभा ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि ॥ २८८ ॥

त जघा- एको अचत्तसुदमणिद्विदिमच्छिदो अमणिपंचादियमम्मच्छिमपज्जत्तम्भु
उत्तरणो । पचहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) त्रिस्मतो (२) त्रिसुदो (३) भरण
यामिय-वाणेतरेदेसे आउअं वधिय (४) त्रिस्मतो (५) काल गदो देसे उत्तरणो ।
छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (६) त्रिस्मतो (७) त्रिसुदो (८) उत्तरसमसम्मत्तं पडिरणो
(९) । उत्तरसमसम्मत्तद्वाए छ आलियाओ अत्थि ति सामण गंतूणतरिदो । मिच्छत्त गत्तूण

असंपत्तसम्पत्तिसे लक्ष अग्रमत्तमयन गुणस्थान तक चक्षुदर्शनियोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २८६ ॥
यह मूल सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर जन्तुर्मुहूर्त है ॥ २८७ ॥

पर्याप्त, इन सभी गुणस्थानवर्ती जीवोंके अन्य गुणस्थानको जाकर पुन जघन्य
कालसे त्रिरक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेपर अन्तमुहूर्तप्रमाण अन्तर पाया जाता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २८८ ॥

जैसे- अचक्षुदर्शनी जावोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव अस्वर्श पचेन्द्रिय
सम्मच्छिम पर्याप्त जीवोंमें उत्पन्न हुआ । पाचों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम
ले (२) त्रिगुह हो (३) भवनवासी या वानव्यन्तरोमें आयुको वाध कर (४) विश्राम
ले (५) भरणको प्राप्त हुआ और देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहा छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त
हो (६) विश्राम ले (७) त्रिगुह हो (८) उपशमसम्पत्त्यको प्राप्त हुआ (९) । उपशम
सम्पत्त्यके कालमें छह आलिया अवशेष रहने पर साक्षात्तको जाकर अन्तरको प्राप्त

१ असंपत्तसम्पत्तिश्चावप्रमत्तानां नानाजीवोपेक्षया नास्त्यन्तरम् । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघनान्तमुहूर्त । स मि १, ८

३ उत्तरसंवेग द्वे सागरापमवहणे देवने । स ति १, ८

(३) अप्पमत्तो (४) । उरि छ अतोमुहुत्ता । एमइउस्सेहि दसअंतोमुहुत्तेहि उणिपा चस्सुदमणिद्धिदी अप्पमत्तुक्कस्संतर होदि ।

चटुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिर कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघ^१ ॥ २८९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेग अतोमुहुत्तं^२ ॥ २९० ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण वे सागरोवमसहस्साणि देसूणाणि^३ ॥ २९१ ॥

त जहा- एकको अचक्षुर्दंष्ट्राणिद्धिदिमच्छिदो मणुसेसु उरण्णो । गव्भादिअट्ट-
वस्सेण उरसममम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगउ पडिउण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्त
गदो (२) । तदो अतोमुहुत्तेण अणंताणुनां विंसजो जिदो (३) । दसणमोहणीयमुव-
सामिय (४) पमत्तापमत्तपरात्तमहस्म कादूण (५) उरममसेडीपाओगाअप्पमत्तो
जादो (६) । अपुवो (७) उणियद्धी (८) सुहुमो (९) उरसंतो (१०) सुहुमो
हुआ । पुन प्रमत्तसयत्त हो (३) अप्रमत्तसयत्त हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त
आर मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष आर दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चक्षुर्दर्शनीकी स्थिति ही
चक्षुर्दर्शनी अप्रमत्तसयत्तमा उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

चक्षुर्दर्शनी चारों उपशमकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २९१ ॥

जैसे- अचक्षुर्दर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ ।
गर्भको आदि लेकर आठ वर्षके द्वारा उपशमसम्यक्त्व आर अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानको
एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अन्तर्मुहूर्तके पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (२) । पुनः
अन्तर्मुहूर्तसे अनन्तानुबन्धीका विसंयोजन किया (३) । पुन दर्शनमोहनीयको उपशमा
कर (४) प्रमत्त आर अप्रमत्त गुणस्थानसम्यन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (५) उप-
शमश्रेणीके योग्य अप्रमत्तसयत्त हुआ (६) । पुन अपूर्वकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)

१ चतुर्णां उपशमगता नानाजीवापेक्षया सामान्यवत् । स ति १, ८.

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

३ उत्कर्षेण द्वे सागरोपमसहस्रे दशैरे । स ति १, ८.

(४) पमत्तो (५) अप्पमत्तो (६) । उवरि छ अतोमुहुत्ता । एममटदालीमदिवेसहि वारमअतोमुहुत्तेहि य ऊणा सगडिदी मजदासजदुक्कस्सतर ।

पमत्तस्म उच्चदे-एक्को अचस्सुदंसणिट्ठिदिमन्टिदो मणुमेसु उगण्णो गन्भादि-
अट्टरस्सेण उगसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगण पडिण्णो । (१) । पुणो पमत्तो जादो
(२) । हेट्ठा पडिदूणत्तरिदो । चक्खुदंसणिट्ठिदि परिभमिय अपच्छिमे भगे मणुमो जादो ।
कदक्करणिज्जो होदूण अतोमुहुत्तामसेसे जीणिण्ण अप्पमत्तो होदूण पमत्तो जादो (३) ।
लद्धमतर । भूओ अप्पमत्तो (४) । उवरि छ अतोमुहुत्ता । एममट्टरस्सेहि दमअतो-
मुहुत्तेहि ऊणिया सगडिदी पमत्तस्सुक्कस्सतर ।

(अप्पमत्तस्म उच्चदे-एक्को अचस्सुदंसणिट्ठिदिमन्टिदो मणुमेसु उगण्णो ।
गन्भादिअट्टरस्सेण उगसमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगण पडिण्णो (१) । हेट्ठा पडिदूण
अंतरिदो चक्खुदंसणिट्ठिदि परिभमिय अपच्छिमे भगे मणुमेसु उगण्णो । कदक्करणिज्जो
होदूण अतोमुहुत्तामसेसे ससार निमुट्ठो अप्पमत्तो जादो (२) । लद्धमतर । तदो पमत्तो

प्रमत्तसयत (५) और अप्रमत्तसयत हुआ (६) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त और
मिलाये । इस प्रकार अड़तालीस दिनस जोर थारह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति
चक्षुदर्शनी सयतासयतोंका उत्त्पन्न अन्तर है ।

चक्षुदर्शनी प्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर कहते हैं-अचक्षुदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें
विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ थार गर्भको जादि लेकर आठ वर्षसे उपशम
सम्यक्त्व और अप्रमत्तगुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन प्रमत्तसयत
हुआ (२) । पश्चात् नीचेके गुणस्थानोंमें गिरकर अंतरको प्राप्त हुआ । चक्षुदर्शनीकी
स्थितिप्रमाण परिभ्रमण करके अंतिम भवमें मनुष्य हुआ । पश्चात् कृतकृत्यवेदक होकर
जीवनके अन्तर्मुहूर्तकाल अवशेष रह जाने पर अप्रमत्तसयत होकर प्रमत्तसयत हुआ (३) ।
इस प्रकार अन्तर रन्ध्र होगया । पुन अप्रमत्तसयत हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह
अन्तर्मुहूर्त और मिलाये । इस प्रकार आठ थप और दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी स्थिति
चक्षुदर्शनी प्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर है ।

चक्षुदर्शनी अप्रमत्तसयतका उत्त्पन्न अन्तर कहते हैं-अचक्षुदर्शनी जीवोंकी
स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि लेकर आठ वर्षके
द्वारा उपशमसम्यक्त्व और अप्रमत्तगुणस्थानको एक साथ प्राप्त हुआ (१) । फिर
नीचे गिरकर अंतरको प्राप्त हो अचक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अंतिम
भवमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । पुन कृतकृत्यवेदकसम्यक्त्वी होकर ससारके अन्तर्मुहूर्त
प्रमाण अवशिष्ट रहने पर विमुक्त हो अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त

(३) अप्पमत्तो (४) । उरि छ अतोमुहुत्ता । एमहुत्तस्सेहि दसअतोमुहुत्तेहि उणिया चक्रबुदमणिद्धिदी अप्पमत्तुक्कस्मत्तर होदि ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओधं ॥ २८९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९० ॥

एद पि सुगम ।

उत्तस्सेण वे सागरोवममहस्साणि देसूणाणि ॥ २९१ ॥

त जहा- एमको अचक्रबुदमणिद्धिदिमच्छिदो मणुमेसु उतरण्णो । गवमादिअद्द-
वस्सेण उत्तमसम्मत्तमप्पमत्तगुण च जुगुर पडिउण्णो (१) । अतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्त
गदो (२) । तदो अतोमुहुत्तेण अणताणुनविं रिसंजोजिदो (३) । दसणमोहणीयमुन-
सामिय (४) पमत्तापमत्तपगगत्तसहस्म कादूण (५) उत्तममेडीपाओगगप्पमत्तो
जादो (६) । अपुवो (७) उणियट्टी (८) सुहुमो (९) उत्तंतो (१०) सुहुमो
हुआ । पुन प्रमत्तसयत्त हो (३) अप्रमत्तसयत्त हुआ (४) । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त
ओर मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष ओर दश अन्तर्मुहूर्तोंसे कम चक्षुदर्शनीय स्थिति ही
चक्षुदर्शनी अप्रमत्तसयत्तना उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

चक्षुदर्शनी चारों उपशमक्रांका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम दो हजार सागरोपम
है ॥ २९१ ॥

जैसे- अचक्षुदर्शनी जीवोंकी स्थितिमें विद्यमान एक जीव मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ ।
गर्भको आदि लेकर आठ वर्षके द्वारा उपशमसम्यक्त्व और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानको
एक साथ प्राप्त हुआ (१) । अन्तर्मुहूर्तके पश्चात् वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (२) । पुनः
अन्तर्मुहूर्तसे अनन्तानुगन्धीका विसंयोजन किया (३) । पुन दर्शनमोहनीयको उपशमा
कर (४) प्रमत्त ओर अप्रमत्त गुणस्थानसम्यन्धी सहस्रों परिवर्तनोंको करके (५) उप-
शमधेनीके योग्य अप्रमत्तसयत्त हुआ (६) । पुन अपूर्णकरण (७) अनिवृत्तिकरण (८)

१ पशुपशुपशमशानां नानाजीवापेक्षया सामान्यत् । स सि १, ८

२ एगजीव प्रति जघयेनात्तर्मुहूर्त । स सि १, ८

३ उत्कर्षेण द्वे सागरीपमसहस्रे दक्षेने । स सि १, ८

(११) अणियट्ठी (१२) अपुच्चो (१३) हेट्ठा ओदरिय अतरिदो चक्खुसणिट्ठिदिं परिभमिय अतिमे भो मणुमेमु उपगण्णो । कट्ठणिज्जो होदूण अतोमुहुत्तापसेसे समारे विसुद्धो अप्पमत्तो जादो । मागसाद्वधपरापत्तसहस्म कादूण उपममसेटीपाजोग्गअप्पमत्तो होदूण अपुच्चुम्मामगो जादो (१४) । लद्धमत्तर । तदो अणियट्ठी (१५) सुहूमो (१६) उपसतो (१७) पुणो वि सुहूमो (१८) अणियट्ठी (१९) अपुच्चो (२०) अप्पमत्तो (२१) पमत्तो (२२) अप्पमत्तो (२३) होदूण खगसेट्ठीमारदो । उपरि छ अतो मुहुत्ता । एमद्वस्मेहि एगूणत्तीमअंतोमुहुत्तेहि य ऊणिया सगट्ठिदी अपुच्चकरुणुवम्मतर । एव चेव तिण्हमुयमागगाण । उपरि सत्तारीम पच्चीस तेनीस अतोमुहुत्ता ऊणा कापव्वा ।

चटुण्ह खवाणमोध' ॥ २९२ ॥

सुगममेद ।

सूक्ष्मसाम्पराय (९) उपशान्तमोह (१०) सूक्ष्मसाम्पराय (११) अनिवृत्तिकरण (१२) और अपूर्वकरणसयत होकर (१३) तथा नीचे उतरकर अन्तरको प्राप्त हो चक्षुदर्शनीकी स्थितिप्रमाण परिभ्रमणकर अतिम मयमें मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । यहापर इतदृष्ट्येवक सम्यक्दृष्टी होकर समारोके अतर्मुह्यत अवशिष्ट रह जाने पर विशुद्ध हो अग्रमत्तसयत हुआ । यहापर साता ओर असाता वेदनीयके बध परावर्तन सहस्रांको करके उपशम श्रेणीके योग्य अग्रमत्तसयत होकर अपूर्वकरण उपशामक हुआ (१४) । इस प्रकार अन्तर प्राप्त होगया । तत्पश्चात् अनिवृत्तिकरण (१५) सूक्ष्मसाम्पराय (१६) उपशान्तकपाय (१७) पुनरपि सूक्ष्मसाम्पराय (१८) अनिवृत्तिकरण (१९) अपूर्वकरण (२०) अग्रमत्त सयत (२१) प्रमत्तसयत (२२) और अग्रमत्तसयत होकर (२३) क्षपकक्षेणीपर बढ़ा । इनमें ऊपरके छह अतर्मुह्यत और मिलाये । इस प्रकार आठ वर्ष और उननीस अतर्मुह्यतोंसे कम अपनी स्थिति चक्षुदर्शनी अपूर्वकरण उपशामकका उत्पन्न अन्तर है ।

इसी प्रकार चक्षुदर्शनी शेष तीन उपशामकोंका भी अन्तर जानना चाहिए । विशेषता यह है कि अनिवृत्तिकरण उपशामकके सत्ताइस अतर्मुह्यत, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकके पच्चीस अतर्मुह्यत और उपशान्तकपायके तेवीस अतर्मुह्यत कम करना चाहिए ।

चक्षुदर्शनी चारों क्षपकोंका अन्तर ओषके समान है ॥ २९२ ॥

यह सब सुगम है ।

अचक्खुदंसणीसु मिच्छादिट्ठिणहुडि जाव खीणकसायवीद-
रागउदुमत्था ओघ' ॥ २९३ ॥

कुदो ? ओघादो भेदाभावा ।

ओधिदंसणी ओधिणाणिभगो ॥ २९४ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो' ॥ २९५ ॥

एदाणि दो मि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एव दसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण किण्वलेस्सिय णीललेस्सिय-काउलेस्सिएसु
मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणा-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं' ॥ २९६ ॥

सुगममेव ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ २९७ ॥

अचभुदर्शनियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर क्षीणरूपायरीतरागउद्वस्य गुणस्थान तरु
ग्रन्थेक गुणस्थानरती जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ २९३ ॥

क्योंकि, ओघसे इनके अन्तरमें कोई भेद नहीं है ।

अविदर्शनी जीवोंका अन्तर अविज्ञानियोंके समान है ॥ २९४ ॥

केवलदर्शनी जीवोंका अन्तर केवलज्ञानियोंके समान है ॥ २९५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेस्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेस्या, नीललेस्या और कापोत लेस्यानालोंमें
मिथ्यादृष्टि और अमयतमप्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ २९६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ २९७ ॥

१ अचक्षुदसनिषु मिथ्यादृष्ट्यादिदर्शणव्यायावानां सामा योवमतरम् । स मि १, ८

२ अविदर्शनियों-अविज्ञानिवत् । स मि १, ८ ३ केवलदर्शनिन-केवलज्ञानिवत् । स मि १, ८

४ लेस्यानुवादन-कृष्णनीलकापोतलक्षणेषु मिथ्यादृष्टयतमप्यग्दृष्टीनां नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् ।

स मि १, ८

५ एकजीव-प्रतिजघन्येनान्तर्मुहूर्तः । स मि १, ८

तं जहा- सत्तम पचम पढमपुढमिमिन्डादिद्वि-असजदसम्मादिद्विणो किण्ह णील काउलेस्मिया अण्णगुण गत्तूण योपकालेण पडिणियत्तिय त चेय गुणमागदा । लद्ध दोण्ह जहण्णतरं ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सत्तारस सत्त सागरोवमाणि देसूणाणि'
॥ २९८ ॥

त जहा- तिण्णि मिन्डादिद्विणो किण्ह णील काउलेस्मिया मत्तम-पचम तदिय-पुढरीसु कमेण उगग्गणा । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) विम्मता (२) तिसुद्धा (३) सम्मत्त पडिग्गणा अतरिदा अग्गमाणे मिन्डत्त गदा । लद्धमतर (४) । मदा मणुसेसु उगग्गणा । णग्गरि सत्तमपुढरीणेरुद्दो तिरिक्खाउअ वविय (५) विस्ममिय (६) तिरिक्खेसु उगग्गज्जदि त्ति घेत्तव्व । एअ छ च्छु च्छु अतोमुद्दुत्तेहि ऊणाणि तेत्तीम सत्तारम सत्त सागरोवमाणि किण्ह-णील काउलेस्मियमिन्डादिद्विउक्कस्मत्त होदि । एअम सजदसम्मादिद्विस्स पि वत्तव्व । णग्गरि अद्द पच पच अतोमुद्दुत्तेहि ऊणाणि तेत्तीस सत्तारम-

जैसे- सातवीं पृथिवीके वृष्णलेइयावाले, पाचवीं पृथिवीके नीललेइयावाले और प्रथम पृथिवीके कापोतलेइयावाल मिव्यादृष्टि थोर असयतसम्यग्दृष्टि नारकी जीव अन्य गुणस्थानको जानर अल्प कालसे ही लौटकर उसी गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार दोनों गुणस्थानोंका अग्र्य अंतर लघु हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कमश कुछ कम तेतीम, सत्तरह और सात सागरोपम है ॥ २९८ ॥

जैसे- वृष्ण, नील और कापोत लेइयावाले तीन मिव्यादृष्टि जीव क्रमसे सातवीं, पाचवीं और तीसरी पृथिवीमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विगुह हो (३) सम्यक्त्वको प्राप्त कर अन्तरको प्राप्त हो आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए । इस प्रकार अंतर ग्यह हुआ (४) । पश्चात् मरण कर मनुष्योंमें उत्पन्न हुए । विशेषता यह है कि सातवा पृथिवीका नारकी तिर्यंच आयुको ग्राह कर (५) विश्राम ले (६) तिर्यंचमें उत्पन्न होता है, ऐसा अथ ग्रहण करना चाहिए । इस प्रकार छह अन्तमुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम वृष्णलेइयाका उत्कृष्ट अन्तर है । चार अन्त मुहूर्तोंसे कम सत्तरह सागरोपम नीललेइयाका उत्कृष्ट अन्तर है । तथा चार अन्तमुहूर्तोंसे कम सात सागरोपम कापोतलेइयाका उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार असयत सम्यग्दृष्टिका भी अन्तर कहना चाहिए । विशेषता यह है कि वृष्णलेइयावाले असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर आठ अन्तमुहूर्तोंसे कम तेतीस सागरोपम, नीललेइयावाले असयतसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर पच अन्तमुहूर्तोंसे कम सत्तरह

सत्त-सागरोपमाणि उन्मत्तमन्तरं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमन्तरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ २९९ ॥

सुगममेदं ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ ३०० ॥

एदं पि सुगम ।

उक्कस्सेण तेत्तीसं सत्तारस सत्त सागरोवमाणि देसूणाणि'
॥ ३०१ ॥

त जहा— तिणि मिच्छादिट्ठी जीरा सत्तम-पचम-तट्टियपुट्टीसु किण्व-शील-काउ-
लेस्मिया उपगणा । छहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) निस्सता (२) निमुद्धा (३)
उपममसम्मत्त पडिचण्णा (४) मासण गदा । मिच्छत्त गंतूणतरिदा । अतोमुहुत्तावसेसे
सागरोपम और कापोतलेस्यावाले असयतसम्यग्दृष्टि का उत्कृष्ट अन्तर पाच अन्त-
र्मुहूर्तोंसे कम सात सागरोपम होता है ।

उक्त तीनों अशुभलेख्यावाले सासादनमस्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीनों का
अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीनों की अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ २९९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीनों का एक जीन की अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पल्पोपम का असं-
ख्यात भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३०० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीनों का एक जीन की अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीम सागरोपम,
सत्तरह सागरोपम और सात सागरोपम है ॥ ३०१ ॥

जैसे— वृष्ण, नील और कापोतलेस्यावाले तीन मिथ्यादृष्टि जीव क्रमशः सातवीं,
पाचवीं और तीसरी पृथिवी में उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम
ले (२) विमुक्त हो (३) उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुए (४) । पुनः सासादनगुण-
स्थानको गये । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुए । पुनः जीवनके अन्तर्मुहूर्त

१ सामादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोर्नानाजीवापेक्षया सामान्यम् । स वि १, ८

२ एतन्जीव प्रति जघन्य पल्पोपमासत्येयमागोऽन्तर्मुहूर्तश्च । स वि १, ८ ।

३ उन्मर्षेण त्रयस्त्रिंशत्सत्तदशमत्तमागरोपमाणि देशानानि । स वि १, ८

जीविए उवत्तमसम्मच पटिगणा । सामण गतूण विदियमए न्ना न्नु न्नु न्नु ।
 णरि मत्तमपुडवीए सानणा मिच्छत्त गतूण (५) तिरिक्कित्तुत्त न्नु वि ।
 एव पच च्चदु च्चदु अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तीम-मत्ताममत्त-मागगेत्तानि च्चदु
 काउलेस्मियनानपुवस्सन्तर होदि । एगममयो अंतामुहुत्त मते पविट्ठो चि पुरव च्च
 एव मम्मामिच्छादिट्ठिस्स वि । णरि छद्दि अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तान्ममत्त
 सागतोममापि च्चिह-णील-काउलेस्मियमम्मामिच्छादिट्ठिउत्तममत्त ।

तेउलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठिअसजदसम्मामिच्छादिट्ठि
 केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अत्तर, गित्तं

॥ ३०२ ॥

सुम्मरे ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३०३ ॥

ते उहा- चत्तारि जीवा मिच्छादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठिणो तेउ पम्मलेस्सिया न्नु

अपरिह रहने एर एपरमसम्पत्तको प्राप्त हुए । पश्चात् सासादनगुणस्थान न्नु
 वितीर सपुट्टे अरे अरे मनुष्योंमें उत्पन्न हुए । विशेषता यह है कि सातवीं ही
 सासादनगुणस्थान, ते आरक्षी मिच्छादिट्ठि प्राप्त होकर (५) तिर्यच्चोमें उत्पन्न होते हैं
 ऐसा कुछ अन्तर्गत है । एव पच च्चदु च्चदु अतोमुहुत्त मते पविट्ठो चि पुरव च्च
 एव मम्मामिच्छादिट्ठिस्स वि । णरि छद्दि अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तान्ममत्त
 सागतोममापि च्चिह-णील-काउलेस्मियमम्मामिच्छादिट्ठिउत्तममत्त ।

अतएव तेनो स्यात् । तेनो स्यात् जीवो जीवो अपेक्षा अत्तर तर्ही है, निरन्तर है ॥ ३०२ ॥

न ॥ ३०३ ॥

एव पच च्चदु च्चदु अतोमुहुत्त मते पविट्ठो चि पुरव च्च
 एव मम्मामिच्छादिट्ठिस्स वि । णरि छद्दि अतोमुहुत्तेहि उणाणि तेत्तान्ममत्त

सागतोममापि च्चिह-णील-काउलेस्मियमम्मामिच्छादिट्ठिउत्तममत्त ।

गत्तूण सव्वजहण्णकालेण पडिणियच्चिय त चेअ गुणमागदा । लद्धमतं ।

उक्कस्सेण वे अट्टारस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३०४ ॥

त जहा- वे मिच्छादिट्ठिणो तेज-पम्मलेस्मिया सादिरेय-वे-अट्टारससागरोवमाउ-
ट्ठिडिण्णु देवेसु उअण्णा । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदा (१) निस्मता (२) निमुद्धा
(३) सम्मत्त चेत्तुणतरिदा । मगट्ठिदिं जीमिय अउसाणे मिच्छत्त गदा (४) । लद्ध
सादिरेय-वे-अट्टारससागरोवममेत्ततर । एअं सम्मादिट्ठिस्स पि । णअरि पचहि अतोमुहुत्तेहि
ऊणिआओ सगट्ठिदीओ अंतर ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठिणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३०५ ॥
सुगममेद ।

अन्य गुणस्थानको जाकर सर्वजघन्य कालसे लोटकर उसी ही गुणस्थानको आगये ।
इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिरु दो सागरोपम और
साधिरु अट्टारह सागरोपम है ॥ ३०४ ॥

जैसे- तेज और पद्म लेख्यावाले दो मिथ्यादृष्टि जीव साधिरु दो सागरोपम और
साधिरु अट्टारह सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे
पर्याप्त हो (१) निध्राम ले (२) चिशुद्ध हो (३) और सम्यक्त्वको ग्रहण कर अन्तरको
प्राप्त हुये । पुन अपनी स्थितिप्रमाण जीवित रहकर आयुके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त
हुए (४) । इस प्रकार साधिरु दो सागरोपमकाल तेजोलेख्यावाले मिथ्यादृष्टिका ओर
साधिरु अट्टारह सागरोपमकाल पद्मलेख्यावाले मिथ्यादृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त
होगया । इसी प्रकार तेज ओर पद्म लेख्यावाले असयतसम्यग्दृष्टि जीवका भी अन्तर कहना
चाहिए । विशेषता यह है कि पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी अपनी स्थितिप्रमाण अन्तर
होता है ।

तेजोलेख्या और पद्मलेख्यावाले सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि
जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान
है ॥ ३०५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ उत्तरपेण द्वे सागरोपमे अट्टारह च सागरोपमाणि सादिरेयाणि । स ति १, ८

२ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टोनानाजीवापेक्षया सामा यवत् । स ति १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पल्लिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं' ॥ ३०६ ॥

एद पि सुगम ।

उत्कस्सेण वे अट्टारस सागरोवमाणि सादिरेयाणि ॥ ३०७ ॥

त जहा- वे सासणा तेउ पम्मलेस्सिया सादिरेय-वे-अट्टारममागरोवमाउट्टिणिएसु
देवेसु उदवण्णा । एगसमयमन्ठिय विदियममए भिच्छत्त गतूपतग्गिदा । अरमाणे ने पि
उरममसम्मत्त पडिवण्णा । पुणो भासण गतूण विदियममए मदा । एउ सादिरेय-वे-अट्टारम
मागरोवमाणि दुसमऊणाणि मासणुक्कस्मत्तर होदि । एउ सम्मामिन्हादिट्ठिस्स पि ।
गररि छहि अतोमुहुत्तेहि ऊणियाओ उत्तट्ठिदीओ अत्तर ।

सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमत्तर केवचिर कालादो होदि,
णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अत्तरं, णित्तरं' ॥ ३०८ ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमशः पत्न्योपमके
असख्यातने भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३०६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कमशः साधिक दो सागरोपम
और अट्टारह सागरोपम है ॥ ३०७ ॥

जैसे- तेज और पद्म लेश्यावाले दो सासादनसम्यग्दष्टि जीव साधिक दो सागरो
पम और साधिक अट्टारह सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुए । यहा एक
समय रहकर दूसरे समयमें मिथ्यात्वको जानर अन्तरको प्राप्त हुए । आयुके अन्तमें दोनों
ही उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुए । पश्चात् सासादनगुणस्थानको जाकर दूसरे समयमें
मरे । इस प्रकार दो समय कम साधिन दो सागरोपम और साधिक अट्टारह सागरोपम
उक्त दोनों लेश्यावाले सासादनसम्यग्दष्टि जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर होता है । इसी प्रकार
उक्त दोनों लेश्यावाले सम्यग्मिथ्यादष्टि जीवोंका भी अन्तर जानना चाहिये । विशेषता
यह है कि इनके छह अन्तर्मुहूर्तोंसे कम अपनी उक्त स्थितियोंप्रमाण अन्तर होता है ।

तेन और पद्म लेश्यावाले सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तमयत जीवोंका
अन्तर मिलने काल होता है ? नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ३०८ ॥

१ एकजीव प्रति जघनेन पत्न्योपमाउत्प्रेयमागोऽन्तर्मुहूर्तश्च । स मि १, ८

२ उत्कर्षण द्वे सागरोपमे अष्टादश च सागरोपमाणि सादिरेयाणि । स सि १, ८

३ सजदासंजदपमत्ताप्रमत्तसजदानां नानाजीवापेक्षया एकजीवापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

कुदो ? णाणाजीवपमाहोच्छेदाभावा । एगजीवस्म मि, लेस्सदादो गुणद्वाए बहुत्तुपदेसा ।

सुक्कलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठि-असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३०९ ॥
सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३१० ॥

त जहा- ये देवा मिच्छादिट्ठि-सम्मादिट्ठिणो सुक्कलेस्सिया गुणंतरं गत्तुण जहण्णेण कालेण अप्पिदगुण पडिउण्णा । लद्धमतोमुहुत्तमंतरं ।

उक्कस्सेण एकक्कीसं सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३११ ॥

त जहा- वे जीवा सुक्कलेस्मिया मिच्छादिट्ठि दब्बलिंणिणो एकक्कीससागरो-
वमिएसु देसेसु उतरण्णा । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदा (१) विस्सता (२) तिसुद्धा
(३) सम्मत्त पडिउण्णा । तत्थेगो मिच्छत्त गंतूणंतरिदो (४) अगरो सम्मत्तेणे । अवसाणे

क्योंकि, उक्त गुणस्थानवाले नाना जीवोंके प्रमाहका कभी विच्छेद नहीं होता है । तथा एन जीवकी अपेक्षा भी अन्तर नहीं है, क्योंकि, लेइयाके कालसे गुणस्थानका काल बहुत होता है, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शुक्कलेइयागालोंमें मिथ्यादृष्टि और अमयतमम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३०९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१० ॥

जैसे- शुक्कलेइयावाले मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि दो देव अन्य गुणस्थानको जाकर जघन्य कालसे विप्रक्षित गुणस्थानको प्राप्त हुए । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल प्रमाण अन्तर लब्ध होगया ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागरोपम है ॥ ३११ ॥

जैसे- शुक्कलेइयावाले दो मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी जीव इकतीस सागरोपमकी स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुए । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विश्राम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यग्त्वको प्राप्त हुए । उनमेंसे एक मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको

१ शुक्कलेइयेसु मिथ्यादृष्टयसयत्तसम्यग्दृष्टयोर्नानाजीवोपेक्षया नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघयेनातर्मुहूर्तः । स सि १, ८

३ उत्कर्षेणैव विप्रक्षयतोपमाणि देशानि । स सि १, ८.

जह्मरुमेण वे नि मिच्छत्त-मम्मत्ताणि पडिवण्णा (५) । चट्ठ-पच्चअतोमुहुत्तेहि उणाणि
एक्कत्तीस सागरोपमाणि मिच्छादिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमुक्कस्सतरं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छादिट्ठीणमतर केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३१२ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्त ॥ ३१३ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण एक्कत्तीस सागरोपमाणि देसूणाणि ॥ ३१४ ॥

एद पि सुगम ।

प्राप्त हुआ (४) । दूसरा जीव सम्यक्त्तके साथ ही रहा । आयुके अन्तमें यथाश्रमसे
दोनो ही जीव मिथ्यात्व और सम्यक्त्तको प्राप्त हुए (५) । इस प्रकार चार अन्त
मुहूर्तोंसे कम इक्कीस सागरोपमनाल शुक्लेक्ष्यावाले मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट अन्तर है
और पाब अन्तर्मुहूर्तोंसे कम इक्कीस सागरोपमनाल असयतसम्यग्दृष्टि का उत्कृष्ट
अन्तर है ।

शुक्लेक्ष्यावाले मासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर कमश पत्थोपमका अस
रपातना भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इक्कीस सागरोपम
है ॥ ३१४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

१ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टीर्नानाजीवपेक्षया सामान्यवत् । स सि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्य पत्थोपमासख्येयमागोन्तमुहूर्तश्च । स सि १, ८

३ उत्कृष्टेणैकविंशसागरोपमाणि देसेनानि । स सि १, ८

संजदासंजद-पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेग-
जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३१५ ॥

कुदो ? णाणाजीवपाहस्स वोन्हेदामाणा, एगजीवस्स लेस्सद्वादो गुणद्वाए
बहुचुन्देसादो ।

अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३१६ ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३१७ ॥

त जहा— एक्को अप्पमत्तो सुक्कलेस्साए अच्छिदो उरसमसेट्ठि पडिद्दणतरिय
सव्वजहण्णकालेण पडिणियत्तिय अप्पमत्तो जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्समंतोमुहुत्तं ॥ ३१८ ॥

शुक्कलेश्यामाले सयतामयत और प्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३१५ ॥

क्योंकि, उक्त गुणस्थानवर्ता नाना जीवोंने प्रधाहका कभी व्युच्छेद नहीं होता
है । तथा एक जीवकी अपेक्षा भी अन्तर नहीं है, क्योंकि, ऐश्याके कालसे गुणस्थानका
काल बहुत होता है, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शुक्कलेश्यामाले अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३१६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१७ ॥

जैसे—शुक्कलेश्यामो विद्यमान कोई एक अप्रमत्तसयत उपशमश्रेणीपर चढकर
अन्तरको प्राप्त हो सर्वजघन्य कालसे लौटकर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर
प्राप्त होगया ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३१८ ॥

१ साताययवप्रमत्तसयतयोलेजोळश्याम । स सि १, ८

२ अप्रमत्तसयतस्य नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । स मि १, ८

३ एगजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट अन्तरमुहूर्त । स सि १, ८

एदस्म जहण्णभगो । णपरि सच्चचिरेण कालेण उअसमसेढीदो ओदिण्णस्म वत्तव्य ।

तिण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३१९ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्त ॥ ३२० ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३२१ ॥

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ॥ ३२२ ॥

एदेसिं दोण्ह सुत्ताणमत्थे भण्णमाणे सिप्प-चिरकालेहि उअसमसेढिं चट्ठिय ओणि णाण' जहण्णुक्कस्मकाला वत्तव्वा ।

इसका अन्तर भी जघन्य अन्तरप्ररूपणाके समान है । विशेषता यह है कि सप्तदीपकालात्मक अन्तर्मुहूर्त द्वारा उपशमध्रेणीसे उतरे हुए जीवके उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए ।

शुक्लेश्वरागले अपूर्वकरण, अनिष्टचिरकरण और सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानतीर्ती तीनों उपशमरु जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ३१९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्वरागले तीनों उपशमरुओंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्व है ॥ ३२० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३२१ ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३२२ ॥

इन दोनों सूत्रोंका अर्थ कहने पर क्षिप्र (लघु) कालसे उपशमध्रेणी पर चढ़कर उतरे हुए जीवोंके जघन्य अन्तर कहना चाहिए, तथा चिर (दीर्घ) कालसे उपशमध्रेणी पर चढ़कर उतरे हुए जीवोंके उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए ।

१ त्रयाणामुपशमरानां नानाजीवापेक्षया सामान्यत्वं । उ सि १, ८

२ एवजीव इति जघन्यमुहूर्तं चान्तर्मुहूर्त । उ नि, १, ८

३ इति 'जीविणाम्' इति पाठ ।

उपसंतकसायवीदरागछटुमत्याणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३२३ ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३२४ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३२५ ॥

उपमतादो उपरि उपसत्तरुमाएण पडिउज्जमाणगुणट्ठाणाभागा, हेट्ठा ओदिणस्स
पि लेस्सतरंमकतिमत्तरेण पुणो उपसत्तगुणग्गहणाभागा ।

चटुहं खवगा ओघं ॥ ३२६ ॥

शुक्लेश्यामाले उपशान्तरूपायनीतरागछटुस्थोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ३२३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर नर्पृथक्त्वं है ॥ ३२४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२५ ॥

क्योंकि, उपशान्तरूपाय गुणस्थानसे ऊपर उपशान्तरूपायी जीवके द्वारा प्रतिपद्य
मान गुणस्थानका अभाव है, तथा नीचे उतरे हुए जीवके भी अन्य लक्ष्याके सक्रमणके
बिना पुन उपशान्तरूपाय गुणस्थानका ग्रहण हो नहीं सकता है ।

निशेषार्थ—उपशान्तरूपायगुणस्थानके अन्तरका अभाव बतानेका कारण यह है
कि ग्यारहवें गुणस्थानसे ऊपर तो वह चढ़ नहीं सकता है, क्योंकि, वहापर क्षपकोंका
ही गमन होता है । और यदि नीचे उतरकर पुन उपशमध्रेणीपर चढ़े, तो नीचेके गुण-
स्थानोंमें शुक्लेश्यासे पीत पद्मादि लक्ष्याका परिवर्तन हो जायगा, क्योंकि, वहापर एक
लक्ष्याके कालसे गुणस्थानका काल बहुत बताया गया है ।

शुक्लेश्यामाले चारंग क्षपकोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२६ ॥

१ उपशान्तरूपायस्य नानाजीवापेक्षया सामान्यम् । स वि १, ८

२ एकजीव एव नास्ति तस्य । स वि १, ८

३ प्रतिपु 'लेस्सतर' इति पाठ ।

४ चतुर्णां क्षपकाणां संयोगवैकल्यमात्रेणानां च सामान्यम् । स वि १, ८

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३२७ ॥

दो मि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ लेस्सामगणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिणसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघ ॥ ३२८ ॥

हुदो ? सच्चपयारेण ओघप्ररूपणादो भेदाभावा ।

अभवसिद्धियाणमत्तर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अत्तर, णिरत्तर' ॥ ३२९ ॥

हुदो ? अभवप्रप्राहरोच्छेदाभावा ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अत्तरं, णिरत्तर ॥ ३३० ॥

हुदो ? गुणतरसकृतीए तत्थाभावा ।

एउ भवियमगणा समत्ता ।

शुद्धलेख्याणाले सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२७ ॥

ये दोनों सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार लेख्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर जयोगिकेवली
तक प्रत्येक गुणस्थानवर्ती भव्य जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

फ्योकि, सब प्रकार ओघप्ररूपणासे भव्यमार्गणाकी अन्तरप्ररूपणामें कोई
भेद नहीं है ।

अभव्यमिद्धिक जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२९ ॥

फ्योकि, अव्य जीवोंके प्रप्राहका कभी विच्छेद नहीं होता है ।

अमव्य जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३० ॥

फ्योकि, अव्यमोंमें अन्य गुणस्थानके परिवर्तनका अभाव है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

१ प्रथिउ 'लेस्सामगणा' इति वा ।

२ मव्यानुवादने मव्यमि मिथ्यादृष्ट्यायोगवृत्त्युत्पत्तयानां सामान्यवत् । स मि १, ८

३ अव्यमानी नानाजीवोपेक्षया एउजीवोपेक्षया च नास्त्वन्तरम् । स मि १, ८

सम्मात्ताणुवादेण सम्मादिट्टीसु असंजदसम्मादिट्टीणमंतरं केवचिरं
कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥३३१॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३३२ ॥

त जहा- एगो असजदसम्मादिट्टी सजमासजगुणं गंतुणं सव्वजहण्णेण कालेण
पुणो अमजदसम्मादिट्टी जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूण ॥ ३३३ ॥

त जहा- एगो मिन्हादिट्टी अट्टागीममतम्मिओ पच्चिदियतिगिक्खसण्णिसम्मु-
च्छिमपज्जत्तएसु उतरण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) मिससतो (२) मिसुद्धो
(३) वेदगसम्मत्त पडिण्णो (४) । मजमामजमगुण गत्तुणत्तरिदो पुव्वकोडि जीयिय
मदो देसो जादो । एवं चहुदि अतोमुहुत्तेहि ऊणिया पुव्वकोडी उक्कस्मतरं ।

सजदासंजदप्पहुडि जाव उवसंतकसायवीदरागछुदुमत्था ओधि-
णाणिभगो ॥ ३३४ ॥

सम्यग्दृष्ट्यमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टियोंमें असत्यतमस्यग्दृष्टियोंका अन्तर
कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य जन्तु अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३२ ॥

जैसे- एक असत्यतमस्यग्दृष्टि जीव सयमासयम गुणस्थानको प्राप्त होकर सर्व-
जघन्य कालमें पुन असत्यतमस्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार अन्तर प्राप्त हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी है ॥ ३३३ ॥

जैसे- मोहकर्मकी अट्टाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ताप्राप्त एक मिथ्यादृष्टि जीव पचेन्द्रिय
सत्ता सम्पूर्ण पर्याप्तकृतियोंमें उत्पन्न हुआ । उहाँ पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१)
विश्राम ले (२) मिश्र हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (४) । पुन सयमासयम
गुणस्थानको जाकर अन्तरको प्राप्त हो पूर्वकोटी वर्षतक जीवित रह कर मरा और देव
हुआ । इस प्रकार चार अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटी वर्ष असत्यतमस्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

संयत्तामयत गुणस्थानसे लेकर उपशान्तरूपायतीतरागउन्मस्य गुणस्थान तक
प्रत्येक गुणस्थानवर्ती सम्यग्दृष्टियोंका अन्तर अधिव्रानियोंके समान है ॥ ३३४ ॥

१ प्रतिपु 'सजदप्पहुडि' इति पाठ ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३२७ ॥

दो नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एन लेस्सामगणा^१ समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिणसु मिच्छादिट्ठिणहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघं ॥ ३२८ ॥

कुदो ? सच्चपयारेण ओघपरूणादो भेदामाया ।

अभवसिद्धियाणमत्तर केवचिर कालादो हेदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरत्तर^२ ॥ ३२९ ॥

हुदो ? अव्यपराहरोच्छेदामाया ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरत्तर ॥ ३३० ॥

हुदो ? गुणतरसकृतीए तत्तामाया ।

एन भनियमगणा समत्ता ।

शुद्धलेख्यानाले सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२७ ॥
ये दोनों सून सुगम हैं ।

इस प्रकार लेख्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धिकोमे मिच्छादिष्टिमे लेकर अयोगिकेवली
तक प्रत्येक गुणस्थानर्त्ता भव्य जीवोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

क्योंकि, सर्व प्रकार ओघप्ररूपणासे भव्यमार्गणाकी अन्तरप्ररूपणामें कोई
भेद नहीं है ।

अभव्यसिद्धिक जीवोंका अन्तर मिलने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा
अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३२९ ॥

क्योंकि, अव्यव्य जीवोंका प्रवाहना कभी विच्छेद नहीं होता है ।

अव्यव्य जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३० ॥

क्योंकि, अव्यव्यमें अन्य गुणस्थानके परिपतनका अभाव है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

१ प्रतिपु 'लम्पामगणा' इति पाठ ।

२ मत्तावुत्तमन मत्तेयु मिच्छादिष्टावयोगवेव्यन्तानां सामावन् । स ति १, ८

३ अव्यव्यो नानाजीवापेक्षया एवजीवपेक्षया च नास्पृष्टम् । स ति १, ८

त जहा- एस्को पुव्वकोडाउएसु मणुमेसुपज्जिय गव्भादिअट्ठमस्मिओ जादो ।
 दमणमोहणीय सणिय रुडयसम्मादिद्वी जादो (१) । अतोमुहुत्तमच्छिदूण (२) सजमासजम
 सजम वा पडिपज्जिय पुव्वकोडिं गमिय काल गदो देवो जादो । अट्ठमस्सेहि नि-
 अतोमुहुत्तेहि य ऊणिया पुव्वकोडी अतर ।

संजदासंजद-पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिर कालादो होदि णाणा-
 जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, निरंतरं ॥ ३४० ॥

सुगममेव ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३४१ ॥

एव पि सुगम ।

उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोवमाणि सादिरैयाणि ॥ ३४२ ॥

तं जहा- एस्को पुव्वकोडाउगेसु मणुमेसु उरयण्णो । गव्भादिअट्ठमस्माणमुपरि
 अतोमुहुत्तेण (१) रुडय पट्ठमिय (२) निम्ममिय (३) मजमामजम पडिपज्जिय (४)

जैसे- एक जीव पूर्वकोटीकी आयुशाले मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ
 वर्षका हुआ और दर्शनमोहनीयका क्षय करके क्षायिकसम्यग्दृष्टि होगया (१) । वहा
 अन्तर्मुहर्त रह करके (२) सयमासयम या सयमको प्राप्त होकर और पूर्वकोटी वर्ष
 नितारकर मरणको प्राप्त हो देव हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और दो अन्तर्मुहर्तसे कम
 पूर्वकोटी वर्ष जसयन क्षायिकसम्यग्दृष्टिका उत्कृष्ट अन्तर है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि भयतामयत और प्रमत्तमयत जीवोंका अन्तर कितने काल
 होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३४० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहर्त है ॥ ३४१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेत्तीस सागरोपम
 है ॥ ३४२ ॥

जैसे- एक जीव पूर्वकोटी वर्षकी आयुशाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि
 लेकर आठ वर्षोंके पश्चात् अन्तर्मुहर्तसे (१) क्षायिकसम्यक्त्वका प्रस्थापनकर (२)
 विधाम ले (३) सयमामयमको प्राप्त कर (४) सयमको प्राप्त हुआ । सयमसहित

१ सयमामयमप्रमत्तप्रमत्तगतानां तानाजानापेक्षया नात्यन्तरम् । स मि १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहर्त । स मि १, ८

३ उत्कर्षण प्रयत्निसंज्ञायापोपमाणि सादिरैयाणि । स मि १, ८ ४ प्रविशु 'पट्ठमिय' इति पाठ ।

जधा ओधिणाणमग्गाणाए सज्जदासज्जदादीणमतरपरूणा कदा, तथा कदा मा,
णत्थि एत्थ कोड रिमैसो ।

चटुण्ह खवगा अजोगिकेवली ओधं ॥ ३३५ ॥

सजोगिकेवली ओध ॥ ३३६ ॥

दो रि मुत्ताणि सुगमाणि ।

खइयसम्मादिट्ठीसु असज्जदसम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर' ॥ ३३७ ॥

सुगममेद ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३३८ ॥

त जहा—एकको अमज्जसम्मादिट्ठी अण्णगुण गत्तूण सच्चजहण्णकालेण असज्ज
सम्मादिट्ठी जादो । लद्धमतर ।

उक्कस्सेण पुव्वकोडी देसूण' ॥ ३३९ ॥

जिस प्रकारसे अधिष्ठानमागणामें सयतासयत आदिमेंके अंतरकी प्रकृपणा
की है, उसी प्रकार यहा पर भी करना चाहिये, क्योंकि, उससे यहा पर कोई विशेषता
नहीं है ।

सम्यग्दृष्टि चारों क्षपक और अवोगिकेनलियोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ३३५ ॥

सम्यग्दृष्टि सयोगिकेनलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३३६ ॥

ये दोनों हा सून सुगम ह ।

धायिसमम्यग्दृष्टियाम असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कितने काल होता है ?
नाना जीवानी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३३७ ॥

यह सून सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३३८ ॥

जैसे—एक असयतसम्यग्दृष्टि जीव अथ (सयतासयतादि) गुणस्थानको जानर
सर्जजघन्य कालमें पुन असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटी वर्ष
है ॥ ३३९ ॥

१ सम्यक्ज्ञानवादन धायिसमम्यग्दृष्टिअसयतसम्यग्दृष्टेनानाजागपेक्षया नास्त्यतरम् स मि १, ८

२ पुनर्जीवं प्रति जघन्येनान्मुहूर्तं । स मि १, ८ ३ उत्तरपण पूर्वकोटी देशाना । त मि १, ८

अथवा अंतरस्मन्मतराओ दो अप्पमत्तद्वाओ, तासिं गहिरिया एक्का पमत्तद्वा मुद्धा । अतरम्भतराओ छ उरसामगद्वाओ, तासिं गहिरियाओ तिणिं खवगद्वाओ मुद्धाओ । अतरम्भतरिमाए उरमतद्वाए एक्किक्किस्से खवगद्वाए अट्टं मुद्धं । अरसेसा अट्टुद्धा अंतोमुहुत्ता । तेहि ऊणियाए पुव्वकोडीए मादिगैयाणि तेत्तीम सागरोवमाणि पमत्तस्सुक्कस्मतरं ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकओ अप्पमत्तो खड्यसम्मादिट्टी अपुव्वो (१) अणियट्ठी (२) सुट्ठमो (३) उरसतो (४) पुणो पि सुट्ठमो (५) अणियट्ठी (६) अपुव्वो होदूण (७) काल गदो समऊणतेत्तीससागरोवमाउट्टिदिण्णु देण्णुगण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउण्णु मणुसेमु उरगण्णो, अतोमुहुत्तायसेसे ससारे अप्पमत्तो जादो । लद्धमतं (१) । तदो पमत्तो (२) पुणो अप्पमत्तो (३) । उरि छ अंतोमुहुत्ता । अंतरस्स अम्भतरिमाओ छ उरसामगद्वाओ गहिरिल्लियासु तिसु खवगद्वासु मुद्धाओ । अम्भ-

अथवा, अन्तरके आभ्यन्तरी दो अप्पमत्तकाल ह ओर उनके बाहरी एक प्रमत्तकाल शुद्ध है । (अतएव घटाने पर शून्य शेष रहा, क्योंकि, अप्पमत्तसयतके कालसे प्रमत्तसयतका काल इना होता है ।) तथा अन्तरके भीतरी छह उपशामककाल ह, और उनके बाहरी तीन क्षपककाल शुद्ध ह । (अतएव घटा देने पर शेष कुछ नहीं रहा, क्योंकि उपशामकश्रेणीके कालसे क्षपकश्रेणीका काल दुगुना होता है ।) अन्तरके भीतरी उपशामककालमेंने एक क्षपककालके आधा घटाने पर क्षपककालका आधा शेष रहता है । इस प्रकार खर मिलाकर साढे तीन अन्तर्मुहूर्त अवशेष रहे । उन साढे तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम पूर्वकोटसे अधिक तेतीस सागरोपमकाल श्रायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

श्रायिकसम्यग्दृष्टि अप्पमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक अप्पमत्तसयत श्रायिकसम्यग्दृष्टि जीव अपूर्वकरण (१) अनिवृत्तिकरण (२) सूक्ष्मसाम्पराय (२) उपशामकपाय (४) होकर पुनरपि सूक्ष्मसाम्पराय (५) अनिवृत्तिकरण (६) अपूर्वकरण (७) होकर मरणको प्राप्त हुआ और एव समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ और ससारके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जाने पर अप्पमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया (१) । पश्चात् प्रमत्तसयत (२) पुन अप्पमत्तसयत (३) हुआ । इनमें ऊपरके छह अन्तर्मुहूर्त ओर मिलाये । अन्तरके आभ्यन्तरी छह उपशामककाल ह और बाहरी तीन क्षपककाल हैं, अतएव घटा देने पर शेष कुछ नहीं रहा ।

संजम पडिण्णो । पुब्बकोडिं गमिय मदो समऊणतेचीससागरोपमाउड्ढिदिण्णु उर
वण्णो । तदो चुदो पुब्बकोडाउण्णु मणुसेसु उरवण्णो । थोरापसेसे जीणिण सजमामम
गदो (५) । तदो अप्पमचादिण्णहि अतोमुहुत्तेहि मिद्धो जादो । अट्ठमस्सोहि चोहम
अतोमुहुत्तोहि य ऊणदोपुब्बकोडीहि मादिरेयाणि तेचीम सागरोपमाणि उक्कस्मतं
सज्जमासज्जस्म ।

पमत्तस्स उच्चदे- एकको पमत्तो अप्पमत्तो (१) अपुब्बो (२) अणियट्ठी
(३) सुद्धो (४) उरमत्तो (५) पुणो वि सुद्धो (६) अणियट्ठी (७) अपुब्बो
(८) अप्पमत्तो (९) अट्ठमस्सण काल गदो । समऊणतेचीमसागरोपमाउड्ढिदिण्णु
देवसे उरवण्णो । तदो चुदो पुब्बकोडाउण्णु मणुसेसु उरवण्णो । अतोमुहुत्तापसेमे जीणिण
पमत्तो जानो । लद्धमत्तर (१) । तदो अप्पमत्तो (२) । उपरि छ अतोमुहुत्ता । अतरस्स
घाहिरा अट्ठ अतोमुहुत्ता, अतरस्स अब्भतरिमा वि णर, तेणेगतोमुहुत्तम्भहिपुब्बकोडीए
सादिरेयाणि तेचीम सागरोपमाणि उक्कस्मतं ।

पुबकोटीकाल पिताकर मरा भार एक समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले
देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँसे च्युत हो पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । जीव
नके बरप अवशेष रह जाने पर सयमात्मयमको प्राप्त हुआ (५) । इसके पश्चात्
अप्रमत्तादि गुणस्थानसम्यग्धी नो अतर्मुहतासे (त्रेण्यागेहण करता हुआ) सिद्ध
होगया । इस प्रकार आठ वर्ष और चौदह अन्नमुहतासे कम दो पूर्वकोटियोंसे साधिक
तेतीस सागरोपमका क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयमात्मयतना उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक क्षायिकसम्यग्दृष्टि
प्रमत्तसयत जीव अप्रमत्तसयत (१) अपुब्बकरण (२) अनिवृत्तिकरण (३) सुद्धमसाम्प
राय (४) उपशातरयाय (५) पुन सुद्धमसाम्पराय (६) अनिवृत्तिकरण (७) अपूर्ण
करण (८) अप्रमत्तसयत (९) होकर (गुणस्थान और आयुके) कालक्षयसे मरणको
प्राप्त हो एक समय कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । पुन
यहाँसे च्युत होकर पूर्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । वहाँ जीवनके अतर्मुहते
अवशिष्ट रह जाने पर प्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया (१) । पश्चात्
अप्रमत्तसयत हुआ (२) । इनमें ऊपरके छह अतर्मुहते और मिलाए । अतरके बाहरी
आठ अतर्मुहते हैं और अन्तरके भीतरी नौ अतर्मुहते हैं, इसलिये नौमसे आठके घटा
देने पर दोष यचे हुए एक अतर्मुहतेसे अधिक पुबकोटीसे साधिक तेतीस सागरोपम
क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

त जहा— एक्को मिच्छादिद्वी वेदगसम्मत्तं संजमामजमं च जुगं पडिवण्णो । अंतोमुहुत्तमच्छिय सजमं पडिवण्णो अतरिदो । जत्तिय काल सजमासजमेण संजमेण च अच्छिदो तेत्तियमेत्तेण्णतेत्तीससागरोपमाउद्विदिदेसु उपण्णो । तदो जुदो मणुसेसु उपण्णो । तत्थ जत्तिय काल असजमेण सजमेण वा अच्छिदि, पुणो सग्गादो मणुसगदि-मांगतूण जं यामपुत्तादिकालमच्छिस्सदि तेहि दोहि पि कालेहि ऊणतेत्तीससागरोपमआउ-द्विदिदेसु देसु उपण्णो । तदो जुदो मणुसो जादो । वे अतोमुहुत्तापसेसे वेदगसम्मत्त-काले परिणामपच्चएण संजमामजमं पडिवण्णो । लद्धमतर । तदो अतोमुहुत्तेण दसण-मोहणीय ररिय खड्यसम्मादिद्वी जादो । आदिल्लमेक्क अंतिल्ला दुने' अतोमुहुत्ता, एदेहि तीहि अतोमुहुत्तेहि ऊणाणि छात्रद्विसागरोपमाणि सजद्रासजदुक्कस्मतर ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३५३ ॥

सुगममेदं ।

जैसे— एक मिथ्यादृष्टि जीव वेदकसम्यक्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ । अन्तर्मुहूर्त रह कर पुन सयमको प्राप्त हो अन्तरको प्राप्त हुआ । पुन मरणकर जितने काल सयमासयम आर सयमके साथ रहा था उतने ही कालसे कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । यहासे च्युत हो मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । यहा पर जितने काल असयमके अथवा सयमके साथ रहा है और स्वर्गसे मनुष्य-गतिमें आकर जितने वर्षपृथक्त्वादि काल असयम अथवा सयमके साथ रहेगा उन दोनों ही कालोंसे कम तेतीस सागरोपमकी आयुस्थितियाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहाँसे च्युत हो मनुष्य हुआ । इस प्रकार वेदकसम्यक्त्वके कालमें दो अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जाने पर परिणामोंके निमित्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ । तब अन्तर लब्ध हुआ । पुन अन्तर्मुहूर्तसे दर्शनमोहनीयका क्षणणकर क्षायिकसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार आदिको एक और अन्तके दो अन्तर्मुहूर्त, इन तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम छयासठ सागरोपमकाल वेदकसम्यग्दृष्टि सयतासयतका उत्कृष्ट अन्तर है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसंयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

एदाणि दो पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

वेदगसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठीणं सम्मादिट्ठिभंगो ॥ ३४९ ॥

सम्मत्तमग्गणाए ओघमिह जघा अमजदमम्मादिट्ठीणमतर परिनिद तया एत्थ
वि परुदिद्व्य ।

संजदासजदाणमंतर केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च
णत्थि अंतर, निरंतरं ॥ ३५० ॥

सुगममेद ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३५१ ॥

एद पि सुगम ।

उक्कस्सेण छावट्ठि सागरोवमाणि देसूणाणि ॥ ३५२ ॥

ये चीनों ही छव सुगम है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर सम्यग्दृष्टिमामान्यके समान
है ॥ ३४९ ॥

जिस प्रकारसे सम्यक्त्वमागणाके ओघमें असयतसम्यग्दृष्टियोंका अन्तर कहा है,
उसी प्रकारसे यहा पर भी कहना चाहिये ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोंका अन्तर कितने काल होता है? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३५० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जयन्त्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर कुछ क्रम छयासठ सागरोपम
है ॥ ३५२ ॥

१ सायापचमिहसम्यग्दृष्टिभयतसम्यग्दृष्टिर्नानाजीवापेक्षया नास्त्यन्तरम् । एकजीव प्रति जघयेनात्त
होतं । उत्तरेण पूर्ववादी देवेना । स सि १, ८

२ सयतासयतस्य नानाजीवत्वेनवा नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघयेनात्तमुहुत्तं । स सि १, ८

४ उत्तरेण वदस्यसिवागरोपमाणि देवेनाति । स सि १, ८

वण्णो । अतोमुहुत्ताग्नेसे आउए अप्पमत्तो जादो । लद्धमत्तर (१) । पमत्तापमत्तसज्जद-
द्वुणे सडय पट्टयिय (२) सग्गमेढीपाओग्गअप्पमत्तो होदूण (३) सग्गमेढीमारुढो
अपुच्चादिउहि अतोमुहुत्तेहि णिवुदो । अतरस्मादिल्लमेत्तक गहिरेसु णसु अतोमुहुत्तेसु
मोहिदे अग्नेसा अट्ठ । एदेहि ऊणपुच्चकोटीए मादिग्गयाणि तेत्तीस सागरोपमाणि
अप्पमत्तुत्तस्मत्तर ।

उपसमसम्मादिद्वीसु असंजदसम्मादिद्वीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, पाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३५६ ॥

गिरत्तरमुपसममम्मत्त पडिउज्जमाणजीवाभावा ।

उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि ॥ ३५७ ॥

किमत्थो सत्तरादिंदियगिरहणियमो ? सभाउदो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३५८ ॥

त जहा—एक्को उपसममेढीदो ओदरिय असंजदो जादो । अतोमुहुत्तमच्छिउदूण

आयुके अन्तर्मुहूर्त अवशिष्ट रह जाने पर अप्रमत्तसयत हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध
होगया (१) । तत्पश्चात् प्रमत्त या अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यक्त्वको प्रस्था-
पितकर (२) क्षपकध्रेणीके प्रायोग्य अप्रमत्तसयत होकर (३) क्षपकध्रेणीपर बढ़ा ओर
अपूर्णकरणादि छह अन्तर्मुहूर्तोंसे निर्वाणको प्राप्त हुआ । अन्तरके आदिका एक अन्तर्मुहूर्त
शाहरी नौ अन्तर्मुहूर्तोंमेंसे घटा देने पर अवशिष्ट आठ अन्तर्मुहूर्त रहे । इनसे कम
पूर्वकोटीसे साधक तेत्तीस सागरोपमनाह वेदकसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयतका उत्कृष्ट
अन्तर होता है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३५६ ॥

क्योंकि, निरन्तर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंका अभाव है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर सात रात दिन (अहोरात्र) है ॥ ३५७ ॥

श्रुता—सात रात दिनोंके अन्तरका नियम किसलििए है ?

समाधान—स्वभावसे ही है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५८ ॥

जैसे—एक सयत उपशमध्रेणीसे उतरकर असंयतसम्यग्दृष्टि हुआ और अन्तर्मुहूर्त

१ औपशमिसम्यग्दृष्टिसयतसम्यग्दृष्टनानाजावापेक्षया जघयेनेक समय । स ति १, ८.

२ उक्खयेण सत्त रात्रिदिनानि । स ति १, ८

३ पुञ्जीव प्रति जघयमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

एगजीव पदुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्त' ॥ ३५४ ॥

एद पि सुगम ।

उत्तस्सेण तेत्तीसं सागरोपमाणि सादिरेयाणि' ॥ ३५५ ॥

त जहा- एकको पमत्तो अप्पमत्तो होदूण अतोमुहुत्तमच्छिय तेत्तीससागरोपमाउ
ट्टिदिएसु देवमुत्तमण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउएसु मणुमेमुत्तमण्णो । अतोमुहुत्तात्तमे
संसारे पमत्तो जादो । लद्धमत्तर । सड्य पट्टरिय सगमेडीपाओग्गअप्पमत्तो होदूण (२)
सगमेट्टिमाहो अपुच्चादि छअतोमुहुत्तेहि णिल्लुदो । अतरस्म आदिल्लमेत्तमत्तो
मुहुत्त अतरवाहिरेसु अट्टअतोमुहुत्तेसु सोहिदे जससेसा मत्त अतोमुहुत्ता । एदेहि उण
पुव्वकोडीए सादिरेयाणि तेत्तीस सागरोपमाणि पमत्तमज्जदुक्कस्मत्तर ।

अप्पमत्तस्स उच्चदे- एकको अप्पमत्तो पमत्तो होदूण अतोमुहुत्तमच्छिय (१)
समउणतेत्तीससागरोपमाउट्टिदिदेसु उत्तमण्णो । तदो चुदो पुव्वकोडाउएसु मणुमेसु एव

उक्त जीवशा एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५४ ॥

यह सूत्र भा सुगम है ।

उक्त जीवशा एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेत्तीस सागरोपमा
है ॥ ३५५ ॥

जैसे- एक प्रमत्तसयत, अप्रमत्तसयत हो अतमुहूर्त रहकर तेत्तीस सागरोपमकी
आयुस्थितिघाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे न्युत हो पूव्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें
उत्पन्न हुआ । संसारके अतमुहूर्तप्रमाण अवशिष्ट रह जाने पर प्रमत्तसयत हुआ । इस
प्रकार अतर लब्ध हुआ । पुन श्रायिस्सम्यक्कको प्रस्थापितकर क्षपकधेणीके योग्य
अप्रमत्तसयत हो (२) क्षपकधेणीपर चढा और अपूव्वकण्णादि उह अन्तर्मुहूर्तोंसे निर्वाणका
प्राप्त हुआ । अतरके आदिके एक अन्तर्मुहूर्तको अतरके गहिरी आठ अन्तर्मुहूर्तोंमेंसे
कम कर देने पर अवशिष्ट सात अतमुहूर्त रहते हैं, इनसे कम पूव्वकोटीसे साधिक
तेत्तीस सागरोपमजाल प्रमत्तसयतका उत्कृष्ट अतर है ।

वेदकसम्यग्दष्टि अप्रमत्तसयतका अन्तर कहते हैं- एक अप्रमत्तसयत जीव,
प्रमत्तसयत हो अतमुहूर्त रहकर (१) एक समय कम तेत्तीस सागरोपमकी आयुस्थिति
घाले देवोंमें उत्पन्न हुआ । वहासे न्युत हो पूव्वकोटीकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ ।

१ प्रजाति प्रति अवयवानामुहूर्त । स मि १, ८

२ उत्कर्षेण अपसिद्ध सागरोपमाणि सावितरेयाणि । स मि १, ८

मच्छिय असजदो जादो। पुणो वि अंतोमुहुत्तेण भजमासजम पडिचण्णो। लद्ध जहणंतर।

उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६३ ॥

त जहा- एक्को सेडीदो ओदरिय सजदासजदो जादो। अंतोमुहुत्तमच्छिय अप्पमत्तो पमत्तो असंजदो च होदूण सजदासजदो जादो। लद्धमुक्कस्मत्तर।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३६४ ॥

सुगममेद।

उक्कस्सेण पण्णारस रादिदियाणि ॥ ३६५ ॥

एद पि सुगम।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३६६ ॥

त जहा- एक्को उपसमसेडीदो ओदरिय पमत्तो होदूण अंतोमुहुत्तमच्छिय अप्प-

मुहूर्त रहकर असयतसम्यग्दृष्टि होगया। फिर भी अन्तर्मुहूर्तसे सयमासयमको प्राप्त हुआ। इस प्रकार जघन्य अन्तर लब्ध हुआ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६३ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर सयतासयत हुआ। अन्तर्मुहूर्त रहकर अप्रमत्तसयत, प्रमत्तसयत और असयतसम्यग्दृष्टि होकर सयतासयत होगया। इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ।

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तसयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३६४ ॥

यह सूत्र सुगम है।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पन्द्रह रात दिन है ॥ ३६५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६६ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर प्रमत्तसयत हो अन्तर्मुहूर्त रह कर

१ प्रमत्तप्रमत्तसयतयोर्नानाजीवपेक्षया जघनेनेन समम् । स सि १, ८

२ उत्कर्षेण प्रमत्तसयत रात्रिदिनानि । स सि १, ८

३ एकजीव प्रति जघन्यमुत्कृष्ट चान्तर्मुहूर्तः । स सि १, ८

सजमामजम पडिगणो । अतोमुहुत्तेण पुणो असजदो जादो । लद्ध जहणंतरं ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ॥ ३५९ ॥

त जहा- एको सेडीदो ओदरिय अमजदो जादो । तत्थ अतोमुहुत्तमच्छिय सजमामजम पडिवणो । तदो अप्पमचो पमचो होदूण असजदो जादो । लद्धमुक्कस्मतर ।

संजदासंजदाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं ॥ ३६० ॥

सुगममेद ।

उक्कस्सेण चौदस रादिदियाणि ॥ ३६१ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३६२ ॥

त जहा- एक्को उगममेदीदो ओदरिय सजमामजम पडिगणो । अतोमुहुत्त

रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । अन्तर्मुहूर्तसे पुन असयत होगया । इस प्रकार जघन्य अन्तर लब्ध हुआ ।

उक्त जीवोंको एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३५९ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर असयतसम्यग्दृष्टि हुआ । वहा अन्तर्मुहूर्त रहकर सयमासयमको प्राप्त हुआ । पश्चात् अप्रमत्त और प्रमत्तसयत होकर असयतसम्यग्दृष्टि होगया । इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ ।

उपशमसम्यग्दृष्टि सयतामयतोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३६० ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर चौदह रात दिन है ॥ ३६१ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६२ ॥

जैसे- एक सयत उपशमश्रेणीसे उतरकर सयमासयमको प्राप्त हुआ और अन्त

१ सयतामयतस्य नानाजीवोपेक्षा जघन्येक समयः । स सि १, ८

२ उत्तरायण चतुदश रात्रिदिनानि । स सि १ ८

३ एकजीवं प्रति त्रयसप्तकृष्ट आन्तर्मुहूर्त । स सि, १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं^१ ॥ ३७० ॥

त जहा- उवसममेदिं चट्ठिय आदिं करिय पुणो उरिं गतूण ओदरिय अप्पिद-
गुण पडिण्णस्स अतोमुहुत्तमतरं होदि ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं^१ ॥ ३७१ ॥

एदस्म जहण्णभगो । णरि तिससा त्रिदियनार चढमाणस्म जहण्णंतरं, पढमवारं
चट्ठिय ओटिण्णस्म उक्कस्मतर वच्चन ।

उवसंतकसायवीदरागल्लदुमत्थाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि,
णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं^२ ॥ ३७२ ॥

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३७३ ॥

एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं^३ ॥ ३७४ ॥

उक्त तीनों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त
है ॥ ३७० ॥

जैसे- उपशामध्रेणीपर चढकर आदि करके फिर भी ऊपर जाकर और उतरकर
निवक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीवमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर होता है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३७१ ॥

इस उत्कृष्ट अन्तरकी प्ररूपणा भी जघन्य अन्तरकी प्ररूपणाके समान जानना
चाहिए । किन्तु विशेषता यह है कि उपशामध्रेणीपर द्वितीय बार चढनेवाले जीवके जघन्य
अन्तर होता है और प्रथम बार चढकर उतरे हुए जीवके उत्कृष्ट अन्तर होता है, ऐसा
बहना चाहिए ।

उपशान्तरूपायनीतरागल्लदुमत्थ जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना
जीवोंकी अपेक्षा जघन्य अन्तर एक समय है ॥ ३७२ ॥

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर र्पपृथग्मत्त्व है ॥ ३७३ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

उपशान्तरूपायनीतरागल्लदुमत्थोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर
है ॥ ३७४ ॥

१ एकजीव प्रति जघ यमुत्तम चातर्मुहूर्त । स सि १, ८

२ उपशान्तरूपायस्य नानाजीवापेक्षया सामान्यवत् । स सि १, ८

३ एगजीव प्रति नास्स्यन्तरम् । स सि १, ८

मनो जादो । पुणो रि पमत्तत्तं गदो । लद्धमत्तर । एव चेत् अप्पमत्तस्म रि जहणत्तर
वत्तन्व ।

उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ॥ ३६७ ॥

त जहा- एम्हो उअसममेटीदो ओदरिय पमत्तो होदूण पुणो सजदामज्जो अम
जदो अप्पमत्तो च होदूण पमत्तो जादो । लद्धमत्तर । अप्पमत्तस्म उन्वदे- एक्को
सेडीदो ओदरिय अप्पमत्तो जादो । पुणो पमत्तो अमजदो सजदासजदो च होदूण भूआ
अप्पमत्तो जादो । लद्धमुक्कस्मत्तर ।

**तिण्हमुवसामगाणमत्तरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुन्व जहण्णेण एगसमयं ॥ ३६८ ॥**

उक्कस्सेण वासपुधत्तं ॥ ३६९ ॥

एदाणि दो रि सुत्ताणि सुग्गमाणि ।

अप्रमत्तसयत्त हुआ । फिर भी प्रमत्त गुणरूपागमो प्राप्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध
हुआ । इसी प्रकारसे उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयत्तका भी जघन्य अन्तर कहना चाहिए ।

उपशमसम्यग्दृष्टि प्रमत्त और अप्रमत्तमयत्तोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट
अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३६७ ॥

जैसे- एक सयत्त उपशममयेणीसे उतरकर प्रमत्तसयत्त होकर पुन सयत्तासयत्त,
असयत्त और अप्रमत्तमयत्त होकर प्रमत्तसयत्त हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ ।
उपशमसम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसयत्तका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- एक सयत्त उपशममयेणीसे
उतरकर अप्रमत्तसयत्त हुआ । पुन प्रमत्तसयत्त, असयत्त और सयत्तासयत्त होकर फिर
भी अप्रमत्तमयत्त होगया । इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तर लब्ध हुआ ।

उपशमसम्यग्दृष्टि अपूर्णकरण, अनिशुत्तिरूपा और सूक्ष्मसाम्पराय, इन तीनों
उपशमकोंका अन्तर मिलने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक
समय अन्तर है ॥ ३६८ ॥

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर उपपृथक्कर है ॥ ३६९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३७७ ॥

गुणमकूतीए असंभवादो ।

मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च
णत्थि अंतरं, णिरंतरं ॥ ३७८ ॥

कुदो ? णाणाजीउपमाहस्म वोच्छेदामावा, गुणंतरसंकंतीए अमावादो ।

एउ सम्मतमगणा समत्ता ।

सण्णियाणुवादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठीणमोघं ॥ ३७९ ॥

कुदो ? णाणाजीउ पडुच्च अतरामाणेण, एगजीउ पडुच्च अंतोमुहुत्त देखणे-

छाउट्टिमागरोउममेत्तजहणुक्कस्मत्तरोहि य साधम्मउलभा ।

सासणसम्मादिट्ठिण्हुडि जाव उवसतकसायवीदरागछुदुमत्था
त्ति पुरिसवेदभंगो ॥ ३८० ॥

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३७७ ॥

क्योंकि, इन दोनोंके गुणस्थानका परिचर्तन असम्भव है ।

मिव्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना और एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३७८ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंके प्रवाहका कभी विच्छेद नहीं होता है । तथा एक जीवका
अन्य गुणस्थानोंमें सक्रमण भी नहीं होता है ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

सत्रीमार्गणाके अनुवादसे सत्री जीवोंमें मिव्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके समान
है ॥ ३७९ ॥

क्योंकि, नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, एक जीवकी अपेक्षा
अन्य अतर्मुहूर्त ओर उत्कृष्ट कुछ कम दो दृष्टासठ सागरोमममात्र अन्तरोंकी अपेक्षा
ओघसे समानता पाई जाती है ।

सासादनसम्यग्दृष्टिमें लेकर उपशान्तरूपायरीतरागछद्वस्थ तरु सत्री जीवोंका
अन्तर पुरुषोदयोंके अन्तरके समान है ॥ ३८० ॥

१ एगजीउ प्रति वाक्यतरण ।

हेट्टिमगुणद्वानेषु अतरात्रिय सञ्जहण्णेण कालेण पुणो उरसतरुमायभाय गयस्म
जहण्णतर किण्ण उच्चदे ? ण, हेट्टा ओडण्णस्म वेदमसम्मत्तमपडिवज्जिय पुब्बुवमम
सम्मत्तेशुरसमसेदीसमारुहणे समगामादा । त पि बुदो ? उरममसेदीममारुहणा-
ओम्मारुलादो सेसुरसममम्मच्छाए त्थोत्तुलमादो । तं पि बुदो णज्जदे ? उरसं-
कमायएगजीवस्मतराभाण्णहाणुत्तचीदो ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिर कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एयसमयं ॥ ३७५ ॥
सुगममेद ।

उक्कस्सेण पल्लिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ॥ ३७६ ॥
एद पि सुगम ।

शंका—नीचेके गुणस्थानमें अंतरको प्राप्त कराकर सद्यजघन कालसे पुन
उपशान्तरूपायतानो प्राप्त हुए जीवके अत्रन्य अंतर क्यों नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमधेणीसे नीचे उतरे हुए जीवके वेदकसम्प
त्त्वको प्राप्त हुए बिना पहलेवाले उपशमसम्यक्त्वके द्वारा पुन उपशमधेणीपर
समारोहणनी सम्भावनाका अभाव है ।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—क्योंकि, उपशमधेणीने समारोहणयोग्य कालसे शेष उपशम
सम्यक्त्वका काल अल्प पाया जाता है ।

शंका—यह भी कैसे जाना ?

समाधान—उपशातकपायवीतरागलशस्यके एक जीवने अंतरका अभाव
अन्यथा वन नहीं सकता, इससे जाना जाता है कि उपशान्तरूपाय गुणस्थान एक जीवकी
अपेक्षा अन्तर रहित है ।

सामादिसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिद्व्यादृष्टि जीवोंका अन्तर कितने काल होता
है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्यसे एक समय अन्तर है ॥ ३७५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीवोंका उत्कृष्ट अन्तर पल्लोपमका असरयातना भाग है ॥ ३७६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

१ सामादिसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिद्व्यादृष्टयोनानाजीवापेक्षया जघन्येनक समय । स वि १, ८
२ उत्कृष्ट पल्लोपमरूपेयमात्र । स वि १, ८

आहाराणुवादेण आहारएसु मिच्छादिट्ठीणमोघं ॥ ३८४ ॥

सुगममेद ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मा मिच्छादिट्ठीणमंतरं केवचिरं कालादो
होदि, णाणाजीवं पडुच्च ओघं ॥ ३८५ ॥

एद पि सुगम ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो,
अंतोमुहुत्तं ॥ ३८६ ॥

एद पि अगमयत्थं ।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ
ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ ॥ ३८७ ॥

तं जहा- एक्को सामणद्वाए दो समया अतिव चि काल गदो । एगविग्गहं

...

आहारमार्गणाके अनुगदसे आहारक जीनोंमें मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर ओघके
समान है ॥ ३८४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका अन्तर कितने काल
होता है ? नाना जीनोंकी अपेक्षा अन्तर ओघके समान है ॥ ३८५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त जीनोंका एक जीरकी अपेक्षा जघन्य अन्तर क्रमशः पक्ष्योपमका असं-
ख्यात भाग और अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३८६ ॥

इस सूत्रका जयं ज्ञात हे ।

उक्त जीनोंका उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके असंख्यात भागप्रमाण असंख्याता-
सख्यात उत्सर्पिणी और जनसर्पिणी काल है ॥ ३८७ ॥

जैसे- एक सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सासादनगुणस्थानके कालमें दो समय

...

१ आहारानादेन आहारणेषु मिथ्यादृष्टे सामाययत् । स सि १, ८

२ सासादनसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टयोरानाजीवपेक्षया सामाययत् । स सि १, ८

३ पक्षीव प्रति जघनेन पक्ष्योपमासंख्येयमागोऽन्तर्मुहूर्तश्च । स सि १, ८

४ उत्सर्पेणाशुलामरयेयमाणा असंखेया उत्सर्पिण्यवसर्पिण्य । स सि १, ८

हुदो ? मागरोपमदपुष्पचट्टिदिं पडि दोण्ड माधम्मुलमा । गरि अमणिद्विदि
मच्छिय सण्णीसुप्पणस्स उक्कस्मद्विदी वत्तच्चा ।

चट्टुहं खवाणमोघं ॥ ३८१ ॥

मुगममेद ।

असण्णीणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च
णत्थि अतरं, णिरतरं ॥ ३८२ ॥

हुदो ? अमणिपयाहस्स येन्हेदाभाया ।

एगजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ॥ ३८३ ॥

हुदो ? गुणसस्तीण अभायादो ।

एव सणिमग्गणा समत्ता ।

क्योंकि, सागरोपमदपुष्पचट्टिदिं अपेक्षा दोनोंके अंतरोंमें समानता पार्
जाती है । निरोपता यह है कि असली जीवोंकी स्थितिमें रहकर सभी जीवोंमें उत्पन्न हुए
जीवके उत्कृष्ट स्थिति कहना चाहिये ।

सभी चारों क्षणोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३८१ ॥

यह सन मुगम है ।

असली जीवोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर
नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८२ ॥

क्योंकि, असली जीवोंके प्रवाहका सभी विच्छेद नहीं होता है ।

असली जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८३ ॥

क्योंकि, असलीजीवोंमें गुणस्थानके परिवर्तनका अभाव है ।

इस प्रकार सहीमार्गणा समाप्त हुई ।

सस्येपमाणात्तर्प्यहर्तुः । उत्तर्येण सागरापमदपुष्पचट्टम् । अमयत्तमस्यदृष्टयापमत्ता तानां नानाजीवापसरा
नास्त्यन्तरम् । एकजीवं प्रति जघ यन्ना तमुहत् । उत्तर्येण सागरापमदपुष्पचट्टम् । अनुणापुपशमरानां नानाजीवा
पशया सामा यन्तम् । एकजीवं प्रति जघ यन्ना तमुहत् । उत्तर्येण सागरापमदपुष्पचट्टम् । स वि १, ८

१ अनुणां शपकाणां सामा यन्तम् । स वि १, ८

२ अत्रिनां नानाजीवापेक्षया कजावापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । स वि १, ८

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ॥ ३८९ ॥

कुदो ? गुणतर गतूण सच्चजहण्णकालेण पुणो अप्पिदगुणपडिउण्णस्स जहण्ण-
तरुवलंभा ।

उक्कस्सेण अगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जाओ ओस-
प्पिणि उस्सप्पिणीओ ॥ ३९० ॥

अमज्जदसम्मादिद्विस्म उच्चदे- एकको अट्टाणीमसतःकम्मिजो निग्गह कादूण
देनेसुअण्णो । उहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो (१) निस्सतो (२) निमुट्ठो (३) नेदगसम्मत्त
पडिउण्णो (४) । मिच्छत्त गतूणतरिदो अगुलस्स असंखेज्जदिभाग परिभमिय अंते उअसम-
सम्मत्त पडिउण्णो (५) । लद्धमंतर । उअसमसम्मत्तद्वाए छाअलियाअमेसाए मासण
गतूण निग्गहं गदो । पंचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उक्कस्सतर ।

उक्त जीर्णोका एक जीरकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३८९ ॥

क्योंकि, विप्रक्षित गुणस्थानसे अन्य गुणस्थानको जाकर और सर्वजघन्य
कालसे लौटकर पुन अपने विप्रक्षित गुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीवके जघन्य अन्तर
पाया जाता है ।

उक्त अमयतादि चार गुणस्थानरतीं आहारक जीर्णोका एक जीरकी अपेक्षा
उत्कृष्ट अन्तर अगुलके अमरयातने भागप्रमाण अमरयातामरयात अउसर्पिणी और
उत्सर्पिणी काल है ॥ ३९० ॥

आहारक असयतसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्टाईस
प्रतियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव निग्रह करके देवोंमें उत्पन्न हुआ । छहों
पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विग्राम हो (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त
हुआ (४) । पीछे मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ और अगुलके असत्यातयें
भागप्रमाण कालतक परिध्रमण करके अंतमें उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ (५) ।
इस प्रकार अन्तर लब्ध होगया । पुन उपशमसम्यक्त्वके कालमें छह आचलिया अउशिष्ट
रह जाने पर सासादनमें जाकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पाच अन्तर्मुहूर्तोंसे फम
आहारककाल ही आहारक अमयतसम्यग्दृष्टि जीवका उत्कृष्ट अन्तर होता है ।

१ एकजीव प्रति जघनेनात्तर्मुहूर्त । स मि १, ८

२ उत्सर्पिणीगुलसम्ययभागा अमरयाता उत्सर्पिण्यववर्षिण्य । स मि १, ८

कादूण त्रिदियममए आहारी होदूण तदियममए मिच्छत्त गत्तूणतरिदो । अमसेज्जा मसेज्जाओ ओमाप्पिणि-उम्मप्पिणीओ परिभमिय अतोमुहुत्तायसेसे आहारकाले उवम सम्मत्त पडिउण्णो । एगसमयायमेसे आहारकाले मामण गत्तूण निग्गह गदो । दोहि समएहि उणो आहारकाले सासणुकस्सतर ।

एवो अट्ठासीममत्तम्मिओ निग्गह कादूण देसेसुउण्णो । छहि पज्जत्तोहि पज्जत्तयदो (१) विम्मतो (२) विसुद्धो (३) मम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (४) । मिच्छत्त गत्तूणतरिदो । अगुलस्स अमसेज्जदिभाग परिभमिय मम्मामिच्छत्त पडिउण्णो (५) । लद्धमतर । तदो सम्मत्तेण वा मिच्छत्तेण वा अतोमुहुत्तमन्दिदूण (६) निग्गह गदो । छहि अतोमुहुत्तेहि उणओ आहारकालो मम्मामिच्छादिट्ठिस्स उप्पस्सतर ।

असंजदसम्मादिट्ठिपहुडि जाव अप्पमत्तसंजदाणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर' ॥ ३८८ ॥
सुगममेद ।

अवशिष्ट रहने पर भरणको प्राप्त हुआ । एक विग्रह (मोटा) करके द्वितीय समयमें आहारक होकर और तीसरे समयमें मिथ्यात्वको जानर अंतरको प्राप्त हुआ । अस प्यातासप्यात असपिणियों और उत्सपिणियों तक परिभ्रमणकर आहारकालमें अतमुद्धत अवशिष्ट रह जाने पर उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुन आहारकालके एक समयमात्र अवशिष्ट रहने पर सासादनको जानर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार दो समयोंसे कम आहारक का उत्पन्न काल ही आहारक सासादनसम्यग्दृष्टि जीवका उत्पन्न अंतर होता है ।

मोहकमयी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्ताजाला एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके वेषोंमें उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पयाप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (४) और मिथ्यात्वको जानर अंतरको प्राप्त हुआ । अगुलके असप्यातके भाग काग्रमाण परिभ्रमण कर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अंतर लब्ध होगया । पीछे सत्यकत्व अथवा मिथ्यात्वके साथ अतमुद्धत रह कर (६) विग्रहगतिको प्राप्त हुआ । इस प्रकार छह अन्तमुद्धतोंसे कम आहारकाल ही आहारक सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीवका उत्पन्न अंतर होता है ।

असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अग्रमत्तसयत गुणस्थान तक आहारक जीवोंका अन्तर नितने काल होता है ? नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर नहीं है, निरन्तर है ॥ ३८८ ॥
यह सत्य सुगम है ।

गदो । तिहि अंतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उक्कस्मतर ।

चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं
पडुच्च ओघभंगो ॥ ३९१ ॥

सुगममेदं, बहुसो उच्चदादो ।

एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ॥ ३९२ ॥

एदं पि सुगमं ।

उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो असंखेज्जासंखेज्जाओ
ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ ॥ ३९३ ॥

त जहा— एकसो अट्टासीससतरुम्मिओ निग्गहं कादूण मणुसेसुवण्णो । अट्ट-
वस्सिओ सम्मत्त अप्पमत्तभावेण संजम च समग पडिवण्णो (१) । अणंताणुघधी निसंजोए-
दूण (२) दसणमोहणीयमुग्गमामिय (३) पमत्तापमत्तपराउत्तमहस्स कादूण (४) तदो
अपुव्वो (५) अणियद्वी (६) सुहुमो (७) उवसंतो (८) पुणो नि परिवडमाणो ।

हुआ । इस प्रकार तीन अन्तर्मुहूर्तोंसे कम आहारककाल ही आहारक अप्रमत्तसपत्तका
उत्कृष्ट अन्तर है ।

आहारक चारों उपशामकोंका अन्तर कितने काल होता है ? नाना जीवोंकी
अपेक्षा अन्तर औषके समान है ॥ ३९१ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, इसका अर्थ पहले बहुत बार कहा जा चुका है ।

उक्त जीवोंका एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ॥ ३९२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

आहारक चारों उपशामकोंका एक जीवकी अपेक्षा उत्कृष्ट अन्तर अंगुलके
असंख्यातवै भागप्रमाण असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी और अउत्सर्पिणी है ॥ ३९३ ॥

मोहकर्मकी अट्टाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाला एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके
मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । आठ वर्षका होकर सम्यक्त्वको और अप्रमत्तभावके साथ सयमको
एक साथ प्राप्त हुआ (१) । पुन अनन्तानुघन्धीका विसंयोजन करके (२) दर्शनमोह
नीयका उपशमनकर (३) प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी सहजों परिवर्तनोंको
करके (४) पश्चात् अपूर्वकरण (५) अनिवृत्तिकरण (६) सूक्ष्मसाम्पराय (७) और उप-

१ चतुर्णां उपशमकानां नानाजीवापेक्षया सामान्यत्वं । स ति १, ८

२ एकजीव प्रति जघन्येनान्तर्मुहूर्त । स ति १, ८

३ उत्सर्पेणांगुलानुरेयमाणा अनखेयामखेया उत्सर्पिण्यवतर्पिण्य । स ति १, ८.

मज्झिमासज्जदस्स उच्चदे- एक्को अट्ठापीससत्तकम्मिओ विग्गह कादूण सम्मुच्छिमेसु उन्नरण्णो । छहि पज्जचीहि पज्जत्तयदो (१) पिम्मतो (२) तिसुद्धो (३) वेदगसम्मत्त सज्मासज्जम च समग पडिउण्णो (४) । मिच्छत्त गतूणतरिदो अंगुलस्म अमपेज्जदिमाग परिभमिय अते पढमसम्मत्त सज्मासज्जम च समग पडिउण्णो (५) । लद्धमत्तर । उन्नसमसम्मत्तदाए छालियायमेमाण सासण गतूण विग्गह गदो । पचहि अतोमुहुत्तेहि ऊणओ आहारकालो उन्नस्सत्तर ।

पमत्तस्स उच्चदे- एक्को अट्ठापीममत्तकम्मिओ विग्गह कादूण मणुससुन्नरण्णो । गम्मादिअट्ठरस्मेहि अप्पमत्तो (१) पमत्तो होदूण (२) मिच्छत्त गतूणतरिदो । अंगुलस्म असपेज्जदिमाग परिभमिय अते पमत्तो जादो । लद्धमत्तर (३) । कालं कादूण विग्गह गदो । तिहि अतोमुहुत्तेहि अट्ठवस्सेहि य ऊणओ आहारकालो उन्नस्सत्तर ।

अप्पमत्तस्स एव चेत्त । णवरि अप्पमत्तो (१) पमत्तो होदूण जतरिदो सगट्ठिदि परिभमिय अप्पमत्तो होदूण (२) पुणो पमत्तो जादो (३) । कालं करिय विग्गह

आहारक सयतासयतका उत्तरे अन्तर कहते हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तागाल एक मिथ्यादृष्टि जीव विग्रह करके पचेन्द्रिय सम्मुच्छिमांसे उत्पन्न हुआ । छहों पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो (१) विधाम ले (२) विशुद्ध हो (३) वेदकसम्पत्त्व और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (४) । पश्चात् मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हो अंगुलके असम्पत्तायें भागप्रमाण काल तक परिभ्रमणकर अन्तमें प्रथमोपशम सम्पत्त्य और सयमासयमको एक साथ प्राप्त हुआ (५) । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । पश्चात् उपशमसम्पत्त्यके कालमें छह आयलिया अवशेष रहने पर सासादनको जाकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार पांच अन्तमुहूर्तोंसे कम आहारकाल ही आहारक सयतासयतका उत्तरे अन्तर है ।

आहारक प्रमत्तसयतका उत्तरे अन्तर कहने हैं- मोहकर्मकी अट्ठाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तागाल एक जाव विग्रह करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ । गर्भको आदि ले आठ वर्षोंसे अप्रमत्तसयत (१) और प्रमत्तसयत हो (२) मिथ्यात्वको जाकर अन्तरको प्राप्त हुआ । अंगुलके असम्पत्तायें भागप्रमाण कालतक परिभ्रमण करके अन्तमें प्रमत्तसयत हो गया । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ (३) । पश्चात् मरण करके विग्रहगतिको प्राप्त हुआ । इस प्रकार तीन अन्तमुहूर्त और आठ वर्षोंसे कम आहारकाल ही आहारक प्रमत्तसयतका उत्तरे अन्तर है ।

आहारक अप्रमत्तसयतका भी अन्तर इसी प्रकार है । विशेषता यह है कि अप्रमत्त सयत जीव (१) प्रमत्तसयत होकर अन्तरको प्राप्त हो अपनी स्थितिप्रमाण परिभ्रमण कर अप्रमत्तसयत हो (२) पुनः प्रमत्तसयत हुआ (३) । पश्चात् मरण करके विग्रहको प्राप्त

मिच्छादिद्वीणं णाणेगजीनं पडुच्च अंतराभावेण, सासणसम्मादिद्वीणं णाणाजीनं पडुच्च एगसमयपल्लिदोमस्स असंसेज्जदिभागजहण्णुक्कस्संतरेहि य, एगजीवं पडुच्च अतराभावेण य, असंजदसम्मादिद्वीणं णाणाजीनं पडुच्च एगसमय-मासपुधत्तरेहि य, एगजीवं पडुच्च अतराभावेण य, सजोगिकेवलीणं णाणाजीनं पडुच्च एगसमय-वासपुधत्त-जहण्णुक्कस्संतरेहि य, एगजीवं पडुच्च अंतराभावेण य दोहं साधम्मवल्भादो ।

विसेसपदुप्पायणद्वमुत्तरसुत्तं भणदि-

णवरि विसेसा, अजोगिकेवली ओधं ॥ ३९७ ॥

सुगममेद ।

(एव आहारमगणा समत्ता ।)

एवमंतराणुगमो चि समत्तमणिओगहारं ।

पर्योकि, मिथ्यादृष्टियोंका नाना और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे सासादनसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट पल्लो-पमका असंख्यातका भाग अन्तरोंसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, असंयतसम्यग्दृष्टियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट मास पृथक्त्व अन्तरोंके द्वारा, और एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे, सयोगिके-यलियोंका नाना जीवोंकी अपेक्षा जघन्य एक समय और उत्कृष्ट वर्षपृथक्त्व अन्तरसे, तथा एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका अभाव होनेसे दोनोंमें समानता पाई जाती है ।

अनाहारक जीवोंमें विशेषता प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं-

किन्तु विशेषता यह है कि अनाहारक अयोगिकेवलीका अन्तर ओधके समान है ॥ ३९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इस प्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई ।

इस प्रकार अन्तराणुगम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

१ अयोगिकेवलीनां नानाजीवापेक्षया जघन्येनैकः समय । उत्कर्षेण वण्मासाः । एकजीवं प्रति नास्त्य-
शब्द । स. सि १, ८

२ अन्तरमवगतम् । स. सि १, ८

सुहुमो (९) अणियट्टी (१०) अपुब्बो जादो (११) । हेट्ठा ओदरिदूणतरिदो अगुलस्स असंखेज्जदिभाग परिममिय अते अपुब्बो जादो । लद्धमत्तर । तदो णिदा पयलाण बंधे वोच्छिण्णे भरिय विग्गहं गदो । अट्ठवस्सेहि मारसअतोमुहुचेहि य ऊणओ आहारवालो उक्कस्सत्तर । एव चेव तिण्हमुत्तसामगाण । णवरि दस णव अट्ठ अंतोमुहुत्ता समयाहिया ऊणा कादब्बा ।

चटुण्ह खवाणमोघं ॥ ३९४ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली ओघं ॥ ३९५ ॥

एद पि सुगम ।

अणाहारां कम्मइयकायजोगिभंगो ॥ ३९६ ॥

शान्तकपाय होकर (८) फिर भी गिरता हुआ सूक्ष्मसाम्पराय (९) अनिवृत्तिकरण (१०) और अपूर्वकरण हुआ (११) । पुन नीचे उतरकर अन्तरको प्राप्त हो अगुलके असंख्यातवें भाग कालप्रमाण परिभ्रमणकर अन्तमें अपूर्वकरण उपशामम्न हुआ । इस प्रकार अन्तर लब्ध हुआ । तत्पश्चात् निद्रा और प्रचला, इन दोनों प्रवृत्तियोंके बंधसे व्युत्तिउन्न होनेपर मरकर विग्रहको प्राप्त हुआ । इस प्रकार आठ वर्ष और बारह अन्तर्मुहूर्तोंमें कम आहारक काल ही अपूर्वकरण उपशामकता उत्पन्न अन्तर है । इसी प्रकार शेष तीनों उपशामकोंका भी अन्तर कहना चाहिये । यिनेपता यह है कि आहारककालमें अनिवृत्तिकरण उपशामकके दश, सूक्ष्मसाम्पराय उपशामकके नौ और उपशान्तकपाय उपशामकके आठ अन्तर्मुहूर्त और एक समय कम करना चाहिये ।

आहारक चारों क्षणोंका अन्तर ओघके समान है ॥ ३९४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

आहारक सयोगिकेवलीका अन्तर ओघके समान है ॥ ३९५ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अनाहारक जीवोंका अन्तर कर्मणकाययोगियोंके समान है ॥ ३९६ ॥

१ चतुष्पा क्षणका सयोगिकेवलीनां च सामान्यवत् । स सि १, ८

२ प्रतिपु 'अणाहार' इति पाठ ।

३ अनाहारत्वेण भिष्याद्वेर्नानाजीवापेक्षया एकजीवापेक्षया च नास्त्यन्तरम् । सासादनसम्यग्दष्टेर्नानाजीवापेक्षया जघन्येनैक समय । उत्तरेण पल्यापमागस्येयमाग । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । असायतसम्यग्दष्टेर्नानाजीवापेक्षया जघन्येनैक समय । उत्तरेण मागपृथक्त्वम् । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । सयोगिकेवलीनां नानाजीवापेक्षया जघन्येनैक समय । उत्तरेण वषपृथक्त्वम् । एकजीव प्रति नास्त्यन्तरम् । स सि १, ८

भावाणुगमो



सिरि-भगवंत-पुष्पदंत-भृदवलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि वीरसेणाहरिय विरहय-यवला टीका समण्णिदो

तस्स

पढमखंडे जीवट्टाणे

भावाणुगमो

अणयअसुद्धभागे उणयकम्मस्सउच्चउब्भागे ।

पणमिय सव्वरहते भागणिओग परूमेमो ॥

भावाणुगमेण दुविहो णिहेसो, ओघेण आदेसेण यं ॥ १ ॥

णाम-ट्ठण-दव्व-भागो ति चउव्विहो भागे । भासहे वज्झत्थणिरवेक्खो
अप्पाणमिह चेय पयट्ठो णामभागो होटि । तत्थ ठणभागो सव्वभासव्वभावभेएण दुविहो ।
निराग-सरागादिभागे अणुहरंती ठण्णा सव्वभासद्वचणभागो । तव्विगरीदो असव्वभासद्वचण-

अशुद्ध भावोंसे रहित, कर्मक्षयसे प्राप्त हुए हैं चार अनन्तभाव जिनको, ऐसे
सर्व अरहतोंको प्रणाम करके भावानुयोगद्वाराका प्ररूपण करते हैं ।

भावानुगमद्वारकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है, ओघनिर्देश और आदेश-
निर्देश ॥ १ ॥

नाम, स्थापना, द्रव्य और भावकी अपेक्षा भाव चार प्रकारका है । बाह्य अर्थसे
निरपेक्ष अपने आपमें प्रवृत्त 'भाव' यह शब्द नामभावनिक्षेप है । उन चार निक्षेपोंमेंसे
स्थापनाभावनिक्षेप, सद्भाव और असद्भावके भेदसे दो प्रकारका है । उनमेंसे विरागी
और सरागी आदि भावोंका अनुकरण करनेवाली स्थापना सद्भावस्थापना भावनिक्षेप
है । उससे विपरीत असद्भावस्थापना भावनिक्षेप है । द्रव्यभावनिक्षेप आगम और

जणिओ भाओ ओदडओ णाम । कम्मसमेण समुब्भूदो ओउसमिओ णाम । कम्मणं
खवेण पयडीभूदजीउभाओ खडओ णाम । कम्मोदए सते वि ज जीउगुणकसंडंमुवलभदि
सो खओउममिओ भाओ णाम । जो चउहि माओहि पुवुत्तेहि वदिरित्थो जीउजीवगओ
सो पारिणामिओ णाम^१ (५) ।

एतेसु चदुसु भाओसु केण माओण अहियारो ? गोआगमभावभावेण । त कथ
णव्यदे ? णामादिमेमभाओहि चोदसजीउममामाणमणप्पभूदेहि इह पओजणाभाओ ।
तिणि चैन इह णिस्सेना होतु, णाम द्रवणाण त्रिसेसाभाओ ? ण, णामे णामउत्त-
दव्वज्झारोउणियमाभाओ, णामस्य द्रवणणियमाभाओ, द्रवणाए इउ आयराणुग्गहाणम-

पाच प्रकारका है । उनमेंसे कर्मोदयजनित भावका नाम आदयिक है । कर्मोंके उपशमसे
उत्पन्न हुए भावका नाम ओपशमिक है । कर्मोंके क्षयसे प्रकट होनेवाला जीवका भाव
क्षायिक है । कर्मोंके उदय होते हुए भी जो जीवगुणका खट (अश) उपलब्ध रहता है,
वह क्षायापशमिकभाओ है । जो पूर्वोक्त चारों भावोंसे व्यतिरिक्त जीव और अजीवगत
भाओ है, वह पारिणामिक भाओ है ।

शंका—उक्त चार निक्षेपरूप भावोंमेंसे यहा पर किस भावसे अधिकार या
प्रयोजन है ?

समाधान—यहा नोआगमभावभावसे अधिकार है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—चौदह जीवसमासोंके लिए अनात्मभूत नामादि शेष भावनिक्षेपोंसे
यहा पर कोई प्रयोजन नहीं है, इसीसे जाना जाता है कि यहा नोआगमभाओ भाओ
निक्षेपसे ही प्रयोजन है ।

शंका—यहा पर तीन ही निक्षेप होना चाहिए, क्योंकि, नाम और स्थापनामें
कोई विशेषता नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, नामनिक्षेपमें नामउत्त द्रव्यके अध्यारोपका कोई
नियम नहीं है इसलिए, तथा नामवाली वस्तुकी स्थापना होनी ही चाहिए, ऐसा कोई
नियम नहीं है इसलिए, एउ स्थापनाके समान नामनिक्षेपमें आदर और अनुग्रहका भी

१ प्रतिपु ' जावणु खड ' इति पाठ ।

२ कम्मसममि उवसममाओ खीणमि खयमाओ ह । उदयो जीवस्य गुणो खओउसमिओ हवे
भावो ॥ कम्मोदयउमिणो ओदयिओ वप होदि भाओ ह । कारणिखेक्खमवो समावियो होदि परिणायो ॥
गो क ८१४ ८१५

३ प्रतिपु ' आयारा ' इति पाठ ।

भाओ । तत्थ दव्वभाओ दुविहो आगम णोआगमभेएण । भायपाहुडजाणओ ऋजु
जुत्तो आगमदव्वभाओ होदि । जो णोआगमदव्वभाओ सो तिपिहो जाणुगमरीर भविय-
तव्वदिरिचभेएण । तन्थ णोआगमजाणुगमरीरदव्वभाओ तिपिहो भविय-वट्टमाण-भमुद्दा
भेएण । भावपाहुडपज्जायपरिणदजीवस्स आहारो ज होसदि सरीर त भविय णाम ।
भायपाहुडपज्जायपरिणदजीवण जमेगीभूद सरीर त वट्टमाणं णाम । भायपाहुडपज्जाय
परिणदजीवण एगत्तमुणमिय ज पुधभूद सरीरं त समुज्झाद णाम । भायपाहुडपज्जाय
सरूणेण जो जीओ परिणमिस्सदि सो णोआगमभवियदव्वभाओ णाम । तव्वदिरिच
णोआगमदव्वभाओ तिपिहो सच्चिच्चित्त मिस्सभेएण । तन्थ सच्चित्तो जीवदव्व । अविक्का
पोग्गल धम्माधम्म णालागामदव्वणि । पोग्गल-जीवदव्वण सजोगो कधचि जच्चतरसमा
वण्णो णोआगममिस्सदव्वभाओ णाम । कध दव्वस्म भायच्चणएसो ? ण, भवन भाव,
भूतिरि भाव इति भायसइस्स विउप्पत्तिअजलंणपादो । जो भायभाओ मो दुविहो आगम
णोआगमभेएण । भावपाहुडजाणओ उज्जुत्तो आगमभायभाओ णाम । णोआगमभावना
पचविह ओदइओ ओउसमिओ रइओ रउओउसमिओ पारिणामिओ चेदि । तत्थ कम्मोदप

नोआगमके भेदसे दो प्रकारका है । भावप्राभृतज्ञायक किन्तु वर्तमानमें अनुपयुक्त जीव
आगमद्रव्यभाव कहलाता है । जो नोआगमद्रव्य भावनिक्षेप है वह ज्ञायकशरीर, भव्य
और तद्द्रव्यतिरिक्त भेदसे तीन प्रकार होता है । उनमें नोआगमज्ञायकशरीर द्रव्यभाव
निक्षेप भव्य, वर्तमान और समुज्जितके भेदसे तीन प्रकारका है । भावप्राभृतपर्यायस
परिणत जीवका जा शरीर भाधार होगा, वह भव्यशरीर है । भावप्राभृतपर्यायस परि
णत जीवके साथ जो एकभूत शरीर है, वह वर्तमानशरीर है । भावप्राभृतपर्यायस परि
णत जीवके साथ एकत्वको प्राप्त होकर जो पृथक् हुआ शरीर है वह समुज्जितशरीर है ।
भावप्राभृतपर्यायसरूपसे जो जीव परिणत होगा, वह नोआगमभयद्रव्य भावनिक्षेप है ।
तद्द्रव्यतिरिक्त नोआगमद्रव्य भावनिक्षेप, सच्चित्त, अविक्त और मिथके भेदसे तीन
प्रकारका है । उनमें जीवद्रव्य सच्चित्तभाव है । पुद्गल, धर्मास्तिकाय, अधमास्तिकाय, काळ
और आकाश द्रव्य अविक्तभाव हैं । कथंचित् जात्यन्तर भावको प्राप्त पुद्गल और जीव
द्रव्योंका संयोग नोआगममिथद्रव्य भावनिक्षेप है ।

शुद्धा—द्रव्यके 'भाव' ऐसा व्यपदेश कैसे हो सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'भवन भाव' अथवा 'भूतिरि भाव' इस प्रकार
भायशब्दकी व्युत्पत्तिके अवयवसे द्रव्यके भी 'भाव' ऐसा व्यपदेश बन जाता है ।

जो भायनामक भावनिक्षेप है, वह आगम और नोआगमके भेदसे दो प्रकारका
है । भाय प्राभृतका ज्ञायक और उपयुक्त जीव आगमभावनामक भावनिक्षेप है । नोआगम
भाय भायनिक्षेप औदयिक, औपसमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भेदसे

एदेहिं सुतुद्विद्वपरिणामाण पगरिमापरिसत्तं तिच्च-मंदभाओ णाम । एदेहिं चेव परिणामेहि असंखेज्जगुणाए सेडीए कम्मसडणं कम्मसडणजणिदजीपरिणामो वा णिज्जरा-भाओ णाम । तम्हा पचेव जीवभाओ इदि णियमो ण जुज्जेदे ? ण एस दोसो, जदि जीवादिदव्यादो तिच्च-मदादिभाओ अभिण्णा होंति, तो ण तेसिं पंचभाओसु अंतम्भाओ, दव्यत्तादो । अहं भेदो अवलमेज्ज, पचण्हमण्णदरो होज्ज, एदेहिंतो पुधभूदछट्टभावाणु-बलंभा । भणिद च-

ओदइओ उअसमिओ खइओ तहं पि य खओवसमिओ य ।

परिणामिओ दु भाओ उदएण दु पोग्गलण तु ॥ ५ ॥

भाओ णाम किं ? दव्यपरिणामो पुञ्चारकोडिअदिरित्तगट्टमाणपरिणामुअलक्खिय-दव्य वा । कस्स भाओ ? छण्ह दव्याण । अधवा ण कस्सह, परिणामि-परिणामाणं

इन सूत्रोद्दिष्ट परिणामोंकी प्रकृतिताका नाम तीव्रभाव और अप्रकृतिताका नाम मृदुभाव है । इन्हीं परिणामोंके द्वारा असंख्यात गुणश्रेणीरूपसे कर्मोंका क्षरता, अधवा कर्मक्षरत्वेसे उत्पन्न हुए जीवके परिणामोंको निर्जराभाव कहते हैं । इसलिये पाच ही जीवके भाव हैं, यह नियम युक्तिसंगत नहीं है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, यदि जीवादि द्रव्यसे तीव्र, मृदु आदि भाव अभिन्न होते हैं, तो उनका पाच भावोंमें अन्तर्भाव नहीं होता है, क्योंकि, वे स्वयं द्रव्य ही होते हैं । अथवा, यदि मृदु माना जाय, तो पाचों भावोंमेंसे कोई एक होगा, क्योंकि, इन पाच भावोंसे पृथग्भूत छठा भाव नहीं पाया जाता है । कहा भी है—

औद्यिकभाव, औपशमिकभाव, क्षायिकभाव, क्षायोपशमिकभाव और पारिणामिकभाव, ये पाच भाव होते हैं । इनमें पुद्गलोंके उदयसे (औद्यिकभाव) होता है ॥५॥

(अत्र निर्देश, स्वामित्व आदि प्रसिद्ध छह अनुयोगद्वारासे भारतनामक पदार्थका निर्णय किया जाता है—)

शंका—भाव नाम किस वस्तुका है ?

समाधान—द्रव्यके परिणामको अथवा पूर्वापर कोटिसे व्यतिरिक्त चर्तमान पर्यायसे उपलक्षित द्रव्यको भाव कहते हैं ।

शंका—भाव किसके होता है, अर्थात् भावका स्वामी कौन है ?

समाधान—छहों द्रव्योंके भाव होता है, अर्थात् भावोंके स्वामी छहों द्रव्य हैं । अथवा, किसी भी द्रव्यके भाव नहीं होता है, क्योंकि, पारिणामी और पारिणामके सम्प्रद-

भावादो च^१ । भणिद च—

अपिदआदरभावो अणुगहभावो य धम्मभावो ।

ठण्णाए कीरते ण होति णाममि एए डु ॥ १ ॥

णामिणि धम्मपयारो णाम ठण्णा य जस्स त ठगिद ।

तद्धमे ण रि जादो सुणाम ठण्णाणमविसेस ॥ २ ॥

तम्हा चउच्चिहो चेन णिम्मेनो चि सिद्ध । तत्थ पचसु भावेसु केण भावण
इह पओजण ? पचहिं मि । कुदो ? जीवेसु पचभावाणमुवलभा । ण च सेसद्वेसु पच
भावा अत्थि, पोमालदन्नेसु ओदइय पारिणामियाण दोण्ह चेन भावाणमुवलभा, धम्मा
धम्म-कालागासद्वेसु एक्कस्स पारिणामियभावास्सेटुवलभा । भावो णाम जीवपरिणामो
तिन्न-मदणिज्जराभावादिरूपेण अणेषपयारो । तत्थ तिन्न-मदभावो णाम—

सम्मत्तुप्पत्तीय रि सान्यजिदे अणतरुम्मे ।

दसणमोहकएण कसायउक्कसामए य उरस्ते ॥ ३ ॥

एएण य एणमोहे जिणे य णियमा भरे असखेज्जा ।

तगिरीदो काळो सखेज्जगुणाए सेडीए^२ ॥ ४ ॥

“अभाव है, इसलिए दोनों निक्षेपोंमें भेद है ही । कहा भी है—

विवक्षित वस्तुके प्रति आदरभाव, अनुग्रहभाव और धर्मभाव स्थापनामें किया जाता है । किंतु ये बातें नामनिक्षेपमें नहीं होती हैं ॥ १ ॥

नाममें धमरा उपचार करना नामनिक्षेप है, और जहां उस धर्मकी स्थापना की जाती है, वहां स्थापनानिक्षेप है । इस प्रकार धर्मके विषयमें भी नाम और स्थापनाकी अवशिष्टता अर्थात् एकता भिन्न नहीं होती ॥ २ ॥

इसलिए निक्षेप चार प्रकारका ही है, यह बात सिद्ध हुई ।

शंका—पूर्वोक्त पांच भावोंमेंसे यहां किस भावसे प्रयोजन है ?

समाधान—पाचों ही भावोंसे प्रयोजन है, क्योंकि, जीवोंमें पाचों भाव पाये जाते हैं । किंतु शेष द्रव्योंमें तो पांच भाव नहीं हैं, क्योंकि, पुद्गल द्रव्योंमें औदयिक और परिणामिक, इन दोनों ही भावोंकी उपलब्धि होती है, और धर्मास्तिकाम अधर्मास्तिकाम, आकाश और काल द्रव्योंमें केवल एक पारिणामिक भाव ही पाया जाता है ।

शंका—भावनाम जीवके परिणामका है, जो कि तीव्र, मद निर्जराभावादि के रूपसे अनेक प्रकारका है । उनमें तीव्र मदभाव नाम है—

सम्यक्चरणी उत्पत्तिमें, धावकमें, विरतमें, अन तानुवन्धी कपायके विसयोजनमें, दर्शनमोहके क्षणमें, कपायोंके उपशमकोंमें, उपशान्तरूपायमें, क्षयकोंमें, क्षीणमोहमें, और जिन भगवानमें नियमसे अमर्यादगुणीनिर्जरा होती है । किन्तु कालका प्रमाण उक्त गुणधेणी निर्जरामें सख्यात गुणधेणी क्रमसे विपरीत अर्थान् उत्तरोत्तर हीन है ॥ ३-४ ॥

१ नामस्थापनयोरुत्पत्त्य, सत्ताक्याविशेषादिति चेन्न, आदरस्तुमहाशक्तिवात्स्थापनायाम् । त त वा १, ५

२ यो जी ६६-६७

मो ठाणदो जट्टमिहो, त्रियप्पदो एक्कमीममिहो । किं ठाण ? उप्पत्तिहेऊ द्वाणं । उत्तं च—
गदि-लिंग-कमाया त्रि य मिच्छादसणमसिद्धदण्णाण ।
लेस्सा असजमो चिय हेति उदयस्स द्वाणाइ ॥ ६ ॥

मपहि एदेमि त्रियप्पो उच्चदे— गई चउच्चिहो णिरय तिरिय णर-देगई चेदि ।
लिंगमिदि तिनिह त्थी-पुरिस णमुमयं चेदि । कमाओ चउच्चिहो कोहो माणो माया लोहो
चेदि । मिच्छादमणमेयमिह । असिद्धचमेयमिह । किमसिद्धच ? जट्टकम्मोदयसामण्णं ।
अण्णाणमेअमिह । लेस्सा छविमहा । असजमो एयमिहो । एदे सत्थे त्रि एक्कमीस त्रियप्पा
होति (२१) । पचजादि-छमठाण-छमपडणादिजोदइया भाजा कत्थ णिमदति ? गदीए,
एदेमिमुदयस्स गदिउदयाभिणाभाप्रिचादो । ण लिंगादीहि त्रियहिचारो, तत्थ तहानिह-
त्रियक्काभाजादो ।

है, यह स्थानकी अपेक्षा आठ प्रकारका और निरुत्पत्ती अपेक्षा इक्कीस प्रकारका है ।

शुका—स्थान क्या वस्तु है ?

समाधान—भाजकी उत्पत्तिके कारणको स्थान कहते हैं । कहा भी है—

गति, लिंग, कपाय, मिथ्यादर्शन, असिद्धत्व, अज्ञान, लेइया और असयम, ये
ओदयिक भाजके आठ स्थान होते हैं ॥ ६ ॥

अथ इन आठ स्थानोंके विकल्प कहते हैं । गति चार प्रकारकी है— नरकगति,
तिर्यचगति, मनुष्यगति और देवगति । लिंग तीन प्रकारका है— स्त्रीलिंग, पुरुषलिंग
और नपुंसकलिंग । कपाय चार प्रकारका है— क्रोध, मान, माया और लोभ । मिथ्यादर्शन
एक प्रकारका है । असिद्धत्व एक प्रकारका है ।

शुका—असिद्धत्व क्या वस्तु है ?

समाधान—अष्ट कर्मोंके सामान्य उदयको असिद्धत्व कहते हैं ।

भगान एक प्रकारका है । लेइया छह प्रकारका है । असयम एक प्रकारका है ।
इस प्रकार ये सत्र भिन्नकर ओदयिकभावके इक्कीस निरुत्पत्ति होते हैं (२१) ।

शुका—पाच जातिया, छह सस्थान, छह सहनन आदि ओदयिकभाव कहा,
अर्थात् किस भाजमें अन्तर्गत होते हैं ?

समाधान—उक्त जातियों आदिका गतिनामक ओदयिकभावमें अन्तर्भाव होता
है, क्योंकि, इन जाति, सस्थान आदिका उदय गतिनामकके उदयका अविनाभावी है ।
इस व्यवस्थामें लिंग, कपाय आदि ओदयिकभावोंसे भी व्यभिचार नहीं आता है, क्योंकि,
उन भाजोंमें उस प्रकारकी निरुत्पत्तीका अभाव है ।

संगहणयादो भेदाभावात् । केण भावो? कम्माणमुदएण सएण सओरसमेण कम्माणमुदमेण सभावादो वा । तत्थ जीवद्वयस्स भावा उत्तपचकारणेहिंतो हँति । पोगलद्वयभावा पुण कम्मोदएण तस्मिमादो वा उत्पज्जति । मेसाण चटुण्ह दव्वाण भावा सहावादो उत्पज्जति । कत्थ भावो? दव्वमिह चेव, गुणिव्वदिरेगेण गुणाणमसभवा । केवचिरो भावो? अणात्तिओ अपज्जरसिदो जहा—अभव्वाणमसिद्धदा, वम्मत्थिअस्स गमणहेदुत्त, अधम्मत्तिअस्स ठिदिहेउत्त, आगामस्स ओगाहणलसएणत्त, कालदव्वस्स परिणामहेदुत्तमिच्चादि । अणात्तिओ सपज्जरसिदो जहा—भवस्स असिद्धदा भवत्तं मिच्छत्तमसज्जमो इत्थादि । सादिओ अपज्जरसिदो जहा—केवलपाण केवलदसणमिच्छादि । मादिओ मपज्जरसिदो जहा—मम्मत्तमजमपच्छायदाण मिच्छत्तामज्जमा इत्थादि । कदिविवो भावो? ओदइओ उव्वममिओ सहओ सओरममिओ पारिणामिओ त्ति पचमिहो । तत्थ जो सो ओदइओ जीवद्वयभावो

नयसे कोई भेद नहीं है ।

शुक्रा—भाव किसमे होता है, अर्थात् भावका साधन क्या है ?

समाधान—भाव, कर्मोंके उदयसे, क्षयसे, क्षयोपशमसे, कर्मोंके उपशमसे, अथवा स्वभावसे होता है । उनमेंसे जीवद्वयके भाव उक्त पाचों ही कारणोंसे होते हैं, किन्तु पुद्गलद्रव्यके भाव कर्मोंके उदयसे, अथवा स्वभावसे उत्पन्न होते हैं । तथा शेष चार द्रव्योंके भाव स्वभावसे ही उत्पन्न होते हैं ।

शुक्रा—भाव कहाँ पर होता है, अर्थात् भावका अधिष्ठान क्या है ?

समाधान—भाव द्रव्यमें ही होता है, न्यायिक गुणिके बिना गुणोंका रहना असम्भव है ।

शुक्रा—भाव कितने काल तक होता है ?

समाधान—भाव अनादि निधन है । जैसे—अभयजीयोंके अस्तित्वता, धर्मात्मा पापके गमनहेतुता, अधर्मास्तिनायके स्थितिहेतुता, आकाशद्रव्यके अघगाहनस्वरूपता, और कालद्रव्यके परिणमनहेतुता, इत्यादि । अनादि सान्तभाव, जैसे—भव्यजीयोंके अस्तित्वता, भयत्य, मिथ्यात्व, असयम, इत्यादि । सादि अनन्तभाव जैसे—वेवलक्षण, वेवलदर्शन, इत्यादि । सादि सात्त भाव, जैसे—सम्यक्त्व और सयम धारणका पाछे भाव द्रुप जीवोंने मिथ्यात्व, असयम इत्यादि ।

शुक्रा—भाव कितने प्रकारका होता है ?

समाधान—औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक और पारिणामिकके भेदसे भाव पाँच प्रकारका है । उनमेंसे जो औदयिकभाव नामक जीवद्रव्यका भाव

लद्धीओ सम्मत्त चारित्त दसण तद्वा णाण ।

ठाणाइ पच खइए भाणे जिणभासियाइ तु ॥ ८ ॥

लद्धी सम्मत्तं चारित्तं णाण दसणमिदि पच ठाणाणि । तत्थ लद्धी पंच नियप्पा दाण-लाह-भोगुरभोग-गीरियमिदि । सम्मत्तमेयनियप्प । चारित्तमेयनियप्पं । केवलणाण-मेयनियप्प । केवलदसणमेयनियप्पं । एणं खइओ भाणे णनियप्पो^१ । खओवसमिओ भाणे ठाणदो सत्तमिहो । नियप्पदो अट्टारसमिहो । भणित्तं च—

णाणणाण च तद्वा दसण-लद्धी तट्ठेय सम्मत्त ।

चारित्तं देसजमो सत्तेयं य होति ठाणाइ ॥ ९ ॥

णाणमणाण दसण लद्धी सम्मत्त चारित्त संजमासंजमो चेदि सत्तं द्वाणाणि । तत्थ णाणं चउच्चिह मदि-सुद-ओवि-मणपज्जणणाणमिदि । केवलणाणं किण्ण गहिद ? ण, तस्स राइयभावादो । अणाण तिप्पिह मदि-सुद-विहगअणाणमिदि । दसण तिप्पिहं चत्तु-अचत्तु-ओविदंसणमिदि । केवलदसण ण गहिद । कुदो ? अप्पणो निरोहिक्कम्मस्स

दानादि लब्धिया, क्षायिक सम्यक्त्व, क्षायिक चारित्र, क्षायिक दर्शन, तथा क्षायिक ज्ञान, इस प्रकार क्षायिक भावम जिन भाषित पाच स्थान होते हैं ॥ ८ ॥

लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, ये पाच स्थान क्षायिकभावमें होते हैं । उनमें लब्धि पाच प्रकारकी है— क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, क्षायिक उप भोग, और क्षायिक धैर्य । क्षायिक सम्यक्त्व एक विकल्पात्मक है । क्षायिक चारित्र एक भेदरूप है । केवलज्ञान एक विकल्पात्मक है और केवलदर्शन एक विकल्परूप है । इस प्रकारसे क्षायिक भावके नौ भेद हैं । क्षायोपशमिकभाव स्थानकी अपेक्षा सात प्रकार और विकल्परकी अपेक्षा अठारह प्रकारका है । कहा भी है—

ज्ञान, अज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र और देशसयम, ये सात स्थान क्षायोपशमिक भावमें होते हैं ॥ ९ ॥

ज्ञान, अज्ञान, दर्शन, लब्धि, सम्यक्त्व, चारित्र और समयमासयम, ये सात स्थान क्षायोपशमिकभावके हैं । उनमें मति, श्रुत, अवधि और मन पर्ययके भेदसे ज्ञान चार प्रकारका है ।

शुका—यहापर ज्ञानोंमें केवलज्ञानका ग्रहण क्यों नहीं किया गया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वह क्षायिक भाव है ।

शुमति, कुश्रुत ओर विभगके भेदसे अज्ञान तीन प्रकारका है । चक्षु, अचक्षु और अनधिके भेदसे दर्शन तीन प्रकारका है । यहापर दर्शनोंमें केवलदर्शनका ग्रहण नहीं

उत्तमिओ माओ ठाणदो दुनिहो । नियप्पदो अट्टनिहो । भणिदं च-

सम्मत्त चारित्त दो चेय द्वाणाइमुत्तमे हानि ।

अट्टनियप्पा य तहा वोहाईया मुणेदव्वा ॥ ७ ॥

ओत्तममियस्स भागस्म सम्मत्त चारित्त चेदि दोण्णि द्वाणाणि' । बुद्धो ! उत्तम सम्मत्त उत्तममचारित्तमिदि दोण्ह चे उत्तलमा । उत्तमसम्मत्तमेयनिह । ओत्तमिय चारित्त सत्तनिह । त जहा- णत्तुसयनेदुत्तसामणद्धाए एय चारित्त, इत्थिनेदुत्तसामणद्धाए रिदिय, पुरिस छण्णोत्तमायत्तसामणद्धाए तदिय, कोहुत्तसामणद्धाए चउत्त, माणुव सामणद्धाए पच्चम, माओत्तसामणद्धाए छट्ठ, लोहुत्तसामणद्धाए सत्तममोत्तममिय चारित्त । भिण्णरुज्जलिंगेण कारणभेदसिद्धीदो उत्तममिय चारित्त सत्तनिह उत्त । अण्णहा पुण अण्येपपार, समय पडि उत्तमममेडिस्सि पुघ पुघ असत्तेज्जगुणसेडिणिज्जराणिमित्त परिणाप्पुत्तलमा । उइओ माओ ठाणदो पच्चनिहो । नियप्पादो णत्तनिहो । भणिदं च-

औपशमिन्भावस्थानकी अपेक्षा दो प्रकार ओर विकल्पकी अपेक्षा आठ प्रकारका है । कहा भी है-

औपशमिन्भावमें सम्यक्त्त और चारित्र्य ये दो ही स्थान होते हैं । तथा औपशमिन्भावके विकल्प आठ होते हैं, जो कि शोधादि कथायोंके उपशमनरूप जानना चाहिये ॥ ७ ॥

औपशमिन्भावके सम्यक्त्त और चारित्र्य, ये दो ही स्थान होते हैं, क्योंकि, औपशमिन्सम्यक्त्त और औपशमिन्चारित्र्य ये दो ही भाव पाये जाते हैं । इनमेंसे औपशमिन्सम्यक्त्त एक प्रकारका है और औपशमिन्चारित्र्य सात प्रकारका है । जैसे- ननु सकथेदके उपशमनकालमें एक चारित्र्य, रतीवेदके उपशमनकालमें दूसरा चारित्र्य, पुरुष वेद और छह लोकपायोंके उपशमनकालमें तीसरा चारित्र्य, श्रोत्रसज्जलनमें उपशमन कालमें चौथा चारित्र्य, मानसज्जलनके उपशमनकालमें पाचवा चारित्र्य, मायासज्जलनके उपशमनकालमें छठा चारित्र्य और लोभसज्जलनके उपशमनकालमें सातवा औपशमिन् चारित्र्य होता है । भिन्न भिन्न कार्योंके लिंगसे कारणोंमें भी भेदकी सिद्धि होती है, इसलिए औपशमिन्चारित्र्य सात प्रकारका कहा है । अन्यथा, अर्थात् उक्त प्रकारकी विवक्षा न की जाय तो, यह अनेक प्रकारका है, क्योंकि, प्रति समय उपशमनश्रेणीमें पृथक् पृथक् असख्यात गुणश्रेणी निर्जराके निमित्तभूत परिणाम पाये जाते हैं ।

क्षयिकभाव स्थानकी अपेक्षा पाच प्रकारका है, और विकल्पकी अपेक्षा नौ प्रकारका है । कहा भी है-

अधना सण्णिगादिय पडुच्च छत्तीसमंगा' । सण्णिगादिएत्ति का सण्णा ? एकम्हि गुणद्वारेण जीवसमासे वा बहो भागा जम्हि सण्णिगदत्ति तेसिं भागाणं सण्णिगादिएत्ति सण्णा । एग दु-ति-चदु-पचसजोगेण भगा परुरिज्जति । एगसजोगेण जघा- ओदइओ ओदइओ ति ' मिच्छादिट्ठी असजदो य ' । दसणमोहणीयस्म उदएण मिच्छादिट्ठी ति भागो, असजदो ति सजमघादीणं कम्माणमुदएण । एदेण कमेण सब्बे विपप्पा परुमेदब्बा । एत्थ सुत्तगाहा-

एकोत्तरपदवृद्धो रूपाद्यैर्मज्जिन च पदवृद्धे ।

गच्छ सपातफल समाहत सन्निपातफल' ॥ १२ ॥

एदम्भ भागस्स अणुगमो भागानुगमो । तेण दुग्घो णिहसो, ओधेण सगहिदो, आदेसेण अमंगहिदो ति णिहसो दुग्घो होदि, तदियस्स णिहसस्स संभवाभावा ।

अथवा, सानिपातिककी अपेक्षा भायोंके छत्तीस भग होते हैं ।

शुका--सानिपातिक यह कोनसी सज्ञा है ?

समाधान--एक ही गुणस्थान या जीवसमासमें जो बहुतसे भाव आकर एकत्रित होते हैं, उन भावोंकी सानिपातिक ऐसी सज्ञा है ।

अब उक्त भावोंके एक, दो, तीन, चार और पाच भावोंके संयोगसे होनेवाले भग कहे जाते हैं । उनमेंसे एकसंयोगी भग इस प्रकार है-- औद्ध्यिक-भौद्ध्यिकभाव, जैसे- यह जीव मिथ्यादृष्टि ओर असंयत है । दर्शनमोहनीयकर्मके उद्ध्यसे मिथ्यादृष्टि यह भाव उत्पन्न होता है । संयमघाती कर्मोंके उद्ध्यसे ' असंयत ' यह भाव उत्पन्न होता है । इसी क्रमसे सभी त्रिकल्पोंकी प्ररूपणा करना चाहिये । इस विषयमें सूत्र गाथा है-

एक एक उत्तर पदसे पढ़ते हुए गच्छको रूप (एक) आदि पदप्रमाण बढाई हुई राशिमें भाजित करे, और परस्पर गुणा करे, तब सम्पातफल अर्थात् एक-संयोगी, द्विसंयोगी आदि भगोंका प्रमाण आता है । तथा इन एक, दो, तीन आदि भगोंको जोड़ देने पर सन्निपातफल अर्थात् सानिपातिकभग प्राप्त हो जाते हैं ॥ १२ ॥

(इस करणगाथाका विशेष अर्थ और भग निकालनेका प्रकार समझनेके लिए देखो भाग ४, पृष्ठ १४३ का विशेषार्थ ।)

इस उक्त प्रकारके भावोंके अनुगमको भावानुगम कहते हैं । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका होता है । ओघसे सगृहीत ओर आदेशसे असगृहीत, इस प्रकार निर्देश दो प्रकारका होता है, क्योंकि, तीसरे निर्देशका होना संभव नहीं है ।

१ अथार्थोत्त सानिपातिकभाव त्रिविध इत्यनोप्यते-वर्द्धिघातिविध पदनिघातिविध एरुक्तादिदिध श्येवमादिगमे उत्त । त रा वा २, ७

२ ऋषादेयत रूचरमानिदे कमेण हदे । लद्ध मिच्छवउक्के देसे सजोगणगाता ॥ गो, क ७१९

सृष्टि सप्तमसादो । लद्धी पंचमिहा दाणादिभेएण । सम्मत्तमेयविह वेदगमम्मत्तसिद्धेण
अण्णसम्मत्तणमणुलभा । चारिचमेयविह, मामादयछेदोपद्वान्ण परिहारसुद्धिमत्त
विमत्ताभाया । सनमामज्जमो एयविहो । एउमेदे सच्चे वि त्रियप्पा अट्टारस होति (१८) ।
पारिणामिओ त्रियहो भव्यामच्च जीवत्तमिदि । उच्च च-

एय दाण निणिग त्रियप्पा तह पारिणामिण होति ।

भन्नामन्ना जीवा अत्ताणदो चैव वेद्वन्ना ॥ १० ॥

एदेसि पुब्बुत्तभारत्रियप्पाण समहगाहा-

रमिनीस अह तह ण अट्टारस निणिग चैव वेद्वन्ना ।

ओदड्यादा मावा विव पदा आणुपुत्तीए ॥ ११ ॥

किया गया है, क्योंकि, यह अपने विरोधी कमके क्षयसे उत्पन्न होता है । दानादिभे
भेदसे लक्षि पाच प्रकारकी है । सम्यक्त्त एव प्रकारका है, क्योंकि, इस भावमें वेदक
सम्यक्त्तको छोड़कर अन्य सम्यक्त्वोंका अभाव है । चारित्र एव विद्वत्तरूप ही है,
क्योंकि, यहापर मामादिक, छेदोपस्थापना और परिहारविशुद्धिमत्तकी विमत्ता
अभाव है । सयमासयम एक भेदरूप है । इस प्रकार मिलकर ये सब त्रिरूप अग्राह्य
होते हैं (१८) । पारिणामिकभाव, भव्य, अभव्य और जीवत्तके भेदसे तीन प्रकारका है ।
कहा भी है-

पारिणामिकभावमें स्थान एक तथा भव्य, अभव्य और जीवत्तके भेदसे त्रिरूप
तीन प्रकारके होते हैं । ये त्रिरूप आत्माके असाधारण भाव होनेसे ग्रहण निये गए
जानना चाहिए ॥ १० ॥

इन पूर्वोक्त भावोंके त्रिरूपोंको धरतानेवाली यह सप्रह माया है-

बीदयिक आदि भाव त्रिरूपोंकी अपेक्षा आनुपूर्वसे इक्कीस, आठ, नौ, अट्टारह
और तीन भेदवाले हैं, ऐसा जानना चाहिए ॥ ११ ॥

१ कानासादनदभनत्त प्रयत्नशुभित्तिपचमेदा सम्यक्त्वचारित्रसयमायममात्र । त सू २, ५

२ जीवमत्तामत्तवानि च । त सू २, ७

३ अ वप्रत्तो 'अट्टवण्ण' आपत्ती 'अण्णदो' सप्रती 'अववण्णो' सप्रती 'अपवण्णो' इति पाठ ।

४ अभाभारणा जीवस्य मावा पारिणामिमाय एव । त मि २, ७ अन्यद्व्यासाधारणायप
पारिणामिका । ××× अस्तिवादया पि पारिणामिका माया सति ×× सूत्रे तेषां ग्रहण कस्मान् इत् ।
अवद्व्यसाधारणादयुक्ता । त सू वा २, ७

५ दिनवाहद्व्योपविधातमिमेदा यथाक्रमम् । त सू २, २

उपशमध्रेणीजाले चारो उपशमकामें पृथक् पृथक् पेंतीस भग भाजकी अपेक्षा होते ह ॥ १३-१४ ॥

विशेषार्थ—ऊपर बतलाये गये भगोंका स्पष्टीकरण इस प्रकार है—ओदयिकादि पाचों मूल भाजोंसे मिथ्यात्वगुणस्थानमें ओदयिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक, ये तीन भाग होते हैं। अतः असयोगी या प्रत्येकसयोगी अपेक्षा ये तीन भग हुए। इनके द्विसयोगी भग भी तीन ही होने हैं—ओदयिक क्षायोपशमिक, ओदयिक पारिणामिक और क्षायोपशमिक पारिणामिक। तीनों भाजोंका सयोगरूप त्रिसयोगी भग एक ही होता है। इन सात भगोंके सिवाय स्वययोगी तीन भग और होते हैं। जैसे—ओदयिक-ओदयिक, क्षायोपशमिक-क्षायोपशमिक और पारिणामिक-पारिणामिक। इस प्रकार ये सत्र मिलकर $(3 + 3 + 1 + 3 = 10)$ मिथ्यात्वगुणस्थानमें दश भग होते हैं। ये ही दश भग आत्माइन और मिश्र गुणस्थानमें भी जानना चाहिए। अधिरत्नसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें पाचों मूलभाग होते हैं, इसलिए यहा प्रत्येकसयोगी पाच भग होते हैं। पाचों भाजोंके द्विसयोगी भग दश होते हैं। किन्तु उनमेंसे इस गुणस्थानमें आपशमिक और क्षायिक-भाजका सयोगी भग सम्भव नहीं, क्योंकि, यह उपशमध्रेणीमें ही सम्भव है। अतः दशमेंसे एक घटा देने पर द्विसयोगी भग नौ ही पाये जाते हैं। पाचों भाजोंके त्रिसयोगी भग दश होते हैं। किन्तु उनमेंसे यहापर क्षायिक आपशमिक ओदयिक, क्षायिक आपशमिक-पारिणामिक और क्षायिक आपशमिक-क्षायोपशमिक, ये तीन भग सम्भव नहीं हैं, अतएव शेष सात ही भग होते हैं। पाचों भाजोंके चतुःसयोगी पाच भग होते हैं। उनमेंसे यहापर ओदयिक-क्षायोपशमिक-क्षायिक-पारिणामिक, तथा ओदयिक-क्षायोपशमिक-आपशमिक-पारिणामिक, ये दो ही भग सम्भव हैं, शेष तीन नहीं। इसका कारण यह है कि यहापर क्षायिक और आपशमिकभाज साथ साथ नहीं पाये जाते हैं। इसी कारण पंचसयोगी भगका भी यहा अभाव है। इनके अतिरिक्त स्वसयोगी भगोंमेंसे क्षायोपशमिक-क्षायोपशमिक, ओदयिक-ओदयिक और पारिणामिक-पारिणामिक, ये तीन भग और भी होते हैं। आपशमिक और क्षायिकके स्वसयोगी भग यहा सम्भव नहीं हैं। इस प्रकार प्रत्येकसयोगी पाच, द्विसयोगी नौ, त्रिसयोगी सात, चतुःसयोगी दो और स्वसयोगी तीन, ये सत्र मिलकर $(5 + 9 + 7 + 2 + 3 = 26)$ असयतनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें अतीस भग होते हैं। ये ही छद्मीन भग देशविरत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें भी होते हैं। क्षपकध्रेणीसम्यन्धी चारों गुणस्थानोंमें आपशमिक भाजके बिना शेष चार भाज ही होते हैं। अतएव उनके प्रत्येकसयोगी भग चार, द्विसयोगी भग छह, त्रिसयोगी भग चार और चतुःसयोगी भग एक होता है। तथा चारों भाजोंके स्वसयोगी चार भग और भी होते हैं। इस प्रकार सत्र मिलकर $(4 + 4 + 4 + 1 + 4 = 17)$ उर्ध्वीस भग क्षपकध्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें होते हैं। उपशमध्रेणीसम्यन्धी चारों गुणस्थानोंमें पाचों ही मूल भाग सम्भव हैं, क्योंकि, यहापर क्षायिकसम्यक्दृष्टिके साथ आपशमिक-क्षायिक भी पाया जाता है। अतएव पाचों भाजोंके प्रत्येकसयोगी पाच भग, द्विसयोगी दश भग, त्रिसयोगी दश भग, चतुःसयोगी पाच

ओघेण मिच्छादिद्वि त्ति को भावो, ओदइओ भावो' ॥ २ ॥

‘जहा उदेसो तहा णिदेसो’ त्ति जानाणणद्धमोघेणेत्ति भणिद । अत्यादिहाण पच्चया तुल्लणामघेया इदि णायादो इदि-करणपरो मिच्छादिद्विसहो मिच्छत्तभान भणिद । पचसु भायेसु एमो को भावो त्ति पुच्छिडे जोदइओ भावो त्ति तित्थयरउयणादो दिव ज्युणी णिणिग्गया । को भावो, पचसु भायेसु कदमो भावो त्ति भणिद होदि । उदये मयो ओदइओ, मिच्छत्तकम्मस्स उदएण उप्पण्णमिच्छत्तपरिणामो कम्मोदयजणिणे त्ति ओदइओ । णणु मिच्छादिद्विस्म अण्णे पि भावा अत्थि, णाण दमण गदि लिङ्गन्माय मच्चाभव्यादिभावाभावे जीवस्स मसारिणो अभाउप्पमगा । भणिद च-

मिच्छत्ते दम भगा आसादण मिस्सए वि ओदइया ।

तिगुणा ते चदुहीणा अनिरदसम्मत्स एमेउ ॥ १३ ॥

देसे खओउम्ममि ए रिदे खग्गाण ऊणीस तु ।

ओसामगसु पुध पुउ पणनीस भाउदो भगा ॥ १४ ॥

ओघनिर्देशकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टि यह कौनसा भाव है ? औदयिक भाव है ॥ २ ॥

‘जैना उद्देश होता है उसी प्रकार निदर्श होता है’ इस न्यायके शापनार्थ सूत्रम ‘ओघ’ ऐसा पद कहा । अथ, अभिधान (शब्द) और प्रत्यय (ज्ञान) मुख्य नामवाले होते हैं, इस न्यायसे ‘इति’ करणपरक अर्थात् जिसके पश्चात् हेतुवाचक इति शब्द आया है, ऐना ‘मिथ्यादृष्टि’ यह शब्द मिथ्यात्वके भावको कहता है । पाचों भावोंमें यह कौन भाव है ? ऐसा पूछनेपर यह औदयिक भाव है, इस प्रकार तीर्थंकरके मुखसे विष्यध्वनि निकली है । यह जैन भाव है, अर्थात् पाचों भावोंमेंसे यह कौनसा भाव है, यह तापर्य होता है । उदयसे जो हो, उसे औदयिक कहते हैं । मिथ्यात्वकमके उदयसे उत्पन्न ज्ञानवाला मिथ्यात्वपरिणाम कर्मोदयजनित है, अतएव औदयिक है ।

शरीर—मिथ्यादृष्टिके अथ भी भाव होते हैं, उन ज्ञान, दर्शन, गति, लिङ्ग, कषाय, भयत्व, अमव्यत्य आदि भावोंके अभाव माननेपर सत्कारी जीवके अभावर प्रसंग प्राप्त होता है । कहा भी है—

मिथ्यात्वगुणस्थानमें उक्त भावोंसम्बन्धी दश भग होते हैं । सासादन और मिथ्य गुणस्थानमें भी इसी प्रकार दश दश भग जानना चाहिये । अविरतसम्यग्दृष्टि गुण स्थानमें ये ही भग त्रिगुणित और चतुर्हानि अर्थात् ($10 \times 2 - 4 = 26$) छवास होते हैं । इसी प्रकार ये छत्तीस भग शायोपशमिक देशविरत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें भी होते हैं । क्षपकधेणीवाले चारों क्षपकोंके उद्गीस उद्गीस भग होते हैं ।

१ सामायेन तान् मिथ्यादृष्टित्वौदयिकं भाव । स ति १, ८ मिच्छे खलु ओदइओ । गो जी ११

२ प्रतिपु ‘इदिकरणपर’ इति पाठ ।

भावा निक्कारणा उल्लम्भंतीदि चे ण, निमेषसत्तादिसरूपेण अपरिणमंतसत्तादिसामण्णाणु-
वलभा । सामणसम्मादिट्ठितं पि मम्मत्त चारित्तुभयनिरोहिअणताणुवधिचउक्कस्सुदय-
मंतरेण ण होदि त्ति ओदडयमिदि किण्णेच्छिज्जदि ? सच्चमेय, किंतु ण तथा अप्पणा
अत्थि, आदिमच्चदुगुणट्ठाणभावापरुवणाए दमणमोहवादिचित्तसेसरुम्मेसु विरक्खामावा ।
तदे अप्पिदस्स दसणमोहणीयस्स कम्मस्स उदएण उरममेण सएण सओरसमेण वा ण
होदि त्ति निक्कारणं सासणसम्मत्त, अदे चेत्त पारिणामियत्त पि । अणेण णाएण सब्ब-
भावाण पारिणामियत्त पमज्जदीदि चे होदु, ण कोड दोमो, निरोहाभावा । अण्णभावेसु
पारिणामियवगहरो किण्ण कीग्दे ? ण, मामणमम्मत्त मोत्तूण अप्पिदकम्मादो शुप्पणस्स
अण्णस्स भावस्स अणुलभा ।

कारणके बिना उत्पन्न होनेवाले परिणामका अभाव है ।

शुक्रा—सत्त्व, प्रमेयत्वं आदिक भाव कारणके बिना भी उत्पन्न होनेवाले पाये
जाते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, विशेष सत्त्व आदिके स्वरूपसे नहीं परिणत होने-
वाले सत्त्वादि सामान्य नहीं पाये जाते हैं ।

शुक्रा—सासादनसम्यग्दृष्टिपना भी सम्यक्त्व ओर चारित्र, इन दोनोंके विरोधी
अनतानुगन्धी चतुष्कके उदयके बिना नहीं होता है, इसलिए इसे ओदयिक क्यों नहीं
मानते हैं ?

समाधान—यह कहना सत्य है, किन्तु उस प्रकारकी यहा विवक्षा नहीं है,
क्योंकि, आदिके चार गुणस्वानांसम्यग्न्धी भावोंकी प्ररूपणामें दर्शनमोहनीय कर्मके
सिवाय शेष कर्मोंके उदयकी निरक्षताका अभाव है । इसलिए निवर्धित दर्शनमोहनीयकर्मके
उदयसे, उपशमसे, क्षयसे अथवा क्षयोपशमसे नहीं होता है, अतः यह सासादन
सम्यक्त्व निष्कारण है ओर इसीलिए इसके पारिणामिकरूपना भी है ।

शुक्रा—इस न्यायके अनुसार तो सभी भावोंके पारिणामिकरूपनेका प्रसंग प्राप्त
होता है ?

समाधान—यदि उक्त न्यायके अनुसार सभी भावोंके पारिणामिकरूपनेका प्रसंग
आता है, तो आने दो, कोई दोष नहीं है, क्योंकि, इसमें कोई विरोध नहीं आता ।

शुक्रा—यदि ऐसा है, तो फिर अन्य भावोंमें पारिणामिकरूपनेका व्यवहार क्यों
नहीं किया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सासादनसम्यक्त्वको छोड़कर विवक्षित कर्मसे नहीं
उत्पन्न होनेवाला अन्य कोई भाव नहीं पाया जाता ।

१ एदे भावा गियमा दसणमोह पडच्च भणिदा हु । चागिच गत्थि जदो अविरदअवेसु ठाणेसु ॥ गो जी १२

तदो मिच्छादिद्विस्स ओदहओ चेन भाओ जत्थि, अण्णे भाओ जत्थि चि णेद घडदे ? ण एस दोसो, मिच्छादिद्विस्स अण्णे भाओ जत्थि चि सुत्ते पडिसेहाभाओ । किंतु मिच्छत्त मोत्तूण जे अण्णे गदि-लिंगादओ मावारणभाओ ते मिच्छादिद्विस्स कारण ण होंति । मिच्छत्तोदओ एक्को चेन मिच्छत्तस्स कारण, तेण मिच्छादिद्वि चि भाओ ओदहओ चि परूदिओ ।

सासणसम्मादिद्वि चि को भाओ, पारिणामिओ भाओ ॥ ३ ॥

एत्थ चोदओ भण्णिदि— भाओ पारिणामिओ चि णेद घडदे, अण्णेहिंओ अणु प्पण्णस्म परिणामस्म अत्थिचत्तिरोहा । अह अण्णेहिंओ उत्पत्ती इच्छिज्जदि, ण मो पारिणामिओ, णिककारणस्म सकारणत्तिरोहा इदि । परिहारो उच्चदे । त जहा— जा कम्माणमुदय-उत्तमम रउय रउओत्तसमेहि निणा अण्णेहिंओ उत्पण्णो परिणामो सो पारिणामिओ भण्णिदि, ण णिककारणो कारणमतरेणुप्पणपरिणामाभाओ । सत्त पमेयत्तादओ भग होते ह और पचसयोगी एउ भग होता है । तथा स्वसयोगी भग चार हा होते हैं, क्योंकि यहापर क्षायिउमम्यस्त्वके साथ क्षायिकभावका अन्य भेद सम्भव नहीं है । इस प्रकार सव मिलानर (५ + १० + १० + ५ + १ + ४ = ३५) पतास भग उपशमश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें होते ह ।

इसलिए मिथ्यादृष्टि जीवके केवल एक औदयिक भाव ही होता है, और अन्य भाव नहीं होते हैं, यह कथन घटित नहीं होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, 'मिथ्यादृष्टिके औदयिक भावके अतिरिक्त अन्य भाव नहीं होने हैं, इस प्रकारका सूत्रमें प्रतिपेध नहीं किया गया है । किंतु मिथ्यात्वको छोड़कर जो अन्य गति, लिंग आदिक साधारण भाव ह, वे मिथ्या दृष्टित्वके कारण नहीं होते हैं । एक मिथ्यात्वका उदय ही मिथ्यादृष्टित्वका कारण है, इसलिए 'मिथ्यादृष्टि' यह भाव औदयिक कहा गया है ।

सासादनमम्यग्गद्वि यह कौनसा भाओ है ? पारिणामिक भाओ है ॥ ३ ॥

शका—यहा पर शकाकार कहता है कि 'भाव पारिणामिक है' यह बात घटित नहीं होती है, क्योंकि, दूसरोंसे नहीं उत्पन्न होनेवाले पारिणामिके अस्तित्वका विरोध है । यदि अन्यसे उत्पत्ति मानी जावे तो पारिणामिक नहीं रह सकता है, क्योंकि, निष्कारण वस्तुके सकारणत्वका विरोध है ?

समाधान—उक्त शकाका परिहार कहते हैं । यह इस प्रकार है— जो कर्मोंक उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपमके बिना अन्य कारणोंसे उत्पन्न हुआ परिणाम है, वह पारिणामिक कहा जाता है । न कि निष्कारण भावको पारिणामिक कहते हैं, क्योंकि,

१ सासादनमम्यग्गद्विचि पारिणामिको भाओ । ए ति १, ८ विदिये पुण पारिणामिओ भाओ । गो जी ११

सम्मामिच्छत्तस्म सम्मत्ताभावादो । किंतु मदहणभागो अमदहणभागो ॥ होदि, सदहणा-
मदहणाणमेयत्तपिरोहा । ण च मदहणभागो कम्मोदयजणिओ, तत्थ पिरीयत्ताभावा ।
ण य तत्थ सम्मामिच्छत्तत्तत्तत्ताभावा, समुदाएसु पयट्ठाणं तदेगदेमे पि पउत्तिदंमणादो ।
तदो सिद्ध सम्मामिच्छत्त राओरममियमिदि । मिच्छत्तस्म मच्चघादिफट्ठयाणमुदयक्खएण
तेमिं चेय मतोरममेण सम्मत्तस्स देमघादिफट्ठयाणमुदयक्खएण तेमिं चेय सतोअममेण
जणुदओरममेण वा सम्मामिच्छत्तस्म मच्चघादिफट्ठयाणमुदएण सम्मामिच्छत्तभावा होदि
त्ति सम्मामिच्छत्तस्म राओरसमियत्त केडं परूयत्ति, तण्ण घडदे, मिच्छत्तभावास्स पि
राओरममियत्तप्पमंगा । कुदो ? सम्मामिच्छत्तस्म मच्चघादिफट्ठयाणमुदयक्खएण तेमिं
चेय मतोरममेण सम्मत्तदेसघादिफट्ठयाणमुदयक्खएण तेमिं चेय सतोअममेण जणुदओर-
ममेण वा मिच्छत्तस्म मच्चघादिफट्ठयाणमुदएण मिच्छत्तभावुप्पत्तीए उअलभा ।

असंजदसम्मादिडि त्ति को भावो, उवसमिओ वा खइओ वा
राओवसमिओ वा भावो ॥ ५ ॥

जात्यन्तरभूत सम्यग्मिथ्यात्वकर्मके सम्यक्त्यताका अभाव है । किन्तु धर्मानभाग अधर्मान
भाग नहीं हो जाता है, क्योंकि, धर्मान और अधर्मानके एकताका विरोध है । और
धर्मानभाग कमादय जनित भी नहीं है, क्योंकि, इसमें विपरीतताका अभाव है । और
न उनमें सम्यग्मिथ्यात्व सदाका ही अभाव है, क्योंकि, समुदायोंमें प्रवृत्त हुए शब्दोंकी
उनके एक देशमें भी प्रवृत्ति देखी जाती है । इसलिये यह सिद्ध हुआ कि सम्यग्मिथ्यात्व
क्षायोपशमिरा भाव है ।

कितने ही आचार्य ऐसा कहते हैं कि मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदय
क्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे, सम्यक्प्रवृत्तिके देशघाती स्पर्धकोंके उदय
क्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे, अथवा अनुदयरूप उपशमसे और सम्यग्मिथ्यात्व
कर्मके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयने सम्यग्मिथ्यात्वभाव होता है, इसलिये सम्यग्मिथ्यात्वके
क्षायोपशमिकता सिद्ध होती है । किन्तु उनका यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि,
ऐसा मानने पर तो मिथ्यात्वभावके भी क्षायोपशमिकताका प्रसंग प्राप्त होगा, क्योंकि,
सम्यग्मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे और
सम्यक्त्वदेशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सत्त्वस्थारूप उपशमसे, अथवा अनु-
दयरूप उपशमसे, तथा मिथ्यात्वके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे मिथ्यात्वभावकी उत्पत्ति
पारि जाती है ।

असंयतमम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी है, क्षायिक
भाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ ५ ॥

१ असंयतमम्यग्दृष्टिरिति आपशमिको वा क्षायिको वा क्षायोपशमिको वा भाव । स ति १, ८
असंजदसम्मादिडि तिण्णव ॥ गो जी ११

सम्प्राप्तिच्छादिद्वि त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो ॥ ४ ॥

पडियधिकम्भोदए मते पि जो उल्लङ्घ्य जीवगुणाग्रयो सो खओवसमिओ उच्चत । कुदो ? मवघादणमनीए जभावो खओ उच्चदि । खओ चेर उग्रमो खओवसमो, तस्मि जादो भावो खओवसमिओ । ण च सम्प्राप्तिच्छादए मते सम्पत्तस्य कणिया पि उच्चदि, सम्प्राप्तिच्छादस्म मवघादित्तण्णहाणुग्रचीदो । तदो सम्प्राप्तिच्छाद मओवसमियमिदि ण घडदे ? एत्थ परिहारो उच्चदे— सम्प्राप्तिच्छादए मते सद्वहणमद्वहणपओ ऋचिओ जीवपरिणामो उप्पज्जट । तत्थ जो मद्वहणसो सो सम्पत्ताग्रयो । त सम्प्राप्तिच्छादओ ण रिणामेदि त्ति सम्प्राप्तिच्छाद खओवसमिय । अमद्वहणभागेण रिणा मद्वहणभागस्सेर सम्प्राप्तिच्छादग्रयो णत्थि त्ति ण सम्प्राप्तिच्छाद खओवसमियमिदि च एगिहियिक्खाए सम्प्राप्तिच्छाद खओवसमिय मा होदु, स्मिन्तु अग्रव्यग्रयनिराकरणानिराकरण पडुच्च खओवसमिय सम्प्राप्तिच्छादव्वरम्म पि मवघादी चेर होदु, जच्चतरस्स

सम्प्राप्तिच्छादए यह कानसा भाव है ? आयोपशमिक भाव है ॥ ४ ॥

शुक्रा—प्रतिपक्षी जन्मे उदय होनेपर भी जो जीवने गुणना अवयव (भरा) पाया जाता है, वह गुणाश आयोपशमिक रहलाता है, क्योंकि, गुणोंके सम्पूर्णरूपसे घातनेकी शक्ति का अभाव क्षय कहलाता है । क्षयरूप ही जो उपशम होता है, वह क्षयोपशम कहलाता है । उस क्षयोपशममें उत्पन्न होनेवाला भाव आयोपशमिक कहलाता है । किन्तु सम्प्राप्तिच्छादजन्मे उदय रहते हुए सम्पत्तकी कणिका भी अवशिष्ट नहीं रहती है, अन्यथा, सम्प्राप्तिच्छादजन्मेके सर्वघातीपना उन नहीं सकता है । इसलिए सम्प्राप्तिच्छादभाव आयोपशमिक है, यह कहना घटित नहीं होता ।

समाधान—यहा उक्त शरणा परिहार करते हैं— सम्प्राप्तिच्छादजन्मेके उदय होने पर अदानाश्रदानात्मक करचित अर्थात् शरलित या मिश्रित जीवपरिणाम उत्पन्न होता है, उसमें जो श्रदानाश्र है, वह सम्पत्तकी अवयव है । उसे सम्प्राप्तिच्छाद जन्मेका उदय नहीं नष्ट करता है, इसलिये सम्प्राप्तिच्छादभाव आयोपशमिक है ।

शुक्रा—अश्रदान भाग का विना केवल श्रदान भागके ही 'सम्प्राप्तिच्छाद' यह संधा नहीं है, इसलिए सम्प्राप्तिच्छादभाव आयोपशमिक नहीं है ?

समाधान—उक्त प्रकारकी विवक्षा होने पर सम्प्राप्तिच्छादभाव आयोपशमिक मते ही न होवे, किन्तु अवयवोंके निराकरण और अवयवके अनिराकरणकी अपेक्षा वह आयोपशमिक है । अर्थात् सम्प्राप्तिच्छादके उदय रहते हुए अवयवरूप शुद्ध आत्माका तो निराकरण रहता है, किन्तु अवयवरूप सम्पत्तवगुणा जश प्रगट रहता है । इस प्रकार आयोपशमिक भी वह सम्प्राप्तिच्छाद इत्येक सर्वघाती ही होने, क्योंकि,

सम्प्राप्तिच्छाद्विधि श्रदानात्मिको भाव । स ति १, ८ मिस्से खओवसमिओ । गो जी ११
प्रतिपक्ष 'त खओवसमि' इति पाठ ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो' ॥ ६ ॥

सम्मादिट्ठीए तिण्णि भावे मणिऊण असजदत्तस्स कदमो भावो होदि चि जाणा-
वणद्धमेद सुत्तमागद । सजमघादीण कम्माणमुदएण जेणेसो असजदो तेण असंजदो चि
जोदइओ भावो । हेट्ठिल्लाण गुणट्ठाणाणमोदइयमसंजदत्त किण्ण परुणिदं ? ण एस दोसो,
एदेणे तिसिमोदइयमसंजदभावो नलदीदो । जेणेदमतदीपय सुत्त तेणते ठाड्ढण अडकत्त-
सव्वसुत्ताणमयवसरं पडिउज्जदि, तत्थ अप्पणो अत्थित्तं वा पयासेदि, तेण अदीद-
गुणट्ठाणाणं सव्वेमिमोदइओ असजमभावो अत्थि चि सिद्धं । एदमादीए अभणिय एत्थ
भणत्तस्स को अभिप्पाओ ? उच्चदे-असजमभावस्स पज्जरसाणपरुणणद्धमुपरिमाण-
सजमभापडिसेहट्ठं चेत्येद उच्चदे ।

संजदासजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा चि को भावो, खओवसमिओ
भावो' ॥ ७ ॥

किन्तु असयतसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदायिकभावे है ॥ ६ ॥

सम्यग्दृष्टिके तीनों भाव कहकर असयतके उसके असयतत्वकी अपेक्षा
कौनसा भाव होता है, इस बातके घटलानेके लिए यह सूत्र आया है । चूँकि सयमके
घात करनेवाले कर्मोंके उदयसे यह असयतरूप होता है, इसलिए 'असयत' यह
औदायिकभाव है ।

शंका—अधस्तन गुणस्थानोंके असयतपनेको औदायिक क्यों नहीं कहा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, इसी ही सूत्रसे उन अधस्तन गुण
स्थानोंके औदायिक असयतभावकी उपलब्धि होती है । चूँकि यह सूत्र अन्तर्दीपक है,
इसलिए असयतभावको अन्तमें रख देनेसे वह पूर्वोक्त सभी सूत्रोंका अंग बन जाता है ।
अथवा, अतीत सर्व सूत्रोंमें अपने अस्तित्वको प्रकाशित करता है, इसलिए सभी अतीत
गुणस्थानोंका असयमभाव औदायिक होता है, यह बात निश्चि है ।

शंका—यह 'असयत' पद आदिमें न कहकर यहापर कहनेका क्या अभिप्राय है ?

समाधान—यहा तबके गुणस्थानोंके असयमभावकी अन्तिम सीमा बतानेके
लिए और ऊपरके गुणस्थानोंके असयमभावके प्रतिषेध करनेके लिए यह असयत पद
यहापर कहा है ।

सयतामयत, प्रमत्तमयत और अग्रमत्तसयत, यह कौनसा भाव है ? क्षायोप-
शमिक भाव है ॥ ७ ॥

१ अमयत पुनरादयिकेन भावेन । स सि १, ८

२ सयतामयत प्रमत्तमयतोऽग्रमत्तसयत इति च क्षायोपशमिको भाव । स सि १, ८ देसवित्ते
पमचे इदरे य एओवमभियमागे इ । सो खलु चरित्तमो पड्ढ च मणिय तहा उवरि । गो जी १३

त जहा- मिच्छत सम्मामिच्छतमव्यधादिफद्याण मम्मत्तदेसधादिफद्याण च उरममेण उदयाभातरूपेण उरममसम्मत्तमुप्यज्जदि ति तमोरममिय । एदेमि चैव राएण उपपण्णो राडो भाओ । मम्मत्तस्म देसधादिफद्याणमुदएण मह वट्टमाणो सम्मत्त परिणामो राओरममिओ । मिच्छतस्स मव्यधादिफद्याणमुदयवरएण तेसि चैव मताव ममेण मम्मामिच्छतस्स मव्यधादिफद्याणमुदयवरएण तेसि चैव सतोरममेण अणु ओरममेण वा सम्मत्तस्म देसधादिफद्याणमुदएण राओरममिओ भाओ ति वेई मणति, तण्ण घडदे, अडरत्तिदोमप्यमगादो । कव पुण घडदे ? जहट्टियट्टमइहणधायणमवी सम्मत्तफट्टएसु राणा ति तेमि राइयमण्णा । रायाणमुत्तमो पसण्णादा राओरममा । तन्धुपपण्णत्तादो राओरममिय रेदगमम्मत्तमिदि पडदे । एउ सम्मत्ते तिणिण भाओ, अणो णत्थि । गदिलिगादओ भाओ तन्धुगलमत इदि चे होदु णाम तेसिमत्थित्त, त्तिनु ण तेहिओ मम्मत्तमुप्यज्जदि । तदो मम्मदिट्ठो वि ओदइयादिवरएम ण लहदि ति धेत्तव ।

अंसे- मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिने सवधाती स्पर्धकोंके तथा सम्यक्त्व प्रकृतिने देशधाती स्पर्धकोंके उदयाभातरूप लक्षणवाले उपशमसे उपशमसम्यक्त्व उत्पन्न होता है, इसलिये 'असयतसम्यग्दष्टि' यह भाव औपशमिन् है । इन्हीं तीनों प्रकृतियोंके क्षयसे उत्पन्न होनेवाले भावको क्षामिन् कहते हैं । सम्यक्त्वप्रकृतिने देशधाती स्पर्धकोंके उत्पन्ने साथ रहनेवाला सम्यक्त्वपरिणाम क्षायोपशमिन् कहलाता है । मिथ्यात्वके सवधाती स्पर्धकोंके उदयाभातरूप क्षयसे, उन्हींने सवधस्वरूप उपशमसे और सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिने सवधाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, तथा उन्हींके सवधस्वरूप उपशमसे अथवा अनुदयोपशमनसे, और सम्यक्त्वप्रकृतिने देशधाती स्पर्धकोंके उदयसे क्षायोपशमिन् भाव कितने ही आचार्य कहते हैं, किन्तु यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, ऐसा मानने पर अति-यासि दोषका प्रसंग जाता है ।

श्री-तो फिर क्षायोपशमिन्भाव कैसे घटित होता है ?

समाधान--यथास्थित अत्रके ध्वस्तानको प्राप्त करनेवाली शक्ति जब सम्यक्त्व प्रकृतिने स्पर्धकोंमें क्षीण हो जाता है, तब उनकी क्षायिकसत्ता है । क्षीण हुए स्पर्धकोंके उपशमको अर्थात् प्रसन्नताको क्षायोपशम कहते हैं । उसमें उत्पन्न होनेसे धेद्वसम्यक्त्व क्षायोपशमिन् है, यह कथन घटित हो जाता है । इस प्रकार सम्यक्त्वमें तीन भाव होते हैं, अन्य भाव नहीं होते हैं ।

श्री-असयतसम्यग्दष्टिमें गति, लिङ्ग आदि भाव पाये जाते हैं, फिर उनका प्रदण यहा क्यों नहीं किया ?

समाधान--असयतसम्यग्दष्टिमें भले हा गति, लिङ्ग आदि भावोंका अस्तित्व रहा भावे, किन्तु उनसे सम्यक्त्व उत्पन्न नहीं होता है, इसलिये सम्यग्दष्टि भी ओदधिक आदि भावोंके व्यपदेशको नहीं प्राप्त होता है, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

उप्पज्जदि । वारमरुसायाण सच्चघादिफहयाणमुदयक्खएण तेसिं चेन संतोउसमेण चहु-
संजुलण-णरणोरुमायाण सच्चघादिफहयाणमुदयक्खएण तेसिं चेन संतोउसमेण देसघादि-
फहयाणमुदएण पमत्तापमत्तसंजमा' उप्पज्जति, तेणेदे तिणिण वि भाया खओउममिया
इदि के वि भणंति । ण च एद समजसं । कुदो ? उदयाभापो उउसमो ति कहु उदय-
निरहिदसव्वपयडीहि द्विदि-अणुभागफहएहि अ उवसमसण्णा लद्धा । सपहि ण क्खओ
अत्थि, उदयस्म विज्जमाणस्स खयव्वएसनिरोहादो । तदो एदे तिणिण भाया उदओव-
समियत्त पत्ता । ण च एव, एदेसिमुदओउसमियत्तपटुप्पायणसुत्ताभाया । ण च फल
दाऊण णिज्जरियगयक्रम्मक्खण्डाण खयव्वएस काऊण एदेमिं खओउसमियत्त वोत्तु
जुत्त, मिच्छादिद्विआदि सच्चभायाण एन सत्ते खओउसमियत्तप्पसंगा । तम्हा पुव्विल्लो
चेय अत्थो घेत्तव्वो, णिरवज्जत्तादो । दसणमोहणीयकम्मस्स उउसम-खय-खओउममे
अस्मिदूण संजदासजदादीणमोउसमियादिभाया किण्ण परुविदा ? ण, तदो संजमासंजमादि-
भायाणमुप्पत्तीए अभायादो । ण च एत्थ सम्मत्तनिसया पुच्छा अत्थि, जेण दंसण-

है । अनन्तानुगन्धी आदि बारह कपायाँके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सद-
वस्थारूप उपशमसे चारों सच्चलन ओर नवों नोरुपायोंके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदय-
क्षयसे, तथा उन्हींके सदवस्थारूप उदयसे और देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे प्रमत्त
और अप्रमत्त गुणस्थानसम्बन्धी सयम उत्पन्न होता है, इसलिए उक्त तीनों ही भाय
क्षयोपशमिक है, ऐसा नितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु उनका यह कथन युक्तिसंगत
महो है, क्योंकि, उदयके अभावको उपशम कहते हैं, ऐसा अर्थ करके उदयसे विरहित
मध्यप्रकृतियोंकी तथा उन्हाके स्थिति और अनुभागके स्पर्धकोंको उपशमसंज्ञा प्राप्त हो
जाती है । अभी चर्तमानमें क्षय नहीं है, क्योंकि, जिस प्रकृतिका उदय विद्यमान है,
उसके क्षय संज्ञा होनेका विरोध है । इसलिए ये तीनों ही भाय उदयोपशमिकपनेको
प्राप्त होते हैं । किन्तु ऐसा माना नहीं जा सकता है, क्योंकि, उक्त तीनों गुणस्थानोंके
उदयोपशमिकपना प्रतिपादन करनेवाले सूत्रका अभाव है । ओर, फलको देकर पद्य
निजराको प्राप्त होकर गये हुए कर्मस्वर्धोंके 'क्षय' संज्ञा करके उक्त गुणस्थानोंको
क्षयोपशमिक कहना भी युक्त नहीं है, क्योंकि ऐसा होनेपर मिथ्यादृष्टि आदि सभी
भारोंके क्षयोपशमिकताका प्रसंग प्राप्त हो जायगा । इसलिए पूर्वोक्त ही अर्थ ग्रहण
करना चाहिए, क्योंकि, वही निरवयव (निर्दोष) है ।

शंका—दर्शनमोहनीयकर्मके उपशम, क्षय और क्षयोपशमका आशय करके
सयतासयतादिकोंके औपशमिकादि भाय क्यों नहीं बताये गये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके उपशमादिकसे सयमासयमादि
भारोंकी उत्पत्ति नहीं होती । दूसरे, यहा पर सम्यक्त्व विषयक पृच्छा (प्रश्न) भी नहीं है,

तं जहा—चारित्र्यमोहणीयकम्मोदए सओउममसण्णिदे सते जदो सजदामन
पमत्तसजद-अप्पमत्तसजदत्तं च उप्पज्जदि, तेणेदे तिण्णि नि भाग सओउममिया।
पच्चक्खाणावरणचदुसजलण णणोऊमायाणमुदयस्स सच्चप्पणा चारित्र्यविणासणमचीए
अमारोदो तस्म सयमण्णा। तेमिं चेउ उप्पण्णचारित्त सेडिं वापारतस्स उअसममण्णा।
तेहि दोहिंतो उप्पण्णा एदे तिण्णि नि भाग सओउममिया जादा। एउ सते पच्चक्खाणा
वरणस्म सच्चघादिच्च फिड्ढदि चि उत्ते ण फिड्ढदि, पच्चक्खाण सच्च घाण्यदि
त्ति त सच्चघादी उच्चदि। सच्चमपच्चक्खाणं ण घादेदि, तस्स तत्थ घाणा
भाग। तेण तप्परिणदस्म सच्चघादिसण्णा। अस्सोदए सते जमुप्पज्जमाणमु
वल्लभमिं ण न पडि तं सच्चघाडउएस लहइ, अइप्पसगादो। अपच्चक्खाणा
वरणचउम्भस्स सच्चघादिफइयाणमुदयक्खाण तेसिं चेउ सतोउसमेण चदुसन
लण-णणोऊमायाण सच्चघादिफइयाणमुदयक्खाण तेसिं चेउ सतोउसमेण देस
घादिफइयाणमुदएण पच्चक्खाणावरणचदुक्कस्म सच्चघादिफइयाणमुदएण देससजमा

भूतिक क्षयोपशमनामक चारित्र्यमोहनीयकर्मका उदय होने पर सयतासयत,
अप्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतपना उत्पन्न होता है, इसलिए ये तीनों ही भाग क्षयोप
शमिक हैं। प्रत्याख्यानावरणचतुष्क, सज्यलनचतुष्क और नव नोकपायोंके उदयके सब
प्रकारसे चारित्र्य विनाश करनेकी शक्तिका अभाव है, इसलिए उनके उदयकी क्षय सहा
है। उन्हीं प्रवृत्तियोंकी उत्पन्न हुए चारित्र्यको अथवा श्रेणीको आवरण नहीं करनेके कारण
उपशम सहा है। क्षय और उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न हुए ये उक्त तीनों भाग भी
क्षयोपशमिक हो जाते हैं।

शेना—यदि ऐसा माना जाय, तो प्रत्याख्यानावरण कपायका सर्वघातिपना
नष्ट हो जाता है ?

ममाधान—ऐसा माननेपर भी प्रत्याख्यानावरण कपायका सर्वघातिपना नष्ट
नहीं होता है, क्योंकि, प्रत्याख्यानावरण कपाय अपने प्रतिपक्षी सर्व प्रत्याख्यान (सद्यम)
गुणको घातता है, इसलिए वह सर्वघाती कहा जाता है। किन्तु सर्व अप्रत्याख्यानको
नहीं घातता है, क्योंकि, उसका इस विषयमें व्यापार नहीं है। इसलिए इस प्रकारस
परिणत प्रत्याख्यानावरण कपायके सर्वघाती सहा सिद्ध है। जिस प्रवृत्तिके उदय होने
पर जो गुण उत्पन्न होता हुआ देखा जाता है, उसकी अपेक्षा वह प्रवृत्ति सर्वघाति
भराको नहीं प्राप्त होती है। यदि ऐसा न माना जाय तो अतिप्रसंग दोष आजायगा।

अप्रत्याख्यानावरणचतुष्कके सद्यघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे और उन्हींके सद्य
वस्थारूप उपशमसे, तथा चारों सज्यलन और नवों नोकपायोंके सर्वघाती स्पर्धकोंके
उदयामायी क्षयसे और उन्हींके सद्यवस्थारूप उपशमसे तथा देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे
और प्रत्याख्यानावरण कपायचतुष्कके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे देशसयम उत्पन्न होता

कम्माणमुत्तमेण उत्पण्णो भावो ओत्तमिओ मण्णइ । अपुव्वकरणस्स तदभावा णोव-
समिओ भावो इदि चे ण, उत्तमणसत्तिसमण्णिदअपुव्वकरणस्स तदत्थित्तापिरोहा ।
तथा च उत्तमे जादो उत्तमिषकम्माणमुत्तमण्डं जादो नि ओत्तमिओ भावो त्ति
सिद्ध । अथवा भविस्सभाणे भूदोत्तयादादो अपुव्वकरणस्स ओत्तमिओ भावो, सयला-
सजमे पयइच्चक्कहरस्स तित्थयरत्तणमो व्व ।

**चदुहं खवा सजोगिकेवली अजोगिकेवलि त्ति कोभावो,
खइओ भावो' ॥ ९ ॥**

सजोगि-अजोगिकेवलीणं सजिदघाइकम्माणं होदु णाम खइओ भावो । खीण-
कमायस्स पि होदु, सजिदमोहणीयत्तादो । ण सेसाण, तत्थ कम्मक्खयाणुत्तलभा ? ण,
वादर-सुहुमसापराइयाण पि सजियमोहेयदेसाणं कम्मक्खयजणिदभावोत्तलभा । अपुव्व-

शक्ता—कर्मोंके उपशमनसे उत्पन्न होनेवाला भाव औपशमिक कहलाता है ।
किन्तु अपूर्वकरणसयतके कर्मोंके उपशमका अभाव है, इसलिये उसके औपशमिक भाव
नहीं मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपशमनशक्तिसे समन्वित अपूर्वकरणसयतके औप-
शमिकभावनके अस्तित्वको माननेमें कोई विरोध नहीं है ।

इस प्रकार उपशम होनेपर उत्पन्न होनेवाला और उपशमन होने योग्य कर्मोंके
उपशमनार्थ उत्पन्न हुआ भी भाव औपशमिक कहलाता है, यह बात सिद्ध हुई । अथवा,
भविष्यमें होनेवाले उपशम भावमें भूतकालका उपचार करनेसे अपूर्वकरणके औपशमिक
भाव बन जाता है, जिस प्रकार कि सर्व प्रकारके असयममें प्रवृत्त हुए चरुवर्ती तीर्थकरके
'तीर्थकर' यह व्यवदेश बन जाता है ।

चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, यह कौनसा भाव है ?
क्षायिक भाव है ॥ ९ ॥

शक्ता—वातिकर्मोंके क्षय करनेवाले सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके क्षायिक
भाव भले ही रहा आवे । क्षीणरूपाय वीतरागलज्जस्थके भी क्षायिक भाव रहा आवे,
क्योंकि, उसके भी मोहनीयकर्मका क्षय हो गया है । किन्तु सूक्ष्मसाम्पराय आदि शेष
क्षपकोंके क्षायिक भाव मानना युक्ति मगत नहीं है, क्योंकि, उनमें किसी भी कर्मका
क्षय नहीं पाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, मोहनीयकर्मके एक देशके क्षपण करनेवाले वादर-
साम्पराय और सूक्ष्मसाम्पराय क्षपकोंके भी कर्मक्षय जनित भाव पाया जाता है ।

१ चतुर्थ क्षपके सयांगयोगिकेवलीनोय क्षायिको भाव । स सि ३, ८ खगेष खइओ भावो णियमा
अजोगिकेवली त्ति मिद्धे य ॥ गा जी १४

मोहनिवर्धनओउममियादिभागेहि सजदासजदादीण वणएसो होज्ज । ण च एहं, तधाणुअलभा ।

चटुण्हमुवसमां' ति को भावो, ओवसमिओ भावो ॥ ८ ॥

त जहा—एकक्रीमपयडीओ उउमामेंति चि चटुण्ह ओउममिओ भागे । हेहु णाम उवसतकसायस्म ओउसमिओ भागे उउममिदासेसरुमायत्तादो । ण सेमाण, तव असेसमोहस्सुउममाभावा ? ण, जणिवाट्टिनादग्मापराइय मुहुमसापराइयाण उउममिद थोरुमायजणिदुरसमपरिणामाण ओउसमियभाउस्म अत्थित्ताभिरोहा । अपुव्वकरणम् अणुवसतासेसरुमायस्स कधमोउसमिओ भागे ? ण, तस्म पि अपुव्वकरणेहि पणि समयममखेज्जगुणाए मेडीए कम्मक्खण्डे णिज्जरतस्म ट्टिटि-अणुभागसडयाणि घाण्णि कमेण ठिट्ठि-अणुभागे सखेज्जाणतगुणहीणे करेंतस्म पारदुव्वममणनिरियस्म तदसिहा ।

जिससे कि वानमोहनाय निमित्तक औपशमिकादि भावोंकी अपेक्षा मयतासयतादिक औपशमिकादि भावोंका व्यवदेश हो सके। ऐसा है नहीं, क्योंकि, उस प्रकारकी व्यवस्था नहीं पाई जाती है।

अपूर्वकरण आदि चारों गुणस्थानवर्ती उपशमक यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ८ ॥

यह इस प्रकार है—चारित्रमोहनीयकर्मकी इसीस प्रवृत्तियोंका उपशमन करत है, इसलिए चारों गुणस्थानवर्ती जीवोंके औपशमिकभाव माना गया है।

शुक्रा—समस्त कषाय और नोत्रपायोंके उपशमन करनेसे उपशातकषायवात रागछद्मस्य जीवके औपशमिक भाव भले ही रहा जाये, किन्तु अपूर्वकरणदि शेष गुण स्थानवर्ती जीवोंके औपशमिक भाव नहीं माना जा सकता है, क्योंकि, उन गुणस्थानोंमें समस्त मोहनीयकर्मके उपशमन अभाव है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, कुछ कषायोंके उपशमन किए जानेसे उत्पन्न हुआ है उपशम परिणाम जिनके, ऐसे अनिवृत्तिकरण वादरसाम्पराय और सूक्ष्मसाम्पराय सयतके उपशमभावका अस्तित्व माननेमें कोई विरोध नहीं है।

शुक्रा—नहीं उपशमन किया है किसी भी कषायका जिसने, ऐसे अपूर्वकरण सयतके औपशमिक भाव कैसे माना जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा प्रतिसमय असख्यात गुणधेणीरूपसे कर्मस्वर्धोंकी निर्जरा करनेवाले, तथा स्थिति और अनुभागानुद्धाओंकी घात करके क्रमसे कषायोंकी स्थिति और अनुभागको असख्यात और अनन्तगुणित हीन करनेवाले, तथा उपशमनक्रियाका प्रारम्भ करनेवाले, ऐसे अपूर्वकरणसयतके उपशम भावके माननेमें कोई विरोध नहीं है।

१ मण्डि 'उवसमा' इति पाठ ।

२ चटुणापुपधमरानापोउसमिको भाव । स सि १, ८ उवसममावां उवसामगेह । गो जी १४

उप्पज्जदि त्ति सओपसमिओ सो क्रिण्ण होदि ? उच्चदे- ण ताव सम्मत्त-सम्माभिच्छत्त-
देसधादिफइयाणमुदयक्खओ सतोपममो अणुदओपसमो ण मिच्छादिट्ठीए कारण, सब्बहि-
चारिचाटो । ज जदो णियमेण उप्पज्जदि तं तस्स कारण, अण्णहा अणउत्थोप्पसंगादो ।
जदि मिच्छत्तुप्पज्जणकाले निज्जमाणा तक्कारणत्त पडिउज्जति तो णाण-दसण-असजमा-
दओ नि तक्कारण होति । ण चेय, तहानिहयनहारामाणा । मिच्छादिट्ठीए पुण
मिच्छत्तुदओ कारणं, तेण णिणा तदणुप्पत्तीए ।

सासणसम्माइट्ठि त्ति को भावो, पारिणामिओ भावो ॥ ११ ॥

अणताणुअंधीणमुदएणेय सासणसम्मादिट्ठी होदि त्ति ओदइओ भावो क्रिण्ण
उच्चदे ? ण, आइल्लेसु चहुसु वि गुणट्ठणोसु चारित्तारणणतिव्योदएण पत्तामजमेसु दंसण-
मोहणिअधेसु चारित्तमोहणिअव्याभाणा । अप्पिदस्म दसणमोहणीयस्म उदएण उअसमेण
एएण सओपसममेण वा सासणसम्मादिट्ठी ण होदि त्ति पारिणामिओ भावो ।

स्पर्शकोंके उदयसे मिथ्यादृष्टिभाव उत्पन्न होता है, इसलिए उसे क्षायोपशमिक क्यौं न
माना जाय ?

समाधान—न तो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके देशघाती
स्पर्शकोंका उदयक्षय, अथवा सत्त्वस्वरूप उपशम, अथवा अनुदयरूप उपशम मिथ्यादृष्टि-
भावका कारण है, क्यौंकि, उसमें व्यभिचार दोष आता है । जो जिससे नियमत उत्पन्न
होता है, वह उसका कारण होता है । यदि ऐसा न माना जावे, तो अनवस्था दोषका
प्रसंग आता है । यदि यह कहा जाय कि मिथ्यात्वके उत्पन्न होनेके कालमें जो भाव
विद्यमान हैं, वे उसके कारणपनेको प्राप्त होते हैं । तो फिर ज्ञान, दर्शन, असयम आदि भी
मिथ्यात्वके कारण हो जायेंगे । किन्तु ऐसा है नहीं, क्यौंकि, उस प्रकारका व्यवहार नहीं
पाया जाता है । इसलिए यही निश्च होता है कि मिथ्यादृष्टिका कारण मिथ्यात्वका उदय
ही है, क्यौंकि, उसके बिना मिथ्यात्वभावकी उत्पत्ति नहीं होती है ।

नारकी सासादनसम्यग्दृष्टि यह कौनमा भाव है ? पारिणामिक भाव है ॥ ११ ॥

शुक्रा—अनन्तानुबन्धी चारों कपायोंके उदयसे ही जीव सासादनसम्यग्दृष्टि
होता है, इसलिए उसे औदयिकभाव क्यौं नहीं कहते हैं ?

समाधान—नहीं, क्यौंकि, दर्शनमोहनीयनिग्रन्धनक आदिके चारों ही गुणस्थानोंमें
चारित्रको आवरण करनेवाले मोहकर्मके तीन उदयसे असयमभावके प्राप्त होनेपर भी
चारित्रमोहनीयधर्मों विवक्षा नहीं की गई है । अतएव प्रियक्षित दर्शनमोहनीय कर्मके
उदयसे, उपशमसे, क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे सासादनसम्यग्दृष्टि नहीं होता है, इसलिए
यह पारिणामिक भाव है ।

करणस्त अपिण्डकम्मस्त कथं खइओ भावो ? ण, तस्स पि कम्मकसयणिमित्तपरिणामु
वलमा । एत्थ पि कम्माण खए जादो खइओ, खयइ जाओ वा खइओ भावो इदि
दुनिहा सइउप्पत्ती घेत्तव्वा । उयारेण वा अपुब्बकरणस्म खइओ भावो । उयारे
आसइज्जमाणे अइप्पसगो किण्ण होदीदि चे ण, पन्चासत्तीदो अइप्पसगपडिसेहादो ।

ओघाणुगमो समत्तो ।

आदेसेण गइयाणुवादेण णिरयगईए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि ति
को भावो, ओदइओ भावो ॥ १० ॥

हुदो ? मिच्छत्तुदयजणिदअसइहणपरिणामुलभा । सम्मामिच्छत्तसत्त्वघादि
फइयाणमुदयकरणे तेसिं चेन सत्तोसमेण सम्मत्तदेमघादिफइयाणमुदयकरणे तेमिं
चेन सत्तोसमेण अणुदओममेण वा मिच्छत्तमव्यघादिफइयाणमुदयण मिच्छादइदी

शुक्रा—किसी भी कर्मने नष्ट नहीं करनेवाले अपूर्वकरणसयतके क्षायिकभाव
कैसे माना जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उसके भी कर्मक्षयके निमित्तभूत परिणाम पाये
जाते हैं ।

यहां पर भी कर्मोंके क्षय होने पर उत्पन्न होनेवाला भाव क्षायिक है, तथा
कर्मोंके क्षयके लिए उत्पन्न हुआ भाव क्षायिक है, ऐसी दो प्रकारकी शब्दव्युत्पत्ति
ग्रहण करना चाहिए । अथवा उपचारसे अपूर्वकरण सयतके क्षायिक भाव मानना चाहिए ।

शुक्रा—इस प्रकार सयन उपचारके आश्रय करने पर अतिप्रसंग दोष क्यों नहीं
प्राप्त होगा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रत्यासत्ति अर्थात् समीपवर्ती अर्थके प्रसंगसे अति
प्रसंग दोषका प्रतिषेध हो जाता है ।

इस प्रकार ओघ भावानुगम समाप्त हुआ ।

आदेशही अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादसे नरकगतिमें नारकियोंमें मिथ्यादृष्टि
यह कौनसा भाव है ? औदयिक भाव है ॥ १० ॥

क्योंकि, यहां पर मिथ्यात्वके उदयसे उत्पन्न हुआ अध्वद्धानरूप परिणाम पाया
जाता है ।

शुक्रा—सम्याग्निध्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उर्हीने सद्
धर्यारूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रकृतिने देशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उर्हीके
सद्वस्त्वारूप उपशमसे अथवा अनुदयोपशमसे और मिथ्यात्वप्रकृतिके सर्वघाती

१ प्रतिपु 'खयइज्जाओ' इति पाठ ।

२ विशेषेण कथयुवादन नरकगती प्रथमायां पृथिव्यां नारकणां मिथ्यादृष्ट्यापसयतस्य नृदृष्टानां
क्षान्त्यवत् । स मि १, ८

३ अत्रां 'सम्मत्तदेमघादि सत्तोसमेण' इति पाठस्य द्विरावृत्तिः ।

त जहा— तिण्णि पि करणाणि काऊण सम्मच्च पडिवण्णजीयाणं ओवसमिओ भावो, दंसणमोहणीयस्स तत्थुटयाभावा । खरिदढसणमोहणीयाणं सम्मादिट्ठीणं खइयो, पडिवक्खकम्मक्खएणुप्पण्णत्तादो । इदरेसिं सम्मादिट्ठीणं खओउसमिओ, पडिवक्खकम्मोदएण सह लद्धप्पमरूत्तादो । मिच्छत्त-सम्माभिच्छत्ताणं सव्वधादिफइयाणमुदय-क्खएण तेसिं चेत्त सतोउसमेण अणुदओउसमेण वा सम्मत्तदेसधादिफइयाणमुदएण सम्मादिट्ठी उपपज्जदि ति तिस्से खओउसमियच्च केइ भणति, तण्ण घडदे, पिउचार-दसणादो, अहप्पमंगादो वा ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ १४ ॥

संजमधादीणं कम्माणमुदएण असजमो होदि, तदो असजदो ति ओदइओ भावो । एदेण अंतदीएण सुत्तेण अइकंतसव्वगुणट्ठाणेषु ओदइयमसंजदत्तमात्थि ति भणिदं होदि ।

एव पढमाए पुढवीए णेरइयाणं ॥ १५ ॥

कूदो ? मिच्छादिट्ठिं ति ओदइओ, सासणसम्मादिट्ठिं ति पारिणामिओ, सम्मा-मिच्छादिट्ठिं ति खओउसमिओ, असजदसम्मादिट्ठिं ति उवसमिओ खइओ खओव-

जसे—अथ करण आदि तीनों ही करणोंको करके सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके औपशमिक भाव होता है, क्योंकि, बहापर दर्शनमोहनीयकर्मके उदयका अभाव है । दर्शनमोहनीयकर्मके क्षयण करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवोंके क्षायिकभाव होता है, क्योंकि, वह अपने प्रतिपक्षी कर्मके क्षयसे उत्पन्न होता है । अन्य सम्यग्दृष्टि जीवोंके क्षायोपशमिकभाव होता है, क्योंकि, प्रतिपक्षी कर्मके उदयके साथ उसके आत्मस्वरूपकी प्राप्ति होती है । मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे, उन्हींके सदनस्थारूप उपशमसे, अथवा अनुदयरूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रकृतिके देशघाती स्पर्धकोंके उदयसे सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होती है, इसलिए उसके भी क्षायोपशमिकता कितने ही आचार्य कहते हैं । किन्तु वह घटित नहीं होती है, क्योंकि, वैसा माननेपर व्यभिचार देखा जाता है, अथवा अतिप्रसंग दोष आता है ।

किन्तु नारकी असयतसम्यग्दृष्टिः असयतत्व औदयिक भावसे है ॥ १४ ॥

चूँकि, असयमभाव सयमको घात करनेवाले कर्मोंके उदयसे होता है, इसलिए 'असयत' यह औदयिकभाव है । इस अन्तर्दीपक सूत्रसे अतिक्रान्त सर्व गुणस्थानोंमें असयतपना औदयिक है, यह सूचित किया गया है ।

इस प्रकार प्रथम पृथिवीमें नारकियोंके सर्व गुणस्थानोंसम्यन्धी भाव होते हैं ॥ १५ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि यह औदयिक भाव है, सासादनसम्यग्दृष्टि यह पारिणामिकभाव है, सम्यग्मिथ्यादृष्टि यह क्षायोपशमिकभाव है और असयतसम्यग्दृष्टि यह

सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो ॥ १२ ॥

कुटो ? सम्मामिच्छुट्टए सते वि सम्मद्दसणेगदेसमुत्तमा । सम्मामिच्छत्तभाव पत्तजच्चतरे असमीभागो णत्थि त्ति ण तत्थ सम्मद्दसणस्स एगदेम इदि चे, हेतु णाम अमेत्थिक्खए जच्चतरत्त । भेदे पुण निक्खित्ते सम्मद्दसणभागो अत्थि चेव, अण्णहा जच्चतरत्तविरोहा । ण च सम्मामिच्छत्तम्म सच्चघाट्ठत्तमेर सते विरुज्झइ, पत्तजच्चतर सम्मद्दसणमाभावदो तस्स मच्चघाट्ठत्तविरोहा । मिच्छत्तमच्चघाट्ठद्दयाण उदयस्सएण तेमिं चेव सतोउसमेण सम्मत्तम्म देमघादिक्खयाणमुदयक्खएण तेसिं चेव सतोवममेण अणुदओरसमेण वा सम्मामिच्छत्तमच्चघादिक्खयाणमुदएण सम्मामिच्छत्त होदि त्ति तस्स खओरसमियत्त केइ भणत्ति, तप्पण घड्ठदे । कुटो ? सच्चहिचारित्तादो । विउचारो पुव्व परुरिदो त्ति णेह परुरिज्जडे ।

असजदसम्मादिट्ठि त्ति को भावो, उवसमिओ वा, खइओ वा, खओवसमिओ वा भावो ॥ १३ ॥

नारकी सम्यग्मिध्यादृष्टि यह कौनसा भाव है ? क्षायोपशमिक भाव है ॥ १२ ॥
क्योंकि, सम्यग्मिध्यात्वकर्मके उदय होनेपर भी सम्यग्दर्शनका एक देश पाया जाता है ।

शंका—जात्यन्तरत्व (भिन्न जातीयता) को प्राप्त सम्यग्मिध्यात्वभावमें अग्राही (अययव अघयवी) भाव नहीं है, इसलिए उसमें सम्यग्दर्शनका एक देश नहीं है ?

समाधान—अभेदकी नियक्षामें सम्यग्मिध्यात्वके भिन्नजातीयता भले ही रही आवे, किन्तु भेदकी नियक्षा करनेपर उसमें सम्यग्दर्शनका एक भाग (अंश) है ही । यदि ऐसा न माना जाय, तो उसमें जात्यन्तरत्वमें माननेमें विरोध आता है । और, ऐसा माननेपर सम्यग्मिध्यात्वके सवघातिपना भी विरोधको प्राप्त नहीं होता है, क्योंकि, सम्यग्मिध्यात्वमें भिन्नजातीयता प्राप्त होनेपर सम्यग्दर्शनके एक देशका अभाव है, इस लिए उसके सवघातिपना माननेमें कोई विरोध नहीं आता ।

कितने ही आचार्य, मिध्यात्वप्रवृत्तिके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयमें, उन्हींके सदयस्वरूप उपशमसे, तथा सम्यक्त्वप्रवृत्तिके देशघाती स्पर्धकोंके उदयक्षयसे और उन्हींके सदयस्वरूप उपशम, अथवा अनुदयरूप उपशमसे, ओर सम्यग्मिध्यात्वके सर्व घाती स्पर्धकोंके उदयसे सम्यग्मिध्यात्वभाव होता है, इसलिए उसके क्षायोपशमिकता कहते हैं । किन्तु उनका यह कथन घटित नहीं होता है, क्योंकि, उक्त लक्षण सव्यभिचारी है । व्यभिचार पहल प्ररूपण किया जा चुका है, (देखो पृ १९९) इसलिए यहाँ नहीं कहते हैं ।

नारकी असयतमस्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी है, क्षायिक भाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ १३ ॥

मोहणीयाययस्स देसघादिलम्पणस्स उदयादो उप्पण्णसम्मादिट्ठिभाओ एओउसमिओ । वेदगसम्मत्तफइयाण खयसण्णा, सम्मत्तपडिउधणसत्तीए तत्थाभाओ । मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणमुदयाभाओ उउसमो । तेहि दोहि उप्पण्णत्तादो सम्माडिट्ठिभाओ एइओव-समिओ । एइओ भाओ किण्णोउलम्भदे ? ण, गिट्ठियादिसु पुट्ठीसु सइयमम्मादिट्ठीण-मुप्पत्तीए अभाओ ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ १८ ॥

सम्मादिट्ठित्त दुभाउसण्णिठ मोच्चा अमंजदभाओउगमत्थ पुच्छिउदसिस्ससदेह-

विशेषार्थ—गति, जाति जादि पिंड प्रकृतियोंमेंसे जिस किमी विवक्षित एक प्रकृतिके उदय आने पर अनुदय प्राप्त होय प्रकृतियोंका जो उन्ही प्रकृतिमें सन्निमण होकर उदय जाता है, उसे स्तिपुक्सक्रमण कहते हैं। जैसे—एकेन्द्रिय जीवोंके उदय प्राप्त एकेन्द्रिय जातिनामकर्ममें अनुदय प्राप्त हीन्द्रिय जाति आदिका सन्निमण होकर उदयमें आता। गति नामकर्म भी पिंड प्रकृति है। उसके चारों भेदोंमेंसे किसी एकके उदय होने पर अनुदय प्राप्त होय तीनों गतियोंका स्तिपुक्सक्रमणके द्वारा सन्निमण होकर विपाक होता है। प्रकृतम यही गति देवगतिको लक्ष्यमें रखकर कही गई है कि देवगति नामकर्मके उदयकालमें होय तीनों गतियोंका स्तिपुक्सक्रमणके द्वारा उदय पाया जाता है।

दर्शनमोहनीयकर्मकी अवयवस्वरूप और देशघाती लक्षणवाली वेदकसम्यक्स्य प्रकृतिके उदयान उत्पन्न होनेवाला सम्यग्दृष्टिभाव क्षायोपशमिक कहलाता है। वेदकसम्यक्स्यप्रकृतिके स्पर्धकोंकी क्षय सक्षा है, क्योंकि, उसमें सम्यग्दर्शनके प्रतिघन्धनकी शक्तिका अभाव है। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके उदयाभावको उपशम कहते हैं। इस प्रकार उपर्युक्त क्षय और उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न होनेसे सम्यग्दृष्टिभाव क्षायोपशमिक कहलाता है।

शका—यहा क्षायिक भाव क्यों नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, द्वितीयादि पृथिवियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवाकी उत्पत्तिका अभाव है।

किन्तु उक्त नारकी असंयतसम्यग्दृष्टियोंका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥ १८ ॥

द्वितीयादि पृथिवियोंके सम्यग्दृष्टिप्रको आपशमिक और क्षायोपशमिक, इन दो भावोंसे संयुक्त सुन कर चहा असंयतभावके परिशानार्थ प्रश्न करनेवाले शिष्यके

ममिओ ना भावो, सजमघादीण कम्माणमुदएण अमजदो चि इन्चेटेहि गिरजोपादा
निसेसाभावा ।

विदियाए जाव सत्तमीए पुढवीए णेरइएसु मिच्छाडिट्ठि सासण
सम्मादिट्ठि सम्मामिच्छाडिट्ठिणमोघ' ॥ १६ ॥

सुगममे' ।

असजदसम्मादिट्ठि चि को भावो, उवसमिओ वा सओव
समिओ वा' भावो' ॥ १७ ॥

त जहा— दसणमोहणीयस्स उअममेण उदयाभाअलक्षणेण जेणुप्पज्जइ उवसम
सम्मादिट्ठि तेण सा ओअममिया । जटि उदयाभाओ मि उअसमो उअचइ, तो देअच मि
ओअसमिय होअ, तिण्ह गर्अणमुदयाभावेण उप्पज्जमाणत्तादो ? ण, तिण्ह गर्अण त्रियउक्क-
सकमेण' उदयसुअलभा, देअगणामाए उदओअलभादो वा । वेदगमम्मत्तस्म दसण

ओपशमिअभाव भी है, क्षायिअभाव भी है आर क्षायोपशमिकभाव भी है, तथा सयम
घाती यमोंके उदयसे असयत है । इस प्रकार नारकसामान्यकी भावभरूपणासे कोई
विशेषता नहीं है ।

द्वितीय पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक नारकोंमें मिथ्यादृष्टि, सामान
सम्यग्दृष्टि और सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंके भाव ओघके समान हैं ॥ १६ ॥

यह स्वर सुगम है ।

उक्त नारकोंमें अमयतमस्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी
है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ १७ ॥

अनि, दर्शनमोहनीयके उदयाभावलक्षणवाले उपशमने द्वारा उपशमसम्यग्दृष्टि
उत्पन्न होती है, इसलिए यह औपशमिक है ।

शुद्धा—यदि उदयाभावको भी उपशम कहते ह तो दूधपना भी आपशमिक
होगा, क्योंकि, वह दोष तीनों गतियोंके उदयाभावसे उत्पन्न होता है ?

समाधान—नहा, क्योंकि, वहापर तीनों गतियोंका स्तिबुक्समन्मणके द्वारा उदय
पाया जाता है, अथवा देवगतिनामन्मका उदय पाया जाता है इसलिए देवपयायका
औपशमिक नहीं रहा जा सनना ।

१ द्वितीयादिषा सत्तया मिथ्यादृष्टिसामानसम्यग्दृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिनां सामान्यवत् । स नि १, ६

२ प्रद्वि वा' इति पाठो अस्ति ।

३ अमयतमस्यग्दृष्टौपशमिको वा क्षायोपशमिक वा भाव । स सि १, ८

४ निपगद्वे जा उदयसयता तीए अश्वदयमयाओ । सकामिउण वयइ ज एसो विडुत्तकानो ।

मोहणीयाप्रयत्नस्म देमवादिनस्त्रणस्म उदयादो उप्पणसम्मादिट्ठिमाणो सओनममिओ । वेदगसम्मतफहयाणं सुयसण्णा, सम्मतपडिन्वणसत्तीए तत्थाभाया । मिच्छत्त-सम्मा-मिच्छत्ताणमुदयाभायो उरसमो । तेहि दोहि उप्पणत्तादो सम्माड्ठिमाणो सडओन-समिओ । सडओ भायो किणोउलब्भटे ? ण, पिट्ठियादिसु पुट्ठीसु सडयसम्मादिट्ठीण-मुप्पत्तीए अभाया ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ १८ ॥

सम्मादिट्ठित्त दुभासण्णिदं सोच्चा असजदभायागमत्थं पुच्छिदसिम्पसदेह-

निशेपार्थ—गति, जाति जादि पिंड प्रकृतियोंमेंसे जिस किसी विवक्षित एक प्रकृतिके उदय आने पर अनुदय प्राप्त शेष प्रकृतियोंका जो उसी प्रकृतिमें सक्रमण होकर उदय जाता है, उसे स्तिपुक्कसक्रमण कहते हैं। जैसे—एकेंद्रिय जीवोंके उदय प्राप्त एकेंद्रिय जातिनामकर्ममें अनुदय प्राप्त द्वीन्द्रिय जाति आटिका सक्रमण होकर उदयमें आना। गति नामकर्म भी पिंड प्रकृति है। उसके चारों भेदोंमेंसे किसी एकके उदय होने पर अनुदय प्राप्त शेष तीनों गतियोंका स्तिपुक्कसक्रमणके द्वारा सक्रमण होकर निपाक होता है। प्रकृतमें यही वात देवगतिको लक्ष्यमें रखकर कही गई है कि देवगति नाम कर्मसे उदयकालमें शेष तीनों गतियोंका स्तिपुक्कसक्रमणके द्वारा उदय पाया जाता है।

दर्शनमोहनीयकर्मकी अग्रवस्त्ररूप ओर देशघाती लक्षणवाली वेदकसम्यक्त्व प्रकृतिसे उदयने उत्पन्न होनेवाला सम्यग्दृष्टिभाज क्षायोपशमिक कहलाता है। वेदक सम्यक्त्वप्रकृतिके स्पर्धकोंकी क्षय सप्ता है, क्योंकि, उसमें सम्यग्दर्शनके प्रतिबन्धनकी शक्तिका अभाव है। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों प्रकृतियोंके उदयाभावको उपशम कहते हैं। इस प्रकार उपयुक्त क्षय और उपशम, इन दोनोंके द्वारा उत्पन्न होनेसे सम्यग्दृष्टिभाज क्षायोपशमिक कहलाता है।

शंका—यहा क्षायिक भाज क्या नहीं पाया जाता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, द्वितीयादि पृथिवियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी उत्पत्तिका अभाव है।

मिन्तु उक्त नारकी असंयतमभ्यग्दृष्टियोंका अमयतत्व औदयिक भाजसे है ॥ १८ ॥

द्वितीयादि पृथिवियोंके सम्यग्दृष्टित्वको ओपशमिक और क्षायोपशमिक, इन दो भावोंसे संयुक्त सुन कर वहा असंयतभावके परिज्ञानार्थ प्रश्न करनेवाले शिष्यके

विणामणद्धमागदमिदं सुत्त । संजमघादिच रिच्चमोहणीयकम्मोदयममुप्पण्णत्तादो अमंजद
भावो ओदइओ । अदीदगुणद्वानेसु असजदमागस्स जत्विच्च एदेण सुत्तेण परविद ।

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख-पचिदियतिरिक्ख पंचिंदियपज्जत्त पंचिं
दियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजदासंजदाण
मोघ' ॥ १९ ॥

बुद्धो ? मिच्छादिट्ठि चि ओदइओ, सासणसम्मादिट्ठि चि पारिणामिओ, सम्मा-
मिच्छादिट्ठि चि सजोमसमिओ, सम्मादिट्ठि चि ओमसमिओ खइओ खओममिआ
या, ओदइएण भाणेण पुणो असजदो, सजदामजदो चि खओमसमिओ भारो इच्छेदीहि
जोघादो चउव्विहतिरिक्खण भेदाभाया । पचिदियतिरिक्खजोणिणीसु भेदपदुप्पायणद्ध
सुत्तरसुत्त भणदि-

णवरि विसेसो, पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु असंजदसम्मादिट्ठि
ति को भावो, ओवसमिओ वा खओवसमिओ वा भावो ॥ २० ॥

सदेहको विनाश करनेके लिए यह सूत्र आया है । द्वितीयादि पृथिवीगत असयतसम्यग्
गृहि नारवियोंका असयतभाव सयमघाती चारित्र्यमोहनीयकर्मके उदयसे उत्पन्न होनेके
कारण औद्भयिक है । तथा, इस सूत्रके द्वारा अतीत गुणस्थानोंमें असयतभावके
अस्तित्वका निरूपण किया गया है ।

तिर्य्यचगतिमें तिर्य्यच, पचेन्द्रियतिर्य्यच, पचेन्द्रियतिर्य्यचपर्याप्त और पचेन्द्रिय
तिर्य्यच योनिमतियोंमें मिथ्यादृष्टिमें लेकर सयतासयत गुणस्थान तक भाव औष्व
समान है ॥ १९ ॥

क्योंकि, मिथ्यादृष्टि यह औद्भयिकभाव है, सासादनसम्यग्गृहि यह पारिणामिक
भाव है, सम्यग्मिथ्यादृष्टि यह क्षायोपशमिकभाव है, सम्यग्गृहि यह ओपशमिक, भायिक
और क्षायापशमिक भाव है, तथा औद्भयिकभावकी अपेक्षा यह असयत है, सयतासयत
यह क्षायोपशमिक भाव है । इस प्रकार ओघसे चारों प्रकारके तिर्य्यचोंकी भावग्रहणामें
कोई भेद नहीं है ।

अब पचान्द्रियतिर्य्यच योनिमतियोंमें भेद प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र
कहते हैं—

विशेष बात यह है कि पचेन्द्रियतिर्य्यच योनिमतियोंमें असयतसम्यग्गृहि यह
फोनसा भाव है ? औपशमिक भाव भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ २० ॥

कुदो ? उसम-वेदयसम्मादिद्वीणं चेय तत्थ संभरादो । खइओ भागो किण्ण तत्थ संभरइ ? खइयमम्मादिद्वीणं बद्धाउआण तथीरेदएसु उप्पत्तीए अभावा, मणुसगह-वदिरित्तेसगईसु दसणमोहणीयक्खण्णाए अभावादो च ।

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ २१ ॥

सुगममेदं ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त मणुसिणीसु मिच्छादिद्विप्पहुडि जाव अजोगिकेवालि त्ति ओघं ॥ २२ ॥

तिरिहमणुससयलगुणद्वानाण ओघसयलगुणद्वानेहिंतो भेदाभावा । मणुसअपज्जत्त-तिरिक्खअपज्जत्तमिच्छादिद्वीणं सुत्ते भागो किण्ण परूविदो ? ण, ओघपरूवणादो चेय तम्भानागमादो पुध ण परूविदो ।

क्योंकि, पचेन्द्रियतियच्च योनिमतियोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि और क्षायोपशमिक-सम्यग्दृष्टि जीवोंका ही पाया जाना सम्भव है ।

शंका — उनमें क्षायिकभाव क्यों नहीं सम्भव है ?

समाधान — क्योंकि, उद्वायुष्क क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंकी लीचेदियोंमें उत्पत्ति नहीं होती है, तथा मनुष्यगतिके अतिरिक्त शेष गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका अभाव है, इसलिए पचेन्द्रियतियच्च योनिमतियोंमें क्षायिकभाव नहीं पाया जाता ।

किन्तु तिर्यंच असयतसम्यग्दृष्टियोंका असयतत्व औदयिकभारसे है ॥ २१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक मात्र ओघके समान है ॥ २२ ॥

क्योंकि, तीनों प्रकारके मनुष्योंसम्बन्धी समस्त गुणस्थानोंकी भावप्ररूपणामें ओघके सकल गुणस्थानासे कोई भेद नहीं है ।

शंका — लब्ध्यपर्याप्तक मनुष्य और लब्ध्यपर्याप्तक तियच्च मिथ्यादृष्टि जीवोंके भावोंका सूत्रमें प्ररूपण क्यों नहीं किया गया ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, ओघसम्बन्धी भावप्ररूपणासे ही उनके भावोंका परि-
ज्ञान हो जाता है, इसलिए उनके भावोंका सूत्रमें पृथक् निरूपण नहीं किया गया ।

देवगदीए देवेसु मिच्छादिट्ठिपहुडि जाव असजदसम्मादिट्ठि
ति ओघं ॥ २३ ॥

कुदो ? मिच्छादिट्ठीणमोदएण, सामणाण पारिणामिण, मम्मामिच्छादिट्ठीण
खओरसमिण, असजदसम्मादिट्ठीण जोरममिय खइय खओरसमिणहि भोएहि जोघ
मिच्छादिट्ठि सामणसम्मादिट्ठि-मम्मामिच्छादिट्ठि असजदसम्मादिट्ठीहि साधम्मउलभा ।

भवणवासिय वाणवेतर-जोदिसियदेवा देवीओ सोधम्मीसाणकण
वासियदेवीओ च मिच्छादिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी
ओघं ॥ २४ ॥

कुदो ? एदमि सुउत्तगुणह्वाणाण सच्चपयारेण ओघादो भेदाभावा ।

असजदसम्मादिट्ठि ति को भावो, उवसमिओ वा खओवसमिओ
वा भावो ॥ २५ ॥

कुदो ? तत्थ उरमम-वेदगमम्मत्ताण दोण्ह चेय सभरादो । खइओ भारो एत्थ

देवगतिम देवोंमें मिध्यादृष्टिसे लेकर असयतमस्यगृष्टि तरु भाव ओघके
समान है ॥ २३ ॥

क्योंकि, देवमिध्यादृष्टियोंकी औदयिकभावसे, देवसासादनसम्यगृष्टियोंकी
पारिणामिरुभावसे, देवसम्यग्मिध्यादृष्टियोंकी क्षायोपशमिरुभावसे आर देव तमयत
सम्यगृष्टियोंकी औपशमिक, क्षायिक तथा क्षायोपशमिरु भावोंकी अपेक्षा जोघ मिध्या
दृष्टि, सासादनसम्यगृष्टि, सम्यग्मिध्यादृष्टि ओर असयतसम्यगृष्टि जीनोंके भावोंके
साथ समानता पाए जाती है ।

भवनरामी, धानव्यन्तर और ज्योतिष्कर देव एव देनिया, तथा सौधर्म ईशान
कल्परामी देनिया, इनके मिध्यादृष्टि, सामादनसम्यगृष्टि और सम्यग्मिध्यादृष्टि
ये भाव ओघके समान है ॥ २४ ॥

क्योंकि, इन सूत्रोक्त गुणस्थानोंका सर्व प्रकार ओघसे कोई भेद नहीं है ।

असयतसम्यगृष्टि उक्त देव और देनियोंके कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव
भी है और क्षायोपशमिक भाव भी है ॥ २५ ॥

क्योंकि, उनमें उपशमसम्यक्त्व आर क्षायोपशमिरुसम्यक्त्व, इन दोनोंका ही
पाया जाना सम्भव है ।

१ देवगदी देवानां मिध्यादृष्ट्यावर्तयतसम्यग्मिध्यादृष्ट्यान्तानां सामायन् । स वि १, ८

क्रिष्ण परुषिदो ? ण, भण्णयासिय-णणोत्तर-जोदिसिय-विदियादिछपुढणिरइय सव्व-
विगल्लिदिय-लद्धिअपज्जत्तिथीरेदेसु सम्मादिट्ठीणमुत्तरादाभाया, मणुसगइवदिरित्तणगईसु
दसणमोहणीयस्म सत्तणाभाया च ।

ओदइएण भावेण पुणो असजदो ॥ २६ ॥

सुगममेद ।

सोधम्मीसाणप्पहुडि जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेसु मिच्छा-
दिट्ठिप्पहुडि जाव असजदसम्मादिट्ठि ति ओघ ॥ २७ ॥

कुदो ? एत्थत्तणगुणट्ठाणाण ओघचट्ठगुणट्ठाणेहिंतो अप्पिदभायेहि भेदाभाया ।

अणुदिसादि जाव सव्वट्ठसिद्धिविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मा-
दिट्ठि ति को भावो, ओवसमिओ वा खइओ वा खओवसमिओ वा
भावो ॥ २८ ॥

शुद्धा—उक्त भवनत्रिक आदि देव और देवियोंमें क्षायिकभाव क्यों नहीं
धतलाया ?

समाधान — नहीं, क्योंकि, भवनत्रासी, वान-यन्तर, ज्योतिष्क देव, द्वितीयादि
छह पृथिवियोंके नारकी, सर्व विरुलेन्द्रिय, सर्व लब्धपर्याप्तक और स्त्रीदेवियोंमें सम्य
गदृष्टि जीवाकी उत्पत्ति नहीं होती है, तथा मनुष्यगतिके अतिरिक्त अन्य गतियोंमें दर्शन
मोहनीयस्मकी क्षपणाका अभाव है, इसलिए उक्त भवनत्रिक आदि देव और देवियोंमें
क्षायिकभाव नहीं धतलाया गया ।

किन्तु उक्त असंयतसम्यग्दृष्टि देव और देवियोंका असंयतत्व औदयिक भावसे
है ॥ २६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मौघर्म-ईशानरूपसे लेकर नव त्रैलोक्य पर्यंत विमानत्रासी देवोंमें मिथ्यादृष्टिसे
लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक भाव ओघके समान है ॥ २७ ॥

क्योंकि, सोधममिद्धि विमानवासी चारों गुणस्थानवर्ती देवोंके ओघसम्यन्धी
चारों गुणस्थानोंकी अपेक्षा त्रिवर्धित भावोंके साथ कोई भेद नहीं है ।

अनुदिश आदिसे लेकर मर्यादसिद्धि तक विमानत्रासी देवोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि
यह कौनमा भाव है ? औपशमिक भी है, क्षायिक भी है और क्षायोपशमिक भाव
भी है ॥ २८ ॥

लिम्हि जोगुवलभा । णो अघादिकम्मोदयजणिदो नि, सते पि अघादिकम्मोदए अजोगिम्हि जोगाणुवलभा । ण सरीरणामकम्मोदयजणिदो नि, पोग्गलनिवाडयाण जीउपरिफण्हउत्त विरोहा । कम्मइयसरीर ण पोग्गलनिवाई, तदो पोग्गलाण ण्ण रम गध फाम मठाणा गमणादीणमणुवलभा । तदुप्पाडदो जोगो होदु चे ण, कम्मइयसरीर पि पोग्गलनिवाई चेय, सच्चकम्माणमामयत्तादो । कम्मइओदयणिण्हसमए चेय जोगणिणासदसणादो कम्मइयसरीरजणिदो जोगो चे ण, अघादिकम्मोदयणिणासाणतर निणस्सतभनियत्तस्स पारिणामियस्स ओदइयत्तप्पसंगा । तदो मिद्ध जोगस्स पाणिणामियत्त । अघना ओदइओ जोगो, सरीरणामकम्मोदयणिणासाणतर जोगणिणामुवलभा । ण च भनियत्तेण पिउत्तचरो, कम्मसअधरोहिणो तस्स कम्मजणिटत्तविरोहा । सेस सुगम ।

एव णाणमग्गणा समत्ता ।

क्योंकि, घातिकर्मोदयके नष्ट होने पर भी सयोगिकेचलीमें योगका सद्भाव पाया जाता है । न योग अघातिकर्मोदय जनित भी है, क्योंकि, अघातिकर्मोदयके रहने पर भी अयोगिकेचलीमें योग नहीं पाया जाता । योग शरीरनामकर्मोदय जनित भी नहीं है, क्योंकि, पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंके जीव परिस्पदनका कारण होनेमें विरोध है ।

शका—कर्मणशरीर पुद्गलविपाकी नहीं है, क्योंकि, उससे पुद्गलोंके घण, रस, गन्ध, स्पर्श और सस्थान आदिका आगमन आदि नहीं पाया जाता है । इसलिए योगका कर्मणशरीरसे उत्पन्न होनेवाला मान लेना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सर्व कर्मोंका आधय होनेसे कर्मणशरीर भी पुद्गल विपाकी ही है । इसका कारण यह है कि यह सर्व कर्मोंका आधय या आधार है ।

शका—कर्मणशरीरके उदय विनष्ट होनेके समयमें ही योगका विनाश देखा जाता है । इसलिए योग कर्मणशरीर जनित है, ऐसा मानना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यदि ऐसा माना जाय तो अघातिकर्मादयके विनाश होनेके अनन्तर ही विनष्ट होनेवाले पारिणामिक भव्यत्वभावके भी ओदयिकपनेका प्रसंग प्राप्त होगा ।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचनसे योगके पारिणामिकपना सिद्ध हुआ । अथवा, 'योग' यह ओदयिकमात्र है, क्योंकि, शरीरनामकर्मके उदयका विनाश होनेके पश्चात् ही योगका विनाश पाया जाता है । और, ऐसा माननेपर भव्यत्वभावके साथ व्यभिचार भी नहीं आता है, क्योंकि, कर्मसम्यन्धके विरोधी पारिणामिकभावना कर्मसे उत्पन्न माननेमें विरोध आता है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

इस प्रकार ध्यानमार्गणा समाप्त हुई ।

१ निरुपमोगमन्त्यम् । त ए २, ४४ । अन्ते भवमन्त्यम् । किं तत् ? कर्मणम् । इन्द्रियप्रगल्भित्वा कर्मादीनामुपलभ्यमानम् । तदभावात्तिष्ठत्येवम् ।

संजमाणुवादेण संजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव अजोगिकेवली ओघं ॥ ४९ ॥

सुगममेदं ।

सामाइयछेदोवद्वावणसुद्धिसंजदेसु पमत्तसंजदप्पहुडि जाव आणियट्ठि ति ओघं ॥ ५० ॥

एदं पि सुगम ।

परिहारसुद्धिसंजदेसु पमत्त-अप्पमत्तसंजदा ओघं ॥ ५१ ॥

हुदो ? राओरसमियं भावं पडि निसेसाभावा । पमत्तापमत्तसंजदेसु अण्णे विभावा सति, एत्थ ते क्रिण्ण परूषिदा ? ण, तेसिं पमत्तापमत्तसंजमत्ताभावा । पमत्तापमत्तमज्जदाणं भावेसु पुच्छिदेसु ण हि सम्मत्तादिभावाण परूषणा णाओरवण्णोत्ति ।

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइया उवसमा खवा ओघं ॥ ५२ ॥

सयममार्गणाके अनुवादेसे संयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अयोगिकेवली गुणस्थान तक भाव ओघके समान है ॥ ४९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयतोंमें प्रमत्तसंयतसे लेकर अनिशुद्धिकरण गुणस्थान तक भाव ओघके समान है ॥ ५० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

परिहारशुद्धिसंयतोंमें प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तमयत ये भाव ओघके समान हैं ॥ ५१ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिक भावके प्रति दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है ।

शंका—प्रमत्त और अप्रमत्त संयत जीवोंमें अन्य भाव भी होते हैं, यहांपर वे क्यों नहीं कहे ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ये भाव प्रमत्त और अप्रमत्त संयम होनेके कारण नहीं हैं । दूसरी बात यह है कि प्रमत्त और अप्रमत्तसंयतोंके भाव पूछनेपर सम्यक्त्व आदि भावोंकी प्ररूपणा करना न्याय संगत नहीं है ।

सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसंयतोंमें सूक्ष्मसाम्परायिक उपशमक और क्षपक भाव ओघके समान हैं ॥ ५२ ॥

१ सयमावुवादेने सर्वथा संयतानां XXX सामान्यवत् । स सि १, ८

२ प्रतिपु ' णाओरवण्णोत्ति ' इति पाठ ।

उपसामगाणमुत्तमिओ भागो, खवगाण सइओ भागो ति उच्च होदि ।

जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु चहुट्टाणी ओघं ॥ ५३ ॥
सुगममेदं ।

सजदासजदा ओघं ॥ ५४ ॥

एद पि सुगम ।

असंजदेसु मिच्छादिट्ठिण्हुडि जाव असजदसम्मादिट्ठि ति
ओघं ॥ ५५ ॥

सुगममेदं, पुच्छं परुदिचादो ।

एत सजममग्गणा समत्ता ।

दसणाणुवादेण चस्खुदसणि-अचस्खुदसणीसु मिच्छादिट्ठिण्हुडि
जाव सीणकसायवीदरागच्छदुमत्था ति ओघं ॥ ५६ ॥

उपशामकोंके ओपशमिक भाव और क्षयकोंके क्षाथिक भाव होता है, यह सर्व
सूत्रद्वारा कहा गया है ।

यथाप्यातनिहारशुद्धिसयतोमि उपशान्तरूपाय आदि चारों गुणस्थानों में भाव
ओघके समान हैं ॥ ५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सयतासयत भाव ओघके समान है ॥ ५४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

असयतोमि मिध्याद्यष्टिसे लेकर असयतमम्यद्यष्टि गुणस्थान तक भाव ओघ
समान है ॥ ५५ ॥

यह सूत्र सुगम है, क्योंकि, पहले प्ररूपण किया जा चुका है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनियोंमें मिध्याद्यष्टिसे लक्ष्य
धीनरूपायनीत्तरागच्छस्य गुणस्थान तक भाव ओघके समान हैं ॥ ५६ ॥

१ × × सयतासयतानां × × सामायवत् । प वि १, ८

२ × × × असयतानां च सामायवत् । प वि १, ८

३ दर्शनानुवादेन चक्षुदर्शनाचक्षुदर्शनावधिदधनकेन्द्रदधनिनां सामायवत् । प वि १, ८

कुदो ? मिच्छादिट्ठिप्पहुडि सीणकमायपज्जंतसब्बगुणट्ठाणाणं चक्खु-अचक्खु-
दसणनिरहियाणमणुगलभा ।

ओहिदंसणी ओहिणाणिभंगो ॥ ५७ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो ॥ ५८ ॥

एदाणि दो रि'सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ दसणमग्गणा समत्ता ।

लेस्साणुवादेण किण्हलेस्सिय-णीललेस्सिय काउलेस्सिएसु चदु-
ट्ठाणी ओध' ॥ ५९ ॥

चदुण्ह ठाणाण समाहारो चदुट्ठाणी । केण समाहारो ? एगलेस्साए । सेस सुगम ।

तेउलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अप्पमत्त-
संजदा त्ति ओधं ॥ ६० ॥

एदं सुगम ।

फ्योंकि, मिध्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपाय पर्यंत कोई गुणस्थान चक्षुदर्शन और
अचक्षुदर्शनवाले जीवोंसे रहित नहीं पाया जाता है ।

अधिदर्शनी जीवोंके भाव अधिज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥ ५७ ॥

केवलदर्शनी जीवोंके भाव केवलज्ञानियोंके भावोंके समान हैं ॥ ५८ ॥

ये दोनों ही खूब सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

लेइयामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेइया, नीललेइया और कापोतलेइया वालोंमें
आदिके चार गुणस्थानरतीं भाव ओघके समान हैं ॥ ५९ ॥

चार स्थानोंके समाहारको चतु स्थानी कहते हैं ।

शका—चारों गुणस्थानोंका समाहार किम् अपेक्षासे है ?

समाधान—एक लेइयाकी अपेक्षासे है, अर्थात् आदिके चारों गुणस्थानोंमें एकसी
लेइया पाई जाती है ।

शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तेजोलेइया और पद्मलेइया वालोंमें मिध्यादृष्टिसे लेकर अग्रमत्तसंयत गुणस्थान
तक भाव ओघके समान हैं ॥ ६० ॥

यह खूब सुगम है ।

सुक्कलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सजोगिकेवलि ति
ओघं ॥ ६१ ॥
सुगममेद ।

एव लेस्सामगणा समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव अजोगि
केवलि ति ओघं ॥ ६२ ॥

कुदो ? एत्थत्तणगुणद्वानाण ओवगुणद्वानेहिंतो भवियत्त पडि भेदाभावा ।

अभवसिद्धिय ति को भावो, पारिणामिओ भावो ॥ ६३ ॥

कुदो ? कम्माणमुदएण उरसमेण सएण सओरसमेण वा अभवियत्ताणुप्पत्तीदो ।
भवियत्तस्म वि पारिणामिओ चेय भावा, कम्माणमुदय उरमम सय सओरसमेहि भविय
त्ताणुप्पत्तीदो । गुणद्वानस्म भावमभणिय मगगणद्वानभावा परूतस्स कोमिप्पाओ ?

शुद्धलेख्यावालाम मिथ्यादृष्टिसे लेकर सयोगिकेनली गुणस्थान तरु भाव ओघके
समान है ॥ ६१ ॥

यह सत्र सुगम है ।

इस प्रकार लेख्यामागणा समाप्त हुई ।

भन्यमार्तणाके अनुगदसे भव्यसिद्धिकोमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अपयोगिकेनली
गुणस्थान तरु भाव ओघके समान हैं ॥ ६२ ॥

क्योंकि, भव्यमागणान्तरधी गुणस्थानोंका ओघ गुणस्थानोंसे भव्यत्व नामक
पारिणामिकभावके प्रति कोई भेद नहीं है ।

अमव्यसिद्धिक यह कौनसा भाव है ? पारिणामिक भाव है ॥ ६३ ॥

क्योंकि, कर्मोंके उदयसे, उपशमसे, क्षयसे, अथवा क्षयोपशमसे अमव्यत्व भाव
उत्पन्न नहीं होता है । इसी प्रकार भयत्व भी पारिणामिक भाव ही है, क्योंकि, कर्मोंके
उदय, उपशम, क्षय और क्षयोपशमसे भयत्व भाव उत्पन्न नहीं होता ।

शुद्धी— यहापर गुणस्थानके भावको न कह कर मार्गणास्थानसम्बन्धी भावको
प्ररूपण करते हुए आचार्यना क्या अभिप्राय है ?

१ भव्यानुवादेन भव्यानां मिथ्यादृष्ट्यायोग्येवस्थानानां सामान्यत्वं । स ति १, ८

२ अमव्यानां पारिणामिको भाव । स मि १, ८

गुणद्वानुभायो अउत्तो वि णाणिज्जओ । अभनियत्त पुण उदेममोत्तदे, पुव्वमपरु-
पिदमरुत्तादो । तेण मग्गणाभायो उत्तो चि ।

एव भनियमग्गणा सम्मत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिष्टीसु असजदसम्मादिष्टिपहुडि जाव
अजोगिकेवलि ति ओघं ॥ ६४ ॥

सुगममेद ।

खइयसम्मादिष्टीसु असंजदसम्मादिष्टि ति को भावो, खइओ
भावो ॥ ६५ ॥

कुदो ? दसणमोहणीयस्म णिम्मूलस्सएणुप्पणसम्मत्तादो ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ६६ ॥

खइयसम्मादिष्टीसु सम्मत्त खइय चेव होदि ति अणुत्तसिद्धीदो णेदं सुत्तमाढने-
दव्व ? ण एम दोसो । कुदो ? ण ताव खइयसम्मादिष्टी सण्णा खइयस्म सम्मत्तस्म

समाधान—गुणस्थानसम्यग्धी भाव तो बिना कहे भी जाना जाता है । किन्तु
अभिव्यक्त (फोनसा भाव है यह) उपदेशनी अपेक्षा रखता है, क्योंकि, उसके स्वरूपका
पहले प्ररूपण नहीं किया गया है । इसलिए यहापर (गुणस्थानका भाव न कह कर)
मार्गणासम्यग्धी भाव कहा है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादमे सम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टिसे लेकर अयोगि-
केवली गुणस्थान तरु भाव ओघके समान है ॥ ६४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि यह कौनसा भाव है ? क्षायिक भाव
है ॥ ६५ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मने निर्मूल क्षयसे क्षायिकसम्यक्त्व उत्पन्न होता है ।

उक्त जीवोंके क्षायिक सम्यक्त्व होता है ॥ ६६ ॥

शुद्धा—क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता है, यह बात अनुक्त-
सिद्ध है, इसलिए इस सूत्रका आरम्भ नहीं करना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि यह सदा क्षायिक

अथिच गमयदि, तण भक्परादिणामस्स अणुअट्ठस्स वि उल्लभा । ण च अणु सिंवि
 सइयसम्मत्तस्स अथिचमिह चिण्हमत्थि । तदो सइयसम्मादिट्ठिस्स सइय चेय सम्मत
 होदि ति जाणामिद । अर च ण सव्वे सिस्सा उप्पण्णा चेय, णिंतु अउप्पण्णा
 वि अत्थि । तेहि सइयसम्मादिट्ठीण किंभुत्तसमसम्मत्त, किं सइयसम्मत्त, किं वेदगसम्मत्त
 होदि ति पुच्छेदे एदस्स मुत्तस्स अयारो जादो, सइयसम्मादिट्ठीण सइय चेय सम्मत
 होदि, ण सेसदोसम्मत्ताणि ति जाणारण्ह अपुव्वरुणरुपवयाण सइयभाणण सइय
 चरित्तस्सेर दसणमोहरुपवयाण पि सइयभाणण तस्सपधेण वेदयसम्मत्तोदए सते वि
 सइयगम्मत्तस्स अथिचत्तप्पसगे तप्पडिसेहट्ठ वा ।

औदइएण भावेण पुणो असजदो' ॥ ६७ ॥

सुगममेद ।

सजदासजद पमत्त-अप्पमत्तसजदा ति को भावो, खओवसमिओ
 भावो' ॥ ६८ ॥

सम्यन्त्यके अस्तित्वका ज्ञान नहीं कराती है। इसका कारण यह है लोकमें तपन, भास्कर
 भादि अनयथ (अर्थशून्य या रुढ) नाम भी पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कोई
 चिह्न क्षायिकसम्यन्त्यके अस्तित्वका है नहीं। इसलिए क्षायिकसम्यग्दृष्टिके क्षायिक
 सम्यन्त्व ही होता है, यह बात इस सूत्रसे स्थापित की गई है। दूसरी बात यह भी है कि
 सभी शिष्य व्युत्पन्न नहीं होते, किंतु कुछ अयुत्पन्न भी होते हैं। उनके द्वारा क्षायिक
 सम्यग्दृष्टियोंके क्या उपशमसम्यक्त्व है, किंवा क्षायिकसम्यक्त्व है, किंवा वेदकसम्यन्त्व
 होता है, ऐसा पूछने पर क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायिक ही सम्यन्त्व होता है, शेष
 दो सम्यक्त्व नहीं होते हैं, इस बातके जतलानेके लिए, अथवा क्षायिकभाववाले अपूर्व
 करण गुणस्थानवर्ती क्षपकोंके क्षायिक चारित्रिके समान क्षायिकभाववाले भी जीवोंके
 दर्शनमोहनीयका क्षपण करते हुए उसने सम्यग्धसे वेदकसम्यक्त्वप्रवृत्तिके उदय रहने
 पर भी क्षायिकसम्यन्त्यके अस्तित्वका प्रसंग प्राप्त होनेपर उसका प्रतिषेध करनेके लिए
 इस सूत्रका अवतार हुआ है।

किंतु क्षायिकसम्यग्दृष्टिका असयतत्व औदयिक भावसे है ॥ ६७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत यह कौनसा
 भाव है ? क्षायोपशमिक भाव है ॥ ६८ ॥

१ असयतत्वमौदयिकेन भावेन । स वि १, ८

२ सयतासयतप्रमत्ताप्रमत्तसयतानां क्षायोपशमिको भाव । स वि १, ८

हुदो ? चारित्ताग्रणकर्मोदए संते वि जीपसहानचारित्तेगेदेसस्त संजमासजम-
पमत-अप्पमतमंजमस्त आनिग्मानस्सुउलंभा ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ६९ ॥

सुगममेदं ।

चटुण्हमुवसमा ति को भावो, ओवसमिओ भावो ॥ ७० ॥

मोहणीयस्सुउममेणुप्पण्णचगित्तादो, मोहोउसमणहेदुचागित्तममण्णिट्तादो य ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ७१ ॥

पारद्वदसणमोहणीयकसणो रुदकणिज्जो वा उउसममेदं ण चट्ठदि ति जाणा-
वण्हमेदं सुत्त भण्णिं । सेम सुगम ।

चटुण्हं खवा सजोगिकेवली अजोगिकेवलि ति को भावो,
खइओ भावो ॥ ७२ ॥

क्योंकि, चारित्राग्रणकर्मके उद्भूत होने पर भी जीवके स्वभावभूत चारित्रके
एक देशरूप मयमासयम, प्रमत्तसयम और अप्रमत्तसयमका (उक्त जीवोंके क्रमशः)
आविर्भाव पाया जाता है ।

उक्त जीवोंके सम्पग्दर्शन ध्यायिक ही होता है ॥ ६९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अपूर्वरूप आदि चार गुणस्थानोंके ध्यायिकसम्पग्दष्टि उपशामक यह कौनसा
भान है ? औपशमिक भान है ॥ ७० ॥

क्योंकि, उपशान्तकपायके मोहनीयकर्मके उपशमसे उत्पन्न हुआ चारित्र पाया
जानेसे और शेष तीन उपशामकोंके मोहोपशमके कारणभूत चारित्रसे समन्वित होनेसे
औपशमिकभान पाया जाता है ।

ध्यायिकसम्पग्दष्टि चारों उपशामकोंके सम्पग्दर्शन ध्यायिक ही होता है ॥ ७१ ॥

दर्शनमोहनीयकर्मके क्षपणका प्रारम्भ करनेवाला जीव, अथवा दृढवृत्त्येवक
सम्पग्दष्टि जीव, उपशमश्रेणीपर नहीं चढ़ता है, इस बातका ज्ञान करानेने लिए यह सूत्र
ब्रह्मा गया है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

ध्यायिकसम्पग्दष्टि चारों गुणस्थानोंके क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली
यह कौनसा भान है ? ध्यायिक भान है ॥ ७२ ॥

१ ध्यायिक सम्पक्कम् । अ ति १, ८

२ चटुण्हमुवसमानोपशमिको भाव । स ति १, ८

३ ध्यायिक सम्पक्कम् । अ ति १, ८

४ सेवणी सानायकम् । स ति १, ८

कुदो ? मोहणीयस्स खणहेदुअपुब्बसण्णिदचारित्तसमण्णिदत्तादो मोहक्खएणु
प्पण्णचारित्तादो धादिक्खएणुप्पण्णणनकेअललद्धीहिंतो ।

खइयं सम्मत्तं ॥ ७३ ॥

सुगममेद ।

वेदयसम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठि ति को भावो, खओव
समिओ भावो ॥ ७४ ॥

सुगममेदं ।

खओवसमियं सम्मत्तं ॥ ७५ ॥

ओघम्मि असंजदसम्मादिट्ठिस्स तिण्णि भावा सामण्णेण परुविदा, एद सम्मत्त
मोवसमिय खइय खओवसमियं वेत्ति ण परुविद । सपहि सम्मत्तमग्गणाए एद सम्मत्त-
मोवसमिय खइय खओवसमिय वेत्ति एदेहि सुचेहि जाणाविद । सेस सुगम ।

पर्योकि, अपूर्वकरण आदि तीन क्षपकोंका मोहनीयकर्मके क्षपणके कारणभूत
अपूर्वसंज्ञावाले चारित्रसे समचित होनेके कारण, क्षीणकषायवीतरागछद्मस्थके मोहक्षयसे
उत्पन्न हुआ चारित्र होनेके कारण, तथा सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके घातिया
कर्मोंका क्षय हो जानेसे उत्पन्न नव केवललब्धियोंकी अपेक्षा क्षायिक भाव पाया जाता है।

चारों क्षपक, सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीके सम्यग्दर्शन क्षायिक ही होता
है ॥ ७३ ॥

यह स्रु सुगम है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि यह कौनमा भाव है ? क्षायोपशमिक
भाव है ॥ ७४ ॥

यह स्रु सुगम है ।

वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥ ७५ ॥

ओघप्ररूपणामें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवके सामान्यसे तीन भाव कहे हैं, किंतु
उनका यह सम्यग्दर्शन औपशमिक है, या क्षायिक है, किंवा क्षायोपशमिक है, यह प्ररूपण
नहीं किया है। मय सम्यक्त्वमार्गणामें असंयतसम्यग्दृष्टि जीवोंका यह सम्यग्दर्शन
औपशमिकसम्यक्तियोंके औपशमिक होता है, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायिक होता है
और वेदकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायोपशमिक होता है, यह बात इन सूत्रोंसे सूचित की गई
है। शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

१ क्षायोपशमिकसम्यग्दृष्टि असंयतसम्यग्दृष्टे क्षायोपशमिको भाव । स वि १, ८

२ क्षायोपशमिक सम्यक्त्वम् । स वि १, ८

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो ॥ ७६ ॥

अवगयत्यमेदं ।

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदा त्ति को भावो, खओवसमिओ भावो ॥ ७७ ॥

णादट्टमेय ।

खओवसमियं सम्मत्तं ॥ ७८ ॥

कुदो ? दसणमोहोदए सते नि जीउगुणीभूदसइहणस्स उप्पत्तीए उअलंभा ।

उवसमसम्मादिट्टीसु असंजदसम्मादिट्टि त्ति को भावो, उव-समिओ भावो ॥ ७९ ॥

कुदो ? दसणमोहुअसमेणुप्पणसम्मत्तादो ।

उवसामियं सम्मत्तं ॥ ८० ॥

किन्तु वेदक्रमस्यगृष्टिका असंयतत्व औदयिक भावसे है ॥ ७६ ॥

इस सूत्रका अर्थ जाना हुआ है ।

वेदकसम्यगृष्टि सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसंयत यह कौनसा भाव है ? क्षायोपशमिकमान है ॥ ७७ ॥

इस सूत्रका अर्थ ज्ञात है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन क्षायोपशमिक होता है ॥ ७८ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयके (अगभूत सम्यक्त्वप्रवृत्तिके) उदय रहने पर भी जीवके गुणस्वरूप श्रद्धानकी उत्पत्ति पाई जाती है ।

उपशमसम्यगृष्टियोंमें असंयतसम्यगृष्टि यह कौनसा भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ७९ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यगृष्टियोंका सम्यक्त्व दर्शनमोहनीयकर्मके उपशमसे उत्पन्न हुआ है ।

उक्त जीवोंके सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८० ॥

१ असंयत पुनरौदयिकेन भावेन । स सि १, ८

२ सयतासयतप्रमत्ताप्रमत्तसयतानां क्षायोपशमिको भाव । स सि १, ८,

३ क्षायोपशमिक सम्यक्त्वम् । स सि १, ८

४ औपशमिकसम्यगृष्टिषु असंयतसम्यगृष्टेर्तौपशमिको भाव । स सि १, ८

५ औपशमिक सम्यक्त्वम् । स सि १, ८

ओदइएण भावेण पुणो असंजदो' ॥ ८१ ॥

दो मि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजद पमत्त-अण्णमत्तसंजदा त्ति को भावो, सओवसमिओ

भावो' ॥ ८२ ॥

सुगममेद ।

उवसमिय सम्मत्त ॥ ८३ ॥

एद पि सुगम ।

चदुण्हमुवसमा त्ति को भावो, उवसमिओ भावो' ॥ ८४ ॥

उवसमियं सम्मत्त ॥ ८५ ॥

दो मि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी ओघ ॥ ८६ ॥

नित्तु उपशमसम्यग्दृष्टी असयत्तमस्यग्दृष्टि जीरुक्ता असयत्तत्त औदयिक भावसे
है ॥ ८१ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

उपशमसम्यग्दृष्टि सयत्तासयत्त, प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तमयत्त यह कौनसा
भाव है ? धायोपशमिन् भाव है ॥ ८२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त जीरुक्ते सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८३ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

अपूर्णकरण आदि चार गुणस्थानोंके उपशमसम्यग्दृष्टि उपशमिक यह कौनसा
भाव है ? औपशमिक भाव है ॥ ८४ ॥

उक्त जीरुक्ते सम्यग्दर्शन औपशमिक होता है ॥ ८५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

साप्तादनसम्यग्दृष्टि भाव ओघके समान है ॥ ८६ ॥

१ असयत्त पुनरीदधियेन भावेन । स मि १, ८

२ सयत्तामयत्तप्रमत्ताप्रमत्तमयत्ताना धायोपशमिन् भाव । स मि १, ८

३ औपशमिक सम्यक्त्वम् । स मि १, ८

४ चतुष्पादुपशमकानामापरमिन् भाव । स मि १, ८

औपशमिक सम्यक्त्वम् । स मि १, ८ ६ साप्तादनसम्यग्दृष्टे पारिणामिन् भाव । स मि १, ८

सम्मामिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ८७ ॥

मिच्छादिट्ठी ओघं ॥ ८८ ॥

तिणि नि सुत्ताणि अगयत्थाणि ।

एउ सम्मत्तमग्गणा समत्ता ।

सणिगणुवादेण सणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाय-
वीदरागछदुमत्था ति ओघ ॥ ८९ ॥

सुगममेद ।

असणि ति को भावो, ओदइओ भावो ॥ ९० ॥

कुदो ? जोइदियावरणस्म सच्चघादिफट्ठयाणमुदएण असणितुप्पत्तीदो । असणि-
गुणट्ठाणभावो किण्ण परूविदो ? ण, उपदेसमतरेण तदगमादो ।

एउ सणिगमग्गणा समत्ता ।

सम्यग्मिद्यादृष्टि भाव ओघके समान है ॥ ८७ ॥

मिद्यादृष्टि भाव ओघके समान है ॥ ८८ ॥

इन तीनों ही सूत्रोंका अर्थ ज्ञात है ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

सङ्गिमार्गणाके अनुवादसे संज्ञियोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीणकपायत्रीतराग-
छद्यस्य तरु भाव ओघके समान है ॥ ८९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

असञ्जी यह कौनसा भाव है ? औदयिक भाव है ॥ ९० ॥

क्योंकि, नोइन्द्रियावरणकर्मके सर्वघाती स्पर्धकोंके उदयसे असङ्गित्व भाव
उत्पन्न होता है ।

शुद्धा—यहापर असङ्गी जीवोंके गुणस्थानसम्बन्धी भावको क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, उपदेशके बिना ही उसका ज्ञान हो जाता है ।

इस प्रकार सङ्गिमार्गणा समाप्त हुई ।

१ सम्यग्मिद्यादृष्टे क्षायोपशमितो भाव । स सि १, ८

२ मिथ्यादृष्टीदित्तो भाव । स सि १, ८ ३ सप्पासुवादेन सत्तिनां सामान्यवत् । ण सि १, ८

४ असङ्गितामौदयिको भाव । ण सि १, ८ ५ तदुभयव्यपदेशादितानां सामान्यवत् । स सि १, ८



सिरि-भगवत-पुष्पदन्त-भूदबलि-पणीदो

छक्खंडागमो

सिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय घबला-टीका-समणिदो

तस्स

पढमखडे जीवट्टाणे

अप्पावहुगाणुगमो

केरलणाणुओइयलोयालोए जिणे णमसिचा ।

अप्पनहुआणिओअ जहोएएस परुमेओ ॥

अप्पावहुआणुगमेण दुविहो णिदेसो, ओघेण आदेसेण य' ॥१॥

तत्थ णाम-डुण्णा-दब्ब-भाउमेएण अप्पावहुअ चउव्विहं । अप्पावहुअसदो णामप्पा-
वहुअं । एदम्हादो एदस्स बहुत्तमप्पत्त वा एदमिदि एयत्तज्झारोणेण इविद ठणप्पा-
वहुगं । दब्बप्पावहुअ दुमिहं आगम-णोआगममेएण । अप्पावहुअपाहुडजाणओ अणुवजुत्तो

केवलज्ञानके द्वारा लोक और अलोकको प्रकाशित करनेवाले श्री जिनेन्द्र देवोंको
नमस्कार करके जिस प्रकारसे उपदेश प्राप्त हुआ है, उसके अनुसार अल्पग्रहत्व अनुयोग
द्वाराका प्ररूपण करते हैं ॥

अल्पग्रहत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है, ओघनिर्देश और आदेश-
निर्देश ॥ १ ॥

नाम, स्थापना द्रव्य और भावके भेदसे अल्पग्रहत्व चार प्रकारका है । उनमेंसे
अल्पग्रहत्व शब्द नामअल्पग्रहत्व है । यह इससे गृह्य है, अथवा यह इससे अल्प है,
इस प्रकार एकत्वके अध्यारोपसे स्थापना करना स्थापनाअल्पग्रहत्व है । द्रव्यअल्प-
ग्रहत्व आगम और नो-आगमके भेदसे दो प्रकारका है । जो अल्पग्रहत्व विषयक प्राभृतको
जाननेवाला है, परन्तु वर्तमानमें उसके उपयोगसे रहित है उसे आगमद्रव्य अल्पग्रहत्व

आगमद्रव्यत्वात् । नोआगमद्रव्यत्वात् त्विह जाणुअसरीर भनिय-तच्चदिरित्तमेण ।
तत्थ जाणुअसरीर भनिय वट्टमाण समुज्झादमिदि त्विहमनि अगपत्थ । भनिय भविम
काले अप्पाअहुअपाहुडजाणओ । तच्चदिरित्तअप्पाअहुअ त्विह मचित्तमचित्त मिम्ममि ।
जीवद्रव्यत्वात् सचित्त । मेसदच्चप्पाअहुअमचित्त । टोण्ह पि अप्पाअहुअ मिम्म ।
भाअप्पाअहुअ त्विह आगम-नोआगममेण । अप्पाअहुअपाहुडजाणओ उअजुत्तो आगम
भाअप्पाअहुअ । णाण दमणाणुभाग-जोगादिनिमय नोआगमभाअप्पाअहुअ ।

एतेमु अप्पाअहुअसु णेण पयद ? सचित्तद्रव्यत्वात् णेण पयद । णिम्पाअहुअ ?
सखाधम्मो, एदम्हादो एद तिगुण चदुगुणमिदि तुद्धिगंज्जो । कम्मप्पाअहुअ ? जीव
द्वस्स, धम्मिअदिरित्तसखाधम्माणुवलमा । णेणप्पाअहुअ ? पारिणामिण भाअण ।

कहते हैं। नोआगमद्रव्यअल्पवृत्त्य भायकशरीर, भायी और तद्रव्यतिरिक्त भेदसे तीन
प्रकारका है। उनमेंसे भायी, वर्तमान और भतीत, इन तीनों ही प्रकारके भायकशरीरका
अर्थ जाना जा चुका है। जो भविष्यकालमें अल्पवृत्त्य प्राप्तका जाननेवाला होगा, उस
भायी नोआगमद्रव्य अल्पवृत्त्यनिकषे कहते हैं। तद्रव्यतिरिक्त अल्पवृत्त्य तीन प्रकारका
है—सचित्त, अचित्त और मिश्र। जीवद्रव्य विषयक अल्पवृत्त्य सचित्त है, शेष द्रव्य
विषयक अल्पवृत्त्य अचित्त है, और इन दोनोंका अल्पवृत्त्य मिश्र है। आगम और
नोआगमके भेदसे भाय अल्पवृत्त्य दो प्रकारका है। जो अल्पवृत्त्य प्राप्तका जानने
वाला है और वर्तमानमें उसके उपयोगसे युक्त है उसे आगमभाय अल्पवृत्त्य कहते हैं।
आत्माके ज्ञान और दर्शनको, तथा पुद्गलकर्मोंके अनुभाग और योगादिको विषय करने
वाला नोआगमभाय अल्पवृत्त्य है।

श्रीका—इन अल्पवृत्तियोंमेंसे प्रवृत्तमें किससे प्रयोजन है ?

समाधान—प्रवृत्तमें सचित्त द्रव्यके अल्पवृत्त्यसे प्रयोजन है।

(अथ निर्देश, स्थापितत्वादि प्रसिद्ध छह अनुयोगद्वारोंसे अल्पवृत्त्यका निर्णय
किया जाता है।)

श्रीका—अल्पवृत्त्य क्या है ?

समाधान—यह उससे तिगुणा है, अथवा चतुर्गुणा है, इस प्रकार युद्धिके द्वारा
ग्रहण करने योग्य सत्त्वाके धर्मको अल्पवृत्त्य कहते हैं।

श्रीका—अल्पवृत्त्य किमके होता है, अर्थात् अल्पवृत्त्यका स्वामी कौन है ?

समाधान—जीवद्रव्यके अल्पवृत्त्य होता है, अर्थात् जीवद्रव्य उसका स्वामी है,
क्योंकि, धर्मको ओङ्कन सत्त्वाधम पृथक् नहीं पाया जाता।

श्रीका—अल्पवृत्त्य किससे होता है, अर्थात् उसका साधन क्या है ?

समाधान—अल्पवृत्त्य पारिणामिक भावसे होता है।

कृत्यप्पाबहुअं ? जीउद्वे । केउचिरमप्पाउहुअं ? अणादि-अफज्जउसिद । कुदो ? सच्चेसिं गुणट्ठाणाणमेदेणेउ पमाणेण सव्वकालमउट्ठाणादो । कउविहमप्पाउहुअं ? मग्गणभेयभिण्ण-गुणट्ठाणमेत्त ।

अप्प च उहुअ च अप्पाउहुआणि । तेसिमणुगमो अप्पाउहुआणुगमो । तेण अप्पाउहुआणुगमेण णिहेसो दुविहो होदि ओवो जांदमो त्ति । सगहिदनयणकलाओ दव्वद्वियणिउधणो ओवो णाम । असगहिदनयणकलाओ पुव्विहत्थानयणणिउधो पज्ज-द्वियणिउधणो आदेसो णाम ।

ओधेण तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवां ॥ २ ॥

तिसु अद्वासु त्ति उयण चत्तारि अद्वाओ पडिसेहट्ठ । उवसमा त्ति वयण सनया-दिपडिसेहफल । पवेसणेणत्ति उयण सचयपडिसेहफल । तुल्ला त्ति वयणेण तिसरिसत्त-पडिमेहो रुदो । आदिमेसु तिसु गुणट्ठाणेषु उवमामया पवेसणेण तुल्ला सरिमा । कुदो ?

शंका—अल्पउहुत्वं किसमें होता है, अर्थात् उसका अधिकरण क्या है ?

समाधान—जीवद्रव्यमें, अर्थात् जीवद्रव्य अल्पउहुत्वका अधिकरण है ।

शंका—अल्पउहुत्वं कितने समय तक होता है ?

समाधान—अल्पउहुत्वं अनादि ओर अनन्त है, क्योंकि, सभी गुणस्थानोंका इसी प्रमाणसे सर्वकाल अवस्थान रहता है ।

शंका—अल्पउहुत्वं कितने प्रकारका है ?

समाधान—भार्गवाओंके भेदसे गुणस्थानोंमें जितने भेद होते हैं, उतने प्रकारका अल्पउहुत्वं होता है ।

अल्प और बहुत्वको अर्थात् हीनता ओर अधिकताको अल्पउहुत्वं कहते हैं । उनका अनुगम अल्पउहुत्वानुगम है । उससे अर्थात् अल्पउहुत्वानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है, ओघनिर्देश ओर आदेशनिर्देश । जिसमें सम्पूर्ण वचन-कलाप सगृहीत है, और जो द्रव्यार्थिकनय निमित्तक है, वह ओघनिर्देश है । जिसमें सम्पूर्ण वचन-कलाप सगृहीत नहीं है, जो पूर्वोक्त अर्थावयव अर्थात् ओघानुगममें वतलाये गये भेदोंके आश्रित है और जो पर्यायार्थिकनय निमित्तक है वह आदेशनिर्देश है ।

ओघनिर्देशसे अपूर्वकणादि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा परस्पर तुल्य है, तथा अन्य सप्त गुणस्थानोंके प्रमाणसे अल्प है ॥ २ ॥

‘तीनों गुणस्थानोंमें’ यह वचन चार उपशामक गुणस्थानोंके प्रतिषेध करनेके लिए दिया है । ‘उपशामक’ यह वचन क्षपकादिके प्रतिषेधके लिए दिया है । ‘प्रवेशकी अपेक्षा’ इस वचनका फल सचयका प्रतिषेध है । ‘तुल्य’ इस वचनसे विसहस्रताका प्रतिषेध किया है । श्रेणीसम्यग्धी आदिके तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी

१ प्रतिपु ‘पुविहट्ठा’ इति पाठ । मप्रतो तु स्वीकृतपाठ ।

२ सामायेन तावत् त्रय उपशमका सर्वत्र स्तोका स्वगुणस्थानकाले प्रवेशेन तुल्यवस्था । त्ति सि १, ८

एआदिचउण्णमेत्तजीणाण पवेस पडि पडिसेहाभाया । ण च' सव्वद्ध तिसु उरमामगेसु पविसत्तजीवेहि सरिमत्तणियमो, समय पडुच्च सरिमत्तउत्तीदो । एदेसिं सचओ सरिसो अमरिसो त्ति वा किण्ण पस्सिदो ? ण एम दोसो, पवेसमारिच्छेण तेसिं सचयमारिच्छस्म पि अगमादो । पविस्समाणजीणाण विसरिसत्ते मत्ते सचयस्म विसरिसत्त, अण्णहा दिट्ठविगेहादो । अपुच्चादिअद्धान थोय बहुत्तादो विसरिसत्त सचयस्म किण्ण होदि त्ति पुच्छिदे ण होदि, तिण्हमुवसामगाणमद्धान्हितो उक्कस्मपवेसतरस्स बहुत्तुवदेसादो । तम्हा तिण्ह सचओ पि सरिसो चेय । थोया उररि उच्चमाणगुणद्धानाण सस पेक्खिय थोरा त्ति भणिदा ।

अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश होते हैं, क्योंकि, एकसे लेकर चोपन मात्र जीवोंके प्रवेशके प्रति कोई प्रतिषेध नहीं है। किन्तु सर्वकाल तीनों उपशामकोंमें प्रवेश करनेवाले जीवोंकी अपेक्षा सदृशताका नियम नहीं है, क्योंकि, सभावनाकी अपेक्षा सदृशताका कथन किया गया है।

शङ्का—इन तीनों उपशामकोंका सचय सदृश होता है, या असदृश होता है, इस बातका प्ररूपण क्यों नहीं किया ?

समाधान—यह कोई दोष नहा, क्योंकि, प्रवेशकी सदृशतासे उनके सचयकी सदृशताका भी ज्ञान हो जाता है। प्रविश्यमान जीवोंकी विसदृशता होने पर ही सचयकी विसदृशता होती है, यदि ऐसा न माना जाय तो प्रत्यक्षसे विरोध आता है।

शङ्का—अपूर्वकरण आदिके कालोंमें परस्पर अल्पगुल्य होनेसे सचयके विसदृशता क्यों नहीं हो जाती है ?

समाधान—ऐसी आशकापर आचार्य उत्तर देते हैं कि अपूर्वकरण आदिके कालके हीनाधिक होनेसे सचयके विसदृशता नहीं होती है, क्योंकि, तीनों उपशामकोंके कालोंसे उत्पन्न प्रवेशान्तरका काल बहुत है ऐसा उपदेश पाया जाता है। इसलिए तीनोंका सचय भी सदृश ही होता है।

निर्णयार्थ—यहा पर शङ्काकारने यह शङ्का उठाई है कि जब अपूर्वकरण आदि गुणस्थानोंका काल हीनाधिक है, अर्थात् अपूर्वकरणका जितना काल है, उससे सख्यात गुणा हान अनिवृत्तिरूपका काल है और उससे सख्यातगुणा हीन सूक्ष्मसाम्प्रायका काल है, तब इन गुणस्थानोंमें सचित होनेवाली जीवराशिका प्रमाण भी हीनाधिक ही होना चाहिए, सदृश नहीं होना चाहिए ? इसके समाधानमें यह कहा गया है कि तीनों उपशामकोंके कालोंसे उत्पन्न प्रवेशान्तरके बहुत होनेका उपदेश पाया जाता है। इसका अभिप्राय यह है कि यद्यपि अपूर्वकरण आदि गुणस्थानोंका काल हीनाधिक है, तथापि यह प्रत्येक अन्तर्मुद्रित या असख्यात समयप्रमाण है। किन्तु इन गुणस्थानोंमें प्रवेश कर सचित होनेवाले जीव सख्यात अर्थात् उपशामश्रेणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक तीन

उवसंतकसायवीदरागल्लदुमत्था तत्तिया चेयं ॥ ३ ॥

पुधसुचारभो किमट्ठो ? उवसंतकसायस्स कसाउवसामगाणं च पचासत्तीए अभाउस्स सदसणफलो । जेतिं पच्चासत्ती अत्थि तेसिमेगजोगो, इदरेसिं भिण्णजोगो होदि त्ति एदेण जाणादि ।

खवा सखेज्जगुणां ॥ ४ ॥

कुदो ? उवसामगगुणद्वाणधुवकस्सेण परिस्समाणचउत्तण्णजीवेहिंतो सउगेगगुण-

सौ चार (३०४) और क्षपकधेरणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक छह सौ आठ (६०८) ही होते हैं । यदि सर्वत्रय्य प्रमाणकी भी अपेक्षासे एक समयमें एक ही जीवका प्रवेश माना जाय, तो भी प्रत्येक गुणस्थानके प्रवेशकालके समय सख्यात अर्थात् उपशमधेरणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक तीन सौ चार और क्षपकधेरणीके प्रत्येक गुणस्थानमें अधिकसे अधिक छह सौ आठ ही होंगे । यहा यह स्मरण रखना चाहिए कि उपशम या क्षपकधेरणीमें निरन्तर प्रवेश करनेका सर्वोत्कृष्ट काल आठ समय ही है । इससे ऊपर जितना भी प्रवेशकाल है, यह सब सान्तर ही है । इससे यह अर्थ निकलता है कि अपूर्वकरणदि गुणस्थानोंमें प्रवेशान्तर अर्थात् जीवोंके प्रवेश नहीं करनेका काल असख्यात समयप्रमाण है । चूकि, सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानसे अनिवृत्ति-करणका काल सख्यातगुणा है इसलिए उसके प्रवेशान्तरका उत्कृष्ट काल भी सख्यात-गुणा ही होगा । इसी प्रकार चूकि अनिवृत्तिकरणके कालसे अपूर्वकरणका काल सख्यात-गुणा है, अतः उसके प्रवेशान्तरका काल भी सख्यातगुणा ही होगा । इसका यही निष्कर्ष निकलता है कि तीनों उपशमकोंके कालोंसे तीनोंके उत्कृष्ट प्रवेशान्तरका काल बहुत है, अर्थात् प्रवेश करनेके समय सदृश हैं, अतएव उनका सचय भी सदृश ही होता है ।

उपर्युक्त जीव आगे वही जानिवाली गुणस्थानोंकी सख्याको 'देखकर अल्प है' ऐसा कहा है ।

उपशान्तरूपायनीतरागल्लदुमत्थ पूरोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३ ॥

श्रीका—पृथक् सूत्रका प्रारम्भ किस लिये किया है ?

समाधान—उपशान्तरूपायका और कपायके उपशम करनेवाले उपशमकोंकी परस्पर प्रत्यासत्तिका अभाव दिखाना इसका फल है । जिनकी प्रत्यासत्ति पाई जाती है उनका ही एक योग अर्थात् एक समास हो सकता है और दूसरोंका भिन्न योग होता है, यह बात हम सूत्रसे सूचित की गई है ।

उपशान्तरूपायनीतरागल्लदुमत्थामे क्षपक सख्यातगुणित हैं ॥ ४ ॥

क्योंकि, उपशमत्रयके गुणस्थानमें उत्कर्षसे प्रवेश करनेवाले धीपन जीवोंकी

मुक्कस्सेण पविस्ममाणअट्टुत्तरमदजीराण दुगुणत्तुलमा, पचूणचदुरुत्तरातिसदमेत्तेगुव
सामगगुणद्वाणुक्कस्ममचयादो वि सजोगेगुणद्वाणुक्कस्ममचयस्स दुरुऊणठस्सद
मेत्तस्स दुगुणत्तदमणादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव' ॥ ५ ॥

पुधसुत्तारमस्स कारण पुण्ण न यत्तच्च । सेस सुगम ।

सजोगकेवली अजोगकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेव' ॥ ६ ॥

घाइयघादिकस्माण छदुमत्थेहि पच्चासत्तीए अभागादो पुधमत्तारमो जादो ।
पवेसणेण तेत्तिया चेवेत्ति उत्ते पवेस सचएहि अट्टुत्तरमददुरुऊणठस्सदमेत्ता कमेण हौत्ति
वि घेत्तच्च । दो वि तुल्ला त्ति उत्ते दो वि अण्णोण्णेण सरिसा त्ति भणिद होदि ।
अजोगिकेवलिसंचओ पुण्विल्लगुणद्वाणमचएहि सरिसो जधा, तथा सजोगिकेवलि
संचयस्स वि सरिसत्ती । तिसरिमत्तपदुप्पायणडुमत्तारसुत्त भणिदि—

अपेक्षा क्षपक्के एक गुणस्थानमें उत्कृष्टसे प्रवेश करनेवाले परसौ आठ जीवोंके दुगुणता
पाई जाती है । तथा सचयनी अपेक्षा उपशामकके एक गुणस्थानमें उत्कृष्टरूपसे पांच
कम तीनसौ चार अर्थात् दो सौ नियानवे (२९०) सचयसे भी क्षपक्के एक गुणस्थानकी
हो कम छह सौ (५९८) रूप सचयने दुगुणता देखी जाती है ।

धीणरूपायनीतरागठन्नस्य पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५ ॥

पृथक् सूत्र जननेका कारण पहलेके समान कहना चाहिये । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

सयोगिकेवली और अयोगिकेवली प्रवेशकी अपेक्षा दोनों ही तुल्य और पूर्वोक्त
प्रमाण हैं ॥ ६ ॥

घाति कर्मोंका घात करनेवाले सयोगिकेवली और अयोगिकेवलीकी छद्मस्थ
जीवोंके साथ प्रत्यासत्तिका अभाव होनेसे पृथक् सूत्र बनाया गया है । प्रवेशकी अपेक्षा
पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं, ऐसा कहनेपर प्रवेशसे एक सौ आठ (१०८) ओर सचयसे दो कम
छह सौ अर्थात् पांच सौ अष्टानवे (५९८) क्रमसे होते हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना
चाहिये । दोनों ही तुल्य हैं, ऐसा कहनेसे दोनों ही परस्पर समान हैं, ऐसा अर्थ सूचित
होता है । निस प्रकार अयोगिकेवलीका सचय पूर्ण गुणस्थानोंके सचयके सदृश होता
है, उसी प्रकार सयोगिकेवलीके सचयने भी सदृशताकी प्राप्ति होती है, अतएव उनके
सचयकी विसदृशताके प्रतिपादन करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं—

१ धीणरूपायनीतरागठन्नस्यास्तावन्त एव । य सि १, ८

२ सयोगिकेवलिनोऽयोगिकेवलिनश्च प्रवेशेन तुल्यसत्त्वा । व सि १, ८

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणां ॥ ७ ॥

कुदो ? दुरूत्रणछस्सदमेत्तजीमेहितो अट्टलक्ख-अट्टाणउदिसहस्स-दुराहियपंचसद-
मेत्तजीणण सखेज्जगुणत्तुपलमा । हेट्ठिमरामिणा उपरिमरासिं छेत्तूण गुणयारो उप्पादेद्वो ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणां ॥ ८ ॥

खणुससामगअप्पमत्तसंजदपडिसेहो किमट्ठं कीरदे ? ण, अप्पमत्तसामण्णेण
तेसिं पि गहणप्पमरा । मजोगिरामिणा नेकोडि-छण्णउदिलक्ख-णणउडसहस्म-तिउत्तर-
सदमेत्तअप्पमत्तरासिं हि भागे हिदे ज लद्ध सो गुणगारो होदि ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणां ॥ ९ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि । कुदो णवदे ? जाइरियपरपरागदुवदेमादो ।

सयोगिकेवली कालकी अपेक्षा सख्यातगुणित है ॥ ७ ॥

फ्योंकि, दो कम छह सौ, अर्थात् पाच सौ अट्टानवे मात्र जीवोंकी अपेक्षा आठ
लाख, अट्टानवे हजार पाच सौ दो सख्याप्रमाण जीवोंके सख्यातगुणितता पाई जाती
है । यहा पर अधन्तनराशिसे उपरिम राशिको छेदकर (भाग देकर) गुणकार उत्पन्न
करना चाहिये ।

सयोगिकेलियोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत जीव संख्यात-
गुणित है ॥ ८ ॥

शका—यहापर क्षपक और उपशामक अप्रमत्तसयताका निषेध किस लिए
किया गया है ?

समाधान—नहीं, फ्योंकि, 'अप्रमत्त' इस सामान्य पदसे उनके भी ग्रहणका
प्रसंग आता है, इसलिये क्षपक और उपशामक अप्रमत्तसयतोंका निषेध किया गया है ।
सयोगिकेवलीकी राशिसे दो करोड छयानवे लाख निन्यानवे हजार एक सौ तीन सख्या
प्रमाण अप्रमत्तसयतोंकी राशिमें भाग देनेपर जो लब्ध आवे, वह यहा पर गुणकार
होता है ।

अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत मख्यातगुणित है ॥ ९ ॥

गुणकार क्या है ? दो सख्या गुणकार है ।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्य-परम्पराके द्वारा आये हुये उपदेशसे जाना जाता है ।

१ सयोगिकेवली स्वकालेन समुदिता सख्येयगुणा । (८९८५०२) । स वि १, ८

२ अप्रमत्तसयता सख्येयगुणा (२९६९९१०३) । स वि १, ८

३ प्रमत्तसयता सख्येयगुणा (५९३९८२०६) । स वि १, ८

पुन्युत्तमपमत्तराशिणा पचक्रोदि तिष्णउल्लस्य अट्टाणउडसहस्म-छन्महियदोमदमतदि
पमत्तरामिहि भागे द्विदे ज भागलद्ध सो गुणगारो ।

सजदासजदा असखेज्जगुणा' ॥ १० ॥

बुद्धो ? पल्लिदोवमस्म असखेज्जदिभागमेत्तत्तादो । माणुसखेत्तवमत्तरं वेर
मज्झिमासजदा हाति, णो वहिद्धा, भोगभूमिहि सजमामजममात्रिरोहा । य च माणुस
खेत्तवमत्तरं अमखेज्जगुणा सजदासजदाणमत्थि सभगो, तेत्थियमेत्ताणमेत्ताणमट्टाणविगेहा ।
तदो सखेज्जगुणेहि सजदासजदेहि होद्वमिदि ? ण, सयंपहपव्वदपरभागे अमत्तेज्ज
जोषणवित्थडे कम्मभूमिपडिमाए तिरिक्कराणमसखेज्जगुणा सजमासजमगुणसहिण
मुखलमा । को गुणगारो ? पल्लिदोवमस्म असखेज्जदिभागो, अमखेज्जगुणा पल्लिदोवमपम
वगमूलाणि । को पडिभागो ? अतोमुत्तमगुणिदपमचमजदरासी पडिभागो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ११ ॥

पूर्वोक्त अग्रमत्तराशिसे पाच करोड तिरानवे लाख, अट्टानवे हजार, दो सौ छ
सत्त्वाग्रमाण प्रमत्तसयतराशिमें भाग देनेपर जो भाग लब्ध आवे, वह महापर गुणकार है ।

प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत अमरयातगुणित है ॥ १० ॥

क्योंकि, ये पल्लोपमके असख्यातवे भागप्रमाण है ।

शुद्धा—सयतासयत मनुष्यक्षेत्रके भीतर ही होते हैं, बाहर नहीं, क्योंकि, भोग
भूमिमें सयमासयमके उत्पन्न होनेका विरोध है । तथा मनुष्यक्षेत्रके भीतर असख्यात सयता
सयतोंका पाया जाना सम्भव नहीं है, क्योंकि, उतने सयतासयतोंका वहा मनुष्यक्षेत्रके
भीतर अवस्थान माननेमें विरोध आता है । इसलिए प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत
अख्यातगुणित होना चाहिए ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, असख्यात योजन विन्दुत एवं कर्मभूमिके प्रतिभाग
रूप स्वयमभ पर्वतके परभागमें सयमासयम गुणसहित असख्यात तिर्यञ्च पाये जाते हैं ।
गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असख्यात प्रथम वगमूल प्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? अन्तर्मुहूर्तसे प्रमत्तसयतराशिसे
गुणित करनेपर जो लब्ध आवे, वह प्रतिभाग है ।

सयतासयतोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित है ॥ ११ ॥

१ सयतासयता असखेज्जगुणा । स ति १, ८

२ प्रति ' मत्ता ' इति पाठ ।

३ सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असखेज्जगुणा । स ति १, ८

कुदो ? तिनिहसम्मत्तद्धिदसंजदामजेदहिंतो एगुसमसम्मत्तादो सासणगुण पडि-
वज्जिय छसु आनलियासु संचिदजीमाणमसखेज्जगुणचुनदेसादो । त पि कधं णव्वदे ?
एगममयमिह संजमासजम पडिउज्जमाणजीनेहिंतो एक्कममयमिह चेअ सासणगुण पडि-
वज्जमाणजीवाणमसखेज्जगुणत्तदंसणादो । त पि' कुदो ? अणतसंसारमिच्छेयहेउसजमा-
सजमलभस्स अइदुल्लभत्तादो । को गुणगारो ? आनलियाए अमखेज्जदिभागो । हेट्ठिम-
रासिणा उअरिमरासिमिह भागे हिंदे गुणगारो आगच्छदि, उअरिमरासिअअहारकालेण
हेट्ठिमरासिअअहारकाले भागे हिंदे गुणगारो होदि, उअरिमरासिअअहारकालगुणिदहेट्ठिम-
रासिणा पलिदोअमे भागे हिंदे गुणगारो होदि । एअ तीहि पयारेहि गुणयारो समाण-
भज्जमाणरासीसु सव्वत्थ साहेदव्वो । अअरि हेट्ठिमरासिणा उअरिमरासिमिह भागे हिंदे
गुणगारो आगच्छदि त्ति एद समाणासमाणभज्जमाणरासीण साहारण, दोसु नि एदस्स
पउत्तीए बाहाणुअलभा ।

क्योंकि, तीन प्रकारके सम्यक्त्वके साथ स्थित सयतासयतांकी अपेक्षा एक
उपशमसम्यक्त्वसे सासादनगुणस्थानको प्राप्त होकर छह आवलियोंसे सचित जीव
असत्ख्यातगुणित हैं, ऐसा उपदेश पाया जाता है ।

शंका—यह भी कैसे जाना जाता है ?

समाधान—एक समयमें सयमासयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे एक समयमें
ही सासादनगुणस्थानको प्राप्त होनेवाले जीव असत्ख्यातगुणित देखे जाते हैं ।

शंका—इसका भी कारण क्या है ?

समाधान—क्योंकि, अनन्त ससारके विच्छेदका कारणभूत सयमासयमका
पाना अतिदुर्लभ है ।

गुणकार क्या है ? आधलीका असत्ख्यातवा भाग गुणकार है । अधस्तनराशिसे
उपरिमराशिमें भाग देनेपर गुणकारका प्रमाण आता है । अथवा, उपरिमराशिसे अवहार
कालसे अधस्तनराशिसे अवहारकालमें भाग देनेपर गुणकार होता है । अथवा, उपरिम
राशिसे अअहारकालसे अधस्तनराशिको गुणित करके जो लब्ध आवे उसका पल्योपममें
भाग देनेपर गुणकार आता है । ऐसे इन तीन प्रकारोंसे समान भज्यमान राशियोंमें सर्वत्र
गुणकार साधित कर लेना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि अधस्तनराशिका उपरिम-
राशिमें भाग देनेपर गुणकार आता है, यह नियम समान ओर असमान, दोनों भज्यमान
राशियोंमें साधारण है, क्योंकि, उक्त दोनों राशियोंमें भी इस नियमकी प्रवृत्ति होनेमें
बाधा नहीं पाई जाती है ।

सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा' ॥ १२ ॥

एदस्मत्थो उच्चदे- सम्मामिच्छादिद्विअद्वा अतोमुदुत्तमेत्ता, मामणसम्मामिच्छादिद्विअद्वा नि छात्रलियमेत्ता । किंतु सासणसम्मामिच्छादिद्विअद्वादो सम्मामिच्छादिद्विअद्वा सखेज्जगुणा । सखेज्जगुणद्वाए उक्कमणकालो नि सामणद्वाउक्कमणकालादो सखेज्जगुणो उरम्कमणपरिगेहा निरहकालाणमुहयत्थ साधम्मादो । तेण दोगुणद्वाणाणि पडिउज्जमाण रासी जदि नि सरिसो, तो नि सासणसम्मामिच्छादिद्विहिंतो सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा होंति । किंतु सासणगुणमुवसमसम्मामिच्छादिद्विणो येय पडिवज्जति, सम्मामिच्छादिद्वी पुण वेदगुवसमसम्मामिच्छादिद्विणो अद्वागीसमतकम्मियमिच्छादिद्विणो य पडिउज्जति । तेण सासण पडिवज्जमाणरामीदो' सम्मामिच्छादिद्वी पडिउज्जमाणरामी सखेज्जगुणो । तदो सखेज्जगुणायादो सखेज्जगुणउवक्कमणकालादो च सामणेहिंतो सम्मामिच्छादिद्विणो सखेज्जगुणा, उवसमसम्मामिच्छादिद्वीहिंतो वेदगसम्मामिच्छादिद्विणो असखेज्जगुणा, 'कारणाणुसारिणा कजेण होदव्वमिदि' णायादो । सासणेहिंतो सम्मामिच्छादिद्विणो असखेज्जगुणा किण्ण होंति सि उच्चे ण होंति, अणेयणिग्गमादो । जदि तेहि पडिउज्जमाणगुणद्वाणमेत्त' चेन होदि,

सासादनसम्यग्दृष्टिणोसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हँ ॥ १२ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं- सम्यग्मिध्यादृष्टि गुणस्थानका काल अन्तर्मुहूर्तमात्र है और सासादनसम्यग्दृष्टि का काल भी छह आधलीप्रमाण है, किन्तु फिर भी सासादन सम्यग्दृष्टिके कालसे सम्यग्मिध्यादृष्टिका काल सख्यातगुणित है । सख्यातगुणित कालका उपक्रमणकाल भी सासादनके कालके उपक्रमणकालसे सख्यातगुणित है । अन्यथा उपक्रमण कालमें विरोध आजायगा, क्योंकि, निरहकाल दोनों जगह समान है । इसलिए इन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त होनेवाली राशि यद्यपि समान है तो भी सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि सख्यातगुणित है । किन्तु सासादन गुणस्थानको उपशमसम्यग्दृष्टि ही प्राप्त होते हैं, परन्तु सम्यग्मिध्यात्त्व गुणस्थानको वेदकसम्यग्दृष्टि, उपशमसम्यग्दृष्टि और मोहकमकी अद्वाईस प्रवृत्तियोंकी सत्तावाले मिध्यादृष्टि जीव भी प्राप्त होते हैं । इसलिए सासादनगुणस्थानको प्राप्त होनेवाली राशिसे सम्यग्मिध्यात्त्वको प्राप्त होनेवाली राशि सख्यातगुणी है । अतः सख्यातगुणी जाय होनेसे और सख्यातगुणा उपक्रमणकाल होनेसे सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित होते हैं । उपशम सम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित है, क्योंकि, 'कारणके अनुसार कार्य होता है' ऐसा 'याय' है । सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि असख्यातगुणित क्यों नहीं होते हैं, ऐसा पूछने पर आचार्य उत्तर देते हैं कि नहीं होते हैं, क्योंकि, निर्गमके अर्थात् जानेके मार्ग अनेक हैं । यदि वेदकसम्यग्दृष्टियोंके द्वारा प्राप्त किया

१ सम्यग्मिध्यादृष्टय सखेयगुणा । स सि १, ८

२ अतिउ 'पडिमाणरामीदो' इति पाठ ।

३ अतिउ 'मेच' इति पाठ ।

तो एस ण्णाओ जेतुं जुत्तो । किंतु वेदगसम्मादिट्ठिणो मिच्छत्त सम्मामिच्छत्तं च पडिउज्जति, सम्मामिच्छत्तं पडिउज्जमाणेहिंतो मिच्छत्त पडिउज्जमाणेदगसम्मादिट्ठिणो असरेज्जगुणा, तेण पुव्वुत्त ण घट्ठे इदि । ण चासखेज्जगुणरासिउओ अण्णरासिम-वेक्सिय होदि, तस्म अप्पणो आयाणुसरणसहाउत्तादो । एदमेरं चेउ होदि ति कध णव्वदे ? सामणेहिंतो सम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्जगुणा ति सुत्तण्णहाणुववत्तीदो णव्वदे ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए अमखेज्जदिभागो । सम्मामिच्छादिट्ठिरासी अतो-मुहूत्तमचिदो, असंजदसम्मादिट्ठिरासी पुण वेसागरोपममचिदो । सम्मामिच्छादिट्ठिअद्वादो वेसागरोपमकालो पलिदोमसखेज्जदिभागगुणो । सम्मामिच्छादिट्ठिउपक्रमणकालादो नि असंजदसम्मादिट्ठिउपक्रमणकालो पलिदोमस्स मंखेज्जदिभागगुणो, उपक्रमण-कालस्म उद्वाणुसारित्तदसणादो । तेण पलिदोमस्स असखेज्जदिभागेण गुणगारेण होदव्वमिदि ? ण, अमजदसम्मादिट्ठिरामिस्स असखेज्जपलिदोमप्पमाणप्पसगा । तं

जानेवाला गुणस्थान एक ही हो, तो यह न्याय कहने योग्य है । किन्तु वेदकसम्यग्दृष्टि, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व, इन दोनों गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं । तथा सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असत्यातगुणित है, इसलिये पूर्वोक्त फलन घटित नहीं होता है । दूसरी बात यह है कि असत्यातगुणी राशिका व्यय अन्य राशिकी अपेक्षासे नहीं होता है, क्योंकि, वह अपने आयके अनुसार व्ययशील स्वभाववाला होता है ।

शुक्रा—यह इसी प्रकार होता है, यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सत्यातगुणित होते हैं, यह सूत्र अन्यथा धन नहीं सकता है, इस अन्यथानुपपत्तिसे जाना जाता है कि सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सत्यातगुणित होते हैं ।

सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीव असंयतगुणित हैं ॥ १३ ॥

गुणकार क्या है ? आगलीना असत्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्रा—सम्यग्मिथ्यादृष्टि राशि अन्तर्मुहूर्त सचित है और असंयतसम्यग्दृष्टि राशि दो सागरोपम सचित है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिके कालसे दो सागरोपमकाल पत्योपमके असत्यातवें भाग गुणितप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यादृष्टिके उपक्रमणकालसे भी असंयतसम्यग्दृष्टिना उपक्रमणकाल पत्योपमके सत्यातवें भागगुणित है, क्योंकि, उपक्रमणकाल गुणस्थानकालके अनुसार देखा जाता है । इसलिये पत्योपमके असत्यातवें भाग-प्रमाण गुणकार होना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, गुणकारको पत्योपमके असत्यातवें भाग मानने पर असंयतसम्यग्दृष्टि राशिकी असत्यात पत्योपमप्रमाण होनेका प्रसंग प्राप्त होगा ।

१ प्रतिउ 'जोतु' इति पाठ ।

२ असंयतसम्यग्दृष्टयोऽसत्योयगुणा । स मि १, ८

३ म २ प्रती 'दो वि असंजदसम्मादिट्ठि उपक्रमणकालो' इति ।

जघा- 'एदेहि पलिदोमममहरिदि अतोमुट्टेण कालेणेचि' दव्वाणिओगद्दासुत्तादो णव्वदि जघा पलिदोमममतोमुट्टेण सडिदेयसडमेत्ता सम्मामिच्छादिट्ठिणो होंति त्ति । पुणो एद रासिं पलिदोममस्म असखेज्जदिभागेण गुणिदे असखेज्जपलिदोममेत्तो अस जदसम्मादिट्ठिरासी होदि । ण चेद, एदेहि पलिदोमममहरिदि अतोमुट्टेण कालेणेचि एदेण सुत्तेण सह निरोहा । कध पुण आपलियाए असखेज्जदिभागगुणगारस्स सिट्ठी ? उच्चदे- सम्मामिच्छादिट्ठिअद्दादो तप्पाओगअसखेज्जगुणद्वाए सचिदो अमजदमम्मा दिट्ठिरामी धेत्तव्वो, एदिस्मे अद्वाए सम्मामिच्छादिट्ठिउत्तकमणकालादो असखेज्जगुण उक्ककमणकालुत्तमा । एत्थ सचिद-असजदमम्मादिट्ठिरासीए नि आपलियाए असखे ज्जदिभागेण गुणिदेत्तो होदि । अधवा दोण्ह उत्तकमणकाला जदि नि सरिसा होंति त्ति तो नि सम्मामिच्छादिट्ठीहिंत्तो असजदसम्मादिट्ठी आवलियाए सखेज्जभागगुणा । बुदो ? सम्मामिच्छत्त पडिउज्जमाणरासीदो सम्मच पडिउज्जमाणरासिस्म आपलियाए असखेज्जदिभागगुणत्तादो ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा' ॥ १४ ॥

उत्तका स्पर्शकरण इस प्रकार है- इन सासादनसम्यग्दृष्टि आदि जीवोंकी अपेक्षा अतर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है, इस द्रव्यानुयोगद्वारके सूत्रसे जाना जाता है कि पल्योपमनो अन्तर्मुहूर्तसे सङ्गित करने पर एक सङ्गप्रमाण सम्यग्मिध्यादृष्टि होने हैं । पुन इस राशिकी पल्योपमके असख्यातवै भागसे गुणित करने पर असख्यात पल्यो पमप्रमाण असयतसम्यग्दृष्टिराशि होती है । परन्तु यह ठीक नहीं है, क्योंकि, 'इन गुण स्थानवर्ती जीवोंकी अपेक्षा अतर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपहृत होता है' इस सूत्रके साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है ।

शका- फिर आधर्लाके असख्यातवै भागरूप गुणकारकी सिद्धि कैसे होती है ?

समाधान-सम्यग्मिध्यादृष्टिके कालसे उत्तके योग्य असख्यातगुणित कालसे सचित्त असयतसम्यग्दृष्टि राशि ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि, इस कालका सम्यग्मिध्या दृष्टिके उपग्रमणकालसे असख्यातगुणा उपग्रमणकाल पाया जाता है । यहा पर सचित्त असयतसम्यग्दृष्टि राशि भी आधर्लाके असख्यातवै भागसे गुणितमात्र है । अथवा, दोनोंके उपग्रमणकाल यद्यपि सदृश होते हैं, तो भी सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असयतसम्य दृष्टि जीव आधर्लाके सख्यात भागगुणित हैं, क्योंकि, सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त होनेवाली राशिसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाली राशि आधर्लाके असख्यातवै भागगुणित है ।

असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १४ ॥

१ दव्वाय ६ (मा ३ पृ ६३)

२ ध-अप्यो 'पलिदोममेत्तो' इति पाठ ।

३ निम्मारुणो नत्तगुणा । स मि १, ८ प्रतिपु धणत्तगुणो' इति पाठ ।

कुदो ? मिच्छादिद्वीणमाणतियादो । को गुणगारो ? अभयसिद्धिर्एहि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणंताणि सच्चजीरासिपदमग्रमूलाणि । को पडिभागो ? असजदसम्मादिद्वी पडिभागो ।

असंजदसम्मादिद्विद्वाने सच्चत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ १५ ॥

सजदामंजदादिद्वानपडिसेहट्ठं असजदसम्मादिद्विद्वानयण । उवरिमुचमाणरामि-
अवेकर सच्चत्थोवयण । सेससम्मादिद्विपडिसेहट्ठमुवसमसम्मादिद्वियण ।

खइयसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ १६ ॥

उवसमसम्मत्तादो खइयसम्मत्तमइदुल्लह, दसणमोहणीयकरएण उवस्सेण छम्मास-
मंतरिय उकरस्सेण अट्टुत्तरसदमेत्ताणं चेउ उपपज्जमाणत्तादो । खइयसम्मत्तादो उवसम-
सम्मत्तमइसुलह, सत्तरादिंदियाणि अतरिय एगसमएण पलिदोउमस्स असंखेज्जदिभाग-
मेत्तजीनेसु तदुप्पत्तिदंमणादो । तदो खइयसम्मादिद्वीहिंतो उवसमसम्मादिद्वीहिं असंखेज्ज-
गुणेहि हौदवमिदि ? सचमेद, किंतु सचयकालमाहप्पेण उवसमसम्मादिद्वीहिंतो खइय-

फ्योकि, मिथ्यादष्टि अनन्त होते हैं ।

शुका—गुणकार क्या है ?

समाधान—अभयसिद्धीसे अनन्तगुणा और सिद्धीसे भी अनन्तगुणा गुणकार है, जो सम्पूर्ण जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

शुका—प्रतिभाग क्या है ?

समाधान—असयतसम्यग्दष्टि राशिका प्रमाण प्रतिभाग है ।

असयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दष्टि जीव सरसे कम हैं ॥ १५ ॥

सयतासयत आदि गुणस्थानोंका निषेध करनेके लिये सूत्रमें 'असयतसम्यग्दष्टि स्थान' यह वचन दिया है । आगे कही जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा 'सरसे कम' यह वचन दिया है । शेष सम्यग्दष्टियोंका प्रतिषेध करनेके लिये 'उपशमसम्यग्दष्टि' यह वचन दिया है ।

असयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ १६ ॥

शुका—उपशमसम्यक्त्वसे क्षायिकसम्यक्त्व अतिसुलभ है, क्योंकि, दर्शन मोहनीयके क्षयद्वारा उत्कृष्ट छह मासके अंतरालसे अधिकसे अधिक एकसौ आठ जीवोंकी ही उत्पात्ति होती है । परन्तु क्षायिकसम्यक्त्वसे उपशमसम्यक्त्व अतिसुलभ है, क्योंकि, सात रात दिनोंके अंतरालसे एक समयमें पल्लोपमके असंख्यातवें भागप्रमित जीवोंमें उपशमसम्यक्त्वकी उत्पत्ति देखी जाती है । इसलिये क्षायिकसम्यग्दष्टियोंसे उपशमसम्यग्दष्टि असंख्यातगुणित होना चाहिए ।

समाधान—यह कहना सत्य है, किन्तु सचयकालके माहात्म्यसे उपशमसम्य-

सम्मादिद्विणो असंखेज्जगुणा जादा । त जहा—उपसमसम्मचद्धा उक्कस्सिया वि अतो-
मुहुत्तमेत्ता चेय । सइयसम्मचद्धा पुण जहणिया अतोमुहुत्त, उक्कस्सिया दोपुव्वकोडि-
अन्महियतेत्तीससागरोपममेत्ता । तत्थ मज्झिमकालो दिवड्डुपलिदोपममेत्तो । एत्थ
अतोमुहुत्तमतारिय सखेज्जोपक्रमणममएसु धेप्पमाणेसु पलिदोपमस्म असखेज्जदिभाग
मेतोपक्रमणकालो लब्ध । एदेण कालेण सचिदजीवा नि पलिदोपमस्म असखेज्जदि-
भागमेत्ता होदूण आरलियाए असखेज्जदिभागमेत्तुपक्रमणकालेण समय पडि उवक्कत-
पलिदोपमस्म असखेज्जदिभागमेत्तजीवेण सचिदउपसमसम्मादिद्विणो असखेज्जगुणा
होति । ण सेसरियप्पा सभरति, ताणमसखेज्जगुणसुत्तेण सह निरोहा ।

एत्थ चोत्तओ भणदि—आरलियाए असखेज्जदिभागमेत्तरेण सइयसम्मादिद्विण
सोहम्मे जइ सचओ कीरदि पेसाणुसारिणिग्गमादो मणुमेस्सु जमखेज्जा सइयसम्मा-
दिद्विणो पारोति । अह सखेज्जापलियत्तेरेण द्विइसचओ कीरदि, तो सखेज्जापलियाहि
पलिदोपमे सडिदे एयक्कपडमेत्ता सइयसम्मादिद्विणो पारोति । ण च एव, आरलियाए
असखेज्जदिभागमेत्तभागहारब्धुपगमादो । तदो दोहि वि पयारेहि दोसो चेय हुक्कदि

गदिय्योले क्षायिकसम्यग्दृष्टि असत्प्रातगुणित हो जाते हैं । यह इस प्रकार है—उपशम
सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल भी अतर्मुहूर्तमान ही है । परन्तु क्षायिकसम्यक्त्वका जघन्य
काल अतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल दो पूर्वकोटिसे अधिक तेतीस सागरोपमप्रमाण है ।
उसमें प्रथम काल डेढ पल्योपमप्रमाण है । यहा पर अन्तर्मुहूर्तकालको अन्तरित करके
उपक्रमणके सत्प्रात समयोंके ग्रहण करने पर पल्योपमके असत्प्रातवें भागमान उप-
क्रमणकाल प्राप्त होता है । इस उपक्रमणकालके द्वारा सचित हुए जीव पल्योपमके
असत्प्रातवें भागमान हा करके भी आवर्त्तने असत्प्रातवें भागमान उपक्रमणकालक
द्वारा प्रत्येक समयमें प्राप्त होनेवाले पल्योपमके असत्प्रातवें भागमान जीवोंसे सचित
हुए उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा असत्प्रातगुणित होते हैं । यहा शेष विस्मय समझ
नहीं हैं, क्योंकि, उन विस्मयोंका असत्यतसम्यग्दृष्टि गुणरूपानमें 'उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे
क्षायिकसम्यग्दृष्टि असत्प्रातगुणित है' इस सूत्रके साथ विरोध आता है ।

शुक्रा—यहा पर शकाकार कहता है कि आवर्त्तनेके असत्प्रातवें भागमात्र
अन्तरने क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका सौधम स्वर्गमें यदि सचय किया जाता है तो प्रवेशके
अनुसार निर्गम होनेसे अर्थात् आयने अनुसार व्यय होनेसे मनुष्योंमें असत्प्रात क्षायिक
सम्यग्दृष्टि जीव प्राप्त होते हैं । और यदि सत्प्रात आवर्त्तियोंके अन्तरालसे स्थितिका
सचय करते हैं तो सत्प्रात आवर्त्तियोंसे पल्योपमके सडित करने पर एक सडमात्र
क्षायिकसम्यग्दृष्टि प्राप्त होते हैं । परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, आवर्त्तनेके असत्प्रातवें
भागमात्र भागहार स्वीकार किया गया है । इसलिए दोनों प्रकारोंसे भी दोष ही प्राप्त
होता है ?

ति ? न एस दोसो, सइयसम्मादिट्ठीण पमाणामणइ पलिदोमस्स सरोज्जापलियमेत्त-
भागहारस्स जुत्तीए उलभादो । तं जहा— अट्टसमयवमहियच्छम्मासवभतरे जदि मंखेज्जु-
क्कमणममया लब्भति, तो दिवइपलिदोमवभतरे किं लभामो ति पमाणेण फलगुणि-
दिञ्जाए ओपट्ठिदाए उक्कमणकालो लब्भदि । तस्मिं सरोज्जजीरेहि गुणिदे सरोज्जा-
लियाहि ओपट्ठिदपलिदोममेत्ता सइयसम्मादिट्ठीणो लब्भति । तेण आपलियाए अमरो-
ज्जदिभायो भागहारो ति न घेत्तव्वो । उक्कमणतरे आपलियाए असरोज्जदिभागे सते
एदं न घडदि ति णासकणिज्ज, मणुसेसु सइयसम्मादिट्ठीण असरोज्जाणमत्थित्तप्पसगादो ।
ए सते मासणादीणमसरोज्जापलियाहि भागहारेण होदव्व ? न एस दोसो, इट्ठत्तादो ।
न अण्णेतिसाडरियाण वक्खमाणेण निरुद्ध ति एदस्स वक्खमाणस्स अभट्ठं, सुत्तेण सह
अनिरुद्धस्स अभट्ठनिरोहादो । एदेहि पलिदोमममगिरिदि अतोमुहुत्तेण कालेणोत्ति सुत्तेण
नि न निरोहो, तस्स उतरारणिघणत्तादो ।

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाण
लानेके लिए पल्योपमका सत्यात आवलिमान भागहार युक्तिसे प्राप्त हो जाता है ।
जैसे—आठ समय अधिक छह मासके भीतर यदि सत्यात उपक्रमणके समय प्राप्त होते
हैं, तो डेढ़ पल्योपमके भीतर कितने समय प्राप्त होंगे ? इस प्रकार प्रैराशिक करने पर
प्रमाणराशिसे फलराशिको गुणित करके और इच्छाराशिसे भाजित कर देने पर उप-
क्रमणकाल प्राप्त होता है । उसे सत्यात जीवोंसे गुणित कर देने पर पल्योपममें सत्यात
आवलियोंका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतने क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव प्राप्त होते हैं ।
इसलिए यहा आवलीका असत्यातवा भाग भागहार है, ऐसा नहीं ग्रहण करना चाहिए ।

उपक्रमणकालका अन्तर आवलीका असत्यातवा भाग होने पर उपर्युक्त व्याख्यान
घटित नहीं होता है, ऐसी आशका भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि, ऐसा मानने पर
मनुष्योंमें असत्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके अस्तित्वका प्रसंग आता है ।

शुक्रा—यदि ऐसा है तो सासादनसम्यग्दृष्टि आदिके असत्यात आवलिया
भागहार होना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, वह इष्ट ही है ।

तथा, यह व्याख्यान अन्य आचार्योंके व्याख्यानसे विरुद्ध है, इसलिये इस
व्याख्यानके अभद्रता (अयुक्ति सगतता) भी नहीं है, क्योंकि, इस व्याख्यानका सूत्रके
साथ विरोध नहा है, इसलिये उसके अभद्रताके माननेमें विरोध आता है । ' इन राशि-
योंके प्रमाणकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्तकालसे पल्योपम अपट्ट होता है ' इस द्रव्यानुयोग-
द्वारेके सूत्रके साथ भी उक्त व्याख्यानका विरोध नहीं आता है, क्योंकि, वह सूत्र उप-
चार निमित्तक है ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ १७ ॥

कुदो ? दमणमोहणीयकखण्णुप्पण्णखइयसम्मत्तादो खओअसमियवेदगसम्मत्तस्स मुट्ठु सुलहत्तुअलभा । को गुणगारो ? आअलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? ओघसोहम्म-
असजदमम्मादिद्विभागहारस्स आअलियाए असखेज्जदिभागपमाणत्तादो ।

सजदासजदद्वाने सव्वत्थोवा खइयसम्मादिद्वी ॥ १८ ॥

कुदो ? अणुअयसहिदखइयसम्मादिद्वीणमइदुल्लभत्तादो । ण च तिरिक्खेसु खइयसम्मत्तेण मह सजमामजमो लब्भदि, तत्थ दमणमोहणीयकखण्णाभावा । त पि कुदो णव्वदे ? ' णियमा मणुसगदीए ' इदि सुत्तादो । जे रि पुअ वद्धतिरिक्खाउआ मणुमा तिरिक्खेसु खइयसम्मत्तेणुप्पज्जति, तेसिं ण सजमासजमो अत्थि, भोगभूमिं मोत्तूण अण्णत्थुप्पत्तीए अममनादो । तेण खइयसम्मादिद्विणो सजदामजदा सखेज्जा चेय,

अमयतसम्यग्दष्टि गुणस्थानमें क्षायिकमम्यग्दष्टियोंमें वेदक्रमम्यग्दष्टि जीव असरयातगुणित हैं ॥ १७ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीय कर्मके क्षयसे उत्पन्न हुए क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिक धेद्वक्सम्यक्त्वका पाना अति सुलभ है ।

शुक्रा—गुणकार क्या है ?

समाधान—आवलीग असप्यातग भाग गुणकार है, क्योंकि, सामान्यसे सौधमस्वगके असयतसम्यग्दष्टि देवोंका भागहार आवलीके असरयातवें भागप्रमाण होता है ।

सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकमम्यग्दष्टि जीव सखे कय हैं ॥ १८ ॥

क्योंकि, अणुमतसहित क्षायिकसम्यग्दष्टियोंका होना अत्यन्त दुर्लभ है । तथा तिर्यचोंमें क्षायिकसम्यक्त्वके साथ सयमासयम पाया नहीं जाता है, क्योंकि, तिर्यचोंमें वदानमोहनीयकर्मकी क्षपणाका अभाव है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—' दर्शनमोहनीयका क्षपण करनेवाले जीव नियमसे मनुष्यगतिमें होते हैं ' इस सूत्रसे जाना जाता है ।

तथा जिन्होंने पहले तिर्यचायुका यध कर लिया है ऐसे जो भी मनुष्य क्षायिक सम्यक्त्वके साथ तिर्यचोंमें उत्पन्न होते हैं उनके सयमासयम नहीं होता है, क्योंकि, भोगभूमिको छोड़कर उनकी अयत्र उत्पत्ति असम्भव है । इसलिये क्षायिकसम्यग्दष्टि सयतासयत जीव सख्यात ही होते हैं, क्योंकि, सयमासयमके साथ क्षायिकसम्यक्त्व

१ दंगमहावत्तखण्णुद्वगो कम्मभूमिनादो इ । णियमा मणुसगदीए विद्वगो वावि सव्वथ ॥ १॥

आपकादुदे, छत्तखदियाते, १

मणुमपज्जत्ते मोत्तूण अण्णत्थाभावा । अदो चेय भणिस्ममाणामखेज्जरासीहितो थोरा ।

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १९ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
वगमूलाणि । को पडिभागो ? खइयसम्मादिट्ठिसज्जासज्जदमेत्तसंखेअरुवपडिभागो । कुदो ?
असंखेज्जावलियाहि पलिदोवमे खंडिदे तत्थ एयसडमेचाणमुवसमसम्मत्तेण सह सज्जा-
सज्जाणमुवलंभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २० ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । एसो उवसमसम्मादिट्ठिउक्कस्स-
सचयादो वेदगसम्मादिट्ठिउक्कस्ससंचयस्स सातरस्स^१ गुणगारो, अण्णहा पुण पलिदो-
वमस्स असंखेज्जदिभागो गुणगारो, उवसमसम्मादिट्ठिरासिस्स सातरस्स कयाइ एग-
जीरस्स नि उलभा । वेदगसम्मादिट्ठिरासी पुण सव्वाकालं पलिदोवमस्स असंखेज्जदि-
भागमेत्तो चेय, गिरंतरस्स समाणायच्चयस्म अण्णरूपावत्तिविरोहा ।

पर्याप्त मनुष्योंको छोड़कर दूसरी गतिमें नहीं पाया जाता है । ओर इसीलिये सयता-
सयत क्षायिकसम्यग्दृष्टि आगे कहीं जानेवाली असंख्यात राशियोंसे कम होते हैं ।

संयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि संयतासयत
असंख्यातगुणित है ॥ १९ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्योपमके
असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? क्षायिकसम्यग्दृष्टि संयतासयतोंकी
जितनी सख्या है तत्प्रमाण संख्यातरूप प्रतिभाग है, क्योंकि, असंख्यात आवलियोंसे
पल्योपमके खंडित करने पर उनमेंसे एक खंड मात्र उपशमसम्यक्त्वके साथ सयता
सयत जीव पाये जाते हैं ।

संयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित
है ॥ २० ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है । उपशमसम्यग्दृष्टि
योंके उत्कृष्ट सचयसे वेदकसम्यग्दृष्टियोंके उत्कृष्ट सान्तर सचयका यह गुणकार है ।
अन्यथा पल्योपमका असंख्यातवा भाग गुणकार होता है, क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टिराशि
सातर है, इसलिये कदाचित् एक जीवकी भी उपलब्धि होती है । परन्तु वेदकसम्यग्दृष्टि
राशि सर्वकाल पल्योपमके असंख्यातवें भागमात्र ही रहती है, क्योंकि, जिस राशिका
आय और व्यय समान है और जो अन्तर-रहित है, उसको अन्यरूप माननेमें विरोध
आता है ।

१ 'सातरस्स' इति पाठ केवल म । प्रती अस्ति, अयमिति नास्ति ।

पमत्तापमत्तसंजदद्वाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तद्वासचयादो, उवसमसम्मचेण सह पाएण सजम पडिवज्ज
ताणमभावादो च ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २२ ॥

अंतोमुहुत्तेण सचिदउत्तसमसम्मादिट्ठीहितो देसुणपुव्वकोडीसचिदउइयसम्मा
दिट्ठीण सखेज्जगुणत्त पडि पिरोहाभागा । को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २३ ॥

कुदो ? उइयादो उओत्तमियस्स सम्मत्तस्स पाएण समया । को गुणगारो ?
सखेज्जा समया ।

एव तिसु वि अद्वासु ॥ २४ ॥

जधा पमत्तापमत्तसंजदाण सम्मत्तप्पाउहुअ परुत्तिद, तहा तिसु उवसामगद्वासु
परुवेदव्व । त जहा— सव्वत्थोवा उत्तसमसम्मादिट्ठी । उइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।

प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम
हैं ॥ २१ ॥

फर्माँकि, एक् तो उपशमसम्यग्दृष्टियोंके सचयका काल अन्तमुहूर्तमात्र है, और
दूसरे उपशमसम्यक्त्वके साथ बहुलतासे समयको प्राप्त होनेवाले जीवोंका अभाव है ।

प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिक
सम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २२ ॥

अन्तमुहूर्तसे सचित होनेवाले उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा कुछ कम पूर्वकोटि
कालसे सचित होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके सरयातगुणित होनेमें कोई धियोध नहीं
है । गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि
जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३ ॥

फर्माँकि, क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिकसम्यक्त्वका होना अधिक
तासे सम्भव है । गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

इसी प्रकार अपूर्वकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पबहुत्व है ॥ २४ ॥

जिस प्रकार प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तसयत्त जीवोंके सम्यक्त्वका अल्पबहुत्व कहा
है, उसी प्रकार आदिके तीन उपशमक गुणस्थानोंमें भी प्ररूपण करना चाहिए । वह इस
प्रकार है— तीनों उपशमक गुणस्थानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं । उनसे

कारण, दव्वाहियत्तादो । वेदगसम्मादिट्ठी णत्थि, तेण सह उअसमसेडीआरोहणाभावा । उअसत्तकसाएसु सम्मत्तप्पावहुग किण्ण परुनिदं ? ण एस दोसो, तिसु अद्दासु सम्मत्त-
प्पावहुगे अवगदे तत्थ नि तदअगमादो । सुहं गहणट्ठं चदुसु उअसमाएसु ति' किण्ण
परुनिदं ? ण, 'एअजोगणिदिट्ठाणमेअदोसा णाणुअट्ठिदि' ति णायादो उवरि चदुण्हमणुउत्ति-
प्पसंगा' । होदु चे ण, पडिजोगीण चदुण्हमुवसामगाणमभावा ।

सव्वत्थोवा उअसमा ॥ २५ ॥

हुदो ? थोवायुपदेसादो' सकल्लिदसचयस्स' नि थोवत्तस्स णायसिद्धत्तादो ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित है, क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका यहा द्रव्यप्रमाण अधिक पाया जाता है । उपशमश्रेणीमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं पाये जाते हैं, क्योंकि, वेदकसम्यक्त्वके साथ उपशमश्रेणीके आरोहणका अभाव है ।

शका—उपशान्तकपाय गुणस्थानधर्ती जीवोंमें सम्यक्त्वका अल्पवहुत्व क्यों नहीं कहा ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, तीनों उपशामक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वका अल्पवहुत्व ज्ञात हो जाने पर उपशान्तकपाय गुणस्थानमें भी उसका ज्ञान हो जाता है ।

शका—सुख अर्थात् सुगमतापूर्वक ज्ञान होनेके लिए 'चारों उपशामक गुण-स्थानोंमें' ऐसा सूत्रमें क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, 'जिनका निर्देश एक समासके द्वारा किया जाता है उनके एक देशकी अनुवृत्ति नहीं होती है' इस न्यायके अनुसार आगे कहे जानेवाले सूत्रोंमें चारों गुणस्थानोंकी अनुवृत्तिका प्रसंग प्राप्त होगा ।

शंका—यदि आगे चारों उपशामकोंकी अनुवृत्तिका प्रसंग आता है, तो आगे दो, क्या दोष है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, चारों उपशामकोंके प्रतियोगियोंका अभाव है । अर्थात् जिस प्रकार अपूर्वरूपण आदि तीन गुणस्थानोंके भीतर उपशामक और उनके प्रतियोगी क्षपक पाये जाते हैं, उसी प्रकार चोथे उपशामक अर्थात् ग्यारहवें गुणस्थानमें उपशामकोंके प्रतियोगी क्षपक नहीं पाये जाते हैं ।

अपूर्वरूपण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सबसे कम है ॥ २५ ॥

क्योंकि, अल्प आयका उपदेश होनेसे सचित होनेवाली राशिके स्तोकपना अर्थात् कम होना न्यायसिद्ध है ।

१ प्रतिष्ठा 'उअसामण सुणे' इति पाठ ।

१ प्रतिष्ठा 'थोवपु पदेसादो' इति पाठ ।

२ प्रतिष्ठा 'अणउत्तिप्पसगा' इति पाठ ।

४ प्रतिष्ठा 'सगल्लिदसचयस्स' इति पाठ ।

सवा संखेज्जगुणा ॥ २६ ॥

बुद्धो ? सखेज्जगुणायादो सचउत्तमा । उरमम-गरगणमेटमप्पाचहुग पुच्च
परुदिमिदि एत्थ ण परुदिच्च ? ण, पुच्चमुत्तमामग सखगपरेमगणमप्पाचहुगस्यणादो ।
तदो चेव सचयप्पाचहुगभिद्दीण होदीदि चे सच्चं होदि, जुत्तीदो । जुत्तिराटे अणि
उणमत्ताणुग्गहट्टमेटमप्पाचहुग पुणो मि परुदि । गरगमेटीण मम्मत्तप्पाचहुग त्रिण
परुदि ? ण, तमिं सइयसम्मत्त मोत्तूण अणमम्मत्तामाया । त बुद्धो णच्चदे ? सखेगु
उत्तम-वेदगसम्मादिद्विदग्गादिपरुत्तयमुत्ताणुत्तमा । उत्तमा गग्रा ति मद्दा उत्तम
सम्मत्त-सइयसम्मत्ताण चाचया ण होति चि भणत्ताणमभिप्पाण्ण गइयमम्मत्तस

अपूर्वरण आदि तीन गुणस्थानर्तों उपशामरोगे तीनों गुणस्थानर्तों क्षप
जीर सरयातगुणित है ॥ २६ ॥

क्योंकि, सख्यातगुणित आयसे क्षपकोंडा सख पाया जाता है ।

शरा—उपशामक और क्षपकोंडा यह अल्पग्रहण पहले कह आये हैं, इसलिये
यहा नहीं कहना चाहिये ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, पहले उपशामक और क्षपक जीवोंके प्रवेशकी अपेक्षा
अल्पग्रहण कहा है ।

शरा—उसीसे सचयके अल्पग्रहणकी सिद्धि हो जायगी (फिर उसे पृथक्
क्यों कहा) ?

समाधान—यह सत्य है कि युक्तिसे अल्पग्रहणकी सिद्धि हो सकती है । किंतु
जो शिष्य युक्तिवादमें निपुण नहीं हैं, उनके अनुग्रहके लिये यह अल्पग्रहण पुन भी
कहा है ।

शरा—क्षपकधेणीमें सम्यक्त्वका अल्पग्रहण क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, क्षपकधेणीवालोंके क्षायिकसम्यक्त्वको छाड़कर अथ
सम्यक्त्व नहीं पाया जाता है ।

शरा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, क्षपकधेणीवाले जीवोंमें उपशामसम्यग्दृष्टि और वेदक
सम्यग्दृष्टि जीवोंके द्रव्य अर्थात् सरया और आदि पदसे श्रेष्ठ, स्पर्शन आदिके प्ररूपक
स्व नहीं पाये जाते हैं । उपशामक और क्षपक, ये दोनों शब्द वामश उपशामसम्यक्त्व
और क्षायिकसम्यक्त्वके वाचक नहीं हैं, ऐसा कथन करनेवाले आचार्योंके अभिप्रायसे

अप्याब्रह्मणपरुवयाणि, पुञ्चमपरुनिदसगुणसामगसंचयस्स अप्याब्रह्मणपरुवयाणि वा दो वि सुत्ताणि चि धेत्तव्व ।

एव ओघपरुणणा समत्ता ।

आदेसेण गदियाणुवादेण णिरयगदीए णेरइएसु सव्वत्थोवा सासणसम्मादिट्ठी' ॥ २७ ॥

आदेसवयण ओघपडिसेहफल । सेसमग्गणादिपडिसेहट्ठ गदियाणुवादवयण । सेमगदिपडिसेहणट्ठो णिरयगदिणिदेमो । सेसगुणट्ठाणपडिसेहट्ठो सासणणिदेसो । उवरि उच्चमाणगुणट्ठाणदव्येहितो सासणा दच्चपमाणेण थोरा अप्पा इदि उत्तं हादि ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा' ॥ २८ ॥

कुटो ? सासणुपक्रमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठिउपरक्रमणकालस्म सखेज्जगुणस्स उवलभा । को गुणगारो ? संखेज्जसमया । हेट्ठिमरासिणा उपरिमरासिम्हि भावो

ये दोनों सूत्र क्षाधिकसम्यक्त्वके अल्पवहुत्वके प्ररूपक हैं, तथा पहले नहीं प्ररूपण किये गये क्षपण और उपशामकसम्वन्धी सचयके अल्पवहुत्वके प्ररूपक हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

आदेशकी अपेक्षा गतिमार्गणाके अनुवादसे नरकगतिमें नारकियोंमें सासादन-सम्यग्दृष्टि जीव सनसे कम हैं ॥ २७ ॥

सूत्रमें 'आदेश' यह वचन ओघका प्रतिषेध करनेके लिए है । शेष मार्गणा आदिके प्रतिषेध करनेके लिए 'गतिमार्गणाके अनुवादसे' यह वचन कहा है । शेष गतिपोंके प्रतिषेधके लिए 'नरकगति' इस पदका निर्देश किया । शेष गुणस्थानोंके प्रतिषेधार्थ 'सासादन' इस पदका निर्देश किया । ऊपर कहे जानेवाले शेष गुणस्थानोंके द्रव्यप्रमाणोंकी अपेक्षा सासादनसम्यग्दृष्टि जीव द्रव्यप्रमाणसे स्तोक अर्थात् अल्प होते हैं, यह अर्थ कहा गया है ।

नारकियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २८ ॥

क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके उपक्रमणकालसे सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंका उपक्रमणकाल सख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । अधस्तनराशिका उपरिमराशियोंमें भाग देने पर गुणकारका प्रमाण आता है । अधस्तन

१ विशेषेण गदियुवादेन नरकगतौ सर्गसु पृथिवीसु सर्वतः स्तोत्रं सासादनसम्यग्दृष्टि । स ति १, ८

२ सम्मामिथ्यादृष्टयः सख्येयगुणा । स ति १, ८

वृचिअंगुलपिदियगगमूले भागे हिदे लट्ठम्मि जेत्तियाणि रूपाणि तत्तियाणि अंगुलपढम-
वग्गमूलाणि । कुदो ? दव्वपिक्खमसूची घणगुलपिदियगगमूलमेत्ता, असंजदसम्मा-
दिट्ठीहि तम्मि घणगुलपिदियगगमूले ओरट्ठिदे असखेज्जाणि सूचिअंगुलपढमगग-
मूलाणि होति चि तंत-जुत्तिसिद्धीदो । तत्थ जेत्तियाणि रूपाणि तेत्तियमेत्ता सेडीओ
गुणगारो होदि ।

असंजदसम्माइट्ठिहाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तमेत्तुउसमसम्मत्तद्वाए उउक्कमणकालेण आगलियाए असखेज्जि-
भागेण संचिदत्तादो उच्चमाणसव्वसम्मादिट्ठिरामीहितो उउसमसम्मादिट्ठी थोवा होति ।

खइयसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३२ ॥

कुदो ? सहानदो चेउ उउसमसम्मादिट्ठीहितो असखेज्जगुणसरूपेण खइयसम्मा-
इट्ठीणमणाइणमगगमूलादो, सखेज्जपलिदोउमव्वतरे पलिदोउमस्स असखेज्जदिभाग-
मेत्तुउक्कमणकालेण सचिदत्तादो असखेज्जगुणा चि वुत्त होदि । एत्थतणखइयसम्मा-
दिट्ठीण भागहारो असखेज्जागलियाओ । कुदो ? ओघासजदसम्मादिट्ठीहितो असंखेज्ज-

भाजित करने पर लब्धमें जितना प्रमाण आवे, उतने सूच्यगुलके प्रथम वर्गमूल गुणकार-
यिष्कमसूचीमें होते हैं, क्योंकि, द्वयविष्कमसूची घनागुलके द्वितीय वर्गमूलमात्र है ।
इसलिए असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे उस घनागुलके द्वितीय वर्गमूलके अपवर्तित
कर देनेपर सूच्यगुलके असख्यात प्रथम वर्गमूल होते हैं, यह प्रकार आगम और युक्तिसे
सिद्ध है । अतएव यहापर जितनी सख्या हो तन्मात्र जगध्रेणिया यहापर गुणकार है ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सत्रसे कम हैं ॥३१॥

क्योंकि, अन्तर्मुहूर्तमात्र उपशमसम्यक्त्वके कालमें आघलीके असख्यातवें भाग-
प्रमाण उपक्रमणकाल द्वारा सचित होनेके कारण आगे कहे जानेवाले सर्व प्रकारके
सम्यग्दृष्टियोंकी राशियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव थोड़े होते हैं ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि
असख्यातगुणित हैं ॥ ३२ ॥

क्योंकि, स्वभावसे ही उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका
असख्यातगुणितरूपसे अनादिनिघन अवस्थान है, जिसका तात्पर्य यह है कि सख्यात
पत्योपमके भीतर पत्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपक्रमणकाल द्वारा सचित होनेसे
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हैं । यहा नारकियोंमें जो
क्षायिकसम्यग्दृष्टि हैं उनके प्रमाणके लानेके लिए भागहारका प्रमाण असख्यात आघलिया
है, क्योंकि, ओघ असयतसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हीन ओघ क्षायिकसम्यग्दृष्टि

हिदे गुणगारो आगच्छदि । को हेट्टिमरासी ? जो थोरो । जो पुण बहु सो उवरिमरासी
एदमत्थपद जहाउसर सव्वत्थ वत्तव्व ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ २९ ॥

कुदो ? सम्मामिच्छादिट्ठिउपक्कमणकालादो अमजदसम्मादिट्ठिउपक्कमणकालस
असंखेज्जगुणस्स भभउवलभा, सम्मामिच्छत्त पडिउज्जमाणजीविहिंतो सम्मत्त पडिउज्ज
माणजीवाणमसंखेज्जगुणत्तादो वा । को गुणगारो ? जानलियाए असंखेज्जदिभागो । हेट्टिम
रासिणा उवरिमरासिमोउट्ठिय गुणगारो साहेयव्वो ।

मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३० ॥

को गुणगारो ? असंखेज्जाओ सेडीओ पदरस्स असंखेज्जदिभागो । तासिं सेडीण
विक्खभसूची अगुलस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि अगुलग्गमूलाणि विदियग्ग
मूलस्स असंखेज्जभागमेत्ताणि । त जथा— असंजदसम्मादिट्ठीहि सूचिअगुलविदियवग्गमूल
गुणेदूण तेण सूचिअगुले भागे हिदे लद्धमगुलस्स असंखेज्जदिभागो । असंखेज्जाणि अगुल
वग्गमूलाणि गुणगारनिस्सभसूची होदि चि कथ णव्वदे ? उच्चवे— अमजदसम्मादिट्ठीहि

राशि कौनसी है ? जो अल्प होती है, वह अधस्तनराशि है, और जो बहुत होती है, वह
उपरिमराशि है । यह अथपद यथावसर सर्वत्र कहना चाहिए ।

नारकियोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असंयतसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित हैं ॥२९॥

क्योंकि, सम्यग्मिध्यादृष्टियोंके उपक्रमणकालसे असंयतसम्यग्दृष्टियोंका उपक्रमण
काल असंख्यातगुणा पाया जाता है । अथवा, सम्यग्मिध्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे
सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीव असंख्यातगुणित होते हैं । गुणकार क्या है ?
भावलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है । अधस्तनराशिसे उपरिमराशिको अपवर्तित
करके गुणकार सिद्ध कर लेना चाहिए ।

नारकियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥३०॥

गुणकार क्या है ? असंख्यात जगध्रेणिया गुणकार है, जो जगध्रेणिया जगप्रतरके
असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । उन जगध्रेणियोंकी विक्खभसूची अगुलके असंख्यातवें भाग
प्रमाण है । जिसका प्रमाण अगुलके द्वितीय वर्गमूलके असंख्यातवें भागमात्र असंख्यात
प्रथम वर्गमूल है, वह इस प्रकार है— असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय
वर्गमूलको गुणित करके जो लब्ध आवे, उससे सूच्यगुलमें भाग देने पर अगुलका
असंख्यातवा भाग लब्ध जाता है ।

धरा—अगुलके असंख्यात वर्गमूल गुणकार विक्खभसूची है, यह कैसे जाना
जाता है ?

समाधान—असंयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय वर्गमूलके

१ असंयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय वर्गमूलके । स वि १, ८ २ मिध्यादृष्टियोंके प्रमाणसे सूच्यगुलके द्वितीय वर्गमूलके । स वि १, ८

सूचिअगुलनिदियग्गमूले भागे हिदे लद्धम्मि जत्तियाणि रूपाणि तत्तियाणि अंगुलपढम-
वग्गमूलाणि । कुदो ? दच्चनिकउमसूची घणगुलनिदियग्गमूलमेत्ता, असंजदसम्मा-
दिट्ठीहि तम्मि घणगुलनिदियग्गमूले ओउट्टिदे असखेज्जाणि सूचिअगुलपढमवग्ग-
मूलाणि होंति चि तंत जुत्तिसिद्धीदो । तत्थ जेत्तियाणि रूपाणि तेत्तियमेत्ता सेडीओ
गुणगारो होदि ।

असंजदसम्माइट्ठीट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३१ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तमेत्तुउसमसम्मत्तद्वाए उउक्कमणकालेण आगलियाए असखेज्जदि-
भागेण संचिदत्तादो उच्चमाणसव्वसम्मादिट्ठिरासीहिंतो उउसमसम्मादिट्ठी थोवा होंति ।

खइयसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३२ ॥

कुदो ? सहाउदो चेव उउसमसम्मादिट्ठीहिंतो असखेज्जगुणसरूपेण खइयसम्मा-
इट्ठीणमणाइणिहणमउट्ठाणादो, सखेज्जपलिदोवमउत्तरे पलिदोउमस्स असखेज्जदिभाग-
मेत्तुउक्कमणकालेण सचिदत्तादो असखेज्जगुणा चि वुत्त होदि । एत्थतणखइयसम्मा-
दिट्ठीण भागहारो असखेज्जानलियाओ । कुदो ? ओघासजदसम्मादिट्ठीहिंतो असखेज्ज-

भाजित करने पर लब्धमें जितना प्रमाण आवे, उतने सूच्यगुलके प्रथम वर्गमूल गुणकार-
विष्कभसूचीमें होते हैं, क्योंकि, द्रव्यविष्कभसूची घनागुलके द्वितीय वर्गमूलमात्र है ।
इसलिए असयतसम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे उस घनागुलके द्वितीय वर्गमूलके अपवर्तित
कर देनेपर सूच्यगुलके असख्यात प्रथम वर्गमूल होते हैं, यह प्रकार आगम और युक्तिसे
सिद्ध है । अतएव वहापर जितनी सख्या हो तन्मात्र जगध्रेणिया यहापर गुणकार है ।

नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सबसे कम हैं ॥ ३१ ॥

क्योंकि, अन्तर्मुहूर्तमान उपशमसम्यग्दृष्टिके कालमें आवलीके असख्यातवें भाग-
प्रमाण उपनमणकाल द्वारा सचित होनेके कारण आगे कहे जानेवाले सर्व प्रकारके
सम्यग्दृष्टियोंकी राशियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव थोड़े होते हैं ।

**नारकियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि
अमरयातगुणित हैं ॥ ३२ ॥**

क्योंकि, स्वभावसे ही उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका
असख्यातगुणितरूपसे अनादिनिधन अवस्थान है, जिसका तात्पर्य यह है कि सख्यात
पल्योपमके भीतर पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपक्रमणकाल द्वारा सचित होनेसे
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हैं । यहा नारकियोंमें जो
क्षायिकसम्यग्दृष्टि हैं उनके प्रमाणके लानेके लिए भागहारका प्रमाण असख्यात आवलिया
है, क्योंकि, ओघ असयतसम्यग्दृष्टियोंसे असख्यातगुणित हीन ओघ क्षायिकसम्यग्दृष्टि

गुणहीणओघरुद्धयसम्मादिद्वीण असखेज्जदिभागमेत्तादो । न वासपुधत्तरसुत्तेण म
निरोहो, सोहम्मीसाणरूप्य मोत्तूण अण्णत्थ द्विदसइयसम्मादिद्वीण वासपुधत्तम निउल
चाणो' गहणादो । त तहा धेप्पदि त्ति कुदो णवदे ? ओघुत्तमसम्मादिद्वीहि
ओघरुद्धयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा सि अप्पागहुअसुत्तादो ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३३ ॥

कुदो ? रुद्धयसम्मात्तादो रओरसमियस्स वेदगसम्मात्तस्स सुलहत्तुलभा ।
गुणगारो ? आरलियाए असखेज्जदिभागो । कथमेद णवदे ? आइरियपरपराम
वेदसादो ।

एव पढमाए पुढवीए णेरइया ॥ ३४ ॥

जहा सामण्णणेरइयाणमप्पागहुअ परुत्तिद, तहा पढमपुढवीणेरइयाणमप्पागहुअ
वेदवत्तं, ओघणेरइयअप्पागहुआलागदो पढमपुढवीणेरइयाणमप्पागहुआलानस्स भेदाभा
जीव असत्तायत्तयें भाग ही होते हैं । इस कथनका धर्मपृथक्त्व अन्तर यतानेवाले स
साध विरोध भी नहीं आता है, क्योंकि, सोधर्म और ऐशानकल्पने छोड़कर अ
स्वित क्षायिस्सम्यग्दृष्टियोंने अन्तरमें कह गये धर्मपृथक्त्वके 'पृथक्त्व' शब्दको धेपु
वाची ग्रहण किया गया है ।

शुक्रा—यहा पर पृथक्त्वका अर्थ धेपुत्ववाची ग्रहण किया गया है, यह
जाना जाता है ?

समाधान — 'ओघ उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे ओघ क्षायिस्सम्यग्दृष्टि जीव
ख्यातगुणित हैं' इस अल्पवहुत्वके प्रतिपादक सूत्रसे जाना जाता है ।

नारकियोंमें अमयत्तसम्यग्दृष्टि गुणम्यानमें क्षायिस्सम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्य
अमग्यातगुणित ॥ ३३ ॥

क्योंकि, क्षायिस्सम्यक्त्वकी अपेक्षा क्षायोपशमिक वेदकसम्यक्त्वकी प्र
सुलभ है । गुणकार क्या है ? आवर्तीका असत्तायत्तवा भाग गुणकार है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—आचार्य परम्परासे आये हुए उपदेशके द्वारा जाना जाता है ।

इसी प्रकार प्रथम पृथिवीमें नारकियोंका अल्पवहुत्व है ॥ ३४ ॥

जिस प्रकार सामान्य नारकियोंका अल्पवहुत्व कहा है, उसी प्रकार पहली
धर्म नारकियोंका अल्पवहुत्व कहना चाहिए, क्योंकि, सामान्य नारकियोंके अल्पव
कथनसे पहली पृथिवीके नारकियोंने अल्पवहुत्वके कथनमें कोई भेद नहीं है ।

पन्नरट्टियणए अयलंमिज्जमाणे अत्थि मिसेसो, सो जाणिय वत्तवो ।

विदियाए जाव सत्तमाए पुढवीए गेरइएसु सव्वत्थोवा सासण-
सम्मादिट्ठी ॥ ३५ ॥

विदियादिछण्हं पुढगीणं सासणसम्मादिट्ठिणो बुद्धीए पुघ पुघ द्विणिय सव्वत्थोवा
त्ति उत्तं । कुदो ? छण्हमप्पाग्रहआणमेयत्तमिरोहादो । सव्वेहिंतो योवा सव्वत्थोवा ।
आदि अतेसु गेरइएसु णिदिट्ठेसु सेसमज्झमणेरइया सव्वे णिदिट्ठा चये, जासइच्चार-
णणहाणुमत्तीदो । जासदेण सत्तमपुढगीणेरइयाणं मज्जादत्ताए ठमिदाए, विदियपुढवी-
णेरइयाणमादिच्चमारदिद । आदी अत्ता च मज्जेण णिणा ण हंति त्ति चदण्ह पुढवी-
णेरइयाण मज्झमत्त पि जासदेणेय परुमिदं । तदो पुघ पुघ पुढगीणमुच्चारणा ण कदा ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ३६ ॥

विदियपुढगीआदिसत्तमपुढगीपज्जतसामणाणमुगरि पुघ पुघ छपुढगीसम्मामिच्छा-
दिट्ठिणो संखेज्जगुणा, सासणसम्मादिट्ठिउत्तकमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठिउत्तकमण-
पर्यायाधिकनयका अवलम्बन करने पर कुछ विशेषता है, सो जानकर कहना चाहिए ।
(देखो भाग ३, पृ १६० इत्यादि ।)

नारकियोंमें दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टि जीन सबसे
कम है ॥ ३५ ॥

दूसरीको भादि लेकर छहों पृथिवियोंके सासादनसम्यग्दृष्टियोंको बुद्धिके द्वारा
पृथक् पृथक् स्थापित करने प्रत्येक सत्रसे कम है, ऐसा अर्थ कहा गया है, क्योंकि, छहों
अल्पग्रहोंको एक माननेमें विरोध आता है । सबसे बड़ोंको सर्वस्तोक कहते हैं ।
आदिम और अन्तिम नारकियोंके निर्देश कर देने पर शेष मध्यम सभी नारकियोंका
निर्देश हो ही जाता है, अथवा यावत् शब्दका उच्चारण नहीं बन सकता है । यावत्
शब्दके द्वारा सातवीं पृथिवीके नारकियोंके मर्यादारूपसे स्थापित किये जानेपर
दूसरी पृथिवीके नारकियोंके आदिपना अपने आप आ जाता है । आदि और अन्त मध्यके
बिना नहीं होते हैं, इसलिए चार पृथिवियोंके नारकियोंके मध्यमपना भी यावत् शब्दके
द्वारा ही प्ररूपित कर दिया गया । इसी कारण पृथक् पृथक् रूपसे पृथिवियोंका नाम-
निर्देशपूर्वक उच्चारण नहीं किया गया है ।

नारकियोंमें दूसरीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्य-
ग्मिध्यादृष्टि जीन सख्यातगुणित हैं ॥ ३६ ॥

दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंके ऊपर पृथक्
पृथक् छह पृथिवियोंके सम्यग्मिध्यादृष्टि नारकी सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सासादन-
सम्यग्दृष्टियोंके उपक्रमणकालसे सम्यग्मिध्यादृष्टियोंका उपक्रमणकाल बुद्धिसे सख्यात-

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख पंचिदियतिरिक्ख पंचिदियपज्जत्त
तिरिक्ख-पंचिदियजोणिणीसु सच्चत्थोवा सज्जदासंजदा' ॥ ४१ ॥

पयदचउग्गिहतिरिक्खेसु जे देमच्चइणो ते तेमिं चेय सेसगुणद्वानवीहिंते धोमा
त्ति चदुण्हमप्पाण्डुआण मूलपदमेदेण परुपिद । किमट्ट देसच्चइणो योमा ? सनमा
सज्जमुलभस्स सुदुल्लहत्तादो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ४२ ॥

चउग्गिहतिरिक्खेण जे मामणमम्मादिट्ठिणो ते सग-मगमज्जदामज्जेहिंते अस
खेज्जगुणा, सज्जमासज्जमुलभादो मामणगुणलभस्स सुलहत्तुलमा । को गुणगारो ?
आवलियाए अमखेज्जदिभागो । त रूध णव्यदे ? अतोमुट्ठुत्तमुत्तादो, आइरियपरपरा
गदुवदेसादो वा ।

सम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्जगुणा ॥ ४३ ॥

तिर्यचगतिमें तिर्यच, पचेन्द्रियतिर्यच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रिययोनिमती
तिर्यच जीवोंमें सयतासयत सनसे कम है ॥ ४१ ॥

प्रकृत चारों प्रकारोंके तिर्यचोंमें जो तिर्यच वेशमती है, वे अपने ही शेष गुण
स्थानवर्ती जीवोंसे थोड़े हैं, इस प्रकार इससे चारों प्रकारके तिर्यचोंके अल्पबहुत्वका
मूलपद प्ररूपण किया गया है ।

शुद्धा—वेशमती अल्प क्यों होते हैं ?

समाधान—क्योंकि, सयमासयमकी प्राप्ति अतिदुर्लभ है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें सयतामयतोंमें सामादनसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यात
गुणित हैं ॥ ४२ ॥

चारों प्रकारके तिर्यचोंमें जो सासादनसम्यग्दृष्टि जीव हैं, वे अपने अपने सयता
तासे असंख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सयमासयम प्राप्ति की अपेक्षा सासादन गुण
की प्राप्ति सुकर है । गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातका भाग गुणकार है ।
जाता है ?

प्रतिपादक सूत्रसे और आचार्य परम्परासे

चउच्चिहतिरिक्खसासणसम्मादिट्ठीहिंतो सग सगसम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सामणुक्कक्रमणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठीणमुक्कक्रमणकालस्स तत-जुत्तीए
सखेज्जगुणचुलभा । को गुणगारो ? सखेज्जममया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ४४ ॥

चउच्चिहतिरिक्खसम्मामिच्छादिट्ठीहिंतो तेमिं चेअ असंजदसम्मामिच्छादिट्ठिणो असखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सम्मामिच्छात्तमुक्कक्रमतर्जिनेहिंतो सम्मत्तमुक्कक्रमतर्जीणममसंजगुण-
चादो । को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । त कुदो णवडे ? 'पल्लिदोअममे-
वहिरदि जंतोमुहुत्तेणेत्ति' सुत्तादो, आइरियपरपरागदुअदेमादो वा ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा, मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ४५ ॥

चहुण्ह तिरिक्खसाणमसंजदसम्मामिच्छादिट्ठीहिंतो तेसिं चेअ मिच्छादिट्ठी अणतगुणा
असखेज्जगुणा य । त्रिप्पडिसिद्धमिद । जदि अणतगुणा, कधमसखेज्जगुणत्त ? अह

चारों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे अपने अपने सम्यग्मिथ्यादृष्टि
तिर्यक् सख्यातगुणित ह, क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंने उपक्रमणकालसे सम्यग्मिथ्या
दृष्टियोंका उपक्रमणकाल आगम और बुक्तिके सख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार
क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असंयतसम्यग्दृष्टि जीव
असंयतगुणित हैं ॥ ४४ ॥

चारों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि तिर्यचासे उनके ही असंयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित ह, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे सम्यग्भूतको प्राप्त
होनेवाले जीव असख्यातगुणित होते ह । गुणकार क्या है ? आगलीना असख्यातवा
भाग गुणकार है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—'इन जीवराशियोंके प्रमाणद्वारा अन्तर्मुहूर्त कालसे पक्ष्योपम अपहृत
होता है' इस द्रव्यानुयोगद्वारके सूत्रसे और आचार्य परम्परासे आये हुए उपदेशसे
जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित हैं, और मिथ्यादृष्टि जीव असंयतगुणित हैं ॥ ४५ ॥

चारों प्रकारके असंयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि तिर्यक् अनन्त-
गुणित हैं और असख्यातगुणित भी हैं ।

शुक्रा—यह बात तो विप्रतिपिद्ध अर्थात् परस्पर विरोधी है । 'यदि अनन्त
गुणित हैं, तो वहा असख्यातगुणत्व नहीं बन सकता है, और यदि असख्यातगुणित हैं, तो

तिरिक्खगदीए तिरिक्ख पंचिदियतिरिक्ख पंचिदियपज्जत्त
तिरिक्ख पंचिदियजोणिणीसु सव्वत्थोवा सज्जदासज्जदा' ॥ ४१ ॥

पयदचउव्विहतिरिक्खेसु जे देसव्वइणो ते तेमि चेन मेसगुणट्टाणजीनेहिंते थोवा
त्ति वदुण्हमप्पाअहुआण मूलपदमेदेण परुदि । किमट्ट देसव्वइणो थोवा ? मज्जा
सज्जमुलभस्स सुदुल्लहत्तादो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ ४२ ॥

चउव्विहतिरिक्खाण जे मामणसम्मादिट्ठिणो ते सग-सगमज्जदामजदेहिंते अत्त
खेज्जगुणा, सज्जमासज्जमुलभादो सामणगुणलभस्स सुलहत्तुलमा । को गुणगारो ?
आगलियाए अमखेज्जदिभागो । त क्व णव्वदे ? अतोमुट्टुत्तसुत्तादो, आइरियपरपरा
गदुदुदेसादो वा ।

सम्मामिच्छादिट्ठिणो संखेज्जगुणा ॥ ४३ ॥

तिर्य्यचगतिमें तिर्य्यच, पचेन्द्रियतिर्य्यच, पचेन्द्रियपर्याप्त और पचेन्द्रिययोनिमती
तिर्य्यच जीनोंमें सयतासयत सनसे कम हैं ॥ ४१ ॥

प्रवृत्त चारों प्रकारोंके तिर्य्यचोंमें जो तिर्य्यच देशवती हैं, वे अपने ही दोष गुण
स्थानवर्ती जीवोंसे थोड़े ह, इस प्रकार इससे चारों प्रकारके तिर्य्यचोंके अल्पवदुत्यका
मूलपद प्ररूपण किया गया है ।

शुक्रा—देशवती अल्प क्या होते ह ?

समाधान—क्योंकि, सयमासयमकी प्राप्ति अतिदुर्लभ है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्य्यचोंमें सयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीन असरयात
गुणित हैं ॥ ४२ ॥

चारों प्रकारके तिर्य्यचोंमें जो सासादनसम्यग्दृष्टि जीव ह, वे अपने अपने सयता
सयतोंसे असख्यातगुणित ह, क्योंकि, सयमासयम प्राप्तिकी अपेक्षा सासादन गुण
स्थानकी प्राप्ति सुलभ है । गुणकार क्या है ? आबलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्रा—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—अतर्मुहृत अवधारकालके प्रतिपादक सूत्रसे और आचार्य परम्परासे
आये हुए उपदेशसे यह जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्य्यचोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिव्यादृष्टि जीन
मरयातगुणित हैं ॥ ४३ ॥

१ तिर्य्यगती तिर्य्यां सवत स्तोम संयतायता । त सि १, ८

२ इतोषां सामायक् । त सि १, ८

चउच्चिहतिरिक्खसासणमम्मादिट्ठीहिंतो सग सगसम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सासणुत्तममणकालादो सम्मामिच्छादिट्ठिणमुत्तममणकालस्स तत जुत्तीए
सखेज्जगुणत्तमभा । को गुणगारो ? सखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ४४ ॥

चउच्चिहतिरिक्खसम्मामिच्छादिट्ठीहिंतो तेमिं चेअ अमजदमम्मादिट्ठिणो असखेज्ज-
गुणा । कुदो ? सम्मामिच्छत्तमुत्तममणतजीनेहिंतो सम्मत्तमुत्तममणतजीवाणमसखेज्जगुण-
त्तादो । को गुणगारो ? आउलियाए अमखेज्जदिभागो । त कुदो णव्वदे ? ' पल्लिदोअमम-
वहिरदि अतोमुहुत्तेणेत्ति ' सुत्तादो, आउरियपरपगगदुत्तमादो वा ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा, मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ४५ ॥

चदुण्ह तिक्खिणमसज्जदसम्मादिट्ठीहिंतो तेसिं चेअ मिच्छादिट्ठी अणतगुणा
अमखेज्जगुणा य । मिप्पडिसिद्धमिद । जदि अणतगुणा, कधमसखेज्जगुणत्त ? अह

चारों प्रकारके सासादनसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंमसे अपने अपने सम्यग्मिथ्यादृष्टि
तिर्यच सख्यातगुणित है, क्योंकि, सासादनसम्यग्दृष्टियोंके उपक्रमणकालसे सम्यग्मिथ्या-
दृष्टियोंका उपक्रमणकाल आगम ओर युक्तिसे सख्यातगुणा पाया जाता है । गुणकार
क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं ॥ ४४ ॥

चारों प्रकारके सम्यग्मिथ्यादृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही असयतसम्यग्दृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंसे सम्यक्त्वको प्राप्त
होनेवाले जीव असख्यातगुणित होते हैं । गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा
भाग गुणकार है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—“ इन जीवराशियोंके प्रमाणद्वारा अन्तर्मुहूर्त कालसे पर्योपम अपहृत
होता है ” इस द्रव्यानुयोगद्वारके सूत्रसे ओर आचार्य परम्परासे आये हुए उपदेशसे
जाना जाता है ।

उक्त चारों प्रकारके तिर्यचोंमें अमयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित हैं, और मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित है ॥ ४५ ॥

चारों प्रकारके असयतसम्यग्दृष्टि तिर्यचोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि तिर्यच अनन्त
गुणित हैं और असख्यातगुणित भी हैं ।

शंका—यह यात तो विप्रतिपिद्ध अर्थात् परस्पर विरोधी है । यदि अनन्त-
गुणित है, तो वहा असख्यातगुणत्व नहीं बन सकता है, और यदि असख्यातगुणित है, तो

को गुणगारो ? आगलियाए असरोज्जदिभागो । एत्थ सइयसम्मादिद्वीणमप्या-
वहुअ णत्थि, सच्चिक्खीसु सम्मादिद्वीणमुत्तमादाभाजा, मणुसगह्वदिरित्तणगईसु दसण-
मोहणीयक्खण्णाभाजाच्च ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तिसु अद्दासु उव-
समा पवेसणेण तुल्ला थोवा^१ ॥ ५३ ॥

तिसु त्रि मणुसेसु तिणि णि उत्तमया पवेसणेण अण्णोणमवेक्खिय तुल्ला
सरिसा, चउत्तणमेत्तत्तादो । ते च्चेय थोवा, उत्तरिमगुणद्वानजीगवेक्खाए ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ ५४ ॥

कुदो ? हेट्ठिमगुणद्वाने पड्डिण्णजीगण चेय उत्तमकसायवीदरागछदुमत्थ-
पज्जाएण परिणामुत्तमा । सच्चयस्म अप्यात्रहुअ किण्ण परूविदं ? ण, पवेसप्पानहुएण
चेय तदगमादो । जदो सच्चओ णाम पवेसाहीणो^२, तदो पवेसप्पानहुएण सरिसो
सच्चयप्पानहुओ त्ति पुध ण उत्तो ।

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवाभाग गुणकार है । यहा पचेन्द्रियतिर्यंच
योनिमतियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, सर्व प्रकारकी
क्षियोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद नहीं होता है, तथा मनुष्यगतिको छोड़कर अन्य
गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका भी अभाव है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अपूर्वरूप आदि तीन
गुणस्थानोंमें उपशामक जीन प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ५३ ॥

सूत्रोक्त तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्वरूप आदि तीनों ही उपशामक जीव
प्रवेशसे परस्परकी अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश ह, क्योंकि, एक समयमें अधिकसे अधिक
चौपन जीवोंका प्रवेश पाया जाता है । तथा, ये जीव ही उपरिम गुणस्थानोंके जीवोंकी
अपेक्षा अल्प हैं ।

उपशान्तरूपायवीतरागछद्वस्य जीन प्रवेशसे पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५४ ॥

क्योंकि, अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंका ही उपशान्तरूपायवीतराग-
छद्वस्यरूप पर्यायसे परिणमण पाया जाता है ।

शका—यहा उपशामकोंके सच्चयका अल्पबहुत्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रवेशसम्यग्धी अल्पबहुत्वसे ही उसका ज्ञान हो
जाता है । चूकि, सच्चय प्रवेशके आधीन होता है, इसलिए प्रवेशके अल्पबहुत्वसे
सच्चयका अल्पबहुत्व सदृश है, अतएव उसे पृथक् नहीं बतलाया ।

१ मनुष्यगती मनुष्याणामुपशमकादिप्रमत्तस्यतान्तानां सामान्यवत् । त्रि सि १, ८

२ अ प्रती ' पवेसाहीणो ' आ कप्तयो ' पवेसाहिणो ' इति पाठ ।

संजदासंजदद्वारेण सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ४९ ॥

कुठो ? देमन्नायाणुविदुवसमसम्मत्तम्म दुल्लहचादो ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ५० ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असंखेज्जदिभागो । एदम्हादो गुणगारादो णव्वदे समय पडि तदुवचयादो अमसंखेज्जगुणचेणुवचिदा चि असंखेज्जगुणत्त । एत्थ सइय-सम्मादिद्वीणमप्पावहुअ किण्ण परुविद ? ण, तिरिक्खेसु असंखेज्जगुणाउएसु चेय सइय-सम्मादिद्वीणमुवमादुवल्लभा । पच्चिदियतिरिक्खजोणेणीसु सम्मत्तप्पावहुअविमेमपदु-प्पायणद्वमुत्तरसुत्त भणदि-

णवरि विसेसो, पच्चिदियतिरिक्खजोणेणीसु असंजदसम्मादिद्वी-संजदामंजदद्वारेण सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ५१ ॥

सुगममेद ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ५२ ॥

तिर्यंचोमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मगसे कम है ॥४९॥

क्योंकि, देशमतमहित उपशमसम्यक्त्वका होना दुर्लभ है ।

तिर्यंचोमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियामि वेदरुसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित है ॥ ५० ॥

गुणकार क्या है ? आधलीका असंख्यातका भाग गुणकार है । इस गुणकारसे यह जाना जाता है कि प्रतिसमय उनका उपचय होनेसे वे असंख्यातगुणित संचित हो जाते हैं, इसलिये उनसे प्रमाणके असंख्यातगुणितना उन जानी है ।

शुक्रा—यहां सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि तिर्यंचोका अल्पबहुत्व क्यों नहीं बता ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, असंख्यात धर्मकी आयुवाले भोगभूमिया तिर्यंचोमें ही क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद पाया जाता है ।

अब पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें सम्यक्त्वके अल्पबहुत्वसम्यग्धी विशेषके प्रतिपादन करनेके लिये उत्तर सूत्र कहते हैं—

मिशेषता यह है कि पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और मयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मगसे कम है ॥ ५१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पचेन्द्रियतिर्यंच योनिमतियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें वेदरुसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित है ॥ ५२ ॥

को गुणमारो ? आगलियाए असखेज्जदिमाणो । एत्थ खड्डयसम्मादिट्ठीणमप्पा-
बहुअ णत्थि, सव्वित्थीसु सम्मादिट्ठीणमुत्तमादाभावा, मणुसगह्वदिरित्तणगईसु दसण-
'मोहणीयकसत्तणाभावाच्च ।

मणुसगदीए मणुस-मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु तिसु अद्दासु उव-
समा पवेसणेण तुल्ला थोवा' ॥ ५३ ॥

तिसु नि मणुसेसु तिण्णि नि उवसामया पवेसणेण अण्णोणमपेक्खिय तुल्ला
सरिसा, चउत्तणमेत्तत्तादो । ते च्चेय थोवा, उत्तरिमगुणट्ठाणजीगपेक्खाए ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ ५४ ॥

कुदो ? हेट्ठिमगुणट्ठाणे पडिउत्तणजीगणं चेय उत्तमतकसायवीदरागछदुमत्थ-
पज्जाएण परिणामुत्तमा । संचयस्स अप्पात्रहुअ किण्ण परूविद ? ण, पवेसप्पाबहुएण
चेय तदगमादो । जदो सच्चओ णाम पवेसाहीणो', तदो पवेसप्पात्रहुएण सरिसो
सचयप्पात्रहुओ त्ति पुध ण उत्तो ।

गुणकार क्या है ? आचलीका असत्त्यातथाभाग गुणकार है । यहा पचेन्द्रियतिर्यंच
योनिमत्तियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व नहीं है, क्योंकि, सर्व प्रकारकी
क्षियोंमें सम्यग्दृष्टि जीवोंका उपपाद नहीं होता है, तथा मनुष्यगतिको छोड़कर अन्य
गतियोंमें दर्शनमोहनीयकर्मकी क्षपणाका भी अभाव है ।

मनुष्यगतिमें मनुष्य, मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यनियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन
गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ५३ ॥

सूक्त तीनो प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्वकरण आदि तीनों ही उपशामक जीव
प्रवेशसे परस्परकी अपेक्षा तुल्य अर्थात् सदृश है, क्योंकि, एक समयमें अधिकसे अधिक
चौपन जीवोंका प्रवेश पाया जाता है । तथा, ये जीव ही उपरिम गुणस्थानोंके जीवोंकी
अपेक्षा अल्प हैं ।

उपशान्तकपायवीतरागउन्नस्य जीव प्रवेशसे पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५४ ॥

क्योंकि, अधस्तन गुणस्थानोंको प्राप्त हुए जीवोंका ही उपशान्तकपायवीतराग-
उन्नस्वरूप पर्यायसे परिणमण पाया जाता है ।

शुक्रा—यहा उपशामकोंके सचयका अल्पबहुत्व क्यों नहीं बतलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, प्रवेशसम्यन्धी अल्पबहुत्वसे ही उसका ज्ञान हो
जाता है । चूँकि, सचय प्रवेशके आधीन होता है, इसलिए प्रवेशके अल्पबहुत्वसे
सचयका अल्पबहुत्व सदृश है, अतएव उसे पृथक् नहीं बतलाया ।

१ मनुष्यगती मनुष्याणामुपशमवादिप्रमत्तस्यतन्तानां सामान्यवत् । स सि १, ८

२ अ प्रती ' पवेसाहीणो ' आ कप्रत्यो ' पवेसाहिणो ' इति पाठ ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ ५५ ॥

कुदो ? अट्टत्तरसदमेत्तादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ५६ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया चेय ॥ ५७ ॥

कुदो ? खीणकसायपज्जाएण परिणदाण चेय उत्तरगुणट्ठाणुनक्कमुत्तलमा ।

सजोगिकेवली अद्ध पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ ५८ ॥

मणुस मणुसपज्जत्तएसु ओयसजोगिरासिं ठविय हेट्ठिमरासिणा ओरट्ठिय गुणगारो उप्पादेदच्चो । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जसजोगिजीने ट्ठरिय अट्टत्तरसद मुच्चा तप्पाओग्गसखेज्जखीणकसाएहि ओरट्ठिय गुणगारो उप्पादेदच्चो ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें उपशान्तकपायवीतरागछद्मस्थोंसे क्षपक जीव सख्यात-गुणित है ॥ ५५ ॥

क्योंकि, क्षपकसम्यग्धी एक गुणस्थानमें एक साथ प्रवेश करनेवाले जीवोंका प्रमाण एक सौ आठ है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों भी प्रवेशते तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ५७ ॥

क्योंकि, क्षीणकपायरूप पर्यायसे परिणत जीवोंका ही आगेके गुणस्थानोंमें उपक्रमण (गमन) पाया जाता है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥ ५८ ॥

सामान्य मनुष्य और पर्याप्त मनुष्योंमेंसे ओघ सयोगिकेवलीराशिको स्थापित करके और उसे अघस्तनराशिसे भाजित करके गुणकार उत्पन्न करना चाहिए । किन्तु मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात सयोगिकेवली जीवोंको स्थापित करके एक सौ आठ सख्याको छोड़कर उनके योग्य सख्यात क्षीणकपायवीतरागछद्मस्थोंके प्रमाणसे भाजित करके गुणकार उत्पन्न करना चाहिए ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ५९ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्ताण ओघम्हि उच्च-अप्पमत्तरासी चेम होदि । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जमेत्तो होदि । सेस सुगम ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ६० ॥

एदं पि सुगम ।

संजदासंजदा^१ संखेज्जगुणा^२ ॥ ६१ ॥

मणुस-मणुसपज्जत्तएसु संजदासजदा सखेज्जकोडिमेत्ता । मणुसिणीसु पुण तप्पाओग्गसखेज्जरूमेत्ता ति घेत्तव्वा, चट्टमाणकाले एत्थिया ति उयदेसाभावा । सेम सुगम ।

सासणसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा^३ ॥ ६२ ॥

कुदो ? तत्तो सखेज्जगुणकोडिमेत्तत्तादो । मणुसिणीसु तदो सखेज्जगुणा, तप्पाओग्गसखेज्जरूमेत्तत्तादो । सेस सुगम ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें मयोगिकेगलीसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-संयत सख्यातगुणित हैं ॥ ५९ ॥

ओघप्ररूपणामें कहीं हुई अप्रमत्तसयतोंकी राशि ही मनुष्य-सामान्य और मनुष्य-पर्याप्तक अप्रमत्तसयतोंका प्रमाण है । किन्तु मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात भाग-मात्र राशि होती है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत सख्यातगुणित हैं ॥ ६० ॥ यह सूत्र भी सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयतोंसे संयतासंयत सख्यातगुणित हैं ॥ ६१ ॥

मनुष्य सामान्य और मनुष्य पर्याप्तकोंमें संयतासयत जीव सख्यात कोटिप्रमाण होते हैं । किन्तु मनुष्यनियोंमें उनके योग्य सख्यात रूपमान होते हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि, वे इतने ही होते हैं, इस प्रकारका वर्तमान कालमें उपदेश नहीं पाया जाता । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें संयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित हैं ॥ ६२ ॥

क्योंकि, वे संयतासयतोंके प्रमाणसे सख्यातगुणित कोटिमात्र होते हैं । मनुष्य-नियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव मनुष्य सामान्य और मनुष्य पर्याप्तक सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सख्यातगुणित होते हैं, क्योंकि, उनका प्रमाण उनके योग्य सख्यात रूपमात्र है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

१ प्रतिपु 'सजदा' इति पाठ ।

२ तत्त सखेयगुणा संयतासयता । त्ति १, ८,

३ सासादनसम्यग्दृष्टय सखेयगुणा । स ति १, ८,

खइयसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ६७ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ६८ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजदहाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ६९ ॥

खीणदंसणमोहणीयाण देससजमे वड्डताणं बहूणमभावा । खीणदंसणमोहणीया पाएण असंजदा होदूण अच्छति । ते सजम पडिउज्जता पाएण महच्चयाइ चेउ पडि-
वज्जति, ण देसव्वयाइ ति उच्च होदि ।

उवसमसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७० ॥

खइयसम्मादिट्ठिसंजदासंजदेहिंतो उवसमसम्मादिट्ठिसंजदासंजदाण उहूणमुलभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७१ ॥

कुदो ? उहुनायत्तादो, सचयकालस्म उहुत्तादो वा, उवसमसम्मत्त पेक्खिय
वेदगमम्मत्तस्म सुलहत्तादो ना ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ६७ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ६८ ॥

ये तीनों ही सुख सुगम हैं ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सबसे कम
है ॥ ६९ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मका क्षय करनेवाले और देशसयममें वर्तमान बहुत
जीवोंका अभाव है । दर्शनमोहनीयका क्षय करनेवाले मनुष्य प्रायः असयमी होकर रहते
हैं । ये सयमको प्राप्त होते हुए प्रायः महाव्रतोंको ही धारण करते हैं, अणुव्रतोंको नहीं।
यह अर्थ कहा गया है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशम-
सम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ७० ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयतोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि सयतासयत मनुष्य
बहुत पाये जाते हैं ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदक-
सम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित है ॥ ७१ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षा वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी आय अधिक है,
अथवा सचयकाल बहुत है, अथवा उपशमसम्यक्त्वको देखते हुए अर्थात् उसकी अपेक्षा
वेदकसम्यक्त्वका पाना सुलभ है ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ७२ ॥

कुदो ? थोरकालमचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७३ ॥

बहुकालसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ७४ ॥

गइयसम्मत्तेण मज्जम पटिउज्जमाणजीवेहिंतो वेदगमम्मत्तेण सज्जम पटिवज्जमाण
वेषाण बहुचुलभा । मणुसिणीगयविसेमपदुप्पायणट्ठ उरिममुत्त मणदि-

णवरि विसेसो, मणुसिणीसु असजद संजदासजद-पमत्तापमत्त-
जदट्ठाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ७५ ॥

कुदो ? अप्पमत्तवेदोदण दसणमोहणीय खवेंतजीराण बहणमणुचलभा ।

उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७६ ॥

तीना प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशम-
म्यगृष्टि सयमे कम हैं ॥ ७२ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल अल्प है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्य-
गृष्टियोंसे क्षायिकमम्यगृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ७३ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल बहुत है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकमम्य-
गृष्टियोंमें वेदकसम्यगृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ७४ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यगृष्टिसे साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अपेक्षा
वेदकसम्यगृष्टिसे साथ सयमको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अधिकता पाई जाती है । अतः
मनुष्यनियोंमें होनेवाली विशेषताके प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

केवल विशेषता यह है कि मनुष्यनियोंमें असयतमम्यगृष्टि, सयतासयत, प्रमत्त
सयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यगृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ ७५ ॥

क्योंकि, अमशस्त वेदके उद्भयके साथ दशानमोहनीयको क्षपण करनेवाले जीव
गृह्यत नहीं पाये जाते हैं ।

अमयतसम्यगृष्टि आदि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यगृष्टियोंसे
उपशममम्यगृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ७६ ॥

१ प्रतिपु 'बहणचुलभा' इति पाठ ।

अप्पसत्थेदोदण^१ दसणमोहणीयं सरेतजीनेहिंते अप्पसत्थेदोदण चेन
दंसणमोहणीय उवसमेतजीराणं मणुसेसु सखेज्जगुणाणमुत्तमा ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७७ ॥

सुगममेव ।

एवं तिसु अट्ठासु ॥ ७८ ॥

एदस्मत्थो—मणुस-मणुसपज्जत्तएसु णिरुद्धेसु तिसु अट्ठासु उतसममम्मादिट्ठी
थोवा, थोवकारणत्तादो । सइयमम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा, उहुत्तरणादो । मणुसिणीसु पुण
सइयमम्मादिट्ठी थोवा, उतसममम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा । एत्थ पुवुत्तमेन कारण ।
उतमामग-उतगाण सचयस्म अप्पावहुअपरूणइमुत्तरमुत्त भणदि—

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ७९ ॥

थोवपनेसादो ।

फ्योकि, अप्रशस्त वेदके उदयके साथ दर्शनमोहनीयका क्षपण करनेवाले जीवोंसे
अप्रशस्त वेदके उदयके साथ ही दर्शनमोहनीयका उपशम करनेवाले जीव मनुष्योंमें
सख्यातगुणित पाये जाते हैं ।

अमपत्तसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानर्ती मनुष्यनियोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकमम्यग्दृष्टि सरयातगुणित है ॥ ७७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार तीनों प्रकारके मनुष्योंमें अपूर्णकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व है ॥ ७८ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—मनुष्य-सामान्य और मनुष्य पर्याप्तकोंसे निरुद्ध
अपूर्वकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव अल्प होते हैं,
फ्योकि, उनके अल्प होनेका कारण पाया जाता है । उनसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव
सख्यातगुणित होते हैं, फ्योकि, उनके बहुत होनेका कारण पाया जाता है । किन्तु
मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव अल्प हैं, और उनसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव
सख्यातगुणित हैं । यहा सख्यातगुणित होनेका कारण पूर्वोक्त ही है (देखो सूत्र न ७५) ।

उपशमक और क्षपकोंसे सचयका अल्पवहुत्वं प्ररूपण करनेके लिए उत्तर सूत्र
कहते हैं—

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें उपशमक जीव सस्ते कम हैं ॥ ७९ ॥

फ्योकि, इनका प्रवेश अल्प होता है ।

१ प्रतिपु 'अप्यमत्तवेदोदण' इति पाठ ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सब्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ७२ ॥

बुद्धो ? धोयकालसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७३ ॥

बहुकालसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७४ ॥

खइयसम्मत्तेण सजम पडिउज्जमाणजीविहितो वेदगसम्मत्तेण सजम पडिवजमाण जीनाण बहुनुत्तलमा । मणुसिणीगयत्रिसेमपदुप्पायणट्ठ उररिमसुत्त भणदि—

णवरि विसेसो, मणुसिणीसु असजद सजदासंजद-पमत्तापमत्त सजदट्टाणे सब्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ ७५ ॥

बुद्धो ? अप्पसत्थवेदोदण दसणमोहणीय खवेत्तजीनाण बहूणमणुत्तलमा ।

उवसमसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ७६ ॥

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत्त और अप्रमत्तमयत्त गुणस्थानमें उपशम-सम्यग्दृष्टि सत्रमे कम है ॥ ७२ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल अल्प है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत्त और अप्रमत्तमयत्त गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि मर्यादागुणित है ॥ ७३ ॥

क्योंकि, इनका सचयकाल बहुत है ।

तीनों प्रकारके मनुष्योंमें प्रमत्तमयत्त और अप्रमत्तमयत्त गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि मर्यादागुणित है ॥ ७४ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वके साथ समयमज्ञे प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अपेक्षा वेदकसम्यक्त्वके साथ समयमज्ञे प्राप्त होनेवाले जीवोंकी अधिकता पाई जाती है । अब मनुष्यनियोंमें होनेवाली विशेषताके प्रतिपादन करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

केवल विशेषता यह है कि मनुष्यनियोंमें अमयत्तसम्यग्दृष्टि, सयत्तासयत्त, प्रमत्त-सयत्त और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव मयमे कम है ॥ ७५ ॥

क्योंकि, अप्रशस्त वेदके उदयके साथ दर्शनमोहनीयको क्षपण करनेवाले जीव बहुत नहीं पाये जाते हैं ।

अमयत्तसम्यग्दृष्टि आदि चार गुणस्थानतीनों मनुष्यनियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि मर्यादागुणित है ॥ ७६ ॥

१ प्रतिशु 'बहुणुत्तलमा' इति पाठ ।

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेस सुवोज्झं ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ८७ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेस सुगमं ।

भवणवासिय-वाणवेतर-जोदिसियदेवा देवीओ सोधम्मीसाणकप्प-
वासियदेवीओ च सत्तमाए पुढवीए भंगो ॥ ८८ ॥

एदेसिमिदि एत्थज्झाहरो कायव्वो, अण्णहा सनघामाना । खड्डयसम्मादिट्ठीणम-
भाव पडि साधम्मुरलभा सत्तमाए पुढवीए भंगो एदेसिं होदि । अत्थदो पुण रिसो
अत्थि, तं भणिस्सामो- सच्चत्थोना भण्णवासियसाणसम्मादिट्ठी । सम्मामिच्छादिट्ठी
संखेज्जगुणा । असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए असंखे-
ज्जदिभागो । मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? जगपदरस्स असखेज्जदिभागो,
असंखेज्जाओ सेडीओ । केत्थियमेत्ताओ ? घणंगुलपढमग्गमूलस्स असखेज्जदिभाग-
मेत्ताओ । को पडिभागो ? असजदसम्मादिट्ठिरासी पडिभागो ।

गुणकार क्या है ? आघलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुषोण्य (सुगम) है ।

देवोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असख्यातगुणित हैं ॥ ८७ ॥

गुणकार क्या है ? आघलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुगम है ।

देवोंमें भवनवासी, वानव्यन्तर, ज्योतिष्क देव और देनिया, तथा सौधर्म-ईशान-
कल्पवासिनी देनिया, इनका अल्पगुह्यत्व सातवीं पृथिवीके अल्पगुह्यत्वके समान है ॥ ८८ ॥

इस सूत्रमें 'इनका' इस पदका अध्याहार करना चाहिए, अन्यथा प्रकृतमें
इसका सम्यन्ध नहीं बनता है । क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंके अभावकी अपेक्षा समानता पाई
जानेसे इन सूत्रोंके देव देवियोंका सातवीं पृथिवीके समान अल्पगुह्यत्व है । किन्तु अर्थकी
अपेक्षा कुछ विशेषता है, उसे कहते हैं- भवनवासी सासादनसम्यग्दृष्टि देव आगे कही
जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा सबसे कम हैं । उनसे भवनवासी सम्यग्मिथ्यादृष्टि
सख्यातगुणित हैं । उनसे भवनवासी असयतसम्यग्दृष्टि असख्यातगुणित हैं । गुणकार
क्या है ? आपलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । उनसे भवनवासी मिथ्यादृष्टि अस-
ख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो अस-
ख्यात जगध्रेणीप्रमाण है । वे जगध्रेणिया कितनी हैं ? घनागुलके प्रथम वर्गमूलके
असख्यातवें भागभाज हैं । प्रतिभाग क्या है ? असयतसम्यग्दृष्टि जीवराशि प्रतिभाग है ।

सच्चत्थोरा वाणेततरसासणसम्मादिट्ठी । मम्मामिच्छादिट्ठी सत्तेज्जगुणा । असजदसम्मादिट्ठी असत्तेज्जगुणा । को गुणगारो ? आगलियाए असत्तेज्जदिभागो । मिच्छादिट्ठी असत्तेज्जगुणा । को गुणगारो ? जगपदरस्म असत्तेज्जदिभागो, असत्तेज्जाओ मेडीओ । केत्तिपमेत्ताओ ? सेडीए अमत्तेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घण गुलस्म असत्तेज्जदिभागो, असत्तेज्जपदरगुलाणि वा पडिभागो । एव ओदिमियाण पि वत्तव्व । सग सगइत्थिपेदाण सग सगोवभगो । सेस सुगम ।

**सोहम्मीसाण जाव सदर सहस्सारकप्पवासियदेवेषु जहा देवगह-
भगो ॥ ८९ ॥**

जहा देवोघग्घि अप्पागहुअ उच्च, तथा एदेसिमप्पागहुग उच्चव्व । त जहा-
सच्चत्थोरा मग सगरूपत्था सासणा । सग-सगकप्पसम्मामिच्छादिट्ठिणो सत्तेज्जगुणा ।
सग-सगरूपअसजदसम्मादिट्ठिणो असत्तेज्जगुणा । मग सगमिच्छादिट्ठी असत्तेज्जगुणा ।
एत्थ गुणगारो जाणिय वत्तव्वो, एगसरूपत्ताभागा । अणतरउत्तरूपेसु असजदमम्मा

धानव्यन्तर सासादनसम्यग्दृष्टि देव आगे कही जानेवाली राशियोंकी अपेक्षा
सबसे कम है । उनसे धानव्यन्तर सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव सत्त्यातगुणित है । उनसे धान
व्यन्तर असयतसम्यग्दृष्टि देव असत्त्यातगुणित है । गुणकार क्या है ? आवलीका अस
त्त्यातवा भाग गुणकार है । धानव्यन्तर असयतसम्यग्दृष्टि देवोंसे धानव्यन्तर मिथ्यादृष्टि
देव असत्त्यातगुणित है । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असत्त्यातवा भाग गुणकार है,
जो असत्त्यात जगधेणीप्रमाण है । वे जगधेणिया कितनी हैं ? जगधेणीके असत्त्यातवे
भागमात्र हैं । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असत्त्यातवा भाग प्रतिभाग है, अधवा
असत्त्यात प्रतरागुल प्रतिभाग है ।

इसी प्रकार ज्योतिष् देवोंके अल्पबहुत्वको भी कहना चाहिए । भयतघासी
आदि निकायोंमें अपने अपने स्त्रीपेदियोंका अल्पबहुत्व अपने अपने ओघ अल्पबहुत्वके
समान है । शेष सूत्राय सुगम है ।

मौधर्म-ईशान कल्पसे लेकर शतार-सहस्रार कल्प तक कल्पनासी देवोंमें अल्प
'बहुत्व-देवगति सामान्यके अल्पबहुत्वके समान हैं ॥ ८९ ॥

जिस प्रकार सामान्य देवोंमें अल्पबहुत्वका कथन किया है, उसी प्रकार इनके
अल्पबहुत्वको कहना चाहिए । वह इस प्रकार है— अपने अपने कल्पमें रहनेवाले सासा
दनसम्यग्दृष्टि देव सबसे कम हैं । इनसे अपने अपने कल्पके सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव
सत्त्यातगुणित हैं । इनसे अपने अपने कल्पके असयतसम्यग्दृष्टि देव असत्त्यातगुणित हैं ।
इनसे अपने अपने कल्पके मिथ्यादृष्टि देव असत्त्यातगुणित हैं । यहापर गुणकार जानकर
कहना चाहिए, क्योंकि, इन देवोंमें गुणकारकी एकरूपताका अभाव है । अभी इन पीछे

दिद्विद्वाने सव्वत्थोवा उरसमसम्मादिट्ठी । गइयसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा । वेदगसमा-
दिट्ठी असखेज्जगुणा । को गुणगारो ? सव्वत्थ आपलियाए असखेज्जदिभागो चि ।
सेस सुगम ।

आणद जाव णवगेवज्जविमाणवासियदेवेसु सव्वत्थोवा सासण-
सम्मादिट्ठी ॥ ९० ॥

सुगममेदं सुत्त ।

सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ९१ ॥

एद पि सुगमं ।

मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ९२ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । कधमेद णव्वदे ? दव्वाणि-
ओगहारसुत्तादो ।

असंजदसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ९३ ॥

कहे गये कल्पोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि देव सयसे कम है ।
इनसे क्षाधिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित है । इनसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव असख्यात-
गुणित है । गुणकार क्या है ? सर्वत्र आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष
सुत्रार्थ सुगम है ।

आनत प्राणत रूपसे लेकर नगग्रैयेयक विमानों तक विमानरासी देवोंमें सासा-
दनसम्यग्दृष्टि सयसे कम हैं ॥ ९० ॥

यह सुत्र सुगम है ।

उक्त विमानोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टि देव सख्यातगुणित
हैं ॥ ९१ ॥

यह सुत्र भी सुगम है ।

उक्त विमानोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें मिथ्यादृष्टि देव असंख्यातगुणित
हैं ॥ ९२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शंका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—द्रव्यानुयोगद्वाररूपसे जाना जाता है कि उक्त कल्पोंमें मिथ्यादृष्टि
देवोंका गुणकार आवलीका असख्यातवा भाग है ।

उक्त विमानोंमें मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि देव सख्यातगुणित हैं ॥ ९३ ॥

बुद्धो ? मणुमेहिंतो आणदादिमु उत्पज्जमाणमिच्छादिद्वी पेक्खितय तथुप्पज्ज-
माणमम्मन्टिणीण संखेज्जगुणत्तादो । देवलोए मम्मत्तमिच्छत्ताणि पडिवज्जमाणनीजाण
क्खिण्य पहाणत्त ? ण, तेमि मूलरागिस्स अमरेज्जदिभागत्तादो । को गुणगारो ?
संखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिट्ठिट्ठुणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ९४ ॥

बुद्धो ? अतोमुदुत्तमालमचिदत्तादो ।

खद्वयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ ९५ ॥

बुद्धो ? मरेज्जमागरोरममालेण सचिदत्तादो । को गुणगारो ? आरलियाए
असंखेज्जदिभागो । सचयकालपडिभागेण पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागो गुणगारो
क्खिण्य उच्चदे ? ण, एमममएण पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागमेत्तजीराण उवमम
सम्मत्त पडिवज्जमाणामुलभा ।

क्योंकि, मनुष्योंसे आनत आदि विमानोंमें उत्पन्न होनेवाले मिथ्यादृष्टियोंकी
अपेक्षा पदापर उत्पन्न होनेवाले सम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित होते हैं ।

शुद्धा—देवलोकमें सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंकी प्रधानता क्यों
नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव मूलराशिके असख्यातवै
भागमात्र होते हैं ।

उक्त विमानोंमें सम्यग्दृष्टियोंका गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

आनत प्राणत कल्पसे लेकर नरग्रैरेयक तक असयत्तमस्यग्दृष्टि गुणस्थानमें
उपशमसम्यग्दृष्टि देव सगसे कम हैं ॥ ९४ ॥

क्योंकि, ये केवल अतर्मुहूर्त कालके द्वारा संचित होते हैं ।

उक्त विमानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे ध्यायिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित
हैं ॥ ९५ ॥

क्योंकि, ये सख्यात सागरोपम कालके द्वारा संचित होते हैं । गुणकार क्या है ?
आयलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शुद्धा—सचयकालरूप प्रतिभाग होनेकी अपेक्षा पल्लोपमका असख्यातवा भाग
गुणकार क्यों नहीं कहा है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, एक समयके द्वारा पल्लोपमके असख्यातवै भागमात्र
जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होते हुए पाये जाते हैं ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ९६ ॥

कुदो ? तत्थुप्पज्जमाणसइयसम्मादिट्ठीहिंतो सखेज्जगुणवेदगसम्मादिट्ठीणं तत्थु-
प्पचिदसणादो ।

अणुदिसादि जाव अवराइदविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मा-
दिट्ठिट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ९७ ॥

कुदो ? उरसमसेडीचडणोरणकिरियानावदुवसमसम्मत्तसहिटसखेज्जसज्जदाण-
मेत्थुप्पण्णाणमतोमुहुत्तसचिदाणमुत्तलभा ।

खइयसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ९८ ॥

को गुणगारो ? पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागस्म सखेज्जदिभागो । को पडि-
भागो ? सखेज्जुत्तसमसम्मादिट्ठिजीवा पडिभागो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ९९ ॥

कुदो ? खइयसम्मत्तेणुप्पज्जमाणमजदेहिंतो वेदगसम्मत्तेणुप्पज्जमाणसंजदाण सखेज्ज-

उक्त विमानोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव संख्यातगुणित
हैं ॥ ९६ ॥

क्योंकि, उन आनतादि कल्पवासी देवोंमें उत्पन्न होनेवाले क्षायिकसम्यग्दृष्टि
योंसे सख्यातगुणित वेदकसम्यग्दृष्टियोंकी वहा उत्पत्ति देखी जाती है ।

नर अनुदिशोंको आदि लेकर अपराजित नामक अनुत्तरनिमान तक विमानवासी
देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सनसे कम हैं ॥ ९७ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीपर आरोहण और अवतरणरूप क्रियामें लगे हुए, अर्थात्
चढ़ते और उतरते हुए मरकर उपशमसम्यक्त्वसहित वहा उत्पन्न हुए, और अन्तर्मुहूर्त-
कालने द्वारा संचित हुए सरयात उपशमसम्यग्दृष्टि सयत पाये जाते हैं ।

उक्त विमानोंमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव असख्यातगुणित
हैं ॥ ९८ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमके असख्यातवें भागका सख्यातवा भाग गुणकार है ।
प्रतिभाग क्या है ? सरयात उपशमसम्यग्दृष्टि जीव प्रतिभाग है ।

उक्त विमानोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव संख्यातगुणित
हैं ॥ ९९ ॥

क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वके साथ मरण कर वहा उत्पन्न होनेवाले सयतोंकी

गुणत्तादो । तं पि कथं णव्वदे ? कारणाणुसारिकज्जदंसणादो मणुसेसु खइयसम्मादिट्ठी सज्जदा थोरा, वेदगसम्मादिट्ठी सज्जदा सरेज्जगुणा, तेण तेहिदो देवेसुप्पज्जमाणमज्जदा वि तप्पडिभागिया चेत्तेचि धेत्तव्व । एत्थ सम्मत्तप्पाअहुअ चेअ, सेसगुणट्ठाणाभावा । कथमेअ णव्वदे ? एदम्हादो चेअ सुत्तादो ।

सव्वट्ठसिद्धिविमाणवासियदेवेसु असंजदसम्मादिट्ठिद्विमाणे सव्व-
त्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १०० ॥

खइयसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १०१ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १०२ ॥

एदाणि तिणिण पि सुत्ताणि सुगमाणि । सव्वट्ठसिद्धिम्मिह तेत्तीसाउट्ठिदिम्मिह असखेज्जजीअरासी किण्ण होदि ? ण, तत्थ पलिदोवमस्स सरेज्जदिभागमेत्ततरम्मिह

अपेक्षा वेदकसम्यक्त्वके साथ मरण कर यहा उत्पन्न होनेवाले सयत सख्यातगुणित होते हैं ।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—क्योंकि, 'कारणके अनुसार कार्य देखा जाता है,' इस न्यायके अनुसार मनुष्योंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयत अल्प होते हैं, उनसे वेदकसम्यग्दृष्टि सयत सख्यातगुणित होते हैं। इसलिए उनसे देवोंमें उत्पन्न होनेवाले सयत भी तत्प्रतिभागी ही होते हैं, यह अर्थ ग्रहण करना चाहिए। इन कल्पोंमें यही सत्यकृत्यसम्बन्धी अवयवद्वय है, क्योंकि, वहा शेष गुणस्थानोंका अभाव है।

शका—यह कैसे जाना जाता है ?

समाधान—इस सूत्रसे ही जाना जाता है कि अनुदिश आवि विमानोंमें केवल एक असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान होता है, शेष गुणस्थान नहीं होते हैं।

सर्वार्थसिद्धि विमानरासी देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि सबसे कम है ॥ १०० ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि देव सरयातगुणित हैं ॥ १०१ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि देव सरयातगुणित हैं ॥ १०२ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

शका—तेतीस सागरोपमनी आयुस्थितिवाले सर्वार्थसिद्धिविमानमें असख्यात जीवरक्षि क्यों नहीं होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, वहापर पत्योपमके असख्यातवर्षे भागप्रमाण बालका है, इसलिए वहा असख्यात जीवरक्षिका होना असम्भव है ।

तदसंभवा । जदि एव, तो जाणदादिदेवसे वासपुधत्तरेसु संसेज्जागलिओरद्विदपलिदो-
वममेत्ता जीवा क्खिण्ण होंति ? ण, तत्थतणमिच्छादिद्विआदीणमवहारकालस्स असंसेज्जा-
वलयत्त फिट्ठिण्ण संसेज्जागलियमेत्तअवहारकालप्पमगा । होदु चे ण, 'आणद-पाणद
जाव णरगेरज्जिमाणरासियदेवसे मिच्छादिद्विप्पहुत्ति जाव अमजदसम्मादिद्वी दव्व-
पमाणेण केरडिया, पलिदोममस्स असंसेज्जदिभागो । एदेहि पलिदोमममहरिदि अतो-
मुहुत्तेण । अनुदिसादि जाव अपराइदग्गिमाणरासियदेवसे असजदसम्मादिद्वी दव्वपमाणेण
केरडिया, पलिदोममस्स असंसेज्जदिभागो । एदेहि पलिदोमममहरिदि अतोमुहुत्तेणेत्ति' ।
एदेण दव्वमुत्तेण जुत्तीए मिद्धअसंसेज्जागलियभागहारगग्गेण सह विरोहा ।

एव गदिमग्गणा समत्ता ।

शुक्रा—यदि ऐसा है तो चरंपृथक्त्तके अन्तरसे युक्त आनतादि कल्पवासी
देवोंमें सख्यात आचलियोंसे भाजित पत्योपमप्रमाण जीव क्यों नहीं होते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा माननेपर चहाके मिथ्यादृष्टि आदिकोंके अ-
वहारकालके असख्यात आचलीपना न रहकर सख्यात आचलीमात्र अवहारकाल प्राप्त
होनेका प्रसंग आ जायगा ।

शुक्रा—यदि मिथ्यादृष्टि आदि जीवोंके अवहारकाल सख्यात आचलीप्रमाण
प्राप्त होते हैं, तो होने दो ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, ऐसा मानने पर 'आनत प्राणतकल्पसे लेकर नवग्रैवेयक
विमानवासी देवोंमें मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान तक
जीव द्रव्यप्रमाणकी अपेक्षा कितने है ? पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण हैं । इन
जीवराशियोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्तकालसे पत्योपम अपहृत होता है । नव अनुदिशोंसे लेकर
अपराजितनामक अनुत्तर विमान तक विमानवासी देवोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीव
द्रव्यप्रमाणकी अपेक्षा कितने है ? पत्योपमके असख्यातवें भागप्रमाण हैं । इन जीव
राशियोंके द्वारा अन्तर्मुहूर्तकालसे पत्योपम अपहृत होता है । इस प्रकार युक्तिसे सिद्ध
असख्यात आचलीप्रमाण भागहार जिनके गर्भमें है, ऐसे इन द्रव्यानुयोगधारके सूत्रोंके
साथ पूर्वोक्त कथनका विरोध आता है ।

इस प्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई ।

इंद्रियाणुवादेण पंचिंदिय पंचिंदियपज्जत्तएसु ओघं । णवरि
मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ १०३ ॥

एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे- सेमिंदिएसु एमगुणद्वारेणसु अप्पारहुअस्साभान-
पदुप्पायणमुहेण पंचिंदियप्पारहुअपदुप्पायणद्व पंचिंदिय पंचिंदियपज्जत्तगहण कद ।
जघा ओघम्मि अप्पारहुअं कद, तथा एत्थ पि अणूणाहिमप्पारहुअ कायव्व । णवरि
एत्थ असजदसम्मादिद्वीहिंतो मिच्छादिद्वी अणत्तगुणा त्ति अभणिदूण असखेज्जगुणा
त्ति वत्तव्व, अणत्ताण पंचिंदियाणममाग । को गुणमारो ? पदरस्स असखेज्जदिभागो,
असखेज्जाओ मेडीओ । केत्तियमेत्ताओ ? सेडीण असखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ?
घणगुलस्स असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पदरंगुलणि । अधना पंचिंदिय पंचिंदिय
पज्जत्तमिच्छादिद्वीणममखेज्जदिभागो । को पडिभागो ? सग-मगअमजदसम्मादिद्विरामी ।

इन्द्रियमार्गणाके अनुवादसे पचेन्द्रिय और पचेन्द्रियपर्याप्तकोंमें अल्पगुणत्व
औघके समान है । केवल विशेषता यह है कि असयतमम्यगृहियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव
असख्यातगुणित हैं ॥ १०३ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं- दोष इन्द्रियवाले अर्थात् पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय
पर्याप्तकोंसे अतिरिक्त जीवोंमें एक गुणस्थान होता है, इसलिये उनमें अल्पगुणत्वके
अभावके प्रतिपादनद्वारा पचेन्द्रियोंके अल्पगुणत्वके प्रतिपादन करनेके लिए सूत्रमें पचे
न्द्रिय और पचेन्द्रिय पर्याप्तक पदका ग्रहण किया है । जिस प्रकार औघमें अल्पगुणत्वका
कथन किया है, उसी प्रकार यहा भी हीनता और अधिकतासे रहित अल्पगुणत्वका कथन
करना चाहिए । केवल इतनी विशेषता है कि यहापर असयतसम्यगृष्टि पचेन्द्रियोंसे
मिथ्यादृष्टि पचेन्द्रिय अनन्तगुणित हैं, ऐसा न कहकर असख्यातगुणित हैं, ऐसा कहना
चाहिए, क्योंकि, अनन्त पचेन्द्रिय जीवोंका अभाव है । पचेन्द्रिय असयतसम्यगृष्टियोंसे
पचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं, यहा गुणकार क्या है ? जगप्रतरका
असख्यातया भाग गुणकार है, जो असख्यात जगधेणीप्रमाण है । (वे जगधेणिया कितनी
हैं ? जगधेणीके असख्यातवे भागप्रमाण ह । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातया
भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है । अथवा, पचेन्द्रिय और पचेन्द्रिय
पर्याप्तक मिथ्यादृष्टियोंका असख्यातया भाग गुणकार है । प्रतिभाग क्या है ? अपनी
सपनी असयतसम्यगृष्टि जीवराशि प्रतिभाग है ।

१ इन्द्रियाणुवादेण एवेन्द्रिय विवद्विद्वेषु गुणस्थानमेवो नास्तीत्यल्पगुणत्वमात्र । इन्द्रिय प्रत्युप्यते
पचेन्द्रियापचेन्द्रियान्ता उच्यते बहव । पंचिंदियाणां सामान्यवत् । अथ तु विधेयः मिथ्यादृष्टयो तत्त्वेषुदृष्ट्या ।

सत्थाण-सव्वपरत्थाणअप्पाग्रहुआणि एत्थ किण्ण परुविदाणि ? ण, परत्थाणादो चेव तेसि दोण्हमग्गमा ।

एव इदियमग्गणा सम्मत्ता ।

कायाणुवादेण तसकाइय तसकाइयपज्जत्तएसु ओधं । णवरि मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा' ॥ १०४ ॥

एदस्सत्थो— एगगुणट्ठाण-सेमकाएसु अप्पाग्रहुअ णत्थि चि जाणाग्रहु तसकाइय-तमकाइयपज्जत्तगहण कद । एदेसु देसु वि अप्पाग्रहुअ जघा ओघम्मि कदं, तथा कादव्व, त्रिमेसाभाना । णवरि सग-सगअसजदसम्मादिट्ठीहिंतो मिच्छादिट्ठीण अणतगुणचे पचे तप्पडिसेहट्ठमसखेज्जगुणा चि उत्तं, तसकाइय तसकाइयपज्जत्तगणमाणंतियाभानादो । को गुणगारो ? पदरस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ सेडीए असखेज्जदि-

शका—स्वस्थान अल्पग्रहुत्वं और सर्वपरस्थान अल्पग्रहुत्वं यहापर क्यों नहीं कहे ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, परस्थान अल्पग्रहुत्वंसे ही उन दोनों प्रकारके अल्पग्रहुत्वाका ज्ञान हो जाता है ।

इस प्रकार इन्द्रियमार्गणा समाप्त हुई ।

कायमार्गणाके अनुनादमे त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तकोंमें अल्पग्रहुत्वं ओघके समान है । केवल निशेषता यह है कि अमयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ १०४ ॥

इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—एकमात्र मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवाले शेष स्थावर-कायिक और त्रसकायिक लब्ध्यपर्याप्तकोंमें अल्पग्रहुत्वं नहीं पाया जाता है, यह ज्ञान करानेके लिए सूत्रमें त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तक पदका ग्रहण किया है । जिस प्रकार ओघप्ररूपणामें अल्पग्रहुत्वं कह आए हैं, उसी प्रकार त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तक, इन दोनोंमें भी अल्पग्रहुत्वं का कथन करना चाहिए, क्योंकि, ओघ-अल्पग्रहुत्वंसे इनके अल्पग्रहुत्वंमें कोई विशेषता नहीं है । केवल अपने अपने वसंत-सम्यग्दृष्टियोंके प्रमाणसे मिथ्यादृष्टियोंके प्रमाणके अनन्तगुणत्व प्राप्त होनेपर उसके प्रतिषेध करनेके लिए असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं, ऐसा कहा है, क्योंकि, त्रसकायिक और त्रसकायिक-पर्याप्तक जीवोंका प्रमाण अनन्त नहीं है । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असंख्यातत्वा भाग गुणकार है, जो जगश्रेणीके अस-

१ कायाणुवादेन स्थावरजगेषु गुणस्थानमेदमावादन्यवहुत्वाभाव । काय प्रत्युच्यते । सवतस्तेनस्कायिका जप्ता । ततो बहवः पृथिव्याकायिकाः । ततोऽप्यायिका । ततो वातकायिका । सवतोऽनन्तरा वनरपतप । त्रसकायिकानां पञ्चेन्द्रियवत् । त. मि १, ८ ।

भागमेचाओ। को पडिभागो? घणगुलस्स अमरेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पदरगुलाणि।
सेस सुगम ।

एउ कायमग्गणा समत्ता ।

जोगाणुवादेण पचमणजोगि पंचवचिजोगि-कायजोगि-ओरालिय
कायजोगासु तीसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ॥१०५॥

एदेहि उत्तसच्चजोगेहि सह उउममसेदि चढताण उक्कस्सेण चउउण्णत्तमत्थि चि
तुल्लत्त परुदि । उउग्मिगुणद्वानजीवेहिंतो ऊणा चि योना चि परुदि । एदेमि मारस
पहमप्पाउहुआण तिसु अद्वासु द्विदउउसमगा मूलपद जाटा ।

उवसतकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ १०६ ॥
सुगममेद ।

सवा संखेज्जगुणा ॥ १०७ ॥

अहुत्तरसदपरिमाणत्तादो ।

ख्यातये भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका अस
ख्यातया भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।
इस प्रकार कायमार्गणा समाप्त हुई ।

योगमार्गणाके अनुवादसे पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और
औदारिककाययोगियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी
अपेक्षा परस्पर तुल्य और अल्प है ॥ १०५ ॥

इन सूत्रोक्त सर्व योगोंके साथ उपशमध्रेणी पर चढ़नवाले उपशामक जीवोंकी
सख्या उत्कृष्टसे चौपन होती है, इसलिए उनकी तुल्यता कही है । तथा उपरिम अर्थात्
क्षपकध्रेणीसम्यग्धी गुणस्थानवर्ती जीवोंसे कम होते हैं, इसलिए उन्हें अल्प कहा है ।
इस प्रकार पाचों मनोयोगी, पाचों वचनयोगी, काययोगी और औदारिककाययोगी, इन
चारह अल्पबहुत्वोंका प्रमाण छानके लिए अपूर्वकरण आदि तीनों गुणस्थानोंमें स्थित
उपशामक मूलपद अर्थात् अल्पबहुत्वके आधार हुए ।

उक्त चारह योगवाले उपशान्तरूपायवीतरागछदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
है ॥ १०६ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त चारह योगवाले उपशान्तरूपायवीतरागछदुमत्थोंसे क्षपक जीव सख्यात
गुणित है ॥ १०७ ॥

क्योंकि, क्षपकोंकी सख्याका प्रमाण एक ही आठ है ।

* योगाभावेन बादमानवयोगिनां पचेन्द्रियवत् । काययोगिनां सामान्यवत् । स ति १, ८

सीणकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ १०८ ॥

सुगममेदं ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ १०९ ॥

एदं पि सुगम । जेसु जोगेसु सजोगिगुणद्वाण सभन्दि, तेसिं चेन्दमप्पावहुअं
वेत्तव्वं ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ११० ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया । जहा ओघमिह संखेज्जसमयसाहण कद, तहा
एत्थ पि कायच्चं ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १११ ॥

एत्थ पि जहा ओघमिह गुणगारो माहिदो तहा साहेदग्गो । णन्दि अप्पिदजोग-
जीरामिपमाणं णादूण अप्पाउडुअ कायच्च ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ११२ ॥

उक्त बारह योगनाले क्षीणरूपायनीतरागउग्रस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
हैं ॥ १०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सयोगिकेवली जीव प्रपञ्चकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ १०९ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । किन्तु उपर्युक्त बारह योगोंमेंसे जिन योगोंमें सयोगि
केवली गुणस्थान सम्भव है, उन योगोंका ही यह अल्पग्रहत्व ग्रहण करना चाहिए ।

सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सरयातगुणित है ॥ ११० ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । जिस प्रकार ओघमें सख्यात
समयरूप गुणकारका साधन किया है, उसी प्रकार यहापर भी करना चाहिए ।

सयोगिकेवलीसे उपर्युक्त बारह योगनाले अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-
सयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ १११ ॥

जिस प्रकारसे ओघमें गुणकार सिद्ध किया है, उसी प्रकारसे यहापर भी सिद्ध
करना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि शिक्षित योगवाली जीवराशिके प्रमाणको
जानकर अल्पग्रहत्व करना चाहिए ।

उक्त बारह योगनाले अप्रमत्तसयतयोंसे प्रमत्तसयत जीव मख्यातगुणित
हैं ॥ ११२ ॥

सुगममेद ।

संजदासंजदा असखेज्जगुणा ॥ ११३ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोममस्स असखेज्जदिभागो सस सुगम ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ११४ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो । कारण आणिदूण उच्चव ।

समामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ११५ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । एत्थ वि कारण णिहालिय उच्चव ।

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ११६ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो । जोगद्वान्ण समाम कादूण तेण सामण्णरासिमोवड्डिय जप्पिदजोगद्वान्ण गुणिदे इच्छिद-इच्छिदरासीओ होंति । अणेण पयारेण सच्चत्थ दच्चपमाणमुप्पाइय अप्पाउहुअ उच्चव ।

यह खूब सुगम है ।

उक्त बारह योगनाले प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत जीन असख्यातगुणित हैं ॥ ११३ ॥

गुणकार क्या है ? पत्योपमके असख्यातवें भागका सख्यातका भाग गुणकार है । शेष सूर्यार्थ सुगम है ।

उक्त बारह योगनाले सयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीन असख्यातगुणित हैं ॥ ११४ ॥

गुणकार क्या है ? आधलीका असख्यातका भाग गुणकार है । इसका कारण जानकर कहना चाहिए (देखो इसी भागका पृ २४०) ।

उक्त बारह योगनाले सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीन सख्यातगुणित हैं ॥ ११५ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । यहाँ पर भी इसका कारण स्मरण कर कहना चाहिए (देखो इसी भागका पृ २४०) ।

उक्त बारह योगनाले सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीन असख्यातगुणित हैं ॥ ११६ ॥

गुणकार क्या है ? आधलीका असख्यातका भाग गुणकार है । योगसम्यग्धा कालोका समास (योग) करके उससे सामान्यराशिको भाजित कर पुन विभक्तित योगक कालसे गुणा करनेपर इच्छित इच्छित योगवाले जीवोंकी राशिया हो जाती हैं । इस प्रकारके सयत्र द्रव्यप्रमाणको उत्पन्न करके उनका अल्पगुणत्व कहना चाहिए ।

मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा, मिच्छादिद्वी अणंतगुणा ॥११७॥

एत्थ एय संबधो कायवो । त जहा- पंचमणजोगि-पंचमचिजोगिअसजदसम्मा-
दिद्वीहिंतो तेसिं चेय जोगाण मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा । को गुणमारो ? पदरस्स
असंखेज्जदिभागो, अमखेज्जाओ सेडीओ । केचियमेत्ताओ ? सेडीए असंखेज्जदिभाग-
मेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पदरगुलाणि ।
कायजोगि-ओरालियकायजोगिअमजदसम्मादिद्वीहिंतो तेसिं चेय जोगाण मिच्छादिद्वी
अणंतगुणा । को गुणमारो ? अभयमिद्विण्हिं अणंतगुणो, सिद्धेहिं नि अणंतगुणो,
अणंताणि मवज्जीरसिपडमग्गमूलाणि चि ।

असंजदसम्मादिद्वि-संजदासंजद-पमत्तापमत्तसजदट्टाणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघं ॥ ११८ ॥

एदेसिं गुणट्टाणाण जया ओघब्धि सम्मत्तप्पावहुअं उच्च, तथा एत्थ नि
अणूणाहिंयं उच्चव ।

उक्त बारह योगनाले असयतसम्यग्दृष्टियोंसे (पाचों मनोयोगी, पाचों वचन-
योगी) मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं, और (काययोगी तथा औदारिक-
काययोगी) मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ ११७ ॥

यहापर इस प्रकार सम्बन्ध करना चाहिये । जैसे- पाचों मनोयोगी और पाचों
वचनयोगी असयतसम्यग्दृष्टियोंसे उन्हीं योगोंके मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ।
गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो असंख्यात जगश्रेणी-
प्रमाण है । ये जगश्रेणिया कितनी हैं ? जगश्रेणिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । प्रतिभाग
क्या है ? घनागुलका असंख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असंख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।
काययोगी और औदारिककाययोगी असयतसम्यग्दृष्टियोंसे उन्हीं योगोंके मिथ्यादृष्टि
जीव अनन्तगुणित हैं । गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे
भी अनन्तगुणित राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम धर्ममूलप्रमाण है ।

उक्त बारह योगनाले जीवोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि, मयतासयत, प्रमत्तसयत और
अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व ओघके समान है ॥ ११८ ॥

इन सूत्रोंके चारों गुणस्थानोंका जिस प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्प
ग्रहत्व कहा है, उसी प्रकार यहापर भी हीनता और अधिस्तासे रहित अर्थात् तत्प्रमाण
ही अल्पग्रहत्व कहना चाहिये ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ११९ ॥

सुगममेद ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ १२० ॥

एद पि सुगम ।

सखा संखेज्जगुणा ॥ १२१ ॥

अप्पिदजोगउरसामगेहिंतो अप्पिदजोगाण सखा संखेज्जगुणा । एत्थ पक्खेन
संखेणेण भूलासिमोदट्ठिय अप्पिदपम्मेणेण गुणिय इच्छिउदरासिपमाणमुप्पाएदव्व ।

ओरालियमिस्सकायजोगीसु सव्वत्थोवा सजोगिकेवली ॥ १२२ ॥

कमाडे चडणोपरणिरियापारदचालीसजीममलमादो योरा जादा ।

असजदसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १२३ ॥

कुदो ? देन णेग्गय मणुम्मेहिंतो आगतूण तिरिक्खमणुसेसुप्पण्णाण अमन-
सम्मादिट्ठीणमोरालियमिस्समिह सजोगिकेवलीहिंतो संखेज्जगुणाणमुलमा ।

इसी प्रकार उक्त बारह योगनाले जीवोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें
सम्पत्त्वसम्बन्धी अल्पगुण है ॥ ११९ ॥

यह सत्र सुगम है ।

उक्त बारह योगनाले जीवोंमें उपशामक जीव सबसे कम हैं ॥ १२० ॥

यह सत्र भी सुगम है ।

उक्त बारह योगनाले उपशामकोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १२१ ॥

विशिक्षित योगनाले उपशामकोंमें विशिक्षित योगनाले क्षपक जीव सख्यातगुणित
होते हैं । यहापर प्रक्षेप मक्षेपके द्वारा मूलजीवराशिको भाजित करके विशिक्षित प्रक्षेप
राशिके गुणा कर इच्छित राशिका प्रमाण उत्पन्न कर लेना चाहिए (देखो द्रव्यप्र
भाग ३ पृ ४८-४९) ।

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हैं ॥ १२२ ॥

फर्कोकि, कपाटसमुदातके समय आरोहण और अवतरणक्रियामें सलग्न चालीस
जीवोंमें अत्रलम्बनसे औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हो जाते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिनोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीव
सरयातगुणित हैं ॥ १२३ ॥

फर्कोकि, देव, नारकी और मनुष्योंसे आकर तिर्यच और मनुष्योंमें उत्पन्न होने
वाले जीव औदारिकमिश्रकाययोगमें सयोगिकेवली जिनोंमें सख्यात
पाये जाते हैं ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १२४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमपदम-
वग्गमूलाणि ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ १२५ ॥

को गुणगारो ? अभममिद्विएहि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि
सव्वजीवरासिपदमवग्गमूलाणि ।

असजदसम्माइट्ठिठाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १२६ ॥

दमणमोहणीयसएणुप्पण्णसद्धण्णानं जीवणमइदुल्लभत्तादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १२७ ॥

राओवसमियसम्मत्ताण जीवण बहूणमुवलमा । को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

वेउव्वियकायजोगीसु देवगदिभंगो ॥ १२८ ॥

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव
असंख्यातगुणित हैं ॥ १२४ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असंख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्त-
गुणित है ॥ १२५ ॥

गुणकार क्या है ? अमन्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित
राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव सत्रसे कम हैं ॥ १२६ ॥

क्योंकि, दर्शनमोहनीयकर्मके क्षयसे उत्पन्न हुए श्रद्धानवाले जीवोंका होना
अतिदुर्लभ है ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकसम्यग्दृष्टि संख्यातगुणित हैं ॥ १२७ ॥

क्योंकि, क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टिवाले जीव बहुत पाये जाते हैं । गुणकार क्या
है ? संख्यात समय गुणकार है ।

ऐक्यिककाययोगियोंमें (समग्र गुणस्थानवर्ती जीवोंका) अल्पबहुत्व देवगतिके
समान है ॥ १२८ ॥

एवं तिसु अद्वासु ॥ ११९ ॥

सुगममेद ।

सर्वथोवा उवसमा ॥ १२० ॥

एद पि सुगम ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १२१ ॥

अप्पिदजोगउमामगेहिंते अप्पिदजोगाणं खवा सखेज्जगुणा । एत्तं सखेवेण मूलरामिमोदयि अप्पिदपस्सेवेण गुणिय इच्छिदरासिपमाणमुप्पाएदत्तं ओरालियमिस्सकायजोगीसु सर्वथोवा सजोगिकेवली ॥ ११९ ॥
कनाडे चडणोयरणकिरियागदचालीसजीममर्लमादो थोरा जादा ।

असंजदसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १२३ ॥

कुदो ? देव णेरइय मणुस्सेहिंते आगतूण तिरिकप्पमणुमेसुप्पणाणं सम्मादिट्ठीणमोरालियमिस्समिह मजोगिकेवलीहिंते सखेज्जगुणाणमुत्तमा ।

इसी प्रकार उक्त बारह योगवाले जीवोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुण सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पगुण हैं ॥ ११९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

उक्त बारह योगवाले जीवोंमें उपशमक जीव सबसे कम हैं ॥ १२० ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

उक्त बारह योगवाले उपशमकोंमें क्षपक जीव सरवातगुणित हैं ॥ १२१ ॥

विवक्षित योगवाले उपशमकोंसे विवक्षित योगवाले क्षपक जीव सख्यातगुणित होते हैं । यद्वापर प्रक्षेप नक्षेपके द्वारा मूलजीवराशिको भाजित करके विवक्षित प्रराशिके गुणा कर इच्छित राशिका प्रमाण उत्पन्न कर लेना चाहिये (देखो द्रष्टव्य भाग ३ पृ ४८-४९) ।

औदारिकमिश्रकाययोगी जीवोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हैं ॥ १२२ ॥

क्योंकि, कपाटसमुद्भातके समय आरोहण और अवतरणप्रियामें सत्प्रचाल जीवोंके अवलम्बनसे औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली सबसे कम हो जाते हैं ।

औदारिकमिश्रकाययोगियोंमें सयोगिकेवली जिनोंसे असयत्तमम्यग्दृष्टि सख्यातगुणित हैं ॥ १२३ ॥

क्योंकि, देव, नारकी और मनुष्योंसे आकर त्रियच और मनुष्योंमें उत्पन्न होने वाले असयत्तमम्यग्दृष्टि जीव औदारिकमिश्रकाययोगमें सयोगिकेवली जिनोंसे सख्यातगुणित पाये जाते हैं ।

असंजदसम्मादिट्ठिणाणं सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १३२ ॥

कुदो ? उवसमसम्मत्तेण सह उवसमसेदिम्हि मदजीणाणमइथोत्तादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १३३ ॥

उत्तामगेहितो सखेज्जगुणअसजदसम्मादिट्ठिआदिगुणट्ठाणेहितो सचयसंभवादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३४ ॥

तिरिक्खेहितो पलिदोउमस्स अमखेज्जदिभागमेत्तेदेगसम्मादिट्ठिजीणाणं देवेसु उववादसंभवादो । को गुणगारो ? पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदो-
वमपदभन्नगमूलाणि ।

आहारकायजोगि-आहारमिस्सकायजोगीसु पमत्तसंजदट्ठाणे
सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १३५ ॥

सुगममेद ।

वैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि
जीव सत्रसे कम हैं ॥ १३२ ॥

क्योंकि, उपशमसम्यक्त्वके साथ उपशमधेणीमें भरे हुए जीवोंका प्रमाण अत्यन्त
अल्प होता है ।

वैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि-
योगोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ १३३ ॥

क्योंकि, उपशमधेणीमें भरे हुए उपशमकोंसे सख्यातगुणित असयतसम्यग्दृष्टि
आदि गुणस्थानोंकी अपेक्षा क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका सचय सम्भव है ।

वैकियिकमिश्रकाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १३४ ॥

क्योंकि, तिरिक्खेहितो पल्लोपमने असख्यातवें भागमात्र वेदकसम्यग्दृष्टि जीवोंका
देवोंमें उत्पन्न होना सम्भव है । गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग
गुणकार है, जो पल्लोपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

आहारकायजोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयत गुणस्थानमें
क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं ॥ १३५ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १३६ ॥

एद पि सुगम । उपसमसम्मादिट्ठीणमेत्थ सभगाभागा तेसिमप्पावहुग ण कहिद
किमट्ठ उवसमसम्मत्तेण जाहाररिट्ठी ण उप्पज्जदि ? उपसमसम्मत्तकालमिद अइदहरमि
तदुप्पत्तीए सभगाभागा । ण उपसममेडिमिद उपसमसम्मत्तेण आहाररिट्ठीओ लब्ध
तत्थ पमादाभावा । ण च तत्तो जोड्ढणाण आहाररिट्ठी उपलब्ध, जत्तियमेत्तेण काले
आहाररिट्ठी उप्पज्जइ, उपसमसम्मत्तस्म तत्तियमेत्तकालमउट्ठाणाभागा ।

कम्मइयकायजोगीसु सब्बत्थोवा सजोगिकेवली ॥ १३७ ॥

कुदो ? पदर लोगपूरणेसु उक्कस्सेण सट्ठिमेत्तसजोगिकेउलीणमुवलभा ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १३८ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपदम
पगमूलाणि ।

आहारककाययोगी और आहारकमिश्रकाययोगियोंमें प्रमत्तसयत्त गुणस्थानों
क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १३६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है । इन दोनों योगोंमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका होना
सम्भव नहीं है, इसलिये उनका अल्पबहुत्व कहा है ।

शङ्का—उपशमसम्यक्त्वके साथ आहारकक्रुद्धि क्यों नहीं उत्पन्न होती है ?

समाधान—क्योंकि, अल्पत अल्प उपशमसम्यक्त्वके कालमें आहारकक्रुद्धि
उत्पन्न होता सम्भव कहा है । न उपशमसम्यक्त्वके साथ उपशमधेर्णामें आहारकक्रुद्धि पाई
जाती है, क्योंकि, यहापर प्रमादका अभाव है । न उपशमधेर्णामें उतरे हुए जीवोंके भा उप
शमसम्यक्त्वके साथ आहारकक्रुद्धि पाई जाती है, क्योंकि, अितने कालके द्वारा आहारक
क्रुद्धि उत्पन्न होती है, उपशमसम्यक्त्वका उतने काल तक अवस्थान नहीं रहता है ।

कार्मणकाययोगियोंमें सयोगिकेउली जिन सबसे कम हैं ॥ १३७ ॥

क्योंकि, प्रतर और लोकपूरणसमुद्रातमें अधिकसे अधिक केउल साठ सयोगि
केवली जिन पाये जाते हैं ।

कार्मणकाययोगियोंमें सयोगिकेउली जिनोंसे सामादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यात
गुणित हैं ॥ १३८ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
असख्यात प्रथम घणमूलप्रमाण है ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १३९ ॥

को गुणमारो ? आपलियाए असंखेज्जदिभागो । एत्थ कारण णादूण वत्तन्व ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ १४० ॥

को गुणमारो ? अभयसिद्धिएहि अणंतगुणो, सिद्धेहि मि अणंतगुणो, अणताणि सन्वत्तीरासिपदमयग्गमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिणां सवत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ १४१ ॥

हुदो ? उवसममेडिम्हि उवसमसम्मत्तेण मदसज्जदाण सखेज्जत्तादो ।

खड्यसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १४२ ॥

पल्लिओमस्म असंखेज्जदिभागमेत्तखड्यसम्मादिट्ठीहिंतो असंखेज्जजीवा विग्गह निष्ण करेति ति उत्ते उच्चदे- ण ताज देवा खड्यसम्मादिट्ठिणो असंखेज्जा अक्कमेण मरंति, मणुसेसु असंखेज्जखड्यसम्मादिट्ठिप्पमगा । ण च मणुसेसु असंखेज्जा मरति,

काम्मणकाययोगियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे असयतमसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यात-
गुणित हैं ॥ १३९ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातया भाग गुणकार है । यहापर इसका कारण जानकर कहना चाहिए । (देखो इसी भागका पृ २५१ और तृतीय भागका पृ ४११)

काम्मणकाययोगियोंमें असयतमसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १४० ॥

गुणकार क्या है ? अवयसिद्धोंसे अनन्तगुणा ओर सिद्धोंसे भी अनन्तगुणा गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

काम्मणकाययोगियोंमें असयतमसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ १४१ ॥

क्योंकि, उपशमश्रेणीमें उपशमसम्यक्त्वके साथ भरे हुए मयतोंका प्रमाण संख्यात ही होता है ।

काम्मणकाययोगियोंमें असयतमसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव संख्यातगुणित हैं ॥ १४२ ॥

शुद्धा—पल्लोपमके असंख्यातये भागप्रमाण क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे असंख्यात जीव विग्रह क्यों नहीं करते हैं ?

समाधान—ऐसी आशकापर आचार्य कहते हैं कि न तो असंख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि देव एक साथ मरते हैं, अन्यथा मनुष्योंमें असंख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे होनेका प्रसंग आ जायगा । न मनुष्योंमें ही असंख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव मरते हैं

तत्थामस्रेज्जाण सम्मादिट्ठीणमभाया । ण तिरिक्खा असरेज्जा मारणतिय करेति, तत्थ
आयाणुसारियत्तादो । तेण निग्गहगदीए खइयसम्मादिट्ठिणो सरेज्जा चेव हांति ।
होता पि उवमसम्मादिट्ठीहिंतो सरेज्जगुणा, उवसमसम्मादिट्ठिकारणादो खइयसम्मा
दिट्ठिकारणस्स सरेज्जगुणत्तादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असरेज्जगुणा ॥ १४३ ॥

को गुणगारो ? पल्लोदोमस्स असरेज्जदिभागो, असरेज्जाणि पल्लोदोमपढमग्ग
मूलाणि । को पडिभागो ? खइयसम्मादिट्ठिरासिगुणिदअसरेज्जावलियाओ ।

एव जोगमग्गणा समात्ता ।

वेदानुवादेण इत्थिवेदएसु दोसु वि अद्धासु उवसमा पवेसणेण
तुल्ला थोवा' ॥ १४४ ॥

क्योंनि, उनमें असख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंका अभाव है । न असख्यात क्षायिक
सम्यग्दृष्टि नियच ही मारणातिरस्समुदात्त करने हैं, क्योंनि, उनमें आयने अनुसार व्यय
होता है । इसलिए निग्गहगतिमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सख्यात ही होते हैं । तथा
सख्यात होते हुए भी वे उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे सख्यातगुणित होते हैं, क्योंनि, उपशम
सम्यग्दृष्टियोंके (आयने) कारणसे क्षायिकसम्यग्दृष्टियाँके (आयका) कारण सख्यात
गुणा हैं ।

निशेपार्थ—कामज्जाययोगमें पाये जानेवाले उपशमसम्यग्दृष्टि जीव तो केवल
उपशमधेणीसे मरकर हा आते हैं, किंतु क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमधेणाके अतिरिक्त
असयतसम्यग्दृष्टि आदि गुणस्थानोंसे मरकर भी कामज्जाययोगमें पाये जाते हैं । अतः
उनका सख्यातगुणित पाया जाना स्वतः सिद्ध है ।

कामज्जाययोगियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदरूतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १४३ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमग्ग असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असख्यात प्रथम वग्गमूत्रप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? क्षायिकसम्यग्दृष्टि राशिसे गुणित
असख्यात आगलिया प्रतिभाग है ।

इस प्रकार योगमार्गणा समाप्त हुई ।

वेदमार्गणाके अनुवादसे स्त्रीदिश्योंमें अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों
ही गुणस्थानोंमें उपग्रामरू जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और जल्य है ॥ १४४ ॥

दसपरिमाणत्तादो' ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १४५ ॥

वीसपरिमाणत्तादो' ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १४६ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जममया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १४७ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ १४८ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोममस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पल्लिदोममपढम-
वग्गमूलाणि । को पडिभागो ? सखेज्जरूपगुणिदअसखेज्जानलियाओ ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १४९ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो । कि कारण ? असुहसामणगुणस्स

कयोंकि, स्त्रीनेदी उपशामक जीवोंका प्रमाण दस है ।

स्त्रीनेदियोंमें उपशामकोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित है ॥ १४५ ॥

कयोंकि, उनका परिमाण बीस है ।

स्त्रीनेदियोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव सख्यात-
गुणित है ॥ १४६ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

स्त्रीनेदियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव मरयातगुणित हैं ॥ १४७ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

स्त्रीनेदियोंमें प्रमत्तसयतोंमें सयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १४८ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असख्यात प्रथम धर्ममूलप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? मरयात रूपोंसे गुणित अस-
ख्यात आवलिया प्रतिभाग है ।

स्त्रीनेदियोंमें सयतासयतोंसे सासादनमम्यग्घटि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १४९ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शका — इसका कारण क्या है ?

समाधान — कयोंकि, अशुभ सासादनगुणस्थानका पाना सुलभ है ।

सुलहत्तादो ।

सम्माभिच्छाद्वी सखेज्जगुणा ॥ १५० ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । किं कारण ? सासणायादो सखेज्जगुणाय सभरादो ।

असंजदसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ १५१ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो । किं कारण ? सम्माभिच्छादिद्वि आय पेक्खिदूण असखेज्जगुणायत्तादो ।

मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ १५२ ॥

को गुणगारो ? यदरस्स अमखेज्जदिभागो, असखेज्जाओ सेडीओ सेडीए असखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पदरंगुलाणि ।

असजदसम्मादिद्वि-सजदासजदट्टाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिद्वी ॥ १५३ ॥

स्त्रीपेदियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीन सख्यातगुणित है ॥ १५० ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । इसका कारण यह है कि सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानकी आयसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंकी सख्यातगुणित भाय सम्भय है, अर्थात् दूसरे गुणस्थानमें जितने जीव आते हैं, उनसे सख्यातगुणित जीव तीसरे गुणस्थानमें आते हैं ।

स्त्रीपेदियोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे अमयतसम्यग्दृष्टि जीन असंख्यातगुणित है ॥ १५१ ॥

गुणकार क्या है ? आयलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । इसका कारण यह है कि सम्यग्मिध्यादृष्टि जीवोंकी आयको देखते हुए अमयतसम्यग्दृष्टि जीवोंकी असख्यातगुणी भाय होती है ।

स्त्रीपेदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंमें मिध्यादृष्टि जीन अमख्यातगुणित हैं ॥ १५२ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगधेणीके असख्यातवे भागमात्र असख्यात जगधेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।

स्त्रीपेदियोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि और मयतामयत गुणस्थानमें धायिकसम्यग्दृष्टि जीव मयमे कम हैं ॥ १५३ ॥

सखेज्जरुवमेत्तत्तादो ।

उवसमसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १५४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
वग्गमूलाणि । को पडिभागो ? असखेज्जात्रलियपडिभागो ।

वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १५५ ॥

को गुणगारो ? आत्रलियाए असखेज्जदिभागो ।

पमत्त अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सन्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ १५६ ॥

उवसमसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १५७ ॥

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १५८ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एवं दोसु अद्वासु ॥ १५९ ॥

क्योंकि, स्त्रीवेदियोंमें सरयात रूपमात्र ही क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव पाये जाते हैं ।
स्त्रीवेदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्य-
ग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीन असरयातगुणित हैं ॥ १५४ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
असख्यात प्रथम धर्ममूलप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? असरयात आवलिया प्रतिभाग है ।

स्त्रीवेदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि और सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे
वेदकमम्यग्दृष्टि जीन असख्यातगुणित हैं ॥ १५५ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

स्त्रीवेदियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीन
सबसे कम हैं ॥ १५६ ॥

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीन सरयातगुणित हैं ॥ १५७ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकमम्यग्दृष्टि जीन सरयातगुणित हैं ॥ १५८ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इसी प्रकार अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें स्त्रीवेदियोंका
अल्पबहुत्व है ॥ १५९ ॥

सर्वतथोपा सह्यसम्मादिद्वी, उपसमसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा, डच्चेणे साधम्मादा

सर्वतथोवा उवसमा ॥ १६० ॥

एदं सुत्त पुणरुत्त मिण्ण होदि ? ण, एत्थ पवेसएहि अहियाराभावा । मंचएण
एत्थ अहियारो, ण सो पुव्व परुविदो । तदो ण पुणरुत्तचमिदि ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १६१ ॥

सुगममेद ।

पुरिसवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुत्ता थोवा
॥ १६२ ॥

अउवण्णपमाणत्तादो ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ १६३ ॥

अहुत्तसदमेत्तादो ।

क्योंकि, इन दोनों गुणस्थानोंमें स्त्रीवदी क्षायिरसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं,
और उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उनसे सख्यातगुणित होते हैं, इस प्रकार ओषके साथ
समानता पाई जाती है ।

स्त्रीवेदियोंमें उपशमक जीव सबसे कम हैं ॥ १६० ॥

शंका—यह सूत्र पुनरुक्त क्यों नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि, यहा पर प्रवेशकी अपेक्षा इस सूत्रका अधिकार नहीं
है, किन्तु सच्यकी अपेक्षा यहापर अधिकार है और यह सच्य पहले प्ररूपण नहीं किया
गया है । इसलिये यहापर कहे गये सूत्रके पुनरुक्तता नहीं है ।

स्त्रीवेदियोंमें उपशमकासे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १६१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

पुरुषवेदियोंमें अपूर्णकरण और अनिशुचिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशमक
जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ १६२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

पुरुषवेदियोंमें उक्त दोनों गुणस्थानोंमें उपशमकासे क्षपक जीव सरयात
गुणित हैं ॥ १६३ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण एक सौ आठ है ।

अपमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १६४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १६५ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

सजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ १६६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्स असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोवमपढम-
नगमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १६७ ॥

को गुणगारो ? आनलियाए अमखेज्जदिभागो । सेस सुगम ।

सभामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ १६८ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया । सेस सुगम ।

पुरुषोदियोंमें दोनों गुणस्थानोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्त-
सयत मर्यातगुणित हैं ॥ १६४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

पुरुषोदियोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव संख्यातगुणित हैं ॥ १६५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

पुरुषोदियोंमें प्रमत्तसयतोंसे संयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १६६ ॥

गुणकार क्या है ? पत्त्योपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्त्योपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

पुरुषोदियोंमें मयतासयतोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १६७ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुगम है ।

पुरुषोदियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ १६८ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

असजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १६९ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए अमखेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १७० ॥

को गुणगारो ? पदरस्स अमखेज्जदिभागो, अमखेज्जाओ सेडीओ सेडीए असखेज्जदिभागमेत्ताओ ।

असंजदसम्मादिट्ठि-सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदद्वाने सम्मत्त-
प्पावहुअमोघं ॥ १७१ ॥

एदेसिं जथा ओघमिह मम्मत्तप्पानहुअ उच्च तथा उच्च ।

एव' दोसु अद्वासु ॥ १७२ ॥

सव्वत्थोवा उनसमसम्मादिट्ठी, सइयमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा, इच्चेदेहि माघम्मादो ।

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ १७३ ॥

पुरुषोदियोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंमें असयतमस्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १६९ ॥

गुणकार क्या है ? आधलीका असख्यातका भाग गुणकार है ।

पुरुषोदियोंमें असयतमस्यग्दृष्टियोंमें मिथ्यादृष्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ १७० ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरना असख्यातका भाग गुणकार है, जो जगधेणीके
असख्यातमें भागमान असख्यात जगधेणीप्रमाण है ।

पुरुषोदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतामयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत
गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व ओघके समान हैं ॥ १७१ ॥

इन गुणस्थानोंका जिस प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहा है,
उसी प्रकार यहापर कहना चाहिए ।

इसी प्रकार पुरुषोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिशुचितिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व हैं ॥ १७२ ॥

फ्योंकि, उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम है और क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव
उनसे सख्यातगुणित हैं, इस प्रकार ओघके साथ समानता पाई जाती है ।

पुरुषोदियोंमें उपशमक जीव सबसे कम हैं ॥ १७३ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ १७४ ॥

दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

णउंसयवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ १७५ ॥

कुदो ? पचपरिमाणत्तादो' ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १७६ ॥

कुदो ? ढमपरिमाणत्तादो' ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ १७७ ॥

कुदो ? सचयरामिपडिग्गहादो ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ १७८ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

उपशामकोंसे क्षपक जीन सरयातगुणित हैं ॥ १७४ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

नपुसकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें
उपशामक जीन प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ १७५ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण पाच है ।

नपुसकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें
उपशामकोंसे क्षपक जीन प्रवेशकी अपेक्षा सरयातगुणित है ॥ १७६ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण दस है ।

नपुसकरोदियोंमें क्षपकोंमें अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसंयत जीन
सरयातगुणित हैं ॥ १७७ ॥

क्योंकि, उनकी सचयरामिको ग्रहण किया गया है ।

नपुसकरोदियोंमें अप्रमत्तसंयतोंसे प्रमत्तमयत जीन सरयातगुणित हैं ॥ १७८ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार हैं ।

संजदासजदा असखेज्जगुणा ॥ १७९ ॥

को गुणगारो ? पलिदोममस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोममपढम वग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ १८० ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो । सेम सुग्गम ।

सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ १८१ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । कारण चित्थिय उत्तच्च ।

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ १८२ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असखेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ॥ १८३ ॥

को गुणगारो ? अभयसिद्धिण्हि अणतगुणो, अणताणि सच्चजीवरामिपढम वग्गमूलाणि ।

--

नपुसकरोदियोंमें प्रयत्नसयत्तोसे सयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १७९ ॥

गुणकार क्या है ? पद्योंपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पद्योंपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

नपुसकरोदियोंमें सयतासयत्तोसे सासादनसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १८० ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुग्गम है ।

नपुसकरोदियोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ १८१ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । इसका कारण विचारकर कहना चाहिये (देखो भाग ३ पृ ४१८ इत्यादि) ।

नपुसकरोदियाम सम्यग्मिध्यादृष्टियोंमें अभयतमस्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ १८२ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

नपुसकरोदियोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं ॥ १८३ ॥

गुणकार क्या है ? अभयसिद्धोंसे अनन्तगुणा गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजदट्ठाणे

सम्मत्तप्पावहुअमोघं

॥ १८४ ॥

असंजदसम्मादिट्ठिण ताव उच्चदे- मवत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठि । सइय-
सम्मादिट्ठि अससेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए अससेज्जदिभागो । कुदो ?
पढमपुदरीसइयसम्मादिट्ठिण पहाणत्तच्छुभगमादो । वेदगमसम्मादिट्ठि अससेज्जगुणा । को
गुणगारो ? आपलियाए अमसेज्जदिभागो ।

संजदामजदाण सवत्थोवा सइयसम्मादिट्ठि । कुदो ? मणुसपज्जत्तणउसयवेदे
मोत्तूण तेमिमणत्थाभावा । उअममसम्मादिट्ठि अमसेज्जगुणा । को गुणगारो ? पलिदो-
वमस असखेज्जदिभागो, जमसेज्जाणि पलिदोअमपढमअममूलाणि । वेदगसम्मादिट्ठि
अमसेज्जगुणा । को गुणगारो ? आपलियाए अमसेज्जदिभागो ।

पमत्त-अपमत्तसंजदट्ठाणे सवत्थोवा सइयसम्मादिट्ठि ॥ १८५ ॥

नपुंसकवेदियोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि और सयतामयत गुणस्थानमें सम्यक्त्व-
सम्बन्धी अल्पगृह्य ओघके समान है ॥ १८४ ॥

इनमेंसे पहले असयतसम्यग्दृष्टि नपुंसकवेदी जीवोंका अल्पगृह्य कहते हैं-
नपुंसकवेदी उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं । उनसे नपुंसकवेदी क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है,
क्योंकि, यहापर प्रथम पृथिवीके क्षायिकसम्यग्दृष्टि नारकी जीवोंकी प्रधानता स्वीकार
की गई है । नपुंसकवेदी क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे नपुंसकवेदी वेदकसम्यग्दृष्टि जीव अस-
ख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

सयतासयत नपुंसकवेदी जीवोंका अल्पगृह्य कहते हैं- नपुंसकवेदी सयता-
सयत क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं, क्योंकि, मनुष्य पर्याप्तक नपुंसकवेदी
जीवोंके छोड़कर उनका अन्यत्र अभाव है । नपुंसकवेदी सयतासयत क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या है ? पत्योपमका असख्यातवा
भाग गुणकार है, जो पत्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है । नपुंसकवेदी सयता-
सयत उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं । गुणकार क्या
है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

नपुंसकवेदियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव सत्रसे कम हैं ॥ १८५ ॥

कृदो ? अप्सत्येदोदण बहूण दसणमोहणीयखवगणमभावा ।

उवसमसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा ॥ १८६ ॥

वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा ॥ १८७ ॥

सुगमाणि दो नि सुत्ताणि ।

एवं दोसु अद्वासु ॥ १८८ ॥

जथा पमत्तापमत्ताण सम्मत्तप्पाग्रहुअ परुत्तिद, तथा दोसु अद्वासु सन्वत्थोवा
सह्यसम्मादिद्वी, उवसमसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा ति परुत्तेय्वर ।

सन्वत्थोवा उवसमा ॥ १८९ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९० ॥

दो नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

क्योंकि, अग्रशस्त वेदके उदयरे साथ दर्शनमोहनीयके क्षपण करनेवाले बहुत
जीवोंका अभाव है ।

नपुमकरोदियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे
उपशमसम्यग्दृष्टि जीव मर्यादागुणित हैं ॥ १८६ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ १८७ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम ह ।

इसी प्रकार नपुमकरोदियोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टचिह्नकरण, इन दोनों गुण
स्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पग्रहत्व है ॥ १८८ ॥

जिस प्रकारसे नपुसन्वेदी प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयतोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पग्रहत्व कहा है, उसी प्रकार अपूर्णकरण आदि दो गुणस्थानोंमें 'क्षायिकसम्यग्दृष्टि
जीव सयसे कम हैं, उनसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं' इस प्रकार प्ररूपण
करना चाहिए ।

नपुसकरोदियोंमें उपशमक जीव सरसे कम हैं ॥ १८९ ॥

उपशमरोंसे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ १९० ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अवगदवेदएसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ १९१ ॥

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ १९२ ॥

दो पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९३ ॥

कुदो ? अहुत्तरमदपमाणत्तादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ १९४ ॥

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया
चेव ॥ १९५ ॥

दो पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ १९६ ॥

एदं पि सुगम ।

एउ वेदमगणा समत्ता ।

अपगतनेदियोंमें अपूर्णकरण और अनिशुक्तिरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें उप-
शामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ १९१ ॥

उपशान्तकपायनीतरागछदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ १९२ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अपगतनेदियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछदुमत्थोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित
हैं ॥ १९३ ॥

क्योंकि, इनका प्रमाण एक सो आठ है ।

अपगतनेदियोंमें क्षीणकपायवीतरागछदुमत्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ १९४ ॥

सयोगिकेवली और अयोगिकेवली ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और
पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ १९५ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित है ॥ १९६ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

इस प्रकार वेदमार्गणा समाप्त हुई ।

कसायाणुवादेण कोधकसाइ माणकसाइ-मायकसाइ-लोभकसाईसु
दोसु अद्धासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा' ॥ १९७ ॥

सुगममेद ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ १९८ ॥

को गुणगतो ? दो रूपाणि ।

णवरि विसेसा, लोभकसाईसु सुहुमसांपराइय-उवसमा विसेसा
हिया ॥ १९९ ॥

दोउमामयपमेमएहितो सरखेज्जगुणे' दोगुणट्ठाणपरेसयक्खवए पेक्खिदूण
कध सुहुमसांपराइयउवसामया विसेसाहिया ? ण एस दोतो, लोभकसाएण समएसु
परिसतजीने पेक्खिदूण तेसिं सुहुमसांपराइयउवसामएसु परिसताण चउउण्णपरिमाणान

कपायमार्गणाके अनुवादसे कोउकपायी, मानरूपायी, मायारूपायी और लोभ
कपायियोम अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंम उपशामक जीन
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ १९७ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

चारों कपायगले जीनोंम उपशामकोंसे क्षपक सख्यातगुणित हैं ॥ १९८ ॥

गुणभार क्या है ? दो रूप गुणभार है ।

केवल विशेषता यह है कि लोभरूपायी जीनोंमें क्षपकोंसे सूक्ष्मसाम्परायिक
उपशामक विशेष अधिक हैं ॥ १९९ ॥

शुका—अपूर्वकरण आर अनिवृत्तिकरण, इन दो उपशामक गुणस्थानोंमें प्रवेश
करनेवाले जीवोंसे सख्यातगुणित प्रमाणवाले इन्हीं दो गुणस्थानोंमें प्रवेश करनेवाले
क्षपकोंको देखकर अर्थात् उनकी अपेक्षासे सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक विशेष अधिक
कैसे हो सकते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं, क्योंकि, लोभकपायके उदयसे क्षपकोंमें प्रवेश
करनेवाले जीवोंके देखते हुए लोभरूपायके उदयसे सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामकोंमें
प्रवेश करनेवाले और चोपन सख्यारूप परिमाणवाले उन लोभरूपायी जीवोंके विशेष

१ कपायाणुवादेण कोधमानमायास्वायाणां पुवेदवत् । x x x लोभकपायाणां द्वयोरुपशमकयोस्तुला
सत्त्वा । क्षपका सरयेयगुणा । सूक्ष्मसाम्परायउद्धतुपशमकसयता विशेषाविना । सूक्ष्मसाम्परायक्षपका
सरयेयगुणा । शवाणां समायवत् । ॥ ति १, ८

२ प्रतिशु 'सखेज्जगुणो' इति पाठ ।

विमेमाहियत्ताविरोहा । कुदो ? लोमरुमाईसु चि विमेमणादो ।

खवा संखेज्जगुणा ॥ २०० ॥

उपसामगेहिंतो सत्रगाण दुगुणत्तुवलंभा ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ २०१ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ २०२ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि । चदुकमायअप्पमत्तसंजदाणमेत्थ सदिट्ठी २ । ३ ।

४ । ७ । पमत्तसंजदाण सदिट्ठी ४ । ६ । ८ । १४ ।

अधिक होनेमें कोई विरोध नहीं है । विरोध न होनेका कारण यह है कि सूत्रमें 'लोभ-
कपायी जीवोंमें' ऐसा विशेषणपद दिया गया है ।

लोभरूपायी जीवोंमें सूक्ष्ममाप्परायिक उपशामकोंसे सूक्ष्ममाप्परायिक क्षपक
सरयातगुणित हैं ॥ २०० ॥

क्योंकि, उपशामकोंसे क्षपक जीवोंका प्रमाण दुगुणा पाया जाता है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें क्षपकोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत
सरयातगुणित हैं ॥ २०१ ॥

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत सरयातगुणित हैं ॥ २०२ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार हैं । यहा चारों कपायवाले अप्रमत्तसयतोंका
प्रमाण या अत्यरहुत्त घतलानेवाली अरुसदृष्टि इस प्रकार है- २ । ३ । ४ । ७ । तथा
चारों कपायवाले प्रमत्तसयतोंकी अरुसदृष्टि ४ । ६ । ८ और १४ है ।

निशेपार्थ—यहा पर चतु कपायी अप्रमत्त और प्रमत्त सयतोंने प्रमाणका ज्ञान
करानेके लिये जो अरुसदृष्टि घतलाई गई है, उसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य तिर्यचोंमें
मानकपायका काल सबसे कम है, उससे क्रोध, माया और लोभकपायका काल उत्तरो
तर विशेष अधिक होता है । (देखो भाग ३, पृ ४००) । तदनुसार यहा पर अप्रमत्त-
सयत और प्रमत्तसयतोंका अरुसदृष्टि द्वारा प्रमाण घतलाया गया है कि मानकपाय-
वाले अप्रमत्तसयत सरसे कम हैं, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (२) दो घतलाया गया
है । इनसे क्रोधकपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरु
सदृष्टिमें (३) तीन घतलाया गया है । इनसे मायाकपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष
अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (४) चार घतलाया गया है । इनसे लोभ-
कपायवाले अप्रमत्तसयत विशेष अधिक होते हैं, जिनका प्रमाण अरुसदृष्टिमें (७) सात
घतलाया गया है । चूंकि अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयतोंका प्रमाण दुगुणा माना गया है,
इसलिए यहा अरुसदृष्टिमें भी उनका प्रमाण क्रमशः दूना ४, ६, ८ और १४ घतलाया गया
है । यह अरुसदृष्ट्या काल्पनिक है, और उसका अभिप्राय स्थूल रूपसे चारों कपायोंका

सजदासंजदा असखेज्जगुणां ॥ २०३ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्म अमखेज्जदिभागो, अमखेज्जाणि पलिदोमपढम वगमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ २०४ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २०५ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २०६ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणां ॥ २०७ ॥

को गुणगारो ? अभससिद्धिहि अणत्तगुणो, सिद्धेहि नि अणत्तगुणो, अणत्ताणि सव्वजीवरामिपढमवगमूलाणि ।

परस्पर आपेक्षित प्रमाण वतलाना मात्र हे । इसी हीनाधिकताके लिए देखो भाग ३, पृ २३४ आदि ।

चारों कपायवाले जीवोंमें प्रमत्तमयतोंसे सयतासयत असख्यातगुणित है ॥ २०३ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमना असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमने असख्यात प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सयतासयतोंसे सासादनमभ्यगृह्णति असख्यातगुणित है ॥ २०४ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सासादनसम्यगृह्णित्योसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि सख्यात गुणित है ॥ २०५ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें सम्यग्मिथ्यादृष्टियोंसे असयतमभ्यगृह्णति असख्यात गुणित है ॥ २०६ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

चारों कपायवाले जीवोंमें असयतसम्यगृह्णित्योसे मिथ्यादृष्टि अनन्तगुणित है ॥ २०७ ॥

गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणा और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणा प्रमाण गुणकार है, जो सर्व जीवरान्तिके अनन्त प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

१ मरिचु सजदामजदासंखेज्जगुणां इति पाठ ।

२ अथ तु विशेषेण मिथ्यादृष्ट्योऽनन्तगुणा । स ति १, ८

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघं ॥ २०८ ॥

एदेसिं जधा ओघमिह सम्मत्तप्पावहुअं उचं तथा वत्तव्य, मिसेसाभागादो ।

एवं दोसु अद्दासु ॥ २०९ ॥

जधा पमत्तापमत्ताण सम्मत्तप्पावहुअ परुविदं, तथा दोसु अद्दासु परुवेदव्वं ।
णरि लोभकसायस्स एव तिसु अद्दासु त्ति वत्तव्य, जाय सुहुमसापराडओ त्ति लोभ-
कसायडउलभा । एवं सुत्ते किण्ण परुविद ? परुविदमेव पसेप्पावहुअसुत्तेण । तेणेव
एतो अत्थो णव्वदि त्ति पुध ण परुविदो ।

सन्वत्थोवा उवसमा ॥ २१० ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २११ ॥

दो रि सुत्ताणि सुगमाणि ।

चारों कपायवाले जीवोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि, सयत्तासयत्त, प्रमत्तसंयत्त और
अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व ओघके समान है ॥ २०८ ॥

इन सूत्रोक्त गुणस्थानोंका जिस प्रकार ओघमें सम्यक्त्वसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व
कहा है, उसी प्रकार यहापर कहना चाहिये, क्योंकि, दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है ।

इसी प्रकार अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें चारों कपाय-
वाले जीवोंका सम्यक्त्वसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व है ॥ २०९ ॥

जिस प्रकारसे चारों कपायवाले प्रमत्त और अप्रमत्तसयत्तोंका सम्यक्त्वसम्यग्धर्मी
अल्पवहुत्व कहा है, उसी प्रकार अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दो गुणस्थानोंमें
कहना चाहिये । किन्तु विशेषता यह है कि लोभकपायका इसी प्रकार अपूर्णकरण आदि
तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व है, ऐसा कहना चाहिये, क्योंकि, सूक्ष्म-
साम्पराय गुणस्थान तक लोभकपायका सद्भाव पाया जाता है ।

शका—यदि ऐसा है, तो इसी प्रकारसे सूत्रमें क्यों नहीं प्ररूपण किया ?

समाधान—प्रवेशसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व सूत्रके द्वारा सूत्रमें उक्त बात प्ररूपित की
ही गई है । और उसी प्रवेशसम्यग्धर्मी अल्पवहुत्व सूत्रके द्वारा यह ऊपर कहा गया अर्थ
जाना जाता है, इसलिए उसे यहापर पृथक् नहीं कहा है ।

चारों कपायवाले उपशामरू जीव सत्से कम है ॥ २१० ॥

उपशामरूसे क्षपक जीव संख्यातगुणित है ॥ २११ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

अकसाईसु सव्वत्थोवा उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था ॥२१२॥
चउत्तण्णपरिमाणत्तादो' ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था सखेज्जगुणा ॥ २१३ ॥
अदुत्तरसदपरिमाणत्तादो' ।

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुत्ता तत्तिथा
चेव ॥ २१४ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ २१५ ॥
कुदो ? अण्ण्णावियओघरामित्तादो ।

एव कसायमग्गणा समत्ता ।

णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-सुदअण्णाणि-विभगण्णाणीसु सव्व
त्थोवा सासणसम्मादिट्ठी ॥ २१६ ॥

अरुपायी जीवोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वस्थ मयमे कम हैं ॥ २१२ ॥
क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन हे ।

अरुपायी जीवोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वस्थोंमे खीणरूपायवीतरागछद्वस्थ
सख्यातगुणित हैं ॥ २१३ ॥

क्योंकि, उनका परिमाण एक सौ आठ हे ।

अरुपायी जीवोंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों ही प्रवेशकी
अपेक्षा तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २१४ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

अरुपायी जीवोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित है ॥२१५॥

क्योंकि, उनका प्रमाण ओघराशिसे न कम है, न अधिक है ।

इस प्रकार कपायमार्गणा समाप्त हुई ।

ज्ञानमार्गणाके अनुवादसे मत्त्यज्ञानी, श्रुताज्ञानी और विभगज्ञानी जीवोंमें
सासादनसम्पद्दष्टि मनसे कम हैं ॥ २१६ ॥

१ गो जी ६२९

२ ज्ञानादवादेन मत्त्यज्ञानि श्रुताज्ञानिषु सव्व स्तोमा सासादनसम्पद्दष्टय । स ति १, ८

कुदो ? पलिदोमस्स असंखेज्जदिभागपरिमाणत्तादो ।

मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा, मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २१७ ॥

एत्थ एव^१ संबंधो कीरदे- मदि-सुदअण्णाणिसासणेहिंतो मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा । को गुणगारो ? सव्वजीवरासिस्स असंखेज्जदिभागो । विभगणाणिसासणेहिंतो तेमिं चेव मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा । को गुणगारो ? पदरस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पदरंगुलाणि च्छि । अण्णहा निप्पडिसेहत्तादो ।

आभिणिबोहिय सुद ओधिणाणीसु तिसु अद्दासु उवसमा पवे-
सणेण तुल्ला थोवा^२ ॥ २१८ ॥

सुगममेदं ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २१९ ॥

फ्योकि, उनका परिमाण पल्लोपमके असंख्यातवें भागमात्र है ।

उक्त तीनों अन्नानी जीवोंमें मिथ्यादृष्टि अनन्तगुणित हैं, मिथ्यादृष्टि असंख्यात-
गुणित हैं ॥ २१७ ॥

यहापर इस प्रकार सूत्रार्थ सम्बन्ध करना चाहिए- मत्स्यज्ञानी और ध्रुताज्ञानी सासादन सम्यग्दृष्टियोंसे मत्स्यज्ञानी और ध्रुताज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित हैं । गुणकार क्या है ? सर्वजीवराशिका असंख्यातवा भाग गुणकार है । विभगज्ञानी सासादन सम्यग्दृष्टियोंसे उनके ही मिथ्यादृष्टि अर्थात् विभगज्ञानी मिथ्यादृष्टि जीव असंख्यात गुणित हैं । गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगध्रेणीके असंख्यातवें भागमात्र असंख्यात जगध्रेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असंख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असंख्यात प्रतरागुलप्रमाण है । यदि इस प्रकार सूत्रका अर्थ न किया जायगा, तो परस्पर विरोध प्राप्त होगा ।

आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी और अवधिज्ञानी जीवोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २१८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मति, श्रुत और अवधिज्ञानियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछदस्य पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २१९ ॥

१ मिथ्यादृष्टयोऽसंखेयगुणा । स ति १, ८

२ प्रतिपु 'पुद' इति पाठ ।

३ मतिश्रुतावधिज्ञानिषु सर्वत्र स्तोकाश्रित्यार

एद पि सुगम ।

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २२० ॥

को गुणगारो ? दोणि रूपाणि ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तेत्तिया चेव ॥ २२१ ॥

सुगममेद ।

अप्पमत्तसंजदा अखवा अणुवसमा सखेज्जगुणा' ॥ २२२ ॥

कूदो ? अणूणाहियओघरासित्तादो ।

पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा' ॥ २२३ ॥

को गुणगारो ? दोणि रूपाणि ।

संजदासजदा असखेज्जगुणा' ॥ २२४ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयोंसे क्षपक जीन सरूयातगुणित हैं ॥ २२० ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें क्षपकोंसे क्षीणरूपायवीतरागछद्वय पूर्णोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २२१ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें क्षीणरूपायवीतरागछद्वयोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसंयत जीन सरूयातगुणित हैं ॥ २२२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण ओघराशिसे न कम है, न अधिक है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें अप्रमत्तसंयतोंसे प्रमत्तसंयत जीन सरूयात गुणित हैं ॥ २२३ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मति, श्रुत और अधिज्ञानियोंमें प्रमत्तसंयतासे संयतासंयत जीन असरूयात गुणित हैं ॥ २२४ ॥

१ खवा रूपमाः सरूयेयगुणा । स ति १, ८

२ अप्रमत्तसंयता सरूयेयगुणा । स ति १, ८

३ प्रमत्तसंयता सरूयेयगुणा । स ति १, ८

४ संयतासंयताः (अ) सरूयेयगुणा । स ति १, ८

कुदो ? पलिदोवमस्म असखेज्जदिभागपरिमाणत्तादो । को गुणगारो ? पलिदो-
मस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलिदोमपढमग्गमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ २२५ ॥

कुदो ? पहाणीक्यदेअसजदमम्मादिट्ठिरासिच्चादो । को गुणगारो ? आत्रलियाए
असखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद पमत्त-अप्पमत्तसजदट्ठाणे सम्मत्त-
प्पावहुगमोधं ॥ २२६ ॥

जघा ओषमिह एदेमि सम्मत्तप्पाब्रह्म परुण्णिद, तथा परुण्णद्वमिदि वुत्त होदि ।

एवं तिसु अद्दासु ॥ २२७ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २२८ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २२९ ॥

एदाणि तिणिणि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

क्योंकि, उनका परिमाण पल्लोपमके असख्यातवें भागप्रमाण है । गुणकार क्या
है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके असख्यात प्रथम वर्गमूल-
प्रमाण है ।

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें संयतासयतोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीव अस-
ख्यातगुणित हैं ॥ २२५ ॥

क्योंकि, यहापर असयतसम्यग्दृष्टि देवोंकी राशि प्रधानतासे स्वीकार की गई
है । गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, संयतासयत, प्रमत्तसयत
और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व ओघके समान है ॥ २२६ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व कहा है,
उसी प्रकार यहापर भी प्ररूपण करना चाहिये, यह अर्थ कहा गया है ।

इसी प्रकार मति, श्रुत और अवधिज्ञानी जीवोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुण-
स्थानोंमें सम्यक्त्वसम्यन्धी अल्पबहुत्व है ॥ २२७ ॥

मति, श्रुत और अग्रधिज्ञानियोंमें उपशामक जीव सरसे कम हैं ॥ २२८ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सरख्यातगुणित हैं ॥ २२९ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

मणपज्जवणाणीसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ २३० ॥

उवसतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २३१ ॥

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २३२ ॥

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २३३ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा' ॥ २३४ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जरूपाणि ।

पमत्तसजदा संखेज्जगुणा' ॥ २३५ ॥

को गुणगारो ? दोष्णि रूपाणि ।

पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्वाने सक्कथोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २३६ ॥

मन पर्ययज्ञानियोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ २३० ॥

उपशान्तरूपायगीतरागछद्वस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २३१ ॥

उपशान्तरूपायगीतरागछद्वस्योसे क्षपक जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३२ ॥

धीणकपायगीतरागछद्वस्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २३३ ॥

ये सूत्र सुगम है ।

मन पर्ययज्ञानियोंमें धीणकपायगीतरागछद्वस्योसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात रूप गुणकार है ।

मन पर्ययज्ञानियोंमें अप्रमत्तमयतोसे प्रमत्तसयत जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २३५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

मन पर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ २३६ ॥

१ मन पर्ययज्ञानियु सवत स्तोकाश्रन्ता उपशामक । स सि १, ८ तथा सरया १० । गो जी ६३

२ चत्ता रूपका सख्ययगुणा । स सि १, ८ तथा सरया २० । गो जी ६३०

३ अप्रमत्तसयता सख्ययगुणा । स सि १, ८

४ प्रमत्तसयता सख्ययगुणा । स सि १, ८

उवसमसेडीदो ओदिण्णाणं उरमममेदिं चट्टमाणाणं ना उवसममम्मत्तेण योवाणं जीवाणमुवलभा ।

खइयसम्माइट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २३७ ॥

उदयसम्मत्तेण मणपञ्जगुणाणिमुणिराणं बहुगमुवलभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २३८ ॥

सुगममेद ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ २३९ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २४० ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २४१ ॥

एदाणि तिण्णि सुत्ताणि सुगमाणि, बहुमो परुमिदत्तादो ।

केवलणाणीसु सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया चेव ॥ २४२ ॥

क्योंकि, उपशमधेणीसे उत्तरनेवाले, अथवा उपशमधेणीपर चढ़नेवाले मन पर्यय ज्ञानी थावे जीव उपशमसम्यक्करणे साथ पाये जाते हैं ।

मनःपर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३७ ॥

क्योंकि, उक्त गुणस्थानोंमें क्षायिकसम्यक्करणे साथ बहुतसे मन पर्ययज्ञानी मुनियर पाये जाते हैं ।

मनःपर्ययज्ञानियोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें वेदकसम्यग्दृष्टि जीव सरयातगुणित हैं ॥ २३८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

इसी प्रकार मनःपर्ययज्ञानियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन उपशमक गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत है ॥ २३९ ॥

मनःपर्ययज्ञानियोंमें उपशमक जीव सरसे कम हैं ॥ २४० ॥

उपशमक जीवोंमें क्षयक जीव सरयातगुणित हैं ॥ २४१ ॥

ये तीनों सूत्र सुगम हैं, क्योंकि, वे बहुत बार प्ररूपण किये जा चुके हैं ।

केवलज्ञानियोंमें मयोगिकेवली और अयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा दोनों तुल्य और तानन्मात्र ही हैं ॥ २४२ ॥

तुल्ला तत्तिया सदा हेउ हेउमतभाणेण जोजेयच्चा । त कथ ? जेण तुल्ला, तेण तत्तिया त्ति । केत्तिया ते ? अट्टुत्तरमयमेत्ता ।

सजोगिकेवली अद्ध पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ २४३ ॥

पुव्वफोडिसालिहि सचय गदा सजोगिकेवल्लिणो एगममयपरेसमेहिंतो मखेज्जगुणा, मखेज्जगुणेण कालेण मिलिदत्तादो ।

एउ पाणमगणा समत्ता ।

संजमाण्णादेण सजदेसु तिसु अद्धासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ॥ २४४ ॥

मुदो ? चउत्तरणपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चैव ॥ २४५ ॥

सुगममेद ।

खवा सखेज्जगुणा ॥ २४६ ॥

तुल्य और ताद्यमान, ये दोनों शब्द हेतु हेतुमद्भावसे सम्बन्धित करना चाहिए। शका—यह कैसे ?

समाधान—चूँकि, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली परस्पर तुल्य ह, इसलिए ये ताद्यमान अर्थात् पूर्वोक्त प्रमाण ह ।

शका—य किन्तु ह ?

समाधान—ये एउ सो जाठ सख्याप्रमाण ह ।

केवलज्ञानियोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥ २४३ ॥

पुव्वफोटीप्रमाण कालमें सचयकी प्राप्त हुए अयोगिकेवली एउ समयमें प्रवेश करनेवालोंकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, ये सख्यातगुणित कालसे सचित हुए हैं ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

सयममार्गणाके अनुवादमें सयतोंमें अपूर्वस्वरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमरु जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २४४ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चोपन है ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायरीतरागछद्वयस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४५ ॥

यह सय सुगम है ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायरीतरागछद्वयस्थोंसे क्षमरु जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २४६ ॥

१ देवद्वयि अयोगिकेवल्लिणो सयोगिकेवल्लिणो सख्यातगुणा । स वि १, ८ ५

को गुणगारो ? दोणि रूपाणि । किं कारण ? जेण णाण-वेदादिमच्चयिप्येसु
उवसमेहिं चंडतजीरेहितो सगमेहिं चडतजीना दुगुणा त्ति आइरिओउदेमादो । एग-
ममएण तित्थयरा छ सगमेहिं चडति । दस पत्तेयबुद्धा चंडति, बोहियबुद्धा अटुत्तर-
सयमेत्ता, सगच्चुआ तत्तिया चेव । उरुस्सोगाहणाए दोणि सगमेहिं चडति,
जहणोगाहणाए चत्तारि, मज्झिमोगाहणाए अट्ठ । पुरिसयेदेण अटुत्तरमयमेत्ता, णउंसय-
येदेण दस, इत्थियेदेण तिस । एदेमिमद्वमेत्ता उवसमेहिं चडति' त्ति धेत्तव्य ।

क्षीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २४७ ॥

केत्तिया ? अटुत्तरसयमेत्ता । कुदो ? सजमसामण्णमिस्सरादो ।

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

शंका—क्षपकौंका गुणकार दो होनेका कारण क्या है ?

समाधान—चूकि, ज्ञान, वेद आदि सर्ग विस्तरणोंमें उपशमश्रेणीपर चढ़नेवाले
जीवोंसे क्षपकश्रेणीपर चढ़नेवाले जीव दुगुणे होते हैं, इस प्रकार आचार्योंका उपदेश
पाया जाता है ।

एक समयमें एक साथ छह तीर्थंकर क्षपकश्रेणीपर चढ़ते हैं । दश प्रत्येकबुद्ध,
एक सौ आठ बोधिनबुद्ध ओर स्वर्गसे व्युत्पन्न होकर आये हुए उतन ही जीव अर्थात् एक
सौ आठ जीव क्षपकश्रेणीपर चढ़ते हैं । उत्कृष्ट अवगाहनावाले दो जीव क्षपकश्रेणीपर
चढ़ते हैं । अग्न्य अत्रगाहनावाले चार और ठीक मध्यम अत्रगाहनावाले आठ जीव एक
साथ क्षपकश्रेणीपर चढ़ते हैं । पुण्यप्रेदके उदयके साथ एक सौ आठ, नपुंसकधेदके
उदयसे दश और हविन्दके उदयसे तिस जीव क्षपकश्रेणीपर चढ़ते हैं । इन उपर्युक्त
जीवोंके आधे प्रमाण जीव उपशमश्रेणीपर चढ़ते हैं, ऐसा अर्थ ग्रहण करना चाहिए ।

सयतोंमें क्षीणकसायवीतरागछदुमस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४७ ॥

शंका—क्षीणकसायवीतरागछदुमस्थ जितने होते हैं ?

समाधान—एक सौ आठ होते हैं, क्योंकि, यहापर सयम सामान्यकी विचक्षा
की गई है ।

१ दो चैवकीमाण चउर जन्नाण मन्निमाए उ । जहिय सय खउ मिच्छइ ओगाण्णाद तदा ॥
भव दा ५०, ४५५

२ हाति खदा इमिसमये बोधियबुद्धा य पुरिसयेदा य । उवस्सेणटुत्तरसयप्यमा सगदो य बुद्धा ॥
पवयुद्धति पयरा धिणउवसमणोदिणाणबुद्धा । दमछवसिदमवामट्ठावास जदाममो ॥ जेद्वाररुद्धमिस्सिमओगाहणा
इ पारि अट्ठे । दगवं हवति खवगा उवममगा अट्ठमेदिमि ॥ गो जी ६८९-६३१

तुल्ला तत्तिया सदा हेउ हेउमतभाणेण जोजेयन्वा । त कघ ? जेण तुल्ला,
तत्तिया त्ति । केत्तिया ते ? अट्टुत्तरसयमेचा ।

सजोगिकेवली अद्ध पडुच्च सरैज्जगुणा' ॥ २४३ ॥

पुव्वफोडिकालमिह सचय गदा सजोगिकेवल्लिणो एगममयपरेसगेहितो मव्वे
गुणा, मसैज्जगुणेण कालेण मिलिट्ठादो ।

एउ णाणमग्गणा समत्ता ।

**सजमाणुवादेण सजदेसु तिसु अट्ठासु उवसमा पवेसणेण तुल
थोवा ॥ २४४ ॥**

रुदो ? चउउण्णपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ २४५ ॥

सुगममेद ।

खवा संसैज्जगुणा ॥ २४६ ॥

तुल्य और ताप-मात्र, ये दोनों शब्द हेतु हेतुमद्भायसे सम्बन्धित करना चाहि
शक्य—यह कैसे ?

समाधान—चूँकि, मयोगिकेवली और अयोगिकेवली परस्पर तुल्य ह, इसलि
ये ताप-मात्र अर्थात् पूर्वोक्त प्रमाण ह ।

शक्य—य कितने ह ?

समाधान—ये एक सो आठ सख्याप्रमाण ह ।

केवलनानियोगमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥ २४३ ॥

पूर्वफोटीप्रमाण कालमें सचयको प्राप्त हुए मयोगिकेवली एक समयमें प्रवे
कनेवालोंका अपेक्षा सख्यातगुणित हैं, क्योंकि, ये सख्यातगुणित कालसे सचि
हए हैं ।

इस प्रकार ज्ञानमार्गणा समाप्त हुई ।

मयममार्गणाके अनुवादमें सयतोंमें अपूर्वस्मरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उ
शमक जीन प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ २४४ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन हे ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्थ जीन पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४५ ॥

यह सूत्र सुगम हे ।

सयतोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्थोंसे क्षमक जीन सख्यातगुणित हैं ॥ २४६ ॥

१ केवलनानि अयोगिकेवलिम्यः सयोगिकेवलिम्यः सख्येयगुणा— स वि २१, ८ ॥

कुदो ? पुव्वकोडिसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २५४ ॥

खओममियसम्मत्तादो ।

एव तिसु अद्दासु ॥ २५५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २५६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ २५७ ॥

ग्गदाणि तिप्पिणि मि सुत्ताणि सुग्गमाणि ।

सामाहयच्छेदोवद्वावणसुद्धिसंजदेसु दोसु अद्दासु उवसमा पवे-
सणेण तुल्ला थोवा' ॥ २५८ ॥

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २५९ ॥

अप्पमत्तसंजदा अवखवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ २६० ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल पूर्वकोटी वर्ष है ।

सयत्तोंमें प्रमत्तसयत्त और अप्रमत्तसयत्त गुणस्थानमें आयिकमम्यग्दृष्टियोंसे
नेत्रकम्यग्दृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५४ ॥

क्योंकि, नेत्रकम्यग्दृष्टियोंके आघोषशमिक नम्यक्त्व होता है (जिनकी प्राप्ति
सुलभ है) ।

इसी प्रकार सयत्तोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी
अल्पबहुत्व है ॥ २५५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सयत्तोंमें कम हैं ॥ २५६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुग्गम हैं ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयत्तोंमें अपूर्णकरण और अनिष्टात्तिकरण,
इन दोनों गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ २५८ ॥

उपशामकोंमें क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५९ ॥

क्षपकोंमें अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत्त सख्यातगुणित हैं ॥ २६० ॥

१ सयत्तानुवादेन सामायिकच्छेदोपस्थापनाशुद्धिसंयत्तेश्च द्वयोःक्षपकमन्योस्तुल्यसंख्या । स वि १, ८

२ तत्र सख्येयगुणो क्षपकौ । स सि १, ८

३ अत्रमत्ताः सख्येयगुणा । स सि १, ८

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्य तत्तिया
चेव ॥ २४८ ॥

सुगोच्छमेद ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च सखेज्जगुणा ॥ २४९ ॥

कुदो ? एगममयादो मचयकालममूहस्म सखेज्जगुणतुलभा ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा सखेज्जगुणा ॥ २५० ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया । एत्थ ओघकारण चित्तिय तत्तन्न ।

पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ॥ २५१ ॥

को गुणगारो ? टोण्णि रूपाणि ।

पमत्त-अप्पमत्तसजदट्टाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २५२ ॥

कुदो ? जतोमुहुत्तमचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २५३ ॥

सयतोंमें सयोगिकेवली और अयोगिकेवली चिन ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा
तुल्य और पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ २४८ ॥

यह चतु सुगम है ।

सयतोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित हैं ॥ २४९ ॥

क्योंकि, एग समयकी अपेक्षा सचयकालका समूह सख्यातगुणा पाया जाता है ।

सयतोंमें सयोगिकेवली जिनोंसे जलपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव
सख्यातगुणित हैं ॥ २५० ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है । यहापर राशिके ओघके समान
होनेका कारण चित्तजन कर कहना चाहिए । इसका कारण यह है कि दोनों स्थानोंपर
समय सामान्य ही चित्रित है (देखो सूत्र न ८) ।

मयतोंमें अप्रमत्तमयतोंमें प्रमत्तमयत जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५१ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पददृष्टि जीव
सयतोंमें कम हैं ॥ २५२ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल जतमुहुत्त है ।

सयतोंमें प्रमत्तमयत और अप्रमत्तमयत गुणस्थानमें उपशमसम्पददृष्टियोंसे
क्षायिकसम्पददृष्टि जीव सख्यातगुणित हैं ॥ २५३ ॥

परिहारशुद्धिसंजदेसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसजदां ॥ २६८ ॥
गुणममेद ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणां ॥ २६९ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

पमत्त अप्पमत्तसंजदट्टाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ २७० ॥

कुदो ? सइयमम्मत्तस्स पउर सभवाभावा ।

वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २७१ ॥

उदो ? सुओउममियमम्मत्तस्स पउर सभवादो । एत्थ उउमममम्मत्त णत्थि,
तीमं वामेण विणा परिहारशुद्धिसंजमस्स संभवाभावा । ण च तेत्तियकालमुउममसम्म-
त्तस्सावट्ठाणमत्थि, जेण परिहारशुद्धिसजमेण उउमममम्मत्तस्सुउलट्ठी होज ? ण च
परिहारशुद्धिमज्जइत्तस्स उउममसेडीचडणट्ठ दमणमोहणीयस्सुउसामण्ण पि सभवइ,
जेणुउममेडिड्ढि टोण्ह पि संजोगो होज ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अग्रमत्तसयत जीव सउसे कम है ॥ २६८ ॥

यह सून सुगम है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अग्रमत्तसंयतोसे अग्रमत्तसयत सरयातगुणित है ॥ २६९ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अग्रमत्तसंयत और अग्रमत्तसयत गुणस्थानमे धायिकसम्य-

ग्दष्टि जीव सउसे कम है ॥ २७० ॥

क्योंकि, धायिकसम्यक्त्वया प्रचुरतासे होना समभव नहीं है ।

परिहारशुद्धिसंयतोमं अग्रमत्तसयत और अग्रमत्तसयत गुणस्थानमे धायिकसम्य-
ग्दष्टियोमे वेदकसम्यग्दष्टि जीव सरयातगुणित है ॥ २७१ ॥

क्योंकि, धायोपशमिकसम्यक्त्वया प्रचुरतासे होना समभव है । यहा परिहारशुद्धि
मयतोमं उपशमसम्यक्त्व नहीं होता है, क्योंकि, तीस वर्षके बिना परिहारशुद्धिसंयतम
होना समभव नहीं है । और न उतने काल तक उपशमसम्यक्त्वया अवस्थान रहता
है, निमित्तसे कि परिहारशुद्धिसंयतके साथ उपशमसम्यक्त्वकी उपलब्धि हो सके ?
उमसे पात यह है कि परिहारशुद्धिसंयतको नहीं छोड़नेवाले जीवके उपशमधेणीपर
चदने लिये दशनमोहणीयकर्मका उपशमन होना भी समभव नहीं है, जिससे कि उपशम
ध्यानमे उपशमसम्यक्त्व और परिहारशुद्धिसंयत, इन दोनोंका भी संयोग हो सके ।

पमत्तसंजदा मंसेज्जगुणा' ॥ २६१ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

पमत्त अप्पमत्तसजदद्वारेण सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २६२ ॥

कुदो ? अतोमुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २६३ ॥

पुव्वकोटिसचयादो ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ २६४ ॥

उओउत्तमियम्मत्तादो ।

एव दोसु अद्दासु ॥ २६५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ २६६ ॥

खवा सखेज्जगुणा ॥ २६७ ॥

एदाणि तिण्णि नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अप्रमत्तसयतामे प्रमत्तमयत सग्गातगुणित है ॥ २६१ ॥

ये सत्त सुगम है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रमे कम हैं ॥ २६२ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहुरत है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे आयिकसम्यग्दृष्टि जीव सग्गातगुणित हैं ॥ २६३ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल पूर्वरोटी चर्य है ।

सामायिक और छेदोपस्थापनाशुद्धिसयतोंमें प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुण स्थानमें आयिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदसम्यग्दृष्टि जीव सग्गातगुणित है ॥ २६४ ॥

क्योंकि, वेदसम्यग्दृष्टियोंसे श्रायोपशमिक सम्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

इसी प्रकार उक्त जीवोंका अपूर्णकरण और अनिवृत्तिकरण, इन दोनों गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वमग्नर्धी अल्पप्रवृत्त है ॥ २६५ ॥

उक्त जीवोंमें उपशमक सत्रसे कम है ॥ २६६ ॥

उपशममेंसे क्षपक मर्यातगुणित हैं ॥ २६७ ॥

ये तीनों ही सत्त सुगम ह ।

१ प्रथमा सग्गेवद्वारा । स नि १, ८

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २७७ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पल्लिदोवमपढम-
वगामूलाणि ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २७८ ॥

को गुणगारो ? आपलियाए असंखेज्जदिभागो । कारणं जाणिदूण वत्तन्व ।

असंजदेसु सव्वत्थोवा सासणसम्मादिट्ठी ॥ २७९ ॥

कुदो ? छापलियसचयादो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २८० ॥

कुदो ? संखेज्जापलियसंचयादो ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २८१ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो । कुदो ? साभावियादो ।

सयतासयत गुणस्थानमें क्षायिकमस्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यात-
गुणित हैं ॥ २७७ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असंख्यात प्रथम धर्ममूलप्रमाण है ।

सयतासयत गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि असंख्यातगुणित
हैं ॥ २७८ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है । इसका कारण
जानकर कहना चाहिए । (देखो सूत्र न २०) ।

अमयतोंमें सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सनसे कम हैं ॥ २७९ ॥

क्योंकि, उनका सचयफाल छह आवलीमान है ।

असयतोंमें सामादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि जीव संख्यातगुणित
हैं ॥ २८० ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल संख्यात आवलीप्रमाण है ।

असयतोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित
हैं ॥ २८१ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह
स्वाभाविक है ।

१ असयतेशु सवत स्तोरा सासादनसम्यग्दृष्टय । स सि १, ८

२ सम्यग्मिध्यादृष्टय सत्थेयगुणा । स सि १, ८

३ असयतसम्यग्दृष्टयो सरथेयगुणा । स सि १, ८

सुहुमसांपराइयसुद्धिसंजदेसु सुहुमसांपराइयउवसमा थोवा'
॥ २७२ ॥

कुदो ? चउउण्णपमाणचादो ।

खवा संखेज्जगुणा' ॥ २७३ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

जधाक्खादविहारसुद्धिसंजदेसु अकसाइभगो' ॥ २७४ ॥

जधा अरुमाईणमप्पानहुग उच तधा जहाक्खादविहारसुद्धिसंजदाण पि कादव्व
मिदि उच होदि ।

सजदासंजदेसु अप्पावहुअ णत्थि' ॥ २७५ ॥

ण्यपदत्तादो । एत्थ मम्मत्तप्पानहुअ उच्चवे । तं जहा-

सजदासजदट्टाणे सव्वत्थोवा खइयसम्मादिट्ठी ॥ २७६ ॥

कुदो ? सखेज्जपमाणचादो ।

सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसयतोम सूक्ष्मसाम्परायिक उपशामक जीव अल
हैं ॥ २७२ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसयतोम उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणि
हैं ॥ २७३ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार ह ।

यथाख्यातविहारशुद्धिसयतोम अल्पबहुत्व अकपायी जीवोंके समान है ॥ २७४ ॥

जिस प्रकार अकपायी जीवोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यथाख्यात
विहारशुद्धिसयतोका भी अल्पबहुत्व करना चाहिये, यह अर्थ कहा गया है ।

सयतासयत जीवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है ॥ २७५ ॥

क्योंकि, सयतासयत जीवोंके एक ही गुणस्थान होता है । यहापर सम्बन्ध
सम्बन्धी अल्पबहुत्व कहते हैं । यह इस इस प्रकार है-

सयतासयत गुणस्थानमें ध्यायिकसम्यग्दृष्टि जीव सनसे कम है ॥ २७६ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण सख्यात ही है ।

१ सूक्ष्मसाम्परायिकशुद्धिसयतेषु उपशामकेभ्य क्षपका संखेयगुणा । ॥ ति १, ८

२ यथाख्यातविहारशुद्धिसयतेषु उपशामकपायस्य क्षीणकपाया संखेयगुणा । अथाभिकेदलिनस्ता
१५ । मयोगिनेदलिन संखेयगुणा । ॥ ति १, ८

३ सयतासयतानां नान्यस्यस्यद्वयम् । ॥ ति १, ८

दंसणाणुवादेण चक्षुदंसणि-अचक्षुदंसणीसु मिच्छादिद्विष्णुहृडि
जाव स्त्रीणकसायवीदरागच्छदुमत्था त्ति ओघं' ॥ २८६ ॥

जघा ओघन्दि एदेमिमप्यावद्गुण परूखिदं तथा एत्थ वि परूखेदव्वं, विमेषाभावा ।
विमेषपरूखणद्वमुत्तरसुत्त मणादि—

णवरि चक्षुदंसणीसु मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ २८७ ॥

को गुणगारो ? पदरस्स असंखेज्जदिमागो, असंखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए'
अमखेज्जदिमागमेत्ताओ । कुदो ? सामानियादो ।

ओधिदंसणी ओधिणाणिभंगो' ॥ २८८ ॥

केवलदंसणी केवलणाणिभंगो' ॥ २८९ ॥

दो वि मुत्ताणि सुगमाणि ।

एअ दसणमग्गणा समत्ता ।

दर्शनमार्गणाके अनुवादसे चक्षुदर्शनी और अचक्षुदर्शनी जीवोंमें मिथ्यादृष्टिसे
लेकर क्षीणकपायवीतरागछद्मस्य गुणस्थान तक अल्पबहुत्व ओघके समान हैं ॥ २८६ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानयुक्त जीवोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार
यहापर भी कहना चाहिए, क्योंकि, दोनोंमें कोई विशेषता नहीं है । अत्र चक्षुदर्शनी
जीवोंमें सम्प्रत्य विशेषताके प्ररूपण करनेके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

नियेषता यह है कि चक्षुदर्शनी जीवोंमें असंयतसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि
अमरयावगुणित हैं ॥ २८७ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असंख्यातवा भाग गुणकार है, जो असंख्यात
जगध्रेणिप्रमाण है । ये जगध्रेणिया भी जगध्रेणोंके असंख्यातवें भागमात्र हैं । इसका
कारण क्या है ? ऐसा स्वभावसे है ।

अधिदर्शनी जीवोंका अल्पबहुत्व अधिज्ञानियोंके समान है ॥ २८८ ॥

केवलदर्शनी जीवोंका अल्पबहुत्व केवलज्ञानियोंके समान है ॥ २८९ ॥

ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

इस प्रकार दर्शनमार्गणा समाप्त हुई ।

१ दसणाणुवादेण चक्षुदर्शनिना मनोयोगिवत् । अचक्षुदर्शनिना काययोगिवत् । स सि १, ८

२ अतिथु 'सेडीओ सगमेटी अमखेज्जदिमागो सेडीए' इति पाठ ।

३ अधिदर्शनिनामत्रिज्ञानिवत् । स सि १, ८ ४ केवलदर्शनिना केवलज्ञानिवत् । स सि १, ८

मिच्छादिद्वी अणतगुणा^१ ॥ २८२ ॥

को गुणगारो ? अमरसिद्धिर्एहि अणतगुणो, सिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि सब्वजीरासिपढमग्गमूलाणि । कुदो ? सामावियादो ।

असंजदसम्मादिद्विद्वाने सब्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ २८३ ॥

कुदो ? अंतोमुहुत्तसचयादो ।

खहयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ २८४ ॥

कुदो ? सागरोवमसचयादो । को गुणगारो ? आवलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? सामावियादो ।

वेदगसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ २८५ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असखेज्जदिभागो । कुदो ? सामावियादो ।

एव सजममग्गणा समत्ता ।

असंयत्तोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीव अनन्तगुणित है ॥ २८२ ॥

गुणकार क्या है ? अभव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित राशि गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम चरगमूलप्रमाण है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

असंयत्तोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ २८३ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

असंयत्तोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २८४ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल सागरोपम है । गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

असंयत्तोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदकसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २८५ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असंख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यह स्वाभाविक है ।

इस प्रकार सयममार्गणा समाप्त हुई ।

कुदो ? मणुसकिण्ह णीललेस्मियसखेज्जखइयसम्मादिट्ठिपरिग्गहादो ।

उवसमसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९५ ॥

को गुणगारो ? पलिदोउमस्स असखेज्जदिभागो । कुदो ? णेरइएसु किण्हलेस्सिएसु पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागमेत्तउउसमसम्मादिट्ठीणमुउलंभा ।

वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ २९६ ॥

को गुणगारो ? आउलियाए असंखेज्जदिभागो । सेम सुगम ।

णवरि विसेसो, काउलेस्सिएसु असंजदसम्मादिट्ठिद्वाने सब्ब-
त्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ २९७ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९८ ॥

कुदो ? पढमपुढरिहिं सचिदखइयसम्मादिट्ठिग्गहादो । को गुणगारो ? आउ-
लियाए असखेज्जदिभागो ।

क्योंकि, यहां पर कृष्ण और नीललेइयात्राले सख्यात क्षायिकसम्यग्दृष्टि मनुष्योंका ग्रहण किया गया है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेइयात्रालोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें धायिक-
सम्यग्दृष्टियोंसे उपशमसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २९५ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातया भाग गुणकार है, क्योंकि, कृष्ण-
लेइयात्राले नारकियोंमें पल्योपमके असख्यातवें भागमात्र उपशमसम्यग्दृष्टि जीवोंका
सङ्काष पाया जाता है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेइयात्रालोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशम-
सम्यग्दृष्टियोंसे वेदक्रमसम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २९६ ॥

गुणकार क्या है ? आउलीका असख्यातया भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ
सुगम है ।

केवल निशेषता यह है कि कापोतलेइयात्रालोंमें अमयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें
उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सत्रसे कम हैं ॥ २९७ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

कापोतलेइयात्रालोंमें असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे धायिक-
सम्यग्दृष्टि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ २९८ ॥

क्योंकि, यहां पर प्रथम पृथिवीमें सचित क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीवोंका ग्रहण
किया गया है । गुणकार क्या है ? आउलीका असख्यातया भाग गुणकार है ।

लेस्सानुवादेण किण्हलेस्सिय नीललेस्सिय-काउलेस्सिएसु सव्व
त्थोवा सासणसम्मादिट्ठी ॥ २९० ॥

सुगममेद ।

सम्माभिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ २९१ ॥

को गुणगारो ? सखेज्जसमया ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ २९२ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए जमखेज्जदिभागो । कुटो ? साभानियाओ ।

मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ॥ २९३ ॥

को गुणगारो ? अभसिद्धिहि अणतगुणो, मिद्धेहि वि अणतगुणो, अणताणि
मव्वजीरामिपटमग्गमूलानि ।

असंजदसम्मादिट्ठिद्वाने सव्वत्थोवा खड्डयसम्मादिट्ठी ॥ २९४ ॥

लेश्यामार्गणाके अनुवादसे कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्यानाले जीवोंमें
सासादनसम्यग्दृष्टि सबसे कम है ॥ २९० ॥

यह सब सुगम है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यानालोंमें सासादनसम्यग्दृष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादृष्टि
जीव सरयातगुणित हैं ॥ २९१ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यानालोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि
जीव जमरयातगुणित हैं ॥ २९२ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातया भाग गुणकार है, क्योंकि, यह
स्वाभाविक है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यानालोंमें असयतसम्यग्दृष्टियोंमें मिध्यादृष्टि जीव
अनन्तगुणित हैं ॥ २९३ ॥

गुणकार क्या है ? अव्यसिद्धोंसे अनन्तगुणित और सिद्धोंसे भी अनन्तगुणित
राशि गुणकार है, जो सब जीवराशिके अनन्त प्रथम वगमूलप्रमाण है ।

कृष्ण, नील और कापोतलेश्यानालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें धायिक
सम्यग्दृष्टि सबसे कम हैं ॥ २९४ ॥

सम्भामिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ३०४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जा समया ।

असंजदसम्भामिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३०५ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असंखेज्जदिभागो । सेस सुगोज्झ ।

मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३०६ ॥

को गुणगारो ? पदरस्म असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाओ सेडीओ, सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्ताओ । को पडिभागो ? घणगुलस्म असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पदंगुलाणि ।

असंजदसम्भामिच्छादिट्ठी-संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठुणे सम्मत्त-प्पावहुअमेधं ॥ ३०७ ॥

जधा ओघम्हि अप्पावहुअमेदेसिं उत्तं सम्मत्त पडि, तथा एत्थ सम्मत्तप्पावहुगं वत्तवमिदि वुत्तं होइ ।

तेजोलेइया और पञ्चलेइयावालोंमें सासादनमम्यग्दष्टियोंसे सम्यग्मिध्यादष्टि जीर सख्यातगुणित हैं ॥ ३०४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

तेजोलेइया और पञ्चलेइयावालोंमें सम्यग्मिध्यादष्टियोंसे असयतसम्यग्दष्टि जीर असख्यातगुणित हैं ॥ ३०५ ॥

गुणकार क्या है ? आघलीका असख्यातवा भाग गुणकार है । शेष सूत्रार्थ सुगम है ।

तेजोलेइया और पञ्चलेइयावालोंमें असयतसम्यग्दष्टियोंसे मिध्यादष्टि जीर असख्यातगुणित हैं ॥ ३०६ ॥

गुणकार क्या है ? जगप्रतरका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो जगध्रेणीके असख्यातवे भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है । प्रतिभाग क्या है ? घनागुलका असख्यातवा भाग प्रतिभाग है, जो असख्यात प्रतरागुलप्रमाण है ।

तेजोलेइया और पञ्चलेइयावालोंमें असयतसम्यग्दष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व ओघके समान हैं ॥ ३०७ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहापर सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व कहना चाहिये, यह अर्थ कहा गया है ।

वेदगसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ २९९ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असंखेज्जदिभागो ।

तेजोलेस्सिय-पम्मलेस्सिएसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसजदा' ॥ ३०० ॥

कुदो ? सखेज्जपरिमाणत्तादो ।

पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा' ॥ ३०१ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासजदा असखेज्जगुणा' ॥ ३०२ ॥

को गुणगारो ? पलिटोपमस्म असखेज्जदिभागो, असखेज्जाणि पलितोपमपदम
रुग्गमूलाणि ।

सासणसम्मादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३०३ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असंखेज्जदिभागो । रुदो ? मोहम्ममीमाण-सणक्कुमार
माहिंदराभिपरिग्गहादो ।

कापोतलेइयागालोमं असयत्तसम्यग्दष्टि गुणत्थानमं क्षाधिकसम्यग्दष्टियासे वेदक
सम्यग्दष्टि जीर असख्यातगुणित है ॥ २९९ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

तेजोलेइया और पद्मलेइयागालोमं अप्रमत्तसयत्त जीर सबमे कम हैं ॥ ३०० ॥

क्योंकि, उनका परिमाण सख्यात है ।

तेजोलेइया और पद्मलेइयागालोमं अप्रमत्तसयत्तोसे प्रमत्तसयत्त जीर सख्यातगुणित
हैं ॥ ३०१ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

तेजोलेइया और पद्मलेइयागालोमं प्रमत्तसयत्तोमे सयत्तासंयत्त जीर असख्यात-
गुणित हैं ॥ ३०२ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
असख्यात प्रथम पद्ममूलप्रमाण है ।

तेजोलेइया और पद्मलेइयागालोमं सयत्तासयत्तोसे सामादनसम्यग्दष्टि जीर
असख्यातगुणित हैं ॥ ३०३ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है, क्योंकि, यहा पर
सौधर्म ईशान और सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पसम्यन्धी देवराशिको ग्रहण किया गया है ।

१ तेज पद्मस्थानां सवत्ततोना अप्रमत्ता । स सि १, ८

२ प्रमत्ताः धैर्ययुगा । स सि १, ८

३ प्वमितरेषा पवेदिपवद् । स सि १, ८

को गुणगारो ? ओघसिद्धो ।

अपमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा^१ ॥ ३१४ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा^२ ॥ ३१५ ॥

को गुणगारो ? दोण्णि रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा^३ ॥ ३१६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्स अमखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमपदम-
वगमूलाणि ।

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा^४ ॥ ३१७ ॥

को गुणगारो ? आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।

सम्मामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा^५ ॥ ३१८ ॥

गुणकार क्या है ? ओघमें घतलाया गया गुणकार ही यहापर गुणकार है ।

शुक्लेश्यानालोमें सयोगिकेनली जिनोंसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तसयत
जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३१४ ॥

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

शुक्लेश्यानालोमें अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तसयत जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३१५ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

शुक्लेश्यानालोमें प्रमत्तसयतोंसे सयतासयत जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३१६ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

शुक्लेश्यानालोमें सयतासयतोंसे मासादनसम्पग्घट्टि जीव असख्यातगुणित
हैं ॥ ३१७ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्लेश्यानालोमें सासादनसम्पग्घट्टियोंसे सम्पग्मिध्यादट्टि जीव संख्यातगुणित
हैं ॥ ३१८ ॥

१ अप्रमत्तसयता सख्येयगुणा । स मि १, ८

२ प्रमत्तसयता सख्येयगुणा । स मि १, ८

३ सयतासयता (अ) सरयेयगुणा । स सि १, ८

४ सासादनसम्पग्घट्टय (अ) सख्येयगुणा । स सि १, ८

५ सम्पग्मिध्यादट्टयः सख्येयगुणा । स सि १, ८

सुकलेस्सिएसु तिसु अद्दासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा^१

॥ ३०८ ॥

सुगममेद ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३०९ ॥

कुदो ? उववण्णपमाणचादो ।

एवा संखेज्जगुणा^२ ॥ ३१० ॥

अहुत्तरसदपरिमाणचादो ।

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३११ ॥

सुगममेद ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ ३१२ ॥

एदं पि सुगम ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा^३ ॥ ३१३ ॥

शुक्लेश्यागालोंमें अपर्यकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशामक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३०८ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३०९ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चीपन है ।

शुक्लेश्यागालोंमें उपशान्तरूपायवीतरागछद्वयस्थोत्से क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३१० ॥

क्योंकि, उनका परिमाण एक सौ आठ है ।

शुक्लेश्यागालोंमें खीणरूपायवीतरागछद्वयस्य जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३११ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें सयोगिकेवली प्रवेशकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३१२ ॥

यह सूत्र भी सुगम है ।

शुक्लेश्यागालोंमें सयोगिकेवली सचयकालकी अपेक्षा सख्यातगुणित हैं ॥ ३१३ ॥

^१ शुक्लेश्यानां सवत त्तीका उपशमना । स मि १, ८

^२ क्षपका सख्येयगुणा । स सि १, ८

^३ सयोगिकेवलिन सख्येयगुणा । सि १, ८

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सम्मत्तप्पावहुगमोघं
॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोघम्हि सम्मत्तप्पानहुग वुत्त, तहा वत्तव्य ।

एवं तिसु अद्दासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिणिण पि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एव लेस्सामगणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिणसु मिच्छाइट्ठी जाव अजोगिकेवालि
ति ओघं' ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पानहुअ अणूणाहिय उत्तवं ।

शुक्ललेख्यानालोंमें संयतासयत, प्रमत्तसंयत और अग्रमत्तसयत गुणस्थानमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानोंका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व कहा है,
वसी प्रकार यहापर भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार शुक्ललेख्यानालोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व-
सम्बन्धी अल्पनहुत्व है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सनसे कम हैं ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार लेख्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादमें भव्यसिद्धोंमें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुण-
स्थान तक जीयोंका अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्पनहुत्व हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात्
वर्तमान ही कहना चाहिए ।

१ अ-आश्ला 'लेस्सामगणा' इति पाठ ।

२ मन्वाणुवादेन मन्याना सामायकत् । स सि १, ८

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा' ॥ ३१९ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए अमखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा' ॥ ३२० ॥

आरणच्चुदरासिस्स पहाणत्तपरियप्पणादो ।

असंजदसम्मादिद्विद्वाने सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिद्वी ॥ ३२१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

खइयसम्मादिद्वी असखेज्जगुणा ॥ ३२२ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असखेज्जदिभागो ।

वेदगसम्मादिद्वी संखेज्जगुणा ॥ ३२३ ॥

सओनसमियसम्मत्तादो ।

गुणकार क्या है ? सरयात समय गुणकार है ।

शुक्लेश्यागालोंमें सम्यग्मिध्यादृष्टियोंसे मिध्यादृष्टि जीन असरयातगुणित हैं ॥ ३१९ ॥

गुणकार क्या है ? भावलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्लेश्यागालोंमें मिध्यादृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि जीन सख्यातगुणित हैं ॥ ३२० ॥

फ्योंकि, यहापर धारण अच्युतरूपसम्बन्धी देधराशिकी प्रधानता विनक्षित है ।

शुक्लेश्यागालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीव सबसे कम हैं ॥ ३२१ ॥

फ्योंकि, उनका सचयकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

शुक्लेश्यागालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीन असरयातगुणित हैं ॥ ३२२ ॥

गुणकार क्या है ? भावलीका असरयातवा भाग गुणकार है ।

शुक्लेश्यागालोंमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदक सम्यग्दृष्टि सरयातगुणित हैं ॥ ३२३ ॥

फ्योंकि, वेदकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायोपशमिर सम्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

१ मिध्यादृष्टयोऽसख्यगुणा । स ति १, ८

२ असयतसम्यग्दृष्टयोऽसख्यगुणा (१) । स ति १, ८

संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे

सम्मत्तप्पावहुगमोघं

॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोघमिह सम्मत्तप्पावहुग वुत्त, तहा वत्तव्वं ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिणिं वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एउ लेस्सामगणा' समत्ता ।

भवियाणुवादेण भवसिद्धिणसु मिच्छाइट्ठी जाव अजोगिकेवालि
ति ओघं' ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पावहुगं अणूणाहिय उत्तव्वं ।

शुक्ललेश्यागालोंमें संयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें
सम्यक्त्वममगन्धी अल्पगुह्य ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानोंका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पगुह्य कहा है,
उसी प्रकार यहापर भी कहना चाहिए ।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यागालोंमें अपूर्णरुण आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व-
ममगन्धी अल्पगुह्य है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीन सगसे कम है ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षपक जीन संख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धामें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेनली गुण-
स्थान तरु जीनोंका अल्पगुह्य ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्पगुह्य हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात्
तत्प्रमाण ही कहना चाहिए ।

१ अ आपलो 'लेस्सामगणा' इति पाठ ।

२ मया अनुवादने मन्थाना सामायवन् । स वि १, ८

को गुणगारो ? सखेज्जा समया ।

मिच्छादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३१९ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए असखेज्जदिभागो ।

असजदसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा' ॥ ३२० ॥

आरणच्चुदरासिस्स पहाणत्तपरियप्पणादो ।

असजदसम्मादिट्ठिद्वाने सब्बत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३२१ ॥

कुदो ? अतोमुहुत्तसचयादो ।

एइयसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३२२ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए असखेज्जदिभागो ।

वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ३२३ ॥

एओरसमियसम्मत्तादो ।

गुणकार क्या है ? सख्यात समय गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें सम्पग्मिअ्यादृष्टियोंसे मिथ्यादृष्टि जीन असख्यातगुणित हैं ॥ ३१९ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें मिथ्यादृष्टियोंसे असयतसम्यग्दृष्टि जीन सख्यातगुणित हैं ॥ ३२० ॥

क्योंकि, यहापर आरण अच्युनकरूपमग्गधी देवराशिकी प्रधानता विवक्षित है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टि जीन सबसे कम हैं ॥ ३२१ ॥

क्योंकि, उनका सचयकाल अन्तमुहूर्त है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें उपशमसम्यग्दृष्टियोंसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीन असख्यातगुणित हैं ॥ ३२२ ॥

गुणकार क्या है ? आचलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

शुक्कलेश्यानालोमें असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंसे वेदक सम्यग्दृष्टि सख्यातगुणित हैं ॥ ३२३ ॥

क्योंकि, वेदकसम्यग्दृष्टियोंके क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होता है (जिसकी प्राप्ति सुलभ है) ।

१ मिथ्यादृष्टयोऽन्येषुगुणा । ■ सि १, ८

२ असयतसम्यग्दृष्टयोर्ज्ञेयगुणा (१) । स सि १, ८

सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्टाणे सम्मत्तप्पावहुगमोघं

॥ ३२४ ॥

जधा एदेसिमोघमिह सम्मत्तप्पानहुग वुत्त, तहा नत्तन्वं ।

एवं तिसु अद्वासु ॥ ३२५ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३२६ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३२७ ॥

एदाणि तिणिं नि सुत्ताणि सुगमाणि ।

एन लेस्सामगणा' समत्ता ।

भविष्याणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छाइट्ठी जाव अजोगिकेवालि
ति ओघं' ॥ ३२८ ॥

एत्थ ओघअप्पानहुअ अणूणाहिय वत्तन्व ।

शुक्ललेश्यागालोंमें संयतामयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें
सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२४ ॥

जिस प्रकार इन गुणस्थानोंका ओघमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पनहुत्व कहा है,
वही प्रकार यहापर भी कहना चाहिये ।

इसी प्रकार शुक्ललेश्यागालोंमें अपूर्णरूप आदि तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्व-
सम्बन्धी अल्पनहुत्व है ॥ ३२५ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामक जीव सत्रसे कम हैं ॥ ३२६ ॥

उपशामकोंसे क्षयक जीव सख्यातगुणित हैं ॥ ३२७ ॥

ये तीनों ही सूत्र सुगम ह ।

इस प्रकार लेश्यामार्गणा समाप्त हुई ।

भव्यमार्गणाके अनुवादसे भव्यसिद्धामें मिथ्यादृष्टिसे लेकर अयोगिकेवली गुण-
स्थान तक जीवोंका अल्पनहुत्व ओघके समान है ॥ ३२८ ॥

यहापर ओघसम्बन्धी अल्पनहुत्व हीनता और अधिकतासे रहित अर्थात्
तत्प्रमाण ही कहना चाहिये ।

१ अ-आप्रला 'लेस्सामगणा' इति पाठ ।

२ भव्यानुवादेन भव्यानां सामान्यत्वं । ॥ सि १, ८

अभवसिद्धिषु अप्पाबहुअ णत्थि' ॥ ३२९ ॥

कृदो ! एगपदत्तादो ।

एव भनियमग्गणा समत्ता ।

सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिट्ठीसु ओधिणाणिभंगो ॥ ३३० ॥

जघा ओधिणाणीणमप्पाबहुअ परुत्तिद, तथा एत्थ परुत्तेद्वं । णवरि सज्जोगि-
अज्जोगिपदाणि वि एत्थ अत्थि, सम्मत्तसामण्णे अहियारादो ।

खइयसम्मादिट्ठीसु तिसु अद्दासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा'
॥ ३३१ ॥

तप्पाओग्गसखेज्जपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागच्छदुमत्था तत्तिया चैव' ॥ ३३२ ॥
सुगममेद ।

अमव्यसिद्धोंमें अल्पबहुत्व नहीं है ॥ ३२९ ॥

क्योंकि, उनके एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है ।

इस प्रकार भव्यमार्गणा समाप्त हुई ।

सम्यक्त्वमार्गणाके अनुवादसे सम्यग्दृष्टि जीवोंमें अल्पबहुत्व अधिनानियोंके
समान है ॥ ३३० ॥

जिस प्रकार ज्ञानमार्गणामें अवधिज्ञानियोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार
यहापर भी कहना चाहिए । केवल विशेषता यह है कि सयोगिकेवली ओर अयोगि
केवली, ये दो गुणस्थानपद यहापर होते हैं, क्योंकि, यहापर सम्यक्त्वसामान्यका
अधिकार है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें अपूर्वकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमक जीव
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३३१ ॥

क्योंकि, उनका तत्प्रायोग्य सख्यात प्रमाण है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें उपशान्तकपायवीतरागछद्मस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही
हैं ॥ ३३२ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ कमन्यानां नास्त्यल्पबहुत्वम् । स ति १, ८

२ सम्यक्त्वादिवादेन क्षायिकसम्यग्दृष्टिषु सर्वतः स्तोकाशब्दवार उपशमका । स ति १, ८

३ इदेषां प्रमत्तानां सामा यवत् । ॥ मि १, ८

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३३३ ॥

खीणकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३३४ ॥

सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया चेव ॥ ३३५ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

सजोगिकेवली अद्धं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ३३६ ॥

गुणगारो ओघसिद्धो, खड्यसम्मत्तरिहिदमजोगीणमभाया ।

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ३३७ ॥

को गुणगारे ? तप्पाओग्गसखेज्जस्वाणि ।

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ३३८ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

क्षायिकमभ्यगृह्णित्योमं उपशान्तरूपायगीतरागछद्वन्द्वोसे क्षपक जीव संख्यात-
गुणित है ॥ ३३३ ॥

क्षीणरूपायवीतरागछद्वन्द्वस्थ पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३३४ ॥

सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, ये दोनों ही प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और
पूर्वाक्त प्रमाण ही है ॥ ३३५ ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

सयोगिकेवली जिन संचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित है ॥ ३३६ ॥

यहापर गुणकार ओत्र कथित है, क्योंकि, क्षायिकसम्यक्त्वे रहित सयोगि-
कवली नहीं पाये जाते हैं ।

क्षायिकसम्यगृह्णित्योमं अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमयत जीव संख्यात-
गुणित है ॥ ३३७ ॥

गुणकार क्या है ? अप्रमत्तसयतोंके योग्य संख्यातरूप गुणकार है ।

क्षायिकमभ्यगृह्णित्योमं अप्रमत्तसयतोंसे प्रमत्तमयत जीव संख्यातगुणित
है ॥ ३३८ ॥

गुणकार क्या है ? वो रूप गुणकार है ।

संजदासंजदा संखेज्जगुणा ॥ ३३९ ॥

मणुसगदि मोत्तूण अण्णत्थ खइयसम्मादिट्ठिसंजदासंजदाणमभावा ।

असंजदसम्मादिट्ठि असंखेज्जगुणा ॥ ३४० ॥

को गुणगारो ? पलिदोममस्स असखेज्जदिमागो, असखेज्जाणि पलिदोमपदम वगमूलानि ।

असजदसम्मादिट्ठि सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदद्वारे खइय सम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३४१ ॥

एदस्म अहिप्पाओ- जेण खइयसम्मत्तस्स एदेसु गुणद्वारेसु भेदो णत्थि, तेण णत्थि मम्मत्तप्पारहुग, एयपयत्तादो । एसो अत्थो एदेण परुत्तिदो होदि ।

वेदगसम्मादिट्ठिसु सव्वत्थोवा अप्पमत्तसंजदा ॥ ३४२ ॥

बुदो ? तप्पाओग्गसखेजपमाणत्तादो ।

क्षायिकमस्यगृष्टियोंमें प्रमत्तसयतोमे संयतासयत जीव सख्यातगुणित है ॥ ३३९ ॥

क्योंकि, मनुष्यगतिको छोड़कर अन्य गतियोंमें क्षायिकसम्यग्दृष्टि सयतासयत जीवोंका अभाव है ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोमे असयतसम्यग्दृष्टि जीव असख्यातगुणित हैं ॥ ३४० ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

क्षायिकमस्यगृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्तसयत गुणस्थानमें क्षायिकमस्यक्त्वरूपा भेद नहीं है ॥ ३४१ ॥

इस सूत्रका अभिप्राय यह है कि इन असयतसम्यग्दृष्टि आदि चारों गुणस्थानोंमें क्षायिकसम्यक्त्वकी अपेक्षा कोई भेद नहीं है, इसलिए उनमें सम्यक्त्वसम्यग्धी अल्प बहुत्व नहीं है, क्योंकि, उन सबमें क्षायिकसम्यक्त्वरूप एक पद ही निवक्षित है । यह अर्थ इस सूत्रके द्वारा प्ररूपित किया गया है ।

वेदकमस्यगृष्टियोंमें अप्रमत्तसयत जीव सबमे कम हैं ॥ ३४२ ॥

क्योंकि, उनका तत्प्रायोग्य सख्यातरूप प्रमाण हो

१ तत्र सयतासयता सखेयगुणा । स खि १, ८

२ असयतसम्यग्दृष्टयोऽसखेयगुणा । स खि १, ८

३ क्षायीयक्षयिकसम्यग्धिषु सर्वत्र स्तोका अप्रमत्ताः । स खि १, ८

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा' ॥ ३४३ ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ ३४४ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्स असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोमपठम-
वगमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठि असंखेज्जगुणा' ॥ ३४५ ॥

को गुणगारो ? आगलियाए असंखेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-पमत्त-अपमत्तसंजदट्ठाणे वेदग-
सम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३४६ ॥

एत्थ भेदसद्दो अप्पात्रहुअपज्जाओ घेत्तव्वो, सदाणमणेयत्थत्तादो । वेदगसम्मत्तस्स
भेदो अप्पात्रहुअं णत्थि चि उच्च होदि ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसंयतोसे प्रमत्तसयत जीव मरयातगुणित है ॥ ३४३ ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीव असरयातगुणित हैं ॥ ३४४ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमना असख्यातवा भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
सख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासंयतोसे अमयतसम्यग्दृष्टि जीव असरयातगुणित
हैं ॥ ३४५ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

वेदकसम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसयत और अप्रमत्त-
सयत गुणस्थानमें वेदकसम्यक्त्वका भेद नहीं है ॥ ३४६ ॥

यहापर भेद शब्द अल्पबहुत्वका पर्यायवाचक ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि,
शब्दोंके अनेक अर्थ होते हैं । इस प्रकार इस सूत्र द्वारा यह अर्थ कहा गया है कि इन
गुणस्थानोंमें वेदकसम्यक्त्वका भेद अर्थात् अल्पबहुत्व नहीं है ।

१ प्रमत्ता सरयेयगुणा । स ति १, ८०

२ सयतासयता (अ) सरयेयगुणा स ति १, ८

३ असयतसम्यग्दृष्ट्योऽसखेयगुणा । स ति १, ८

उवसमसम्मादिट्टीसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ल
थोवा' ॥ ३४७ ॥

उवसंतकसायवीदरागल्लुट्ठमत्था तत्तिया चेव ॥ ३४८ ॥

अप्पमत्तसजदा अणुवसमा संखेज्जगुणा' ॥ ३४९ ॥

एदाणि मुत्ताणि सुगमाणि ।

पमत्तसजदा संखेज्जगुणा ॥ ३५० ॥

को गुणगारो ? दो रूपाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा' ॥ ३५१ ॥

को गुणगारो ? पल्लिदोममस्स असखेज्जदिमागो, असखेज्जाणि पल्लिदोमपढम-
वगमूलाणि ।

असजदसम्मादिट्टी असंखेज्जगुणा' ॥ ३५२ ॥

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें उपशमक जीन
प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प हैं ॥ ३४७ ॥

उपशान्तरूपायनीतरागल्लुट्ठस्य जीन पूर्वोक्त प्रमाण ही हैं ॥ ३४८ ॥

उपशान्तरूपायनीतरागल्लुट्ठस्थोसे अनुपशमक अप्रमत्तसयत जीन सख्यातगुणित
हैं ॥ ३४९ ॥

ये चत्त सुगम ह ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें अप्रमत्तसयतोसे प्रमत्तसयत जीन सख्यातगुणित
हैं ॥ ३५० ॥

गुणकार क्या है ? दो रूप गुणकार है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें प्रमत्तसयतोसे सयतासयत जीन असख्यातगुणित
हैं ॥ ३५१ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असख्यातका भाग गुणकार है, जो पल्लोपमके
असख्यात प्रथम चरमूलप्रमाण है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें सयतासयतोसे असयतसम्यग्दृष्टि जीन असख्यातगुणित
हैं ॥ ३५२ ॥

१ जीपशमिकसम्यग्दृष्टीनां सवत स्तोमाथत्वार उपशमका । स सि १, ८

२ अप्रमत्ता सरयेयगुणा । स सि १, ८

३ प्रमत्ता सरयेयगुणा । स सि १, ८

४ सयतासयता (अ) सरयेयगुणा । स सि १, ८

५ असयतसम्यग्दृष्टीसरयेयगुणा । स सि १, ८

को गुणगारो ? आवलियाए असंसेज्जदिभागो ।

असंजदसम्मादिट्ठि-संजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे उव-
समसम्मत्तस्स भेदो णत्थि ॥ ३५३ ॥

सुगममेदं ।

सासणसम्मादिट्ठि-सम्मा(मिच्छादिट्ठि)-मिच्छादिट्ठीणं णत्थि अप्पा-
बहुअं ॥ ३५४ ॥

कुदो ? एगपदत्ताढो ।

एव सम्मत्तमगणा समत्ता ।

सणिगाणुवादेण सणीसु मिच्छादिट्ठिपहुडि जाव खीणकसाय-
वीदरागछदुमत्था त्ति ओघं ॥ ३५५ ॥

जधा ओघमिह अप्पाबहुग परूवेदं तथा एत्थ परूवेदन्वं, सणिज्जं पडि उह-
यत्थ भेदाभावा । निसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं मणदि-

गुणकार क्या है ? आवलीका असख्यातवा भाग गुणकार है ।

उपशमसम्यग्दृष्टियोंमें असयतसम्यग्दृष्टि, सयतासयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्त-
संयत गुणस्थानमें उपशमसम्यक्त्वका अल्पबहुत्व नहीं है ॥ ३५३ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीवोंका अल्पबहुत्व
नहीं है ॥ ३५४ ॥

क्योंकि, तीनों प्रकारके जीवोंके एक गुणस्थानरूप ही पद है ।

इस प्रकार सम्यक्त्वमार्गणा समाप्त हुई ।

संक्षिप्तमार्गणाके अनुवादसे संक्षिप्तोंमें मिथ्यादृष्टि गुणस्थानसे लेकर क्षीणरूपाप-
वीदरागछदस्य गुणस्थान तक जीवोंका अल्पबहुत्व ओघके समान है ॥ ३५५ ॥

जिस प्रकार ओघमें इन गुणस्थानोंका अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहा
पर भी प्ररूपण करना चाहिए, क्योंकि, मक्षित्वकी अपेक्षा दोनों स्थानोंपर कोई भेद
नहीं है । अत्र संक्षिप्तोंमें समव विशेषके प्रतिपादनके लिए उत्तर सूत्र कहते हैं—

१ शेषाणा नास्त्यव्यवहुत्वम्, निपक्ष ण्णेकगुणस्थानप्रवृत्तात् । ए ति १, ८

२ संज्ञावादेन संक्षिप्ता चक्षुदलनिष्ठा । स ति १, ८

णवरि मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा ॥ ३५६ ॥

ओषमिदि बुचे अणत्तगुणत्त^१ पत्त, तण्णिरायरणद्वं अमरेज्जगुणा इदि उच्च । गुण
गारो पदरस्स असंखेज्जदिमागो, असंखेज्जाओ^२ सेहीओ, सेहीए असंखेज्जदि
भागमेत्ताओ ।

असण्णीसु णत्थि अप्पावहुअं ॥ ३५७ ॥

कुदो ? एगपेदत्तादो ।

एव सण्णिमग्गणा समत्ता ।

आहाराणुवादेण आहारणसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण
तुल्ला थोवां ॥ ३५८ ॥

चउत्तणपमाणत्तादो ।

उवसंतकसायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३५९ ॥
सुगममेद ।

निशेषत्ता यह है कि सन्नियोंम असयतसम्यग्दृष्टियोंमे मिथ्यादृष्टि जीव अम
ख्यातगुणित हैं ॥ ३५६ ॥

उपर्युक्त सूत्रमें 'ओष' इस पदके कह देने पर असयतसम्यग्दृष्टियोंसे सभी
मिथ्यादृष्टि जीवोंके अनन्तगुणितता प्राप्त होती थी, उसके निराकरणके लिए इस सूत्रमें
'असख्यातगुणित ह' ऐसा पद कहा है । यहा पर गुणकार जगप्रतरका असख्यातवा
भाग है, जो जगध्रेणीके असख्यातवै भागमात्र असख्यात जगध्रेणीप्रमाण है ।

असत्री जीवोंमें अल्पबहुत्व नहीं है ॥ ३५७ ॥

क्योंकि, उनमें एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही होता है ।

इस प्रकार सन्निमार्गणा समाप्त हुई ।

आहारमार्गणाके अनुवादसे आहारकोंमें अपूर्णकरण आदि तीन गुणस्थानोंमें
उपशमक जीव प्रवेशकी अपेक्षा तुल्य और अल्प है ॥ ३५८ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण चौपन है ।

आहारकोंमें उपशान्तरूपायनीतरागछन्नस्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३५९ ॥

यह सूत्र सुगम है ।

१ प्रतिपु 'अणत्तरे गुणत्त' इति पाठ ।

२ प्रतिपु 'असंखेज्जदि' इति पाठ ।

३ असन्निनी नास्त्यल्पबहुत्वम् । स वि १, ८

४ आहाराणुवादेन आहारार्गणां काययोगित्वम् । स वि १, ८

स्ववा संखेज्जगुणा ॥ ३६० ॥

अट्टुत्तरसदपमाणत्तादो ।

स्त्रीणकसायवीदरागल्लदुमत्था तत्तिया चेव ॥ ३६१ ॥

सुगममेदं ।

सजोगिकेवली पवेसणेण तत्तिया चेव ॥ ३६२ ॥

सजोगिकेवली अट्ठं पडुच्च संखेज्जगुणा ॥ ३६३ ॥

अप्पमत्तसंजदा अक्खवा अणुवसमा संखेज्जगुणा ॥ ३६४ ॥

पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ॥ ३६५ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

संजदासंजदा असंखेज्जगुणा ॥ ३६६ ॥

को गुणगारो ? पलिदोमस्स असखेज्जदिभागो ।

सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३६७ ॥

सम्भामिच्छादिट्ठी संखेज्जगुणा ॥ ३६८ ॥

आहारकोंमें उपशान्तरूपायरीतरागल्लदुमत्थोंमें क्षपक जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३६० ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण एक सो आठ है ।

आहारकोंमें क्षीणरूपायरीतरागल्लदुमत्थ जीव पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३६१ ॥

यह सब सुगम है ।

आहारकोंमें सयोगिकेवली जिन प्रवेशकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रमाण ही है ॥ ३६२ ॥

सयोगिकेवली जिन संचयकालकी अपेक्षा संख्यातगुणित है ॥ ३६३ ॥

सयोगिकेवली जिनसे अक्षपक और अनुपशामक अप्रमत्तमय जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३६४ ॥

अप्रमत्तसंयतोसे प्रमत्तसंयत जीव संख्यातगुणित है ॥ ३६५ ॥

ये सब सुगम हैं ।

आहारकोंमें प्रमत्तसंयतोसे संयतासंयत जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ ३६६ ॥

गुणकार क्या है ? पल्लोपमका असंख्यातवा भाग गुणकार है ।

आहारकोंमें संयतासंयतोसे सासादनसम्पगट्ठि जीव असंख्यातगुणित हैं ॥ ३६७ ॥

सासादनसम्पगट्ठियोंसे सम्पग्निग्ध्याट्ठि जीव संख्यातगुणित हैं ॥ ३६८ ॥

असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ॥ ३६९ ॥

मिच्छादिट्ठी अणत्तगुणा ॥ ३७० ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठि-सजदासंजद-पमत्त-अप्पमत्तमजदट्ठाणे सम्मत्त-
प्पावहुअमोघ ॥ ३७१ ॥

एवं तिसु अद्दासु ॥ ३७२ ॥

सव्वत्थोवा उवसमा ॥ ३७३ ॥

खवा संखेज्जगुणा ॥ ३७४ ॥

एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

अणाहारपसु सव्वत्थोवा सजोगिकेवली' ॥ ३७५ ॥

हुदो ? सट्ठिपमाणत्तादो ।

अजोगिकेवली सखेज्जगुणा' ॥ ३७६ ॥

हुदो ? दुरूज्जणछस्सदपमाणत्तादो ।

सम्यग्मिध्यादृष्टियोसे असयत्तसम्यग्दृष्टि जीउ अमर्यातगुणित हैं ॥ ३६९ ॥

असयत्तसम्यग्दृष्टियोमे मिध्यादृष्टि जीउ अनन्तगुणित हैं ॥ ३७० ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

आहारकोंमें असयत्तसम्यग्दृष्टि, सयत्तासयत्त, प्रमत्तमयत्त और अप्रमत्तमयत्त
गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वमम्बन्धी अल्पबहुत्व ओषधके समान हैं ॥ ३७१ ॥

इसी प्रकार अपूर्वकरण जाति तीन गुणस्थानोंमें सम्यक्त्वसम्बन्धी अल्पबहुत्व
ओषधके समान हैं ॥ ३७२ ॥

उक्त गुणस्थानोंमें उपशामर जीउ सत्रमे कम हैं ॥ ३७३ ॥

उपशामकोंमें क्षपक जीउ मर्यातगुणित हैं ॥ ३७४ ॥

ये सूत्र सुगम हैं ।

अनाहारकोंमें मयोगिकेवली जिन सबसे कम हैं ॥ ३७५ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण साठ है ।

अनाहारकोंमें अयोगिकेवली जिन सख्यातगुणित हैं ॥ ३७६ ॥

क्योंकि, उनका प्रमाण दो कम छह सौ अर्थात् पाच सौ अष्ट्यान्धे (९८) है ।

१ अनाहारकोंमें सबत स्तोम सयोगिकेवली । स वि १ ८

२ अयोगिकेवली सखेज्जगुणा । स वि १, ८

सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३७७ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्म अमंखेज्जदिभागो, अमंखेज्जाणि पलिदोवमपदम-
वगमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा' ॥ ३७८ ॥

को गुणगारो ? आरलियाए अमगेज्जदिभागो ।

मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ॥ ३७९ ॥

सा गुणगारो ? अभयमिद्धिएहि अणतगुणो, मिद्धिए हि अणतगुणो, अणताणि
मयजीरामिपदमवगमूलाणि ।

असंजदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सव्वत्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ॥ ३८० ॥

तुदो ? सगेज्जजीवमाणत्तादो ।

अनाहारकोमे अपोमिक्केरली जिनेमे मामादनसम्यग्दष्टि जीव असत्त्यातगुणित
॥ ३७७ ॥

गुणकार क्या है ? पत्थोपमका असत्त्यातका भाग गुणकार है, जो पत्थोपमके
समत्त्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

अनाहारकोमे सामादनसम्यग्दष्टियोमे अमयतसम्यग्दष्टि जीव असत्त्यातगुणित
॥ ३७८ ॥

गुणकार क्या है ? आवलीका असत्त्यातका भाग गुणकार है ।

अनाहारकोमे अमयतसम्यग्दष्टियोमे मिथ्यादष्टि जीव अनन्तगुणित है ॥ ३७९ ॥

गुणकार क्या है ? अमयमिद्धोमे अनन्तगुणित, सिद्धोमे भी अनन्तगुणित
एवम् गुणकार है, जो सर्व जीवराशिके अनन्त प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

अनाहारकोमे अमयतसम्यग्दष्टि गुणम्यानमे उपशमसम्यग्दष्टि जीव मयमे कम
॥ ३८० ॥

क्योंकि, अनाहारक उपशमसम्यग्दष्टि जीवोंका प्रमाण समत्त्यात है ।

१ सासणसम्यग्दष्टयोऽसंख्येयगुणा । स मि १, ८

२ असंजदसम्यग्दष्टयोऽसंख्येयगुणा । स वि १, ८

३ मिच्छादष्टयोऽणन्तगुणाः । स मि १, ८

खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ॥ ३८१ ॥

को गुणगारो ? संखेज्जसमया ।

वेदगसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ॥ ३८२ ॥

को गुणगारो ? पलिदोवमस्म असंखेज्जदिभागो, असंखेज्जाणि पलिदोवमस्स पढमवग्गमूलाणि ।

(एव आहारमग्गणा समत्ता ।)

एवमप्पावहुत्तानुगमो चि समत्तमणिओगहार ।

अनाहारकौमे असयत्तसम्यग्दष्टि गुणस्थानमे उपशमसम्यग्दष्टियोसे क्षायिक-सम्यग्दष्टि जीव सरयात्तगुणित हैं ॥ ३८१ ॥

गुणकार क्या हे ? सख्यात्त समय गुणकार हे ।

अनाहारकौमे असयत्तसम्यग्दष्टि गुणस्थानमे क्षायिकसम्यग्दष्टियोसे वेदकसम्यग्दष्टि जीव असख्यात्तगुणित हैं ॥ ३८२ ॥

गुणकार क्या है ? पल्योपमका असख्यातया भाग गुणकार है, जो पल्योपमके असख्यात प्रथम वर्गमूलप्रमाण है ।

(इस प्रकार आहारमार्गणा समाप्त हुई ।)

इस प्रकार अल्पबहुत्तानुगम नामक अनुयोगद्वार समाप्त हुआ ।



परिशिष्ट

अंतरपरुवणासुत्ताणि ।

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
१ अंतराणुगमेण दुनिहो णिदेसो, ओघेण आदेसेण य ।	१		११ उक्कस्सेण अद्वपोग्गलपरियट्ठ देसणं ।		१४
२ ओघेण मिच्छादिट्ठीणमंतर केर- चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं ।	४		१२ चट्ठण्हसुवसामगाणमंतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।		१७
३ एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	५		१३ उक्कस्सेण वासपुघत्त ।		१८
४ उक्कस्सेण वे छारट्ठिसागरोव- माणि देसणाणि ।	६		१४ एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।		"
५ सामणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमंतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	७		१५ उक्कस्सेण अद्वपोग्गलपरियट्ठ देसण ।		१९
६ उक्कस्सेण पलिदोनमस्स अस- खेज्जदिमागो ।	८		१६ चट्ठण्ह सवग-अजोगिकेरलीणमंतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।		२०
७ एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलि- दोनमस्स असखेज्जदिमागो, अतो- मुहुत्त ।	९		१७ उक्कस्सेण छम्मास ।		२१
८ उक्कस्सेण अद्वपोग्गलपरियट्ठ देसण ।	११		१८ एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं ।		"
९ अमनदसम्मादिट्ठिप्पहाडि जाण अप्पमत्तसज्जदा त्ति अतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर ।	१३		१९ सजोगिकेरलीणमंतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।		"
१० एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	"		२० एगजीन पडुच्च णत्थि अतरं, णिरतरं ।		"
			२१ आदेसेण गदियाणुवादेण णिरय- गदीए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि-अस- जदसम्मादिट्ठीणमंतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णिरतर ।		२२

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
२२	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	२२	३२	उक्कस्सेण पलिदोवमस्स अमस्से- ज्जदिभागो ।	२९
२३	उक्कस्सेण तेचीस सागरोवमाणि देखणाणि ।	२३	३३	एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलि- दोवमस्स असस्सेज्जदिभागो, अतो- मुहुत्त ।	"
२४	सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	२४	३४	उक्कस्सेण सागरोवम तिण्णि सत्त दस सत्तारस वानीस तेचीस सागरोवमाणि देखणाणि ।	"
२५	उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असस्से- ज्जदिभागो ।	"	३५	तिरिक्खण्णदीए तिरिक्खेसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	३१
२६	एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलि- दोवमस्स असस्सेज्जदिभागो, अतोमुहुत्त ।	२५	३६	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	"
२७	उक्कस्सेण तेचीस सागरोवमाणि देखणाणि ।	२६	३७	उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि देखणाणि ।	३२
२८	पढमादि जान सत्तमीए पुढवीए णेरइएसु मिच्छादिट्ठि-असजद- सम्मादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	२७	३८	सासणसम्मादिट्ठिप्पहुडि जान सजदासजदा चि ओघ ।	३३
२९	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	"	३९	पच्चिदियतिरिक्ख पच्चिदियतिरिक्ख- पज्जत्त पच्चिदियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	३७
३०	उक्कस्सेण सागरोवम तिण्णि सत्त दस सत्तारस वानीस तेचीस सागरोवमाणि देखणाणि ।	"	४०	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	३८
३१	सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	२९	४१	उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोवमाणि देखणाणि ।	"
			४२	सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केवचिर कालादो	

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण			५५ एदं गदिं पडुच्च अतरं ।		४६
एगसमयं ।	३८		५६ गुणं पडुच्च उभयदो वि णत्थि		
४३ उक्कस्सेण पलिदोमस्स असरे-			अतरं, णिरतर ।		"
ज्जदिभागो ।	३९		५७ मणुसगदीए मणुस मणुसपज्जत्त-		
४४ एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदो-			मणुसिणीसु मिच्छादिट्ठीणमतर		
मस्स असरेज्जदिभागो, अतो-			केनचिरं कालादो होदि, णाणा-		
मुहुत्तं ।	"		जीव पडुच्च णत्थि अंतर,		
४५ उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोमणि			णिरतरं ।		"
पुव्वकोडिपुधत्तेणग्गहियाणि ।	४०		५८ एगजीनं पडुच्च जहण्णेण अतो-		
४६ अमजदसम्मादिट्ठीणमतर केनचिरं			मुहुत्तं ।		४७
कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च			५९ उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोमणि		
णत्थि अतरं, णिरतर ।	४१		देसणाणि ।		"
४७ एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतो-			६० सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा-		
मुहुत्तं ।	४२		दिट्ठीणमतर केनचिर कालादो		
४८ उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोमणि			होदि, णाणाजीन पडुच्च जहण्णेण		
पुव्वकोडिपुधत्तेणग्गहियाणि ।	"		एगसमयं ।		४८
४९ सनदासजदाणमतर केनचिर			६१ उक्कस्सेण पलिदोमस्स असरे-		
कालादो होदि, णाणाजीनं पडुच्च			ज्जदिभागो ।		"
णत्थि अंतर, णिरतर ।	४३		६२ एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलि-		
५० एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो-			दोमस्स असरेज्जदिभागो,		
मुहुत्तं ।	"		अंतोमुहुत्तं ।		"
५१ उक्कस्सेण पुव्वकोडिपुधत्तं ।	४४		६३ उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोमणि		
५२ पविंदियतिरिक्खअपज्जत्ताणमतर			पुव्वकोडिपुधत्तेणग्गहियाणि ।		४९
केनचिर कालादो होदि, णाणा-			६४ असजदसम्मादिट्ठीणमतर केनचिरं		
जीव पडुच्च णत्थि अतरं,			कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च		
णिरतरं ।	४५		णत्थि अंतरं, णिरतर ।		५०
५३ एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुदा-			६५ एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो-		
मग्गहणं ।	"		मुहुत्तं ।		"
५४ उक्कस्सेण अणत्तकालमसरेज्ज-			६६ उक्कस्सेण तिण्णि पलिदोमणि		
पोगलपरियट्ठ ।	"		पुव्वकोडिपुधत्तेणग्गहियाणि ।		"

सूत्र सख्या	सूत्र	शृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	शृष्ठ
६७	सजदासजदप्पहुडि जान ञप्पमत्त सजदाणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर ।	५१	८२	एद गदिं पडुच्च अत्तर ।	५७
६८	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ अतो- मुहुत्त ।	"	८३	गुणं पडुच्च उअयदो नि णत्थि अत्तर, णिरत्तर ।	"
६९	उक्कस्सेअ पुअकोडिपुअत्त ।	५२	८४	देअगदीअ देअसु मिअ्छादिट्ठि- असजदसम्मादिट्ठीअणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर ।	"
७०	अदुअहअसुअसाअगाणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेअ अगसअय ।	५३	८५	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ अतो मुहुत्त ।	"
७१	उक्कस्सेअ आसपुअत्त ।	"	८६	उक्कस्सेअ अक्कत्तीअ सागरो- अमाणि देअणाणि ।	५८
७२	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ अतो- मुहुत्त ।	५४	८७	साअणसम्मादिट्ठि-सम्माअिअ्छा- दिट्ठीअणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेअ अगसअय ।	५९
७३	उक्कस्सेअ पुअकोडिपुअत्त ।	"	८८	उक्कस्सेअ पलिदोअअसअ ससरे- अज्जदिआगो ।	"
७४	अदुअह अअा अजोगिअेअलीअणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेअ अगसअय ।	५५	८९	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ पलिदो- अअसअ ससरेअज्जदिआगो, अतो- मुहुत्त ।	"
७५	उक्कस्सेअ अम्माअं, आसपुअत्त ।	"	९०	उक्कस्सेअ अक्कत्तीअ सागरो- अमाणि देअणाणि ।	६०
७६	एगजीअ पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर ।	"	९१	अअणआसिअ आणअत्तर जोदिसिअ- सोअम्मीसाअणप्पहुडि जान सदार- सहसअरअक्कआसिअदेअसु मिअ्छा- दिट्ठि-अअजदसम्मादिट्ठीअणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणा- जीअ पडुच्च णत्थि अत्तर, णिरत्तर ।	६१
७७	सजोगिअेअली ओअ ।	५६	९२	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ अतो- मुहुत्त ।	"
७८	अणुअअपअअत्ताअणमत्तर केचिअर कालादो होदि, णाणाजीअ पडुच्च जहण्णेअ अगसअय ।	"			
७९	उक्कस्सेअ पलिदोअअसअ ससरे- अज्जदिआगो ।	"			
८०	एगजीअ पडुच्च जहण्णेअ अदुअ- अअगअहण ।	"			
८१	उक्कस्सेअ अणत्तअलअससरेअज्ज- पोअगलपरिअट्ठ ।	५७			

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
९३	उक्कस्सेण सागरोमम पलिदोमम वे सत्तदस चोदस सोलस अट्टारस सागरोममाणि सादिरैयाणि ।	६१	१०३	उक्कस्सेण वे सागरोममसह- स्ताणि पुच्चकोडिपुधत्तेणम- हियाणि ।	६५
९४	सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीण सत्थाणोघ ।	६२	१०४	वादेरेइदियाणमंतर केचि कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	६६
९५	आणद जाय णगोयज्जनिमाण- वासियदेवेसु मिच्छादिट्ठि अस- जदसम्मादिट्ठीणमंतर केचि कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	६३	१०५	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुद्धा- मग्गहण ।	६७
९६	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- मुत्तं ।	६४	१०६	उक्कस्सेण असरेज्जा लोगा ।	६८
९७	उक्कस्सेण वीस चागीस तेरीस चउरीम पणगीस छव्वीस सत्ता- वीम अट्टागीस ऊणत्तीम तीस एक्कत्तीस सागरोममाणि देस- णाणि ।	६५	१०७	एयं वादेरेइदियपज्जत्त अपज्ज- त्ताण ।	६९
९८	सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीण सत्थाणमोघ ।	६६	१०८	सुहमेइदिय सुहमेइदियपज्जत्त- अपज्जत्ताणमतर केचि कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर ।	७०
९९	अणुदिसादि जाय सच्चट्ठसिद्धि- निमाणवासियदेवेसु असजद- सम्मादिट्ठीणमंतर केचि कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च (णत्थि) अतर, णिरतर ।	७१	१०९	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुद्धा- मग्गहण ।	७२
१००	एगजीन पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर ।	७२	११०	उक्कस्सेण अगुलस्स असरे- ज्जदिभागो, असरेज्जासरे- ज्जाओ ओसप्पिणि-उस्मप्पि- णीओ ।	७३
१०१	इदियाणुदादेण एइदियाणमतरं केचि कालादो होदि, णाणा- जीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७३	१११	वीडदिय-तीइदिय-चदुरिंदिय- तस्सेण पज्जत्त-अपज्जत्ताणमतरं केचि कालादो होदि, णाणा- जीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७४
१०२	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुद्धा-	७४	११२	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुद्धा- मग्गहण ।	७५
			११३	उक्कस्सेण अणंतकालमसरेज्ज-	७६

सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ
	पोमगलपरियट्टं ।	६८		याणि, सागरोरममदपुधत्त ।	७५
११४	पचिंदिय-पचिंदियपज्जत्तएसु मि- च्छादिट्ठी ओष ।	६९	१२५	चटुण्ह खवा अजोगिकेनली ओष ।	७७
११५	सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय ।	"	१२६	सजोगिकेनली ओष ।	"
११६	उक्कस्सेण पलिदोरमस्स अससे- ज्जदिभागो ।	"	१२७	पचिंदियअपज्जत्ताण वेहादिय- अपज्जत्ताण भगो ।	"
११७	एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोरमस्स अससेज्जदिभागो, अतोसुहुत्त ।	७०	१२८	एदमिंदिय पडुच्च अतर ।	"
११८	उक्कस्सेण सागरोरममह- स्साणि पुच्चकोटिपुधत्तेणम्महि- याणि सागरोरमसदपुधत्त ।	"	१२९	गुण पडुच्च उभयदो वि णत्थि अतर, णिरतर ।	"
११९	असज्जदम्मादिट्ठिप्पहुडि जान अप्पमत्तमज्जदाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७१	१३०	कायाणुत्तादेण पुढिरिक्काइय- आउक्काइय तेउक्काइय-वाउक्काइय- वादर सुहुम पज्जत्त-अपज्जत्ताण- मतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७८
१२०	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- सुहुत्त ।	७२	१३१	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुहा- भवग्गहण ।	"
१२१	उक्कस्सेण सागरोरममह- स्साणि पुच्चकोटिपुधत्तेणम्महि- याणि, सागरोरमसदपुधत्त ।	"	१३२	उक्कस्सेण अणत्तकालमससेज्ज- पोमगलपरियट्टं ।	"
१२२	चटुण्हसुवसामगाण णाणाजीन पडि ओष ।	७५	१३३	वणप्फदिक्काइय—णिगोदजीन— वादर-सुहुम पज्जत्त-अपज्जत्ताण- मतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७९
१२३	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- सुहुत्त ।	"	१३४	एगजीन पडुच्च जहण्णेण सुहा- भग्गहण ।	"
१२४	उक्कस्सेण सागरोरमसह- स्साणि पुच्चकोटिपुधत्तेणम्महि-	"	१३५	उक्कस्सेण अससेज्जा लोणा ।	"
			१३६	वादरवणप्फदिक्काइयपत्तेयसरीर- पज्जत्त अपज्जत्ताणमतर केर- चिर कालादो होदि, णाणा-	

मूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्रमख्या	सूत्र	पृष्ठ
	जीव पदुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	७९	ओष ।		८५
१३७	एगजीवं पदुच्च जहण्णेण खुदा- भवग्गहणं ।	८०	१४७ एगजीवं पदुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।		"
१३८	उक्कस्सेण अट्ठाडज्जपोग्गल- परियट्ठ ।	"	१४८ उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्महि- याणि, वे सागरोवममहस्माणि देसुणाणि ।		८६
१३९	तमकाइय-तसकाइयपज्जत्तएस्सु मिच्छादिट्ठी ओष ।	"	१४९ चट्ठण्ह खना अजोगिकेवली ओष ।		"
१४०	सामणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पदुच्च ओष ।	"	१५० मजोगिकेवली ओष ।		"
१४१	एगजीवं पदुच्च जहण्णेण पलि- दोमस्स असरेज्जदिभागो, अतोमुहुत्त ।	८१	१५१ तसकाइयअपज्जत्ताण पचिदिय- अपज्जत्तभगो ।		"
१४२	उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्महि- याणि, वे सागरोवमसहस्साणि देसुणाणि ।	"	१५२ एद काय पदुच्च अतर । गुण पदुच्च उभयदो रि णत्थि अतरं, णिरतर ।		८७
१४३	अमजदसम्मादिट्ठिप्पट्ठि जाव अप्पमत्तसज्जदाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पदुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	८२	१५३ जोगाणुनादेण पंचमणजोगि- पचमचिजोगीसु कायजोगि- ओगलियकायजोगीसु मिच्छा- दिट्ठि-अमजदसम्मादिट्ठि-सज्जदा- सज्जद-पमत्त-अप्पमत्तमज्जद- सजोगिकेवलीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पदुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।		"
१४४	एगजीवं पदुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	८३	१५४ सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पदुच्च जह- ण्णेण एगममय ।		८८
१४५	उक्कस्सेण वे सागरोवमसह- स्माणि पुव्वकोडिपुधत्तेणम्महि- याणि, वे सागरोवमसहस्माणि देसुणाणि ।	"	१५५ उक्कस्सेण पलिदोमस्स असस्से- ज्जदिभागो ।		"
१४६	चट्ठण्हमुत्तममगाणमतर केरचिर कालादो होदि, णाणाजीव पदुच्च		एगजीवं पदुच्च णत्थि अतर		

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	गिरतर ।	८८		णीण मणजोगिभगो ।	९१
१५७	चदुण्हमुनसामगाणमतर केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघ ।	"	१७०	वेउच्चियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिट्ठीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय ।	"
१५८	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	८९	१७१	उक्कस्सेण वारम मुहुत्त ।	९२
१५९	चदुण्ह खनाणमोघ ।	"	१७२	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"
१६०	ओरालियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणेगनीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"	१७३	सामणमम्मादिट्ठि-असजदसम्मा- दिट्ठीणिं ओरालियमिस्सभगो ।	"
१६१	सासणसम्मादिट्ठीणमतर केन- चिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघ ।	"	१७४	आहारकायजोगीसु आहार- मिस्सकायजोगीसु पमत्तसज- दाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय ।	९३
१६२	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	९०	१७५	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"
१६३	असजदसम्मादिट्ठीणमतर केन- चिर कालादो होदि, णाणा- जीन पडुच्च जहण्णेण एग- समय ।	"	१७६	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"
१६४	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"	१७७	कम्मइयकायजोगीसु मिच्छा दिट्ठि-सासणसम्मादिट्ठि-अस- जदसम्मादिट्ठि सजोगिकेनलीण ओरालियमिस्सभगो ।	"
१६५	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"	१७८	वेदाणुवादेण इत्थिनेदसु मिच्छा- दिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अतर गिरतर ।	९४
१६६	सजोगिकेनलीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	९१	१७९	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतो- मुहुत्त ।	"
१६७	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"	१८०	उक्कस्सेण यणपण्ण पलिदोन- माणि देसणाणि ।	"
१६८	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"			
१६९	वेउच्चियकायजोगीसु चदुड्डा-	"			

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
१८१	सामणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छा- दिट्ठीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं ओघ ।	९५	१९३	पुरिसनेदणसु मिच्छादिट्ठी ओघ ।	१००
१८२	एगजीनं पडुच्चं जहण्णेण पलिदोवमस्स असखेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त ।	"	१९४	सासणसम्मादिट्ठि-सम्माभिच्छा- दिट्ठीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं जहण्णेण एगममय ।	१०१
१८३	उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त ।	९६	१९५	उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असखेज्जदिभागो ।	"
१८४	असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाण अप्पमत्तसंजदाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं णत्थि अतरं, णिरंतरं ।	९७	१९६	एगजीनं पडुच्चं जहण्णेण पलिदोवमस्स अमंखेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त ।	"
१८५	एगजीनं पडुच्चं जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	१९७	उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्त ।	"
१८६	उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त ।	"	१९८	असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाण अप्पमत्तसंजदाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं णत्थि अतरं, णिरंतरं ।	१०२
१८७	दोण्हमुवसामगाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं जहण्णुक्कस्समोघ ।	९९	१९९	एगजीनं पडुच्चं जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
१८८	एगजीनं पडुच्चं जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	२००	उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्त ।	१०३
१८९	उक्कस्सेण पलिदोवमसद- पुधत्त ।	"	२०१	दोण्हमुवसामगाणमतरं केन- चिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं ओघ ।	१०४
१९०	दोण्हं खणाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं पडुच्चं जहण्णेण एगममय ।	१००	२०२	एगजीनं, पडुच्चं जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
१९१	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"	२०३	उक्कस्सेण सागरोवमसद- पुधत्त ।	"
१९२	एगजीनं पडुच्चं णत्थि अतरं, णिरंतरं ।	"	२०४	दोण्हं खणाणमतरं केनचिरं कालादो होदि, गाणाजीनं	

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
	पहुच्च जहण्णेण एगसमय । १०५		२१७ उक्कस्सेण अतोमुहुत्त । ११०		
२०५ उक्कस्सेण वास सादिरेय । १०६			२१८ उवसतकूमायवीदरागछदुमत्था-		
२०६ एगजीन पहुच्च णत्थि अतर,			णमतर केवचिर कालादो होदि,		
णिरतर ।	"		णाणाजीव पहुच्च जहण्णेण		
२०७ णउसयनेदएसु मिच्छादिट्ठीण-			एगसमय ।	"	
मतर केवचिर कालादो होदि,			२१९ उक्कस्सेण वामपुघत्त ।	"	
णाणाजीन पहुच्च णत्थि			२२० एगजीन पहुच्च णत्थि अतर । १११		
अतर, णिरतर । १०६			२२१ अणियट्ठिउरमा सुहुमउरमा		
२०८ एगजीन पहुच्च जहण्णेण			खीणकूमायवीदरागछदुमत्था		
अतोमुहुत्त । १०७			अजोगिकेउली ओघ ।	"	
२०९ उक्कस्सेण तेत्तीस सागरो-			२२२ सजोगिकेउली ओघ ।	"	
माणि देवणाणि ।	"		२२३ कसायाणुवादेण कोधकसाइ-		
२१० सासणसम्मदिट्ठिप्पहुडि जाव			माणकूमाइ-मायकसाइ-लोह-		
अणियट्ठिउरसामिदो चि			कमाईसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि		
मूलोघ ।	"		जाव सुहुमसापराइयउवसमा		
२११ दोण्ह खवाणमतर केवचिर			उरमा चि मणजोगिमगो ।	"	
कालादो होदि, णाणाजीन			२२४ अकमाईसु उवसतकसायवीद-		
पहुच्च जहण्णेण एगसमय । १०९			रागछदुमत्थाणमतर केवचिर		
२१२ उक्कस्सेण वासपुघत्त ।	"		कालादो होदि, णाणाजीव		
२१३ एगजीन पहुच्च णत्थि अतर,			पहुच्च जहण्णेण एगसमय । ११३		
णिरतर ।	"		२२५ उक्कस्सेण वासपुघत्त ।	"	
२१४ अवगदवेदएसु अणियट्ठिउर-			२२६ एगजीन पहुच्च णत्थि अतर,		
सम सुहुमउरसमाणमतर केव-			णिरतर ।	"	
चिर कालादो होदि, णाणा-			२२७ खीणकूमायवीदरागछदुमत्था		
जीन पहुच्च जहण्णेण एग-			अजोगिकेउली ओघ ।	"	
समय ।	"		२२८ सजोगिकेउली ओघ ।	"	
२१५ उक्कस्सेण वासपुघत्त ।	"		२२९ णाणाणुवादेण मदिअण्णाणि-		
२१६ एगजीन पहुच्च जहण्णेण			सुदअण्णाणि—निभगणाणीसु		
अतोमुहुत्त । ११०			मिच्छादिट्ठीणमतर केवचिर		

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
	कालादो होदि, णाणेगजीवं पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतरं । ११४		२४१	चदुण्हमुवसामगाणमतर केव- चिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमयं । १२२	
२३०	सासणसम्मादिट्ठीणमंतरं केव- चिरं कालादो होदि, णाणा- जीवं पडुच्च ओघ ।	"	२४२	उक्कस्सेण वासपुघत्तं ।	"
२३१	एगजीव पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतरं ।	"	२४३	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
२३२	आभिणिनोहिय सुद-ओहि- णाणीसु असंजदसम्मादिट्ठीण- मंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतर ।	"	२४४	उक्कस्सेण छावट्टिसागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	"
२३३	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	११५	२४५	चदुण्हं खवगाणमोघ । णवरि निसेसो ओधिणाणीसु खवाणं वासपुघत्तं ।	१२४
२३४	उक्कस्सेण पुच्चकोडी देसण	"	२४६	मणपज्जवणाणीसु पमत्त- अप्पमत्तसजदाणमतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरंतरं ।	"
२३५	सजदासजदाणमतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरंतरं ।	११६	२४७	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
२३६	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"	२४८	उक्कस्सेण अतोमुहुत्तं ।	"
२३७	उक्कस्सेण छावट्टिसागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	"	२४९	चदुण्हमुवसामगाणमंतरं केव- चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	१२५
२३८	पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणा- जीवं पडुच्च णत्थि अतरं, णिरंतर ।	११९	२५०	उक्कस्सेण वासपुघत्तं ।	"
२३९	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	१२०	२५१	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	१२६
२४०	सादिरेयाणि ।	"	२५२	उक्कस्सेण पुच्चकोडी देसणं ।	"
			२५३	चदुण्हं खवगाणमतर केव- चिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	१२७
			२५४	उक्कस्सेण वासपुघत्तं ।	"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
२५५	एगजीर पडुच्च णत्थि अतर गिरतर ।	१२७	कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	१३१	
२५६	केवलणाणीसु सनोगिकेनली ओघ ।	"	२७०	एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
२५७	अजोगिकेनली ओघ ।	"	२७१	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	"
२५८	सजमाणुयादेण सजदेसु पमत्त- सजदप्पहुडि जाय उयमत- कमायवीदरागछदुमत्था चि मणपज्जनणाणिभगो ।	१२८	२७२	सुद्धमसापराइयसुद्धिसजदेसु सु- द्धमसापराइयउयसमाणमतर् के- वचिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग- समय ।	१३२
२५९	चटुण्ह खवा अजोगिकेनली ओघ ।	"	२७३	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"
२६०	सजोगिकेनली ओघ ।	"	२७४	एगजीर पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"
२६१	सामाइय-छेदोउड्डावणसुद्धि- सजदेसु पमत्तापमत्तसजदाण- मतर् केवचिर कालादो होदि, णाणाजीर पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"	२७५	खमाणमोघ ।	"
२६२	एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	१२९	२७६	जहाकसादनिहारसुद्धिमजदेसु अकमाइभगो ।	"
२६३	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	"	२७७	सजदासजदाणमतर् केवचिर कालादो होदि, णाणेगजीर पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	१३३
२६४	दोण्हसुनसामगाणमतर् केव चिर कालादो होदि, णाणाजीर पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	"	२७८	असजदेसु मिच्छादिट्ठीणमतर् केवचिर कालादो होदि, णाणाजीर पडुच्च णत्थि अतर, गिरतर ।	"
२६५	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"	२७९	एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
२६६	एगजीर पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	१३०	२८०	उक्कस्सेण तेत्तीस सागरोव माणि देखणाणि ।	१३४
२६७	उक्कस्सेण पुण्वकोडी देखण ।	"	२८१	सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठि-असजदसम्मादिट्ठीणमोघ ।	"
२६८	दोण्ह खमाणमोघ ।	१३१			
२६९	परिहारसुद्धिसजदेसु पमत्ता- पमत्तसजदाणमतर् केवचिर				

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
२८२	दंसणाणुवादेण चक्सुदंसणीसु मिच्छादिद्वीणमोधं ।	१३५	२९४	ओधिदसणी ओधिणाणिभंगो ।	१४३
२८३	सासणसम्मादिद्वि-सम्मामिच्छा- दिद्वीणमतरं केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओष ।	१३६	२९५	केवलदसणी केवलणाणिभंगो ।	"
२८४	एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स अससेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त ।	"	२९६	लेस्माणुवादेण किण्हलेस्सिय- णीलेस्सिय--काउलेस्मिणसु मिच्छादिद्वि-असजदमम्मा-- दिद्वीणमतरं केनचिरं कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
२८५	उक्कस्सेण वे सागरोमसह- स्साणि देखणाणि ।	"	२९७	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
२८६	असजदसम्मादिद्विप्पहुडि जाय अप्पमत्तसजदाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर ।	१३८	२९८	उक्कस्सेण तेत्तीम सत्तारस सत्त सागरोममाणि देखणाणि ।	१४४
२८७	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	२९९	सासणमम्मादिद्वि सम्मामिच्छा- दिद्वीणमतरं केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओष ।	१४५
२८८	उक्कस्सेण वे सागरोमसह- स्साणि देखणाणि ।	"	३००	एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स अससेज्जदि- भागो, अतोमुहुत्त ।	"
२८९	चदुण्हमुवसामगाणमतर केन- चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओष ।	१४१	३०१	उक्कस्सेण तेत्तीस सत्तारम सत्त सागरोममाणि देखणाणि ।	"
२९०	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	३०२	तेउलेस्सिय--प्मलोस्मिणसु मिच्छादिद्वि-असजदमम्मा-- दिद्वीणमतरं केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	१४६
२९१	उक्कस्सेण वे सागरोमसह- स्साणि देखणाणि ।	"	३०३	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
२९२	चदुण्ह खणमोध ।	१४२	३०४	उक्कस्सेण वे अट्टारम मागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	१४७
२९३	अचक्सुदंसणीसु मिच्छादिद्वि- प्पहुडि जाय खीणकसायणीद- रागलुदुमत्था ओष ।	१४३			

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३०५	सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ ।	१४७	३१५	संजदासंजद-पमत्तसजदाण- मतरं केनचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	१५१
३०६	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असखेज्जदि- मागो, अतोमुहुत्त ।	१४८	३१६	अप्पमत्तसंजदाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
३०७	उक्कस्सेण वे अट्टारस सागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	"	३१७	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
३०८	सजदासजद पमत्त-अप्पमत्त- सजदाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणेगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"	३१८	उक्कस्समतोमुहुत्त ।	"
३०९	सुक्कलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठि- असजदसम्मादिट्ठीणमतर केन- चिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	१४९	३१९	सिण्हमुत्तसामगाणमतर केव- चिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग- समय ।	१५२
३१०	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	३२०	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"
३११	उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो- वमाणि देसणाणि ।	"	३२१	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"
३१२	सासणसम्मादिट्ठि-सम्मामिच्छा- दिट्ठीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च ओघ ।	"	३२२	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	"
३१३	एगजीव पडुच्च जहण्णेण पलिदोमस्स असखेज्जदि- मागो, अतोमुहुत्त ।	"	३२३	उवसतरुसायवीदरागल्लदुम- त्थाणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जह- ण्णेण एगसमय ।	१५३
३१४	उक्कस्सेण एकक्कीस सागरो- वमाणि देसणाणि ।	१५०	३२४	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"
			३२५	एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
			३२६	चटुप्प सग्ग ओघ ।	"
			३२७	सजोगिकेनली ओघ ।	१५४
			३२८	भनियाणुवादेण भवसिद्धिएसु मिच्छादिट्ठिप्पडुडि जाव अजोगिकेनलि चि ओघ ।	"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३२९	अमनसिद्वियाणमंतर केवचिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतरं । १५४			अतोमुहुत्तं ।	१५७
३३०	एगजीव पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं ।	"	३४२	उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	"
३३१	सम्मत्ताणुपादेण सम्मादिट्ठीसु असंजदसम्मादिट्ठीणमंतरं केव- चिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं । १५५	"	३४३	चटुण्हमुवसामगाणमतरं केव- चिर कालादो होदि, णाणाजीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय । १६०	"
३३२	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"	३४४	उक्कस्सेण वासपुधत्तं ।	"
३३३	उक्कस्सेण पुब्बकोडी देखणं ।	"	३४५	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
३३४	सजदासजदप्पहुडिं जान उवसत्तकसायवीदरागछदुमत्था ओधिणाणिमंगो ।	"	३४६	उक्कस्सेण तेत्तीम सागरो- वमाणि सादिरेयाणि ।	"
३३५	चटुण्ह खवगा अजोगिकेनली ओधं । १५६	"	३४७	चटुण्हं खगा अजोगिकेनली ओधं । १६१	"
३३६	सजोगिकेनली ओधं ।	"	३४८	सजोगिकेनली ओधं ।	"
३३७	खड्यसम्मादिट्ठीसु असंजद- सम्मादिट्ठीणमंतरं केवचिर कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ।	"	३४९	वेदगसम्मादिट्ठीसु असंजद- सम्मादिट्ठीण सम्मादिट्ठिमंगो । १६२	"
३३८	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"	३५०	सजदामंजदाणमतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं ।	"
३३९	उक्कस्सेण पुब्बकोडी देखण ।	"	३५१	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
३४०	संजदासजद पमत्तसजदाणमतरं केवचिर कालादो होदि, णाणा- जीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरंतरं । १५७	"	३५२	उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि देसुणाणि ।	"
३४१	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"	३५३	पमत्त-अप्पमत्तसजदाणमतरं केवचिरं कालादो होदि, णाणाजीवं पडुच्च णत्थि अंतरं, णिरतरं । १६३	"
			३५४	एगजीवं पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं । १६४	"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३५५	उक्कस्सेण तेत्तीम सागरो वमाणि सादिरैयाणि ।	"	३७०	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	१६९
३५६	उत्तसमसम्मादिट्ठीसु अमज्ज- सम्मादिट्ठीणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	१६५	३७१	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	"
३५७	उक्कस्सेण सत्त रादिदियाणि ।	"	३७२	उत्तसत्तकसायनीदरागछदुमत्था- णमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	"
३५८	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	३७३	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"
३५९	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	१६६	३७४	एगजीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
३६०	सत्तसज्जाणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	"	३७५	सामणमम्मादिट्ठी—सम्मा— मिच्छादिट्ठीणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	१७०
३६१	उक्कस्सेण चोदस रादिदियाणि ।	"	३७६	उक्कस्सेण पल्लिदोरमस्स असंखे- ज्जदिभागो ।	"
३६२	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	३७७	एगजीव पडुच्च णत्थि अंतर, णिरतर ।	१७१
३६३	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	१६७	३७८	मिच्छादिट्ठीणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
३६४	पमत्त—अप्पमत्तसज्जाणमतर केचिर कालादो होदि, णाणा- जीव पडुच्च जहण्णेण एग समय ।	"	३७९	सण्णियाणुरादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठीणमोघ ।	"
३६५	उक्कस्सेण पण्णारस रादि- दियाणि ।	"	३८०	सासणसम्मादिट्ठिप्पहुडि जाव उत्तसत्तकसायनीदरागछदुमत्था त्ति पुरिसवेदभागो ।	"
३६६	एगजीव पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्त ।	"	३८१	चट्ठुह्ख खवाणमोघ ।	१७२
३६७	उक्कस्सेण अतोमुहुत्त ।	१६८	३८२	असण्णीणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च णत्थि अतर, णिरतर ।	"
३६८	तिण्हसुरसामाणमतर केचिर कालादो होदि, णाणानीव पडुच्च जहण्णेण एगसमय ।	"			
३६९	उक्कस्सेण वासपुधत्त ।	"			

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३८३	एगजीन पडुच्च णत्थि अतर, गिरतरं ।	१७२		अतोमुहुत्त ।	१७५
३८४	जाहाराणुगदेण आहारएसु मिच्छादिद्वीणमोघ ।	१७३	३९०	उक्कस्सेण अगुलस्स असंखे-ज्जदिभागो असखेज्जाओ ओसप्पिणि-उस्सप्पिणीओ ।	"
३८५	सासणसम्मादिद्वि सम्मामिच्छा-दिद्वीणमतर केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च ओघं ।	"	३९१	चदुण्हमुत्तसामगाणमंतर केन-चिर कालादो होदि, णाणा-जीन पडुच्च ओघभगो ।	१७७
३८६	एगजीन पडुच्च जहण्णेण पलिदोअमस्स असंखेज्जदि-भागो, अतोमुहुत्त ।	"	३९२	एगजीन पडुच्च जहण्णेण अतोमुहुत्तं ।	"
३८७	उक्कस्सेण अगुलस्स असंखे-ज्जदिभागो, असंखेज्जासंखे-ज्जाओ ओसप्पिणि-उस्म-प्पिणीओ ।	"	३९३	उक्कस्सेण अगुलस्स असंखे-ज्जदिभागो असंखेज्जासंखे-ज्जाओ ओसप्पिणि-उस्सप्पि-णीओ ।	"
३८८	अमजदसम्मादिद्विप्पहुडि जाव अप्पमत्तसज्जाणमतरं केनचिर कालादो होदि, णाणाजीन पडुच्च णत्थि अंतर, गिरंतरं ।	१७४	३९४	चदुण्ह सत्ताणमोघ ।	१७८
३८९	एगजीन पडुच्च जहण्णेण		३९५	सज्जोगिरेत्तली ओघ ।	"
			३९६	अणाहारा कम्मइयकायजोगि-भगो ।	"
			३९७	णत्थि निमेसा, अजोगि-केत्तली ओघ ।	१७९

भावपरूवणासुत्ताणि ।

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
१	भावणुगमेण दुनिहो णिदेमो, ओघेण आदेसेण य ।	१८३	४	सम्मामिच्छादिद्वि चि को भागो, खओअसमिओ भागो ।	१९६
२	ओघेण मिच्छादिद्वि चि को भागो, ओदइओ भागो ।	१९४	५	असज्जदसम्मादिद्वि चि को भागो, उवसमिओ वा खइओ	
३	सासणसम्मादिद्वि चि को				

सूत्रं सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्रं सख्या	सूत्र	पृष्ठ
	वा राओनसमिओ वा भाओ ।	१९९		वा भाओ ।	२१०
६ ओदइएण भाणेण पुणो असजदो ।		२०१	१८ ओदइएण भाणेण पुणो असजदो ।		२११
७ सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त-सज्जदा त्ति को भाओ, राओनसमिओ भाओ ।		"	१९ तिरिक्खगदीए तिरिक्ख-पंचिदियतिरिक्ख-पंचिदियपज्जत्त-पंचिदियतिरिक्खजोणिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाण सज्जदासज्जदाणमोघ ।		२१२
८ चट्ठण्णसमात्ति को भाओ, ओनममिओ भाओ ।		२०४	२० णवरि निमेषो, पंचिदिय-तिरिक्खजोणिणीसु अमजदसम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, ओनसमिओ वा राओनसमिओ वा भाओ ।		२१२
९ चट्ठण्ण राग सज्जोगिकेणली अज्जोगिकेणली त्ति को भाओ, खइओ भाओ ।		२०५	२१ ओदइएण भाणेण पुणो असजदो ।		२१३
१० आदेसेण गइयाणुपादेण णिरय-गइए णेरइएणसु मिच्छादिट्ठि त्ति को भाओ, ओदइओ भाओ ।		२०६	२२ मणुसगदीए मणुम मणुसपज्जत्त-मणुसिणीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाण अज्जोगिकेणली त्ति ओघ ।		"
११ सासणसम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, पारिणामिओ भाओ ।		२०७	२३ देवगदीए देनेसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाण अमजदसम्मादिट्ठि त्ति ओघ ।		२१४
१२ सम्मामिच्छादिट्ठि त्ति को भाओ, राओनसमिओ भाओ ।		२०८	२४ भण्णरासिय-वाणप्रेतर-जोदिसियदेरा देवीओ, सोधम्मीसाण-कप्परासियेदीओ च मिच्छादिट्ठि सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठि ओघ ।		"
१३ असजदसम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा खइओ वा राओनसमिओ वा भाओ ।		"	२५ असजदसम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा राओनसमिओ वा भाओ ।		"
१४ ओदइएण भाणेण पुणो असजदो ।		२०९	२६ ओदइएण भाणेण पुणो असजदो ।		२१५
१५ एवं पढमाए पुढगीए णेरइयाण ।		"	२७ सोधम्मीमाणप्पहुडि जाव णव-		
१६ विदियाए जाण सत्तमीए पुढगीए णेरइएणसु मिच्छादिट्ठि सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठिणमीघ ।		२१०			
१७ असजदसम्मादिट्ठि त्ति को भाओ, उवसमिओ वा खइओवसमिओ					

सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
	गेवज्जनिमाणनासियदेवेसु मिच्छा- दिट्ठिप्पहुडि जान असंजदसम्मा- दिट्ठि ति ओघ ।	२१५		खइओ भावो ।	२२९
२८	अणुदिसादि जान सच्चट्ठसिद्धि- निमाणनासियदेवेसु असजद- सम्मादिट्ठि ति को भावो, ओघसमिओ वा खइओ वा खओउसमिओ वा भावो ।	"	३७	वेउच्चियकायजोगीसु मिच्छा- दिट्ठिप्पहुडि जान अमंजदसम्मा- दिट्ठि ति ओघभगो ।	"
२९	ओदइएण भावेण पुणो असजदो ।	२१६	३८	वेउच्चियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी असंजदसम्मादिट्ठी ओघ ।	२२०
३०	इंदियाणुनादेण पच्चिदियपञ्च- एसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जान अजोगिकेउलि ति ओघ ।	"	३९	आहारकायजोगि-आहारमिस्स- कायजोगीसु पमत्तसजदा ति को भावो, खओउसमिओ भावो ।	"
३१	कायाणुनादेण तसकाइयत्तम- काइयपञ्चएसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान अजोगिकेउलि ति ओघ ।	२१७	४०	कम्मइयकायजोगीसु मिच्छा- दिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी असजद- सम्मादिट्ठी सजोगिकेउली ओघ ।	२२१
३२	जोगाणुनादेण पचमणजोगि- पचरच्चिजोगि कायजोगि ओरा- लियकायजोगीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान सजोगिकेउलि ति ओघ ।	२१८	४१	वेदाणुनादेण इत्थियेद पुरिसवेद- णउसयवेदएसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान अणियट्ठि ति ओघ ।	"
३३	ओरालियमिस्सकायजोगीसु मि- च्छादिट्ठि—सासणसम्मादिट्ठीण ओघ ।	"	४२	अमगदवेदएसु अणियट्ठिप्पहुडि जान अजोगिकेउली ओघ ।	२२२
३४	असजदसम्मादिट्ठि ति को भावो, खइओ वा खओउसमिओ वा भावो ।		४३	कसायाणुनादेण कोधकमाइ- माणकमाइ—मायकमाइ—लोभ- कमाइसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जान सुहममापराइयउरममा खवा ओघ ।	२२३
३५	ओदइएण भावेण पुणो अमंजदो ।		४४	अरुसाइसु चट्ठद्वानी ओघ ।	"
३६	सजोगिकेउलि ति को		४५	णाणाणुनादेण मदिअण्णाणि- सुदअण्णाणि विमंगणाणीसु मि- च्छादिट्ठी सासणसम्मादिट्ठी ओघ ।	२२४

सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ
४६ आभिनिवोदिय-सुद-ओधिणा- णीसु असंजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जान खीणकमायवीदगाउदु- मत्या ओघ ।		२२५	५७ ओहिदमणी ओहिणाणिभगो ।		२२९
४७ मणपन्नरणाणीसु पमत्तसज्ज- प्पहुडि जान खीणरुमायवीद- रागछदुमत्या ओघ ।		"	५८ केवलदमणी केवलणाणिभगो ।		"
४८ केवलणाणीसु सजोगिकेनली (अजोगिकेनली) ओघ ।		"	५९ लेम्माणुवादेण मिण्हलेस्सिय- णीलेस्सिमय काउलेस्सिएसु चदु- ट्ठाणी ओघ ।		"
४९ सजमाणुवादेण सजदेसु पमत्त सजदप्पहुडि जान अजोगिकेनली ओघ ।		२२७	६० तेउलेस्सिमय पम्मलेस्सिएसु मिच्छा दिट्ठिप्पहुडि जान अप्पमत्त- सजदा त्ति ओघ ।		"
५० सामाद्वयउदोपट्ठाणसुद्विसजदेसु पमत्तमजदप्पहुडि जान अणि- यट्ठि त्ति ओघ ।		"	६१ सुमलेस्सिएसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान सजोगिकेनलि त्ति ओघ ।		२३१
५१ परिहारसुद्विसजदेसु पमत्त-अप्प- मत्तसजदा ओघ ।		"	६२ भयियाणुवादेण भयमिद्विएसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जान अजोगि- केनलि त्ति ओघ ।		"
५२ सुहुमसापराद्वयसुद्विमजदेसु सुहु- मसापराद्वया उवसमा रात्रा ओघ ।		"	६३ अयमसिद्विय त्ति को भावो, परिणामिओ भावो ।		"
५३ जहान्नादग्निहारसुद्विमजदेसु च- दुट्ठाणी ओघ ।		२२८	६४ सम्पत्ताणुवादेण सम्मादिट्ठीसु अमजदसम्मादिट्ठिप्पहुडि जान अजोगिकेनलि त्ति ओघ ।		"
५४ सजदासजदा ओघ ।		"	६५ राद्वयसम्मादिट्ठीसु असजद- सम्मादिट्ठि त्ति को भावो, सउओ भावो ।		"
५५ असंजदेसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जान असजदसम्मादिट्ठि त्ति ओघ ।		"	६६ सउय सम्मत्त ।		"
५६ दसणाणुवादेण चक्खुदसणि- अचक्खुदसणीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान खीणरुमायवीद- रागछदुमत्या त्ति ओघ ।		"	६७ ओदइएण भायेण पुणो असजदो ।		"
		"	६८ सजटासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदा त्ति को भावो, सउओ समिओ भावो ।		"
		"	६९ राद्वय सम्मत्त ।		"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
७० चटुण्हमुत्तमा त्ति को भावो, ओत्तमिओ भावो ।	२३३		८२ संजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदा त्ति को भावो, खओत्त- मिओ भावो ।	२३६	
७१ खइयं सम्मत्त ।	"		८३ उत्तमिय सम्मत्त ।	"	
७२ चटुण्ह खया सजोगिक्केवली अजोगिक्केवलि त्ति को भावो, खइओ भावो ।	"		८४ चटुण्हमुत्तमा त्ति को भावो, उत्तमिओ भावो ।	"	
७३ खइय सम्मत्त ।	२३४		८५ उत्तमियं सम्मत्त ।	"	
७४ वेदयसम्मादिट्ठीसु असजदसम्मा- दिट्ठि त्ति को भावो, खओत्त- मिओ भावो ।	"		८६ सात्तणम्ममादिट्ठी ओघ ।	"	
७५ खओत्तमियं सम्मत्त ।	"		८७ सम्मामिच्छादिट्ठी ओघ ।	२३७	
७६ ओदइएण भावेण पुणो असजदो ।	२३५		८८ मिच्छादिट्ठी ओघ ।	"	
७७ संजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त- सजदा त्ति को भावो, खओत्त- मिओ भावो ।	"		८९ सण्णियाणुत्तादेण सण्णीसु मिच्छा- दिट्ठिप्पहुडि जाय खीणकसाय- वीट्ठागउदुमत्था त्ति ओघ ।	"	
७८ खओत्तमिय सम्मत्तं ।	"		९० असण्णि त्ति को भावो, ओदइओ भावो ।	"	
७९ उत्तमसम्मादिट्ठीसु असजद- सम्मादिट्ठि त्ति को भावो, उत्त- मिओ भावो ।	"		९१ आहाराणुत्तादेण आहारयसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाय सजोगि- क्केवलि त्ति ओघ ।	२३८	
८० उत्तमियं सम्मत्त ।	"		९२ अणाहाराण कम्मइयमंगो ।	"	
८१ ओदइएण भावेण पुणो असजदो ।	२३६		९३ णयरि त्तिसेसो, अजोगिक्केवलि त्ति को भावो, खइओ भावो ।	"	

अप्पावहुगपरूवणासुत्ताणि ।

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
१ अप्पावहुआणुगमेण दुत्तिहो णिदेसो, ओघेण आदेसेण य ।	२४१		२ ओघेण त्सु अद्वासु उत्तमा परेसणेण तुल्ला थोया ।	२४३	

सूत्र सप्त्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सप्त्या	सूत्र	पृष्ठ
३ उपसत्तकसायरीदरागउदुमत्या			त्योरा उपसमसम्मादिद्वी ।		२५८
तत्तिया चैय ।	२४५		२२ खइयसम्मादिद्वी मरेज्जगुणा ।		"
४ खना सरेज्जगुणा ।	"		२३ वेदगसम्मादिद्वी सरेज्जगुणा ।		"
५ खीणकमायरीदरागउदुमत्या त			२४ एव तिसु नि अद्रामु ।		"
त्तिया चैय ।	२४६		२५ सच्चत्योरा उपसमा ।		२५९
६ सजोगकेरली अजोगकेरली			२६ खना सरेज्जगुणा ।		२६०
परेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया			२७ आदेसेण गदियाणुमादेण गिरय-		
चैय ।	"		गदीए गेरइएसु सच्चत्योरा		
७ सजोगिकेरली अद्ध पडुच्च			सामणमम्मादिद्वी ।		२६१
सरेज्जगुणा ।	२४७		२८ सम्मामिच्छादिद्वी सरेज्जगुणा ।		"
८ अप्पमत्तमजदा अमसना अणुर			२९ असजदमम्मादिद्वी असरेज्ज-		
समा सरेज्जगुणा ।	"		गुणा ।		२६२
९ पमत्तमजदा सरेज्जगुणा ।	"		३० मिच्छादिद्वी असरेज्जगुणा ।		"
१० सजटमजदा अमरेज्जगुणा ।	२४८		३१ अमजदसम्मादिद्विद्विहाणे सच्च-		
११ सासणमम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।	"		त्योरा उपसमसम्मादिद्वी ।		२६३
१२ सम्मामिच्छादिद्वी मखेज्जगुणा ।	२५०		३२ खइयसम्मादिद्वी असरेज्ज-		
१३ असजदसम्मादिद्वी अमरेज्ज-			गुणा ।		"
गुणा ।	२५१		३३ वेदगसम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।		२६४
१४ मिच्छादिद्वी जणनगुणा ।	२५२		३४ एव पढमाए पुढरीए गेरइया ।		"
१५ असजदसम्मादिद्विद्विहाणे मच्च-			३५ त्रिदियाए जाय सत्तमाए पुढवीए		
त्योवा उपसमसम्मादिद्वी ।	२५३		गेरइएसु मच्चत्योरा सामण-		
१६ खइयसम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।	"		सम्मादिद्वी ।		२६५
१७ वेदगसम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।	२५६		३६ सम्मामिच्छादिद्वी सरेज्जगुणा ।		"
१८ सजदासजदद्विहाणे सच्चत्योरा			३७ असजदसम्मादिद्वी असरेज्ज-		
खइयसम्मादिद्वी ।	"		गुणा ।		२६६
१९ उपममसम्मादिद्वी असरेज्ज-			३८ मिच्छादिद्वी असरेज्जगुणा ।		"
गुणा ।	२५७		३९ असजदसम्मादिद्विद्विहाणे सच्च-		
२० वेदगसम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।	"		त्योरा उपसमसम्मादिद्वी ।		२६७
२१ पमत्तापमत्तसजदद्विहाणे सच्च-			४० वेदगसम्मादिद्वी असरेज्जगुणा ।		"

सूत्र सत्या	सूत्र	शृष्ठ सूत्र सत्या	सूत्र	शृष्ठ
४१ तिरिक्कगदीए तिरिक्क पचि- नियतिरिक्क—पचिदियपज्जत्त- तिरिक्क—पचिदियजोणिणीसु मच्चत्थोवा सज्जामज्जदा ।	२६८	५३ मणुमगदीए मणुम मणुमपज्जत्त- मणुमिणीसु तिसु ज्जदामु उर- समा परेमणेण तुल्ला योवा ।	२७३	
४२ सामासम्मादिट्ठी असंखेज्ज- गुणा ।	"	५४ उरमत्तममायनीदरागळदुमत्था तेत्थिया चेव ।	"	
४३ सम्मामिच्छादिट्ठिणो सखेज्ज- गुणा ।	"	५५ समा संखेज्जगुणा ।	२७४	
४४ अमनदमम्मादिट्ठी अमखेज्ज गुणा ।	२६९	५६ खीणरुमायनीदरागळदुमत्था त- त्थिया चेव ।	"	
४५ मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा, मिच्छा- दिट्ठी अमखेज्जगुणा ।	"	५७ मज्जोगिकेयली जजोगिकेयली परिसणेण दो नि तुल्ला, तत्थिया चेव ।	"	
४६ अमज्जदसम्मादिट्ठिद्वारेण सच्च- त्थोवा उरममसम्मादिट्ठी ।	२७०	५८ सज्जोगिकेयली अद्ध पट्टच्च सखेज्जगुणा ।	"	
४७ रुद्धयमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।	२७१	५९ अप्पमत्तमज्जदा अकररा अणु- वसमा मखेज्जगुणा ।	२७५	
४८ वेगसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।	"	६० पमत्तमज्जदा मखेज्जगुणा ।	"	
४९ मज्जामज्जदद्वारेण मच्चत्थोवा उरममसम्मादिट्ठी ।	२७२	६१ सज्जदामंज्जदा मखेज्जगुणा ।	"	
५० वेदगमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।	"	६२ सामणमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	"	
५१ पारि विमो, पचिदिय- तिरिक्कनोणिणीसु अमंज्जद- सम्मादिट्ठी मंज्जदासज्जदद्वारेण मच्च- त्थोवा उरममसम्मादिट्ठी ।	"	६३ सम्मामिच्छादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	२७६	
५२ वेदमम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।	"	६४ अमज्जदमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	"	
	"	६५ मिच्छादिट्ठी जमखेज्जगुणा, मिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	"	
	"	६६ अमनदमम्मादिट्ठिद्वारेण मच्च- त्थोवा उरममसम्मादिट्ठी ।	"	
	"	६७ रुद्धयमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	२७७	
	"	६८ वेदगमम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	"	
	"	६९ मज्जदामंज्जदद्वारेण मच्चत्थोवा रुद्धयमम्मादिट्ठी ।	"	
	"	७० उरममसम्मादिट्ठी मखेज्जगुणा ।	"	

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
१०४	कायाणुरादेण तसकाइय तस- काइयपजत्तएसु ओघं । णवरि मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा । २८९		संजद—पमत्तापमत्तसंजदद्वारेण सम्मत्तप्पात्रहुअमोघ । २९३		
१०५	जोगाणुरादेण पचमणजोगि- पचमचिजोगि—कायजोगि— ओरालियकायजोगीसु तीसु अदासु पेसणेण तुल्ला थोना । २९०		११९ एन तिसु अदासु । २९४		
१०६	उरसत्तकसायवीदरागल्लदुमत्था तेत्तिया चेन । "		१२० सब्बत्थोना उवसमा । "		
१०७	खना संखेज्जगुणा । "		१२१ खना सखेज्जगुणा । "		
१०८	खीणकसायवीदरागल्लदुमत्था तेत्तिया चेन । २९१		१२२ ओरालियमिस्सकायजोगीसु सब्बत्थोना सजोगिकेनली "		
१०९	सजोगिकेनली पेसणेण तेत्तिया चेन । "		१२३ असजदसम्मादिद्वी संखेज्ज- गुणा । "		
११०	सजोगिकेनली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा । "		१२४ सासणमम्मादिद्वी असंखेज्ज- गुणा । २९५		
१११	अप्पमत्तमजदा अक्खमा अणु- पसमा संखेज्जगुणा । "		१२५ मिच्छादिद्वी अणंतगुणा । "		
११२	पमत्तसजदा सखेज्जगुणा । "		१२६ असजदसम्मादिद्विद्वारेण सब्ब- त्थोना खइयसम्मादिद्वी । "		
११३	सजदासजदा असखेज्जगुणा । २९२		१२७ वेदगसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । "		
११४	सासणमम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । "		१२८ वेज्जियकायजोगीसु देवगदि- भगो । "		
११५	सम्मादिद्वी सखेज्ज- गुणा । "		१२९ वेज्जियमिस्सकायजोगीसु सब्बत्थोना सामणमम्मादिद्वी । २९६		
११६	असजदसम्मादिद्वी असंखेज्ज- गुणा । "		१३० असजदसम्मादिद्वी सखेज्ज- गुणा । "		
११७	मिच्छादिद्वी असंखेज्जगुणा, मिच्छादिद्वी अणंतगुणा । २९३		१३१ मिच्छादिद्वी अमखेज्जगुणा । "		
११८	असजदसम्मादिद्वि—सजदा—		१३२ असजदसम्मादिद्विद्वारेण सब्ब- त्थोना उवसमसम्मादिद्वी । २९७		
			१३३ खइयसम्मादिद्वी सखेज्जगुणा । "		
			१३४ वेदगसम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा । "		
			१३५ आहारकायजोगि आहारमिस्स-		

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र
	कायजोगीसु पमत्तसज्जद्व्याणे		१५२ मिच्छादिद्वी अमत्तेज्जगुणा । २०	
	सत्त्वत्योवा सज्जसत्त्मादिद्वी । २९७		१५३ असनदमम्मादिद्वी मज्जदमनंजद	
१३६	वेदगमम्मादिद्वी सत्तेज्जगुणा । २९८		द्व्याणे मज्जत्योवा सज्जसत्त्मा-	
१३७	कम्मज्जकायजोगीसु सत्त्व-		दिद्वी ।	
	त्योवा सजोगिक्खेली ।	"	१५४ उपमममम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-	
१३८	सासणमम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-		गुणा ।	३०
	गुणा ।	"	१५५ वेदगमम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-	
१३९	अमज्जदमम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-		गुणा ।	
	गुणा ।	२९९	१५६ पमत्त-अप्पमत्तमज्जद्व्याणे मज्ज	
१४०	मिच्छादिद्वी अणत्तगुणा ।	"	त्योवा सज्जसत्त्मादिद्वी ।	
१४१	अमज्जदमम्मादिद्वी द्व्याणे मज्ज-		१५७ उपमममम्मादिद्वी मत्तेज्जगुणा ।	
	त्योवा उपसमनमम्मादिद्वी ।	"	१५८ वेदगमम्मादिद्वी मत्तेज्ज-	
१४२	सज्जसत्त्मादिद्वी मत्तेज्जगुणा ।	"	गुणा ।	
१४३	वेदगमम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-		१५९ एवं दोसु अद्धानु ।	
	गुणा ।	३००	१६० सत्त्वत्योवा उपममा ।	३०
१४४	वेदाद्युरादेण इत्थि वेदएसु दोसु		१६१ सत्ता मत्तेज्जगुणा ।	
	वि अद्धानु उपसमा पवेत्तयेव		१६२ पुग्निवेदएसु दोसु अद्धानु	
	तुहा थोवा ।	"	उपममा परमोण तुहा थोवा ।	
१४५	सत्ता मत्तेज्जगुणा ।	३०१	१६३ सत्ता मत्तेज्जगुणा ।	
१४६	अप्पमत्तमज्ज अत्तसत्ता		१६४ अपमत्तमज्ज अत्तसत्ता	
	अपुत्तममा मत्तेज्जगुणा ।	"	अपुत्तममा मत्तेज्जगुणा ।	३०
१४७	पमत्तमज्ज मत्तेज्जगुणा ।	"	१६५ पमत्तमज्ज मत्तेज्जगुणा ।	
१४८	संज्जदमनंजद अमत्तेज्जगुणा ।	"	१६६ संज्जदमनंजद अमत्तेज्जगुणा ।	
१४९	मानपत्तम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-		१६७ मानपत्तम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-	
	गुणा ।	"	गुणा ।	
१५०	तन्नामिच्छादिद्वी मत्तेज्ज-		१६८ मत्तादिद्वी मत्तेज्ज-	
	गुणा ।	३०२	गुणा ।	
१५१	अमज्जदमम्मादिद्वी अमत्तेज्ज-		१६९ अमज्जदमम्मादिद्वी पमत्तेज्ज-	
	गुणा ।	"		

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
	गुणा ।	३०६		गुणा ।	३१०
१७०	मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ।	"	१८७	वेदगनम्मादिद्वी नखेज्जगुणा ।	"
१७१	अमजदमम्मादिद्वि—सजदा— मजद पमत्त-अप्पमत्तमजदद्व्याणे सम्मचप्पाग्हुअमोघ ।	"	१८८	एव दोसु अद्वासु ।	"
१७२	एव दोसु अद्वासु ।	"	१८९	मव्वत्थोवा उव्वन्ना ।	"
१७३	सव्वत्थोवा उव्वन्ना ।	"	१९०	खवा मखेज्जगुणा ।	"
१७४	खवा मखेज्जगुणा ।	३०७	१९१	अग्गाद्वेदएत्तु दोह अद्वासु उव्वसमा पवेसणे तुल्ला धोवा ।	३११
१७५	णउमयवेदएत्तु दोसु अद्वासु उव्वसमा पवेसणे तुल्ला धोवा ।	"	१९२	उव्वमंतकनापवीदरागउदुमत्था तच्चिया चेव ।	"
१७६	खवा सखेज्जगुणा ।	"	१९३	खवा मखेज्जगुणा ।	"
१७७	अप्पमत्तमजदा अक्खवा अणु- वसमा मखेज्जगुणा ।	"	१९४	खीणकनापवीदरागउदुमत्था तच्चिया चेव ।	"
१७८	पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।	"	१९५	सजोगिकेवली अजोगिकेवली पवेसणेन दो वि तुल्ला तच्चिया चेव ।	"
१७९	सजदामंजदा असखेज्जगुणा ।	३०८	१९६	सजोगिकेवली अज्ज पडुच्च सखेज्जगुणा ।	"
१८०	मामणमम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा ।	"	१९७	कनायाणुशवेण कोषकमाइ- माणरुमाइ-मायक्साइ-लोभ- कसाईसु दोसु अद्वासु उव्वसमा पवेसणेन तुल्ला धोवा ।	३१२
१८१	मम्मामिच्छादिद्वी सखेज्ज- गुणा ।	"	१९८	खवा सखेज्जगुणा ।	"
१८२	अमजदमम्मादिद्वी असखेज्ज- गुणा ।	"	१९९	णवरि विसेसा, लोभरुमाईसु सुहुमसापराइयउव्वसमा विसे- साहिया ।	"
१८३	मिच्छादिद्वी अणतगुणा ।	"	२००	खवा मखेज्जगुणा ।	३१३
१८४	अमजदमम्मादिद्वि—सजदा— सजदद्व्याणे सम्मचप्पाग्हुअ- मोघ ।	३०९	२०१	अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु- वसमा	"
१८५	पमत्त अपमत्तमजदद्व्याणे सव्व- त्थोवा	"	२०२		"
१८६	सखेज्ज-	"			"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
२०३	सजदासजदा असखेज्जगुणा ।	३१४	णीसु तिसु अद्वासु उवसमा		
२०४	सासणसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	"	पवेसणेण तुल्ला थोवा ।		३१७
२०५	सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा ।	"	२१९ उरसतरुमायरीदरागछदुमत्था		
२०६	असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	"	तत्तिया चेव ।		"
२०७	मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।	"	२२० खवा सखेज्जगुणा ।		३१८
२०८	असजदसम्मादिट्ठी—सजदा— सनद—पमत्त—अप्पमत्तसजद— ट्ठाणे सम्मत्तप्पावहुअमोघ ।	३१५	२२१ खीणकमायरीदरागछदुमत्था		
२०९	एव दोसु अद्वासु ।	"	तेत्तिया चेव ।		"
२१०	सव्वत्थोना उरममा ।	"	२२२ अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु		
२११	खना सखेज्जगुणा ।	"	वसमा सखेज्जगुणा ।		"
२१२	अरुमाईसु सव्वत्थोना उरमत्त- कमायरीदरागछदुमत्था ।	३१६	२२३ पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।		"
२१३	खीणरुमायरीदरागछदुमत्था		२२४ संजदामजदा असखेज्जगुणा ।		"
	सखेज्जगुणा ।	"	२२५ असजदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		३१९
२१४	सजोगिनेरली अजोगिनेरली		२२६ असजदसम्मादिट्ठी—सजदा— सजद पमत्त अप्पमत्तसजदट्ठाणे		
	पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया		सम्मत्तप्पावहुअमोघ ।		"
	चेव ।	"	२२७ एव तिसु अद्वासु ।		"
२१५	सजोगिनेरली अद्द पडुच्च		२२८ सव्वत्थोना उवसमा ।		"
	सखेज्जगुणा	"	२२९ खवा सखेज्जगुणा ।		"
२१६	णाणाणुदेण मदिअण्णाणि-		२३० मणपज्जणणीसु तिसु अद्वासु		
	सुदअण्णाणि—निमगण्णाणीसु		उरसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ।		३२०
	सव्वत्थोना सामणसम्मादिट्ठी ।	"	२३१ उरसतरुमायरीदरागछदुमत्था		
२१७	मिच्छादिट्ठी अणतगुणा,		तत्तिया चेव ।		"
	मिच्छादिट्ठी अरुसखेज्जगुणा ।	३१७	२३२ खना सखेज्जगुणा ।		"
२१८	आभिणिचोदिय-सुद ओधिणा-		२३३ खीणरुमायरीदरागछदुमत्था		
			तत्तिया चेव ।		"
			२३४ अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु-		
			वसमा सखेज्जगुणा ।		"
			२३५ पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।		"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र संख्या	सूत्र	पृष्ठ
२३६	पमत्त अप्पमत्तसजदट्ठाणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी ।	३२०		त्थोवा उवसमसम्मादिट्ठी ।	३२४
२३७	खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	३२१	२५३	खइयसम्मादिट्ठी सखेज्ज- गुणा ।	"
२३८	वेदगसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	"	२५४	वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ।	३२५
२३९	एव तिसु अद्वासु ।	"	२५५	एव तिसु अद्वासु ।	"
२४०	सव्वत्थोना उवसमा ।	"	२५६	सव्वत्थोना उवसमा ।	"
२४१	खना संखेज्जगुणा ।	"	२५७	खना संखेज्जगुणा ।	"
२४२	केवलणाणीसु सजोगिकेनली अजोगिकेनली पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया चेव ।	"	२५८	सामाइयच्छेदोपट्ठाणसुद्विसज- देसु दोसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ।	"
२४३	सजोगिकेनली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा ।	३२२	२५९	खना संखेज्जगुणा ।	"
२४४	सजमाणुनादेण सजदेसु तिसु अद्वासु उवसमा पवेसणेण तुल्ला थोवा ।	"	२६०	अप्पमत्तसंजदा अक्खना अणु- वसमा संखेज्जगुणा ।	"
२४५	उवसत्तकमाययीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ।	"	२६१	पमत्तसजदा संखेज्जगुणा ।	३२६
२४६	खना संखेज्जगुणा ।	"	२६२	पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी ।	"
२४७	खीणरुमाययीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ।	३२३	२६३	खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	"
२४८	सजोगिकेनली अजोगिकेनली पवेसणेण दो नि तुल्ला तत्तिया चेव ।	३२४	२६४	वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ।	"
२४९	सजोगिकेनली अद्द पडुच्च संखेज्जगुणा ।	"	२६५	एव दोसु अद्वासु ।	"
२५०	अप्पमत्तसजदा अक्खना अणुवसमा संखेज्जगुणा ।	"	२६६	सव्वत्थोना उवसमा ।	"
२५१	पमत्तसजदा संखेज्जगुणा ।	"	२६७	खना संखेज्जगुणा ।	"
२५२	पमत्त-अप्पमत्तसजदट्ठाणे सव्व- त्थोना उवसमसम्मादिट्ठी ।	"	२६८	परिहारसुद्विसजदेसु सव्व- त्थोना अप्पमत्तसंजदा ।	३२७
			२६९	पमत्तसजदा संखेज्जगुणा ।	"
			२७०	पमत्त-अप्पमत्तसंजदट्ठाणे सव्व- त्थोना खइयसम्मादिट्ठी ।	"
			२७१	वेदगसम्मादिट्ठी संखेज्जगुणा ।	"
			२७२	सुहुमसापराइयसुद्विसंजदेसु सु- हुमसापराइयउवसमा थोवा ।	३२८

सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ
२७३ सना सखेज्जगुणा ।		३२८	दिट्ठी असखेज्जगुणा ।		३३१
२७४ जघाम्मादविहास्सुद्धिसज्जदेसु अरुमाडभगो ।		"	२८८ ओधिदंसणी ओविणाणिभगो ।		"
२७५ सज्जदासज्जदेसु अप्पागहुअ णत्थि ।		"	२८९ केवलदसणी केवलणाणिभगो ।		"
२७६ सज्जदासज्जदट्ठाणे सव्वत्थोरा खइयसम्मादिट्ठी ।		"	२९० लेस्साणुमादेण किण्हलेस्मिय- णीललेस्सिय- काउलेस्मिएसु सव्वत्थोरा सासणसम्मादिट्ठी ।		३३२
२७७ उउसमसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		३२९	२९१ सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा ।		"
२७८ वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"	२९२ असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"
२७९ अमज्जदेसु सव्वत्थोरा सामण- सम्मादिट्ठी ।		"	२९३ मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।		"
२८० सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा ।		"	२९४ असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सव्व- त्थोरा खइयसम्मादिट्ठी ।		"
२८१ असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"	२९५ उउसमसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।		३३३
२८२ मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।		३३०	२९६ वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"
२८३ असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सव्व- त्थोरा उउसमसम्मादिट्ठी ।		"	२९७ णवरि रिसेसो, काउलेस्मिएसु असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सव्व- त्थोरा उउसमसम्मादिट्ठी ।		"
२८४ खइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"	२९८ खइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		"
२८५ वेदगसम्मादिट्ठी अमखेज्ज- गुणा ।		"	२९९ वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।		३३४
२८६ दसणाणुमादेण चम्बुदसणि- अचम्बुदसणीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान खीणरुमाययीद- रागछदुमत्था त्ति ओष ।		३३१	३०० तेउलेस्मिय-पम्मलेस्मिएसु सव्वत्थोरा अप्पमत्तसज्जदा ।		"
२८७ णवरि चकखुदमणीसु मिच्छा-			३०१ पमत्तमज्जदा सखेज्जगुणा ।		"
			३०२ सज्जदासज्जदा असखेज्जगुणा ।		"
			३०३ सासणसम्मादिट्ठी असखेज्ज-		

सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सत्या	सूत्र	पृष्ठ
गुणा ।		३३४	३२१ असंजदसम्मादिद्विद्वाने सच्च-		
३०४ सम्मामिच्छादिद्वी संखेज्ज-			त्योवा उवसमसम्माद्वी ।	३३८	
गुणा ।	३३५		३२२ सइयसम्मादिद्वी असखेज्ज-		
३०५ असजदसम्मादिद्वी असखेज्ज-			गुणा ।	"	
गुणा ।	"		३२३ वेदगसम्मादिद्वी मखेज्जगुणा ।	"	
३०६ मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ।	"		३२४ सजदासजद-पमत्त-अप्पमत्त-		
३०७ अमजदसम्मादिद्वि -सजदा--			सजदद्वाने सम्मत्तप्पावहुग-		
सजद पमत्त-अप्पमत्तसजदद्वाने			मोघ ।	३३९	
सम्मत्तप्पावहुअमोघ ।	"		३२५ एव तिसु अद्वासु ।	"	
३०८ सुक्कलेस्सिएसु तिसु अद्वासु			३२६ सच्चत्योवा उवसमा ।	"	
उवसमा पनेसणेण तुल्ला थोना ।	३३६		३२७ सखा मखेज्जगुणा ।	"	
३०९ उवसतरुसायवीदरागछदुमत्था			३२८ भविष्याणुवादेण भवसिद्धिएसु		
तत्तिया चेव ।	"		मिच्छादिद्वी जान अजोगि-		
३१० सखा सखेज्जगुणा ।	"		केवलि चि ओघ ।	"	
३११ खीणरुसायवीदरागछदुमत्था			३२९ अभवसिद्धिएसु अप्पावहुअ		
तत्तिया चेव ।	"		णत्थि ।	३४०	
३१२ सजोगिकेवली पनेसणेण तत्तिया			३३० सम्मत्ताणुवादेण सम्मादिद्वीसु		
चेव ।	"		ओविणाणिभगो ।	"	
३१३ मजोगिकेवली अद्द पडुच्च			३३१ सइयसम्मादिद्वीसु तिसु अद्वासु		
संखेज्जगुणा ।	"		उवसमा पनेसणेण तुल्ला थोना ।	"	
३१४ अप्पमत्तसजदा अक्खवा अणु-			३३२ उवसतरुसायवीदरागछदुमत्था		
वसमा सखेज्जगुणा ।	३३७		तत्तिया चेव ।	"	
३१५ पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।	"		३३३ सखा सखेज्जगुणा ।	३४१	
३१६ सजदासजदा असखेज्जगुणा ।	"		३३४ खीणरुसायवीदरागछदुमत्था		
३१७ सासणसम्मादिद्वी असखेज्ज-			तत्तिया चेव ।	"	
गुणा ।	"		३३५ सजोगिकेवली जजोगिकेवली		
३१८ सम्मामिच्छादिद्वी सखेज्जगुणा ।	"		पनेसणेण दो वि तुल्ला तत्तिया		
३१९ मिच्छादिद्वी असखेज्जगुणा ।	३३८		चेव ।	"	
३२० अमजदसम्मादिद्वी सखेज्ज-			३३६ सजोगिकेवली अद्द पडुच्च		
गुणा ।	"				

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या
२७३	सना सखेज्जगुणा ।	३२८	दिट्ठी असखे
२७४	जघाकपादनिहारसुद्धिसज्जदेसु अम्माइभगो ।	"	२८८ ओधिदंसणी
२७५	सज्जदासज्जदेसु अप्पागहुअ णत्थि ।	"	२८९ केवलदसणी =
२७६	सज्जदामज्जदट्ठाणे सच्चत्थोना सुइयसम्मादिट्ठी ।	"	२९० लेस्साणुनादे
२७७	उत्तमसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	३२९	णीललेस्सिय
२७८	वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	"	सच्चत्थोना सु
२७९	असज्जदेसु सच्चत्थोना सामण- सम्मादिट्ठी ।	"	२९१ सम्मामिच्छा
२८०	सम्मामिच्छादिट्ठी सखेज्ज- गुणा ।	"	गुणा ।
२८१	असज्जदसम्मादिट्ठी असखेज्ज गुणा ।	"	२९२ असज्जदसम्म
२८२	मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ।	३३०	गुणा ।
२८३	असज्जदसम्मादिट्ठिट्ठाणे सच्च- त्थोना उत्तमसम्मादिट्ठी ।	"	२९३ मिच्छादिट्ठी
२८४	सुइयसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	"	२९४ असज्जदसम्मा
२८५	वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्ज- गुणा ।	"	त्थोना सुइय
२८६	दसणाणुनादेण चक्रसुदमणि- अचक्रसुदमणीसु मिच्छादिट्ठि- प्पहुडि जान खीणमायायीद- रागलुदुमत्था चि ओष ।	३३१	२९५ उत्तमसम्मा
२८७	णवरि चक्रसुदमणीसु मिच्छा		गुणा ।
			३९६ वेदगसम्मादि
			गुणा ।
			२९७ णवरि रिसेसे
			असज्जदसम्मा
			त्थोना उत्तम
			२९८ सुइयसम्मादि
			गुणा ।
			२९९ वेदगसम्मादि
			गुणा ।
			३०० तेउलेस्मिय-
			सच्चत्थोना ३
			३०१ पमत्तसज्जदा
			३०२ मज्झासज्जदा
			३०३ सासन्नसम्मा

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३६५	पमत्तसंजदा संखेज्जगुणा ।	३४७	३७४	खवा सखेज्जगुणा ।	३४८
३६६	संजदासंजदा असखेज्जगुणा ।	"	३७५	अणाहारणसु सन्वत्थोना	"
३६७	सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"		सजोगिकेनली ।	"
३६८	सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	"	३७६	अजोगिकेनली संखेज्जगुणा ।	"
३६९	असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"	३७७	सासणसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ।	३४९
३७०	मिच्छादिट्ठी अणंतगुणा ।	३४८	३७८	असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ।	"
३७१	असंजदसम्मादिट्ठी -संजदा-	"	३७९	मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।	"
	संजद-पमत्त-अप्पमत्तसंजद-	"	३८०	असंजदसम्मादिट्ठिणाणे सन्व-	"
	ट्ठाणे सम्मत्तप्पायहुअमोघ ।	"		त्थोवा उरसमसम्मादिट्ठी ।	"
३७२	एव तिसु अद्वासु ।	"	३८१	खइयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	३५०
३७३	सन्वत्थोना उवसमा ।	"	३८२	वेदगमनादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"

२ अवतरण-गाथा-सूची

(भागप्ररूपणा)



संख्या	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहा	क्रम सख्या	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहा
१	अपिदआदरभावो	१८६		९	णाणणाण च तहा	१९१	
११	गिगीस अट्ट तह णव	१९२		२	णामिणि-धम्मवयारो	१८६	
१२	एकोत्तरपदवृद्धो	१९३		१४	देसे खमोवसमिण	१९४	
१०	एय ठाण तिणिण धिय-	१९२		१३	मिच्छते दस भगा	"	
५	योदहो उवसमिओ	१८७		८	लद्धीओ सम्मत्त	१९१	
४	खयय खीणमोहे	१८६	पदखडा	३	सम्मत्तुप्पत्तीय वि	१८६	पदखडा
			वेदनाखड				वेदनाखड,
			गो जी ६७				गो जी ६६
६	दि लिंग कसाया वि	१८९		७	सम्मत्तं चारित्त दो	१९०	

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
	सखेज्जगुणा ।	३४१	३५२ असंजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।		३४४
३३७ अप्पमत्तमजदा अक्खमा अणुवसमा सखेज्जगुणा ।	"		३५३ असजदसम्मादिट्ठि—सजदा—सजद-पमत्त-अप्पमत्तसजद-ट्ठाणे उवसमसम्मत्तस्स भेदो णत्थि ।		३४५
३३८ पमत्तमजदा सखेज्जगुणा ।	"		३५४ सासणसम्मादिट्ठि सम्मामिच्छादिट्ठि मिच्छादिट्ठीण णत्थि अप्पावहुअ ।		"
३३९ सजदासजदा सखेज्जगुणा ।	३४२		३५५ सण्णियाणुपादेण सण्णीसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि जार खीण-कमायवीदरागछदुमत्था त्ति ओष ।		"
३४० असजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"		३५६ णरि, मिच्छादिट्ठी असखेज्जगुणा ।		३४६
३४१ असजदसम्मादिट्ठि—सजदा—सजद-पमत्त-अप्पमत्तसजदट्ठाणे खइयसम्मत्तस्स भेदो णत्थि ।	"		३५७ असण्णीसु णत्थि अग्गावहुअ ।		"
३४२ वेदगसम्मादिट्ठीसु सच्चत्थोरा अप्पमत्तसजदा ।	"		३५८ आहाराणुपादेण आहारएसु तिसु अद्दासु उरममा पेसणेण तुल्ला थोवा ।		"
३४३ पमत्तमजदा सखेज्जगुणा ।	३४३		३५९ उरसत्तकमायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ।		"
३४४ सजदासजदा असखेज्जगुणा ।	"		३६० खमा सखेज्जगुणा ।		३४७
३४५ असजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"		३६१ खीणकमायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ।		"
३४६ असजदसम्मादिट्ठि—मजदा—सजद पमत्त-अप्पमत्तसजद-ट्ठाणे वेदगसम्मत्तस्स भेदो णत्थि ।	"		३६२ सजोगिकेनली पेसणेण तत्तिया चेव ।		"
३४७ उवसमसम्मादिट्ठीसु तिसु अद्दासु उवसमा पेसणेण तुल्ला थोवा ।	३४४		३६३ सजोगिकेनली अद्द पडुच्च सखेज्जगुणा ।		"
३४८ उरसत्तकमायवीदरागछदुमत्था तत्तिया चेव ।	"		३६४ अप्पमत्तसजदा अक्खमा		"
३४९ अप्पमत्तसजदा अणुवसमा सखेज्जगुणा ।	"		३५० पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।		"
३५० पमत्तसजदा सखेज्जगुणा ।	"		३५१ सजदासजदा असखेज्जगुणा ।		"

सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ	सूत्र सख्या	सूत्र	पृष्ठ
३६५	पमत्तसंजदा सखेज्जगुणा ।	३४७	३७४	खवा संखेज्जगुणा ।	३४८
३६६	संजदासजदा असखेज्जगुणा ।	"	३७५	अणाहारप्पु सव्वत्थोना	
३६७	सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"		सजोगिकेवली ।	"
३६८	सम्माभिच्छादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	"	३७६	अजोगिकेवली संखेज्जगुणा ।	"
३६९	असजदसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	३४८	३७७	सासणसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	३४९
३७०	मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।	"	३७८	असंजदसम्मादिट्ठी असंखेज्जगुणा ।	"
३७१	असजदसम्मादिट्ठी -संजदा-सजद-पमत्त-अप्पमत्तसजद-ट्ठाणे सम्मत्तप्पानहुअमोष ।	"	३७९	मिच्छादिट्ठी अणतगुणा ।	"
३७२	एव-तिसु अद्वासु ।	"	३८०	असजदसम्मादिट्ठीट्ठाणे सव्वत्थोना उरसमसम्मादिट्ठी ।	"
३७३	सव्वत्थोवा उवसमा ।	"	३८१	खड्डयसम्मादिट्ठी सखेज्जगुणा ।	३५०
			३८२	वेदगसम्मादिट्ठी असखेज्जगुणा ।	"

२ अवतरण-गाथा-सूची

(भावप्ररूपणा)



क्रम संख्या	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहाँ	क्रम संख्या	गाथा	पृष्ठ	अन्यत्र कहाँ
१	अप्पिदभादरभावो	१८६		९	णाणण्णाण च तहा	१९१	
११	इगिचीस अट्ट तह णव	१९२		२	णामिणि घम्मुचयारो	१८६	
१२	एकोत्तरपदवृद्धो	१९३		१४	देसे खमोवसमिण	१९४	
१०	एय ठाण तिण्णि विय-	१९२		१३	मिच्छते दस भगा	"	
५	ओदइओ उवसमियो	१८७		८	लद्धोओ सम्मत्तं	१९१	
४	खचप य खीणमोहे	१८६	पदखडा वेदनाखड गो जी ६७	३	सम्मत्तुप्पत्तीय वि	१८६	पदखडा वेदनाखड, गो जी ६६
६	गदि लिंग कसाया वि	१८९		७	रित्त दो	१९०	

३ न्यायोक्तियां

क्रम संख्या	न्याय	पृष्ठ	क्रम संख्या	न्याय	पृष्ठ
१	एगजोगणिदिद्वान्मेगदेसो णानुघट्टदि चि णयादो ।	२५९	३	कारणाणुसारिणा कज्जेण होदव्वमिदि णयादो ।	२५०
२	जहा उदेसो तथा णिदेसो ।	४, ९, २५, २७, ७१, १९४, २७०	४	समुदायसु पयट्ठाण तदेग देसे वि पउत्तिदसणादो ।	१९९

४ ग्रन्थोल्लेख

१ चूलियासुत्त

१ त कच्च णव्वदे ? 'पच्चिदिणसु उवसामंतो गम्भोयणतिपसु उवसामेदि,
णो सम्मुच्छिमेसु' चि चूलियासुत्तादो । ११८

२ दव्याणिओगहार

१ एदेहि पलिदोवममयहिरदि अतोमुहुत्तेण कात्तेणेत्ति दव्याणिओगहार
सुत्तादो णव्वदि । २५०

२ आणद पाणद जाव णव्वगेयज्जविमाणवासियदेयेसु मिच्छादिट्ठिप्पहुडि
जाव असजदसम्मादिट्ठी दव्वपमाणेण वेचटिया, पलिदोवमस्स असखेज्जविमाणो ।
एदेहि पलिदोवममयहिरदि अतोमुहुत्तेण । अणुदित्तादि जाव अघरावविमाण
वासियदेयेसु असजदसम्मादिट्ठी दव्वपमाणेण वेचटिया, पलिदोवमस्स असखेज्जवि-
माणो । एदेहि पलिदोवममयहिरदि अतोमुहुत्तेणेत्ति एदेण दव्वसुत्तेण । २८७

३ पाहुडसुत्त (कपायग्राभूत)

१ चहुण्ह कसायाणमुस्सतरस्स छम्मासमेत्तस्सेव सिद्धीदो । ण पाहुड
सुत्तेण चियदिचारो, तस्स मिण्णोवदेसत्तादो । ११२

२ त पि हुदो णव्वदे ? 'णियमा मणुगसदीप' इदि सुत्तादो । २५६

४ सूत्रपुस्तक

१ केसु वि सुत्तपोत्थपसु पुरिसवेदस्सतर छम्मासा । १०६

५ पारिभाषिक शब्दसूची

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
अ		आ	
अकषायत्व	२२३	आगमद्रव्यान्तर	२
अनुदर्शनस्थिति	१३७, १३८	आगमद्रव्यभाव	१८४
अविज्ञतद्रव्यतिरिक्तद्रव्यान्तर	३	आगमद्रव्याल्पग्रहत्व	२४२
अतिप्रसंग	२०६, २०९	आगमभावभाव	१८४
अयस्सनराशि	२४९, २६२	आगमभावान्तर	३
अनर्पित	४७	आगमभावास्पग्रहत्व	२४२
अनात्मभूतभाव	१८७	आदेश	१, २४३
अनात्मस्वरूप	२०७	आधली	७
अनादिपारिणामिक	२०७	आसादन	२४
अनुदयोपशम	२०७	आहारकऋद्धि	२०८
अन्तर्दापक	२०१, २००	आहारककाल	१७४
अन्तर	३		
अंतरानुगम	१	उ	
अन्तर्मुहूर्त	९	उच्छेद	३
अन्यधानुपपत्ति	२२३	उत्कीरणकाल	१०
अपगतवेद्य	२२२	उत्तरप्रतिपत्ति	३२
अपयिम	४८, ७४	उत्तानशय्या	४७
अपूराद्धा	५४	उद्वेलनकाल	३४
अभिधान	१९४	उद्वेलना	३३
अर्ध	१९४	उद्वेलनाकांडक	१०, २५
अर्धपुत्रलपरिवर्तन	११	उपक्रमणकाल	२५०, २५१, २५५
अर्पित	६३	उपदेश	३२
असगन्तर	११७	उपरिमराशि	२४९, २६२
असहायका	२४९	उपशम	२००, २०२, २०३, २११, २००
असाक्षिभाव	२०८	उपशमधेणी	१८, १७१
असक्षिस्थिति	१७२	उपशमसम्भ्यक्त्वाद्धा	८५, २५४
अस्यम	१८८	उपशान्तकषायाद्धा	१९
अस्यद्वानस्थापनांतर	२	उपशामक	१२५, २६०
अस्यद्वानस्थापनाभाव	१८४	उपशामकाद्धा	१५९, १६०
असिद्धता	१८८	ओ	
		ओघ	१, २४३

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
औ		ह	
औद्ययिकभाव	१८५, १९४	हहरकाल	४२, ४४, ४७, ५६
औपशमिकभाव	१८५, २०४	त	
क		तद्व्यतिरिक्तमल्पवहुत्व	२४२
कपाटपर्याय	९०	तद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यभाव	१८४
कैरण	११	तीर्थेकर	१९४, ३२३
कपाय	२२३	तीम मन्दभाव	१८७
कुरु	४१	प्रसपर्याप्तस्थिति	८४, ८५
कृतकरणीय	१४, १५, १६, ९९, १०५, १३९, २३३	प्रसस्थिति	६५, ८१
क्रोधोपशमनाद्या	१९०	द	
क्षपक	१०५, १२४, २६०	दक्षिणप्रतिपत्ति	३२
क्षपकश्रेणी	१२, १०६	दिवसपृथक्त्व	९८, १०३
क्षपकाद्या	१५९, १६०	दिव्यध्वनि	१९४
क्षप	१९८, २०२, २११, २२०	दीर्घान्तर	११७
क्षायिकभाव	१८५, २०५, २०६	दृष्टमाग	२२, ३८
क्षायिकसम्यक्त्वाद्या	२५४	देयलोक	२८४
क्षायिकसङ्का	२००	देशघातिस्पर्धक	१०९
क्षायोपशमिक	२००, २११, २२०	देशमत	२७७
क्षायोपशमिकभाव	१८, १९८	देशस्यम	२०२
क्षुद्रमयप्रहण	४५, ५६	द्रव्ययिष्कम्मसूची	२६३
ग		द्रव्यान्तर	३
गुणकार	२४७, २५७, २६२, २७४	द्रव्याल्पबहुत्व	२४१
गुणकाल	८९	द्रव्यलिङ्गी	५८, ६३, १४९
गुणस्थानपरिपाटी	१३	न	
गुणाद्या	१५१	नपुंसकयेदोपशमनाद्या	१९०
गुणा तरसक्रान्ति	८९, १५४, १७१	नामभाव	१८३
घ		नामान्तर	१
घनागुल	३१७, ३३५	नामाल्पवहुत्व	२४१
च		निदर्शन	६, २५, ३२
चमुदर्शनस्थिति	१३७, १३९	निरन्तर	५६, २५७
ज		निजराभाव	१८७
जीवविपाकी	२२२	निर्वाण	३५
ज्ञानकार्य	२२४	नोआगमअचित्तद्रव्यभाव	१८४
		नोआगमद्रव्यभाव	१८४
		नोआगमद्रव्यान्तर	२
		नोआगममव्यद्रव्यभाव	१८४

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
नोभागमभावभाव	१८४	मासपृथक्त्वान्तर	१७९
नोभागमभावान्तर	३	मिथ्यात्व	६
नोभागमभिधद्रव्यभाव	१८४	मिश्रान्तर	३
नोभागमद्रव्याल्पवहुत्व	२४२	मुहूर्तपृथक्त्व	३२, ४५
नोभागमभावाल्पवहुत्व	२४२		
नोभागमसचित्तद्रव्यभाव	१८४	य	
नोहन्द्रियावरण	२३७	योग	२०६
प		योगान्तरसक्रान्ति	८९
परमार्थ	७	ल	
परस्थानाल्पवहुत्व	२८९	लेख्यान्तरसक्रान्ति	१५३
परिपाटी	२०	लेख्याद्या	१५१
पल्योपम	७, ९	लोभोपशामनाद्या	१९०
पारिणामिकभाव	१८५, २०७, १९६, २३०	व	
पुद्गलपरिवर्तन	५७	वर्गमूल	२६७
पुद्गलविपाकित्व	२२२	वर्षपृथक्त्व	१८, ५३, ५५, २६४
पुद्गलविपाकी	२२६	वर्षपृथक्त्वान्तर	१८
पुरुषधेदोपशामनाद्या	१९०	वर्षपृथक्त्वयायु	३६
पूर्वकोटीपृथक्त्व	४२, ५२, ७२	विकल्प	१८९
प्रक्षेपसक्षेप	२९४	विग्रह	१७३
प्रतरागुल	३१७, ३३५	विग्रहगति	३००
प्रतिमाग	२७०, २९०	विरह	३
प्रत्यय	१०४	व्यभिचार	१८९, २०८
प्रत्येकबुद्ध	३२३	श	
ध		श्रेणी	१६६
बोधितबुद्ध	३२३	प	
भ		पण्णोकपायोपशामनाद्या	१९०
भव्यत्व	१८८	पण्मास	२१
भाव	१८६	स	
भाववेद	२२२	सचित्तान्तर	३
भुयन	६३	सदुपशम	२०७
म		सङ्गावस्थापनाभाव	१८३
महावत	२७७	सङ्गावस्थानान्तर	२
मानोपशामनाद्या	१९०	सम्मूर्च्छिम	४१
मायोपशामनाद्या	१९०		
मासपृथक्त्व	३२, ९३		

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
औ		ड	
गौदयिकभाव	१८५, १९४	डहरकाल	४२, ४४, ४७, ५६
औपशमिकभाव	१८५, २०४	त	
फ		तदयतिरिक्तमल्पवहुत्व	२४२
कपाटपर्याय	९०	तद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यभाव	१८४
कैरण	११	तीर्थकर	१९४, ३२३
कपाय	२२३	तीव्र मन्दभाव	१८७
कुत्त	४१	त्रसपर्याप्तस्थिति	८४, ८५
कृतकरणीय	१४, १५, १६, ९९, १००, १३९, २३३	त्रसस्थिति	६५, ८१
क्रौघोपशामनाद्धा	१९०	द	
क्षपक	१०५, १२३, २६०	दक्षिणप्रतिपत्ति	३२
क्षपकश्रेणी	१२, १०६	दिवसपृथक्त्व	९८, १०३
क्षपकाद्धा	१५९, १६०	दिव्यध्वनि	१९४
क्षय	१९८, २०२, २११, २२०	दीर्घान्तर	११७
क्षायिकभाव	१८५, २०५, २०६	दृष्टमार्ग	२२, ३८
क्षायिकसम्यक्त्वाद्धा	२५४	देयलोक	२८४
क्षायिकसक्षा	२००	देशघातिस्पर्धक	१९९
क्षायोपशमिक	२००, २११, २२०	देशमत	२७७
क्षायोपशमिकभाव	१८५, १९८	देशसंयम	२०२
क्षुद्रभयग्रहण	४५, ५६	द्रव्यविपर्ययसूची	२६३
ग		द्रव्यान्तर	३
गुणकार	२४७, २५७, २६२, २७४	द्रव्याल्पवहुत्व	२४१
गुणकाल	८९	द्रव्यलिङ्गी	५८, ६३, १४९
गुणस्थानपरिपाटी	१३	न	
गुणाद्धा	१५१	नपुसकयेदोपशामनाद्धा	१९७
गुणांतरसक्रान्ति	८९, १५४, १७१	नामभाव	१८३
घ		नामान्तर	१
घनागुल	३१७, ३३०	नामाल्पवहुत्व	२४१
च		निदर्शन	६, २५, ३२
चतुर्दर्शनस्थिति	१३७, १३९	निरन्तर	५६, २५७
ज		निजराभाव	१८७
जीवधिपार्की	२०२	निर्याण	३५
ज्ञानकार्य	२२४	नोआगमअचित्तद्रव्यभाव	१८४
		नोआगमद्रव्यभाव	१८४
		नोआगमद्रव्यान्तर	२
		नोआगमअव्यद्रव्यभाव	१८४

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
नोआगमभावभाव	१८४	मासपृथक्त्वान्तर	१७९
नोआगमभावान्तर	३	मिथ्यात्व	६
नोआगममिथ्यद्रव्यभाव	१८४	मिथ्यान्तर	३
नोआगमद्रव्याल्पबहुत्व	२४२	मुहूर्तपृथक्त्व	३२, ४५
नोआगमभावाल्पबहुत्व	२४२		
नोआगमसच्चित्तद्रव्यभाव	१८४	य	
नोइन्द्रियाचरण	२३७	योग	२२६
प		योगान्तरसक्रान्ति	८९
परमार्थ	७	ल	
परस्थानाल्पबहुत्व	२८९	लेख्यान्तरसक्रान्ति	१५३
परिपाटी	२०	लेख्याद्धा	१५१
पल्योपम	७, ९	लोभोपशामनाद्धा	१९०
पारिणामिकभाव	१८५, २०७, १९६, २३०	व	
पुद्गलपरिवर्तन	७७	वर्गमूल	२६७
पुद्गलविपाकित्व	२२७	वर्षपृथक्त्व	१८, ५३, ५५, २६४
पुद्गलविपाकी	२२६	वर्षपृथक्त्वान्तर	१८
पुरुषघटोपशामनाद्धा	१९०	वर्षपृथक्त्वान्त्यु	३६
पूरुकोटीपृथक्त्व	४२, ५२, ७२	विकल्प	१८९
प्रक्षेपसक्षेप	२९४	विग्रह	१७३
प्रतयागुल	३१७, ३३५	विग्रहगति	३००
प्रतिभाग	२७०, २९०	विरह	३
प्रत्यय	१९४	व्यभिचार	१८९, २०८
प्रत्येकबुद्ध	३२३	श	
बोधितबुद्ध	३२३	श्रेणी	११६
भ		ष	
भव्यत्व	१८८	षण्णोकपायोपशामनाद्धा	१९०
भाव	१८६	षण्मास	२१
भाववेद	२२२	स	
भुवन	६३	सच्चित्तान्तर	३
म		सदुपशम	२०७
महाव्रत	२७७	सद्भावस्थापनाभाव	१८३
मानोपशामनाद्धा	१९०	सद्भावस्थापनान्तर	
मायोपशामनाद्धा	१९०	सम्पूर्तिष्ठम	
मासपृथक्त्व	३२, ९३		

शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
सम्यक्त्व	६	सचय	२४४, २७३
सम्यग्मिध्यात्य	७	सचयकाल	२७७
सर्वधातित्व	१९८	सचयकालप्रतिभाग	२८४
सर्वधातिसर्घक	१९९, २३७	सचयकालमाहात्म्य	२७३
सर्वधाती	१९९, २०२	सचयराशि	३०७
सर्वपरस्यानास्पृश्यत्व	२८९	सयम	६
सागरोपम	६	सयमासयम	६
सागरोपमपृथक्त्व	१०	स्निगुकसंभ्रमण	२१०
सागरोपमशतपृथक्त्व	७७	स्थान	१८९
सातासातवधपरावृत्ति	१३०, १४२	स्थापनान्तर	२
साधारणभाव	१९६	स्थापनाभाव	१८३
सान्तर	२७७	स्थापनास्पृश्यत्व	२४१
साक्षिपातिभाव	१९३	स्थायरस्थिति	८५
सासादनगुण	७	स्त्रीयेदस्थिति	९६, ९८
सासादनपञ्चादागतभिध्यादधि	१०	स्त्रीयेदोपशामनादा	१९०
सासयमसम्यक्त्व	१६	स्यस्यानास्पृश्यत्व	२८९
सिद्धयत्काल	१०४		
सूत्रमात्रा	१९		
सौचित्यस्वरूप	२६७	हेतुहेतुमद्भाव	३२२



शब्द	पृष्ठ	शब्द	पृष्ठ
सम्यक्त्व	६	सचय	२४४, २७३
सम्यग्मिथ्यात्व	७	सचयकाल	२७७
सर्वधातित्व	१९८	सचयकालप्रतिभाग	२८४
सर्वधातिस्पर्धक	१९९, २३७	सचयकालमाहात्म्य	२५३
सर्वधाती	१९९, २०२	सचयराशि	३०७
सर्वपरस्थानात्पृथङ्गुत्व	२८९	सयम	६
सागरोपम	६	सयमासयम	६
सागरोपमपृथक्त्व	१०	स्तिवुकसक्रमण	२१०
सागरोपमशतपृथक्त्व	७२	स्थान	१८९
सातासातरथपरावृत्ति	१३०, १४२	स्थापनान्तर	२
साधारणभाव	१९६	स्थापनाभाव	१८३
सान्तर	२५७	स्थापनात्पृथङ्गुत्व	२४१
साभिप्रातिभाव	१९३	स्थायरस्थिति	८५
सासादनगुण	७	श्रीवेदस्थिति	९६, ९८
सासादनपञ्चादागतमिथ्यादृष्टि	१०	श्रीवेदोपशमनादा	१९०
सासयमसम्यक्त्व	१६	स्यस्थानात्पृथङ्गुत्व	२८९
सिद्धयत्काल	१०४		
सङ्गमादा	१९		
सौचिकस्वरूप	२६७	हेतुहेतुमन्त्राय	३२२



